बृहद् स्तोत्र रत्नाकर



ख्वाजा

वृहत्स्तोत्ररत्नाकर

(देवी देवताओं के सिद्ध स्तोत्रों का अपूर्व संग्रह)

स्तोत्र संख्या ४१६

सम्पादक :

डॉ० चमनलाल गौतम

सम्पादकः—शतपथ ब्राह्मण, मनुस्मृति, तन्त्र महासाधना, शारदा तिलक, लक्ष्मी सिद्धि, मन्त्र महाविज्ञान, तन्त्र महा विज्ञान, मंत्र योग, वैदिक मंत्र विद्या, मंत्र शक्ति से रोग निवारण-विपत्ति निवारण-कामना सिद्धि, विचार सागर विचार चन्द्रोदय, पंचीकरण, ब्रह्मसूत्र उपदेश साहस्त्री, वृत्ति प्रभाकर सौन्दर्य लहरी आदि।

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब (वेदनगर) बरेली—२४३००१ (उ०प्र०)

प्रकाशक :
डा० चमनलाल गौतम
संस्कृति संस्थान
ख्वाजा कुतुब (वेद नगर)
बरेली–२४३००१ (उ० प्र०)

सम्पादक :

डा० चमनलाल गौतम

द्वितीय संस्करण :
सन् १९७९

मुद्रक :
शैलेन्द्र वी० माहेश्वरी
नवज्योति प्रेस,
भीकचन्द मार्ग, मथुरा,

मूल्य : Rs. 14/50 से मात्र।

भूमिका

प्राय: लोगों की यह धारणा रहती है कि देवी देवताओं की स्तुति करना न ही युक्ति संगत और न ही कोई शक्तिशाली साधना जिससे किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति होनी सम्भव हो। वास्तव में इस धारणा में कोई सार नहीं है। यह ठीक है कि दैवी शक्तियाँ शरीर धारी नहीं होती हैं, वह किसी की निन्दा अथवा स्तुति से प्रभावित नहीं होती हैं। प्रशंसा सुनकर वह तुरन्त वरदान देने को तत्पर नहीं हो जातीं और न ही निन्दा से हानि पहुँचाने का प्रयत्न करती हैं।

स्तोत्र पाठ का अभिप्राय यह है कि साधक उस दैवी शक्ति के किन्हीं विशिष्ट असाधारण गुणों से परिचित है, उनकी ओर वह आकर्षित है, उनका सम्मान करता है और अपने में विकसित करने का आकांक्षी है और उस दैवी शक्ति के निरन्तर सान्निध्य में रहना चाहता है। किसी दैवी शक्ति के सामीप्य की अनुभूति करने का अर्थ है स्वयं उस सांचे में ढलते रहना-शक्ति सम्पन्न होते जाना। श्रद्धा और भावना की पवित्र शक्ति ने इस शक्ति का शीघ्र विकास होता है।

स्तोत्र मन्त्रवत होते हैं। ध्वनि समूह को मन्त्र कहते हैं। मन्त्र की सफलता उसके शुद्ध उच्चारण में है, तभी उनमें गुथे शब्दों का प्रभाव विभिन्न शक्ति केन्द्रों पर पड़ना सम्भव होता है। मन्त्र की सफलता में भावना का भी महत्वपूर्ण स्थान है। श्रद्धा और विश्वास इसके मेरुदण्ड हैं।

विज्ञान के इस युग में शब्द-विज्ञान पर अनेकों वैज्ञानिकों के सफल परीक्षणों के बाद भी यदि हम शब्द-विज्ञान पर आधारित मन्त्र-गठन की वैज्ञानिक प्रक्रियाओं पर अविश्वास करें तो हमें वैज्ञानिक तथ्यों से अनभिज्ञ ही समझा जायगा। सूक्ष्म जगत् की सोई हुई सूक्ष्म शक्तियों को जगाकर भौतिक और आध्यात्मिक लाभ उठाने की विधियों को खोज निकालने का श्रेय हमारे त्रिकालदर्शी ऋषियों को ही है। इन विभिन्न प्रकार की विधियों में मन्त्र भी एक है जिससे अपने शक्तिकोषों को विकसित करके अणु से महान् बना जा

सकता है और मानव-जीवन की सभी उलझी गुत्थियों को सुलझाकर पृथ्वी पर ही अपना स्वर्ग बनाने की क्षमता प्राप्त की जा सकती है।

चूँकि स्तोत्र मन्त्रवत होते हैं इसलिए स्तोत्रों से मन्त्रों जेसे लाभ होते हैं। अतः स्तोत्र साधना उसी श्रद्धा से करनी चाहिए।

जप साधना से पूर्व संध्योपासना आवश्यक मानी गई हैं। संध्या स्वतन्त्र उपासना के रूप में व्यवहृत की जाती है और जप की सहायक रूप में भी। जप से पहले इसका उद्देश्य मानसिक वृत्तियों को एकाग्र करना होता है। तभी जप साधना सफल हो पाती है। यदि संध्या के बिना जप आरम्भ कर दिया जाये तो जप में मन नहीं लगता और मन इधर-उधर भटकता है। परिणाम स्वरूप जप से अभीष्ट सिद्धि का प्राप्ति नहीं हो पाती। स्तोत्र पाठ में भी यही सिद्धांत काम करता है। इसमें भी कुछ ऐसा विधान आवश्यक है जिससे मानसिक एकाग्रता में सहायता मिले। यह विधान इस प्रकार से हैं—

प्रातःकाल स्नान आदि दैनिक कार्यो को करके साधना पर बैठें। स्तोत्र साधना किसी सिद्ध आश्रम सरितातट, बगीचे में श्रेष्ठ रहती है जहाँ एकान्त वातावरण हो। अपने घर का शान्त कमरा भी चुना जा सकता है जहाँ किसी अन्य व्यक्ति का आना जाना न हो। कमरा देखने में स्वच्छ और सुन्दर हो और चारों ओर महापुरुषों, देव, देवताओं के चित्र और सद्वाक्य टंगे हों. कोई भी अश्लील चित्र अथवा कलेंडर न हो जिससे कामुकता उद्दप्ति होती हो। एक चौकी पर वस्त्र बिछाकर इष्टदेव का सुन्दर चित्र रखें जो पुष्प हार से सुसज्जित हों, धूप दीप आदि जलते हों ताकि कमरे का वातावरण सुगन्धित रहे। दीपक में शुद्ध घृत का प्रयोग करना चाहिए। आसन कुश का हो। विधान को इस प्रकार स क्रियान्वित करें—

हाथ में जल लेकर-निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए मस्तक और सर पर छिड़कें—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोपिऽवा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तर शुचिः॥

फिर तीन बार निम्न मन्त्रों से आचमन करें—

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।

ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ।

ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।

निम्न मन्त्र को उच्चारण करते हुए शिखा में गाँठ लगावें—

चिद्रुपिणी महामाये दिव्यतेजः समन्विते ।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये तेजोवृद्धि कुरुष्व मे ॥

निम्न मन्त्र का पाठ करते हुए कम से कम एक बार प्राणायाम करें—

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ।
ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् । ॐ आपोज्योतींरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ ।

इसके बाद बायें हाथ की हथेली पर थोड़ा जल लें और दायें हाथ की पाँचों अँगुलियों से निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए निर्देशित अङ्गों को स्पर्श करें और यह भावना करें कि मेरे स्पर्श से यह अङ्ग पवित्र तेजस्वी और शक्तिशाली बन रहे हैं—

ॐ वाङ् मे आस्येस्तु । (मुख को)

ॐ नसोर्मेप्रणोऽस्तु । (नासिका के दोनों छिद्रों को)

ॐ अक्षणोर्मे चक्षुरस्तु । (दोनों नेत्रों को)

ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । (दोनों कानों को)

ॐ बाहुवोर्मे बलमस्तु । (दोनों बांहों को)

ॐ ऊर्वोर्मेओजोस्तु । (दोनों जंघाओं को)

ॐ अरिष्टानिमेऽङ्गानि वनूस्तुन्वा मे सह सन्तु ।

सारे शरीर पर जल छिड़कें ।

निम्न का पाठ करते हुए पृथ्वी पर जल छिड़कें और भावना करें कि पृथ्वी माता की तरह हमारे अन्तःकरण में भी उदारता, निःस्वार्थता, परमार्थ, लोक कल्याण और देवत्व की वृत्ति विकसित हो रही है—

ॐ पृथ्वि ! त्वया धृता लोका देवित्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इसके बाद हाथ में जल और फूल लेकर पाठ का संकल्प करना चाहिए। विद्वानों और मनोवैज्ञानिकों का निश्चित मत है कि केवल संकल्पित कार्य ही सफल होते हैं। बिना संकल्प के सभी कार्यों में शिथिलता रहती हैं। संकल्प स्वयं में एक महान शक्ति है। साधना में इसका सहयोग अपेक्षित है। संकल्प
स्वयं में एक महान शक्ति है। साधना में इसका सहयोग अपेक्षित है। संकल्प
का पाठ इस प्रकार से करें और पाठ करते हुए यह दृढ़ भावना करें कि जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्तोत्र पाठ करने जा रहे है, वह निश्चित रूप से पूर्ण व सफल होगा—

ॐ अद्य अमुकमासे, असुकपक्षे, अमुकतिथौ, अमुकवासरे, अमुक गोत्रः, अमुक शर्म-वर्म-गुप्वनामाऽहं, अमुककार्यसिद्धयर्थ (अथवा परमेश्वर प्रीत्यर्थं वा स्व-मनः शान्त्यर्थं) अमुकपाठ करिष्ये।

ब्राह्मण अपने नाम के साथ शर्मा, क्षत्रिय वर्मा और वैश्य गुप्त का उच्चारण करें।

संकल्प का पाठ करके जल पृथ्वी पर छोड़ देना चाहिए और देवता का ध्यान करें। चौकी पर स्थापित इष्टदेव के चित्र के अङ्ग-प्रत्यङ्ग को ध्यान से देखें और बाद्य, नेत्र बन्द करके उसे मानसिक नेत्रों से देखने का प्रयत्न करें। आरम्भ में वह चित्र मानसिक नेत्रों की पकड़ में नहीं आपायेगा। जब वह चित्र धुंधला हो जाये अथवा हट जाये तो नेत्र खोलकर बार उसे मानसिक नेत्रों से देखने का प्रयत्न करना चाहिए। अभ्यास से सफलता मिलती है और एकाग्रता प्राप्त होती हैं। यह मानसिक एकाग्रता स्तोत्र पाठ की सिद्धि में सहायक होती है।

स्तोत्र पाठ में ध्यान रहे कि उच्चारण स्पष्ट और शुद्ध हो।

—चमन लाल गौतम

॥ ॐ ॥

बृहत्स्तोत्ररत्नाकरस्य स्तोत्रानुक्रमणिका !

श्रीरामावतार स्तोत्राणि

श्रीकृष्णावतार स्तोत्राणि

हनुमत्स्तोत्राणि

श्रीदत्तात्रेय स्तोत्राणि

नवग्रहस्तोत्राणि

देवस्तोत्राणि

तीर्थ स्तोत्राणि

शास्त्रस्तोत्राणि

॥ इति विषयानुक्रमणिका ॥

वृहत्स्तोत्ररत्नाकरः !

—×—×—×—

मङ्गलाचरणम् !

श्री गणेशाय नमः ।

श्री गुरुभ्यो नमः ॥

स जयति सिंधुरवदनो देवो यत्पादपंकजस्मरणम् ।
वासरमणिरिव तमसां राशीन्नाशयति विघ्नानाम ॥१॥
सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो गणाधिपः ॥२॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥३॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
सग्रामे संकटे चेव विघ्नस्तस्य न जायते ॥४॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्व विघ्नोपशान्तये ॥५॥

गणपति स्तोत्राणि

१—गणपतिसूक्तम् ।

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय ।। महाहस्तो दक्षिणेन ।।१।। विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम् ।। तुविमात्रमवोभिः ।।२।। नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम् ।। भीमं न गां वारयन्ते ।।३।। एतोन्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्वः स्वराजम् ।। न राधसा मर्धिषन्नः ।।४।। प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत्साम गीयमानं ।। अभि राधसा जुगुरत ।।५।। आ नो भर दक्षिणेनाभि सव्येन प्रमृश ।। इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ।।६।। उप क्रमस्वा भर धृषता धृष्णो जनानां ।। अदाशूष्टरस्य वेदः ।।७।। इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः ।। अस्माभिः सु तं सनुहि ।।८।। सद्यो-जुवस्ते वाजा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः ।। वशैश्च मक्षू जरन्ते ।।९।।

२—गणेशमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। अनिर्वाच्यं रूपं स्तवनिकरो यत्र गणितस्तथा वक्ष्ये स्तोत्रं प्रथमपुरुषस्यात्र महतः ।। यतो जातं विश्वं स्थितमपि सदा यत्र विलयः स कीदृग्गीर्वाणः सुनिगमनुतः श्रीगणपतिः ।।१।। गणेशं गाणेशाः शिवमिति च शैवाश्च विबुधा रविं सौरा विष्णुं प्रथम-

पुरुषं विष्णुभजकाः ।। वदंत्येके शक्ता जगदुदयमूलां पर-
शिवां न जाने किं तस्मै नम इति परं ब्रह्म सकलम् ।२।
तथेशं योगज्ञा गणपतिमिमं कर्म निखिलं समीमांसा
वेदांतिन इति परं ब्रह्म सकलम् ।। अजां सांख्यो ब्रूते
सकलगुणरूपां च सततं प्रकर्तारं न्यायस्त्वथ जगति
बौद्धा धियमिति ।।३।। कथं ज्ञेयो बुद्धेः परतर इयं
बाह्यसरणिर्यथा धीर्यस्य स्यात्स च तदनुरूपो गणपतिः ।।
महत्कृत्यं तस्त स्वयमपि महान् सूक्ष्ममणुवद्ध्वनिज्यो-
तिर्बिन्दुर्गगनसदृशः किञ्च सदसत् ।।४।। अनेकास्योऽपा-
राक्षिकरचरणोऽनंतहृदयस्तथा नानारूपो विविधवदनः
श्रीगणपतिः अनंताह्वः शक्त्या विविधगुणकर्मैकसमये
त्वसंख्यातानंताभिमतफलदोऽनेकविषये ।।५।। न यस्यां-
तो मध्यो न च भवति चादिः सुमहताअलिप्ताः कृत्वेत्थं
सकलमपि खंवत्स च पृथक् ।।स्मृतः संस्मर्तॄणां सकल-
हृदयस्थः प्रियकरो नमस्तस्मै देवाय सकलसुरवंद्याय
महते ।।६।। गणेशाद्यं बीजं दहनवनितापल्लवयुतं मनु-
श्चैकार्णोऽयं प्रणवसहितोऽभीष्टफलदः ।। सबिन्दुश्चां-
गाद्यं गणकऋषिछन्दोऽस्य च निचृत्स देवः प्राग्बीजं
विपदपि च शक्तिर्जपकृताम् ।।७।। गकारो हेरंबः सगुण
इति पुंनिर्गुणमयो द्विधाऽप्येको जातः प्रकृतिपुरुषो ब्रह्म
हि गणः ।। स चेशश्चोत्पत्तिस्थितिलयकरोऽयं प्रथम को

यतो भूतं भव्यं भवति पतिरीशो गणपतिः ॥८॥ गकारः कण्ठोर्ध्वं गजमुखसमो मर्त्यसदृशो णकारः कंठाधोजठर सदृशाकार इति च ॥ अधोभागः कट्यां चरण इति ही शोऽस्य च तनुर्विभातीत्थं नाम त्रिभुवनसमं भूर्भुवःसुवः ॥९॥ गणेशेति त्र्यर्णात्मकमपि वरं नाम सुखदं सकृत्प्रो-च्चैरुच्चारितमिति नृभिः पावनकरम् ॥ गणेशस्यैकस्य प्रतिजपकरस्यास्य सुकृतं न विज्ञातो नाम्नः सकल-महिमा कीदृशविधः ॥१०॥ गणेशेत्याह्वां यः प्रवदति मुहुस्तस्य पुरतः प्रपश्यंस्तद्वक्त्रं स्वयमपि गणस्तिष्ठति तदा ॥ स्वरूपस्य ज्ञानं त्वमुक इति नाम्नाऽस्य भवति प्रबोधः सुप्तस्य त्वखिलमिह सामर्थ्यममुना ॥११॥ गणे-शो विश्वस्मिन्स्थित इह च विश्वं गणपतौ गणेशो यत्रा-स्ते धृतिमतिरतैश्वर्यमखिलम् ॥ समुक्तं नामैकं गण-पतिपदं मंगलमयं तदेकास्यं दृष्टे. सकलविबुधास्येक्षण-समम् ॥१२॥ बहुक्लेशैर्व्याप्तः स्मृत उत गणेशे च हृदये क्षणात्क्लेशान्मुक्तो भवति सहसा त्वभ्रचयवत् ॥ वने विद्यारम्भे युधि रिपुभये कुत्र गमने प्रवेशे प्राणांते गण-पतिपदं चाशु विशति ॥१३॥ गणाध्यक्षो ज्येष्ठः कपिल अपरो मंगलनिधिर्दयालुर्हेरंबो वरद इति चिन्तामणि-रजः ॥ वरानीशो ढुंढिर्गजवदननामा शिवसुतो मयूरेशो गौरीतनय इति नामानिपठति ॥१४॥ महेशोऽयं विष्णुः

सर्कविरविरिन्दुः नमलजः क्षितिस्तोयं वह्निः श्वसन
इति खं त्वद्रिरुदधिः ।। कुजस्तारः शुक्रो गुरुरुडुबुधोऽ-
गुश्च धनदो यमः पाशी काव्यः शनिरखिलरूपो गण-
पतिः ।।१५।। मुखं वह्निः पादौ हरिरपि विधाता प्रज-
ननं रविर्नेत्रे चन्द्रो हृदयमपि कामोऽस्य मदनः ।। करे
शक्रः कट्यामवनिरुदरं भाति दशनं गणेशस्यासन्वै क्रतु-
मयवपुश्चैव सकलम् ।।१६।। अनर्घ्यालंकारैररुणवसनै
र्भूषिततनुः करीन्द्रास्यः सिंहासनमुपगतो भाति बुध-
राट् ।। स्मितः स्यात्तन्मध्येऽप्युदितरविबिंबोपमरुचिः
स्थिता सिद्धिर्वामे मतिरितरगा चामरकरा ।।१७।।
समंतात्तस्यासन्प्रवरमुनिसिद्धाः सुरगणाः प्रशंसंतीत्यग्रे
विविधनुतिभिः सांजलिपुटाः ।। विडौजाद्यैर्ब्रह्मादिभिर-
नुवृत्तो भक्तनिकरैर्गणक्रीडामोदप्रमुदविकटाद्यैः सहचरैः
।।१८।। वशित्वाद्यष्टादशदिगखिलाल्लोलमनुवाग्धृतिः पादूः
खड्गोऽञ्जन्नरसबलाः सिद्धय इमाः ।। सदा पृष्ठे तिष्ठ-
न्त्यनिमिषदृशस्तन्मुखलया गणेशं सेवंतेऽप्यतिनिकटसूपा-
यनकराः ।।१९।। मृगांकास्या रंभाप्रभृतिगणिका यस्य
पुरतः सुसंगीतं कुर्वन्त्यपि कुतुकगंधर्वसहिताः ।। मुदः
पारो नात्रेत्यनुपममदे देर्विगलिता स्थिरं जातं चित्तं
चरणमवलोक्यास्य विमलम् ।।२०।। हरेणायं ध्यातस्त्रि-
पुरमथने च ुरवधे गणेशः पार्वत्या बलिविजयकालेऽपि

हरिणा ॥ विधात्रा संसृष्टावुरगपतिना क्षोणिवरणे नरैः सिद्धौ मुक्तौ त्रिभुवनजये पुष्पधनुषा ॥२१॥ अयं सुप्रासादे सुर इव निजानंदभुवने महान् श्रीमानाद्यो लघुतरगृहे रंकसदृशः ॥ शिवद्वारे द्वाःस्थो नृप इव सदा भूपतिगृहे स्थितो भूत्वोमांके शिशुगणपतिर्लालनपरः ॥२२॥ अमुष्मिन्संतुष्टे गजवदन एवापि विबुधे ततस्ते संतुष्टास्त्रिभुवनगताः स्युर्बुधगणाः ॥ दयालुर्हेरंबो न च भवति यस्मिंश्च पुरुषे वृथा सर्वं तस्य प्रजननमतः सांद्रतमसि ॥२३॥ वरेण्यो भूशुंडिर्भृगुगुरुकुजा मुद्गलमुखा ह्यपारास्तद्भक्ता जपहवनपूजास्तुतिपराः ॥ गणेशोऽयं भक्तप्रिय इति च सर्वत्र गदितं विभक्तिर्यत्रास्ते स्वयमपि सदा तिष्ठति गणः ।२४। मृदः काश्चिद्धातोश्छदविलिखिता वापि दृषदः स्मृता व्याजान्मूर्तिः पथि यदि बहिर्येन महसा ॥ अशुद्धोऽद्धा द्रष्टा प्रवदति तदाह्वा गणपतेः श्रुतः शुद्धो मर्त्यो भवति दुरिताद्विस्मय इति ॥२५॥ बहिर्द्वारस्योर्ध्वं गजवदनवर्ष्मेन्धनमयं प्रशस्तं वा कृत्वा विविधकुशलैस्तत्र निहितम् ॥ प्रभावात्तन्मूर्त्या भवति सदनं मंगलमयं त्रिलोक्यानंदस्तां भवति जगतो विस्मय इति ।२६। सिते भाद्रे मासे प्रतिशरदि मध्याह्नसमये मृदो मूर्तिं कृत्वा गणपतितिथौ ढुण्ढिसदृशीम् ॥ सतचैत्युत्साहे प्रभवति महान् सर्वसदने विलोक्यानं-

दस्तां प्रभवति नृणां विस्मय इति ॥२७॥ तथा ह्येकः
श्लोको वरयति महिम्नो गणपतेः कथं स श्लोकेऽस्मिन्
स्तुत इति भवेत्संप्रपठिते ॥ स्मृतं नामास्यैकं सकृदिदम-
नंताहृवयसमं यतो यस्यैकस्य स्तवनसदृशं नान्यदपरम्
॥२८॥ गजवदन विभो यद्वर्णितं वैभवं ते त्विह जनुषि
ममेत्थं चारु तद्दर्शयाशु ॥ त्वमसि च करुणायाः सागरः
कृत्स्नदाताप्यति तव भृतकोऽहं सर्वदा चिंतकोऽस्मि
॥ २९ ॥ सुस्तोत्रं प्रपठतु नित्यमेतदेव स्वानंदं प्रतिगम-
नेऽप्ययं सुमार्गः ॥ संचिंत्य स्वमनसि तत्पदारविन्दं स्था-
प्याग्रे स्तवनफलं नतीः करिष्ये ॥३०॥ गणेशदेवस्य म-
हात्म्यमेतद्यः श्रावयेद्वापि पठेच्च तस्य ॥ क्लेशा लयं
यान्ति लभेच्च शीघ्रं स्त्रीपुत्रविद्यार्थगृहं च मुक्तिम् ।३१

इति श्रीपुष्पदन्तविरचितं श्रीगणेशमहिम्नः स्त्रोतं संपूर्णम्

३--गणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यम उवाच ॥ गणेश हेरंब गजान-
नेति महदर स्वानुभवप्रकाशिन् ॥ वरिष्ठ सिद्धिप्रिय
बुद्धिनाथ वदंतमेवं त्यजत प्रभीताः ॥१॥ अनेकविघ्नां-
तक वक्रतुण्ड स्वसंज्ञवासिंश्च चतुर्भुजेति ॥ कवीश देवां-
तकनाशकारिन् वदंतमेवं त्यजत प्रभीताः ॥२॥ महेश-
सूनो गजदैत्यशत्रो वरेण्यसूनो विकट त्रिनेत्र ॥ वरेश
पृथ्वीधर एकदंत वदंतमेवं० ॥३॥ प्रमोद मोदेति नरांत-

कारे षडूर्मिहंतर्गजकर्ण ढुण्ढे ॥ द्वे द्वारिसिन्धो स्थिर-
भावकारिन् वदंत० ॥४॥ विनायक ज्ञानविघातशत्रो
पराशरस्यात्मज विष्णुपुत्र ॥ अनादिपूज्याखुग सर्वपूज्य
वदंतमेवं० ॥५॥ वैरिंच्य लम्बोदर धूम्रवर्ण मयूरपालेति
मयूरवाहिन् ॥ सुरासुरैः सेवितपादपद्म वदंतमेवं० ॥६॥
वरिन्महाखुध्वज शूर्पकर्ण शिवाज सिंहस्थ अनंतवाह ॥
दतौज विघ्नेश्वर शेषनाभे वदंतमेवं० ॥७॥ अणोरणीयो
महतो महीयो रवेर्ज योगेशज ज्येष्ठराज ॥ निधीश मंत्रेश
च शेषपुत्र वदंतमेवं० ॥८॥ वरप्रदातरदितेश्च सूनो
परात्पर ज्ञानद तारवक्त्र गुहाग्रज ब्रह्मप पार्श्वपुत्र
वदंत० ॥९॥ सिन्धोश्च शत्रो परशुप्रयाणे शमीशपुष्प-
प्रिय विघ्नहारिन् ॥ दूर्वाभरैरर्चित देवदेव वदंत०॥१०॥
धियः प्रदातश्च शमीप्रियेति सुसिद्धिदातश्च सुशांतिदातः॥
अमेयमायामियविक्रमेति वदंत० ॥११॥ द्विधा चतुर्थि
प्रिय कश्यपाच्च धनप्रद ज्ञानपदप्रकाशिन् ॥ चिंतामणे
चित्तबिहारकारिन् वदंतमेवं ॥१२॥ यमस्य शत्रो
ह्यभिमानशत्रो विधेर्ज हंतः कपिलस्य सूनो ॥ विदेह
स्वानंदज योगयोग वदंतमेवं० ॥१३॥ गणस्य शत्रो कपि-
लस्य शत्रो समस्तभावज्ञ च भालचन्द्र । अनादिमध्यांतमय
प्रचारिन् वदंतमेवं० ॥१४॥ विभो जगद्रूप गणेश भूमन्
पुष्टेः पते आखुगतेति बोधः ॥ कर्तुश्च तु संहरेति

वदंत ।।१५।। इदमष्टोत्तरशतं नाम्नां तस्य पठंति ये ।।
शृण्वंति तेषु वै भीताः कुरुध्वं मां प्रवेशनम् ।।१६।।
भुक्तिमुक्तिप्रदं ढुण्ढेर्धनधान्यप्रवर्धनम् ।। ब्रह्मभूतकरं
स्तोत्रं जपन्तं नित्यमादरात् ।।१७।। यत्र कुत्र गणेशस्यं
चिह्नयुक्तानि वैं भटाः ।। धीमानि तत्र संभीताः कुरुध्वं
मा प्रवेशनम् ।।१८।।

इति यजदूतसंवादे गणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

४-गणेशस्तवराजः

गणेशस्य स्तवं वक्ष्ये कलौ झटिति सिद्धिदम् । न
न्यासो न च संस्कारो न होमो न च तर्पणम् । न मार्जनं
च पश्चाशत्सहस्रजपमन्त्रतः । सिद्धयत्यर्चनतः पश्चशत-
ब्राह्मणभोजनात् अस्य श्रीगणेशस्तवराजमन्त्रस्य भग-
वान सदा शिव ऋषिः, अनेष्टुप छन्दः श्री महागणपति-
र्देवता, श्री महागणपतिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।। विना-
यकैक भावनासमर्चनासमर्पितं प्रमोदकैः प्रमोदकैः प्रमोद-
मोदमोदकम् । यदर्पितं समर्पितं नवान्यधान्यनिर्मितं न
खण्डितं न खंडितं न खंडमंडनं कृतम् ।।१।। सजाति
कृद्विजातिकृत्स्वनिष्ठभेदवर्जितं निरंजनं च निर्गुणं निरा-
कृति हि निष्क्रियम् । सदात्मकं चिदात्मकं सुखात्मकं
परं पदं भजामि तं गजाननं स्वमाययात्तविग्रहम् ।।२।।

गणाधिप त्वमष्टमूर्तिरीशसूनुरीश्वरस्त्वमम्बरं च शम्बरं धनञ्जयः प्रभञ्जनः। त्वमेव दीक्षितः क्षितिर्निशाकरः प्रभाकरश्चराचरप्रचारहेतुरन्तरायशान्तिकृत् ॥३॥ अनेकदं तमालनीलमेकदन्तसुन्दरम् गजाननं नमोऽ-गजाननामृताब्धिचन्दिरम् समस्तवेदवादसत्कलाकलापमन्दिरं महान्तरायकृत्तमोऽर्क माश्रितोन्दुरुं परम् ॥४॥ सरत्नहेमघण्टिकानिनादनूपुरस्वनैर्मृदङ्गतालनादभेद साधनागुरुतः। धिगिद्धिगित थोङ्ग थोङ्ग थैतिशब्दतो विनायकः शशाङ्कशेखरः प्रहृष्य नृत्यति ॥५॥ सदा नमामि नायकैकनायकं कलाकलापकल्पनाब्धिदानमादिपुरुषम्। गणेश्वरं गुणेश्वररं महेश्वरात्मसं भवम् स्वपादपद्मसेविनामपारवैभवप्रदम् ।६। भजे प्रचण्ड तुन्दिलं सदन्दशूकभूषणं सनन्दनादिवन्दितम् समस्तसिद्धसेवितम्। सुरासुरौघयोः सदा शयप्रदं भयप्रदं समस्तविघ्नघातिन स्वभक्तपक्षपतिनम् ॥७॥ कराम्बुजातकङ्कणः पदाब्ज किङ्किणीगणो गणेश्वरो गुणार्णवः फणीश्वराङ्गभूषणः। जगत्रयान्तरायशान्तिकारकोऽस्तु तारको भवार्णवस्थघोरदुर्गहा चिदेकविग्रहः ॥८॥ यो भक्तप्रवणश्चराचरगुरोः स्तोत्रं गणेशाष्टकं शुद्धः संयतचेतसा यदि पठेन्नित्यंत्रिसन्ध्यं पुमान्। तस्त श्रीरतुला स्वसिद्धिसहिता श्रीशारदा

सर्वदा स्यातां तत्परिचारिके किल तदा काः कामनानां कथाः ॥६॥

इति श्रीरुद्रयामले कथाः गणेशस्तवराजः सम्पूर्णः ।

५--गणेशस्तोत्रम्

स्कन्द उवाच--नमस्ते योगरूपाय सम्प्रज्ञात शरीरिणे । असम्प्रज्ञातमूर्ध्ने ते तयोर्योगमयाय च ॥१॥ वामाङ्ग भ्रान्तिरूपा ते सिद्धिः सर्वप्रदा प्रभो । भ्रान्ति-धारक रूपा वै बुद्धिस्ते दक्षिणाङ्के ॥२॥ माया-सिद्धिस्तथा देवोमायिको बुद्धिसंज्ञितः । तयोर्योगे गणेशान त्वं स्थितोऽसि नमोऽस्तुते ॥३॥ जगद्रूपो गकारश्च णकारो ब्रह्मवाचकः । तयोर्योगें गणेशाय नाम तुभ्यं नमो नमः ॥४॥ चतुर्विधं जगत्सर्वं ब्रह्म तत्र तदात्मकम् । हस्ताश्चत्वारि एव ते चतुर्भुज नमोऽस्तुते ॥५॥ स्वसंवेद्यं च यद्ब्रह्म तत्र खेलकरो भवान् । तेन स्वानन्दवासी त्वं स्वानन्दपतये नमः ॥६॥ द्वन्द्वं चरसि भक्तानां तेषां हृदि समस्थितः । चौरवत्तेन तेऽभूद्वै मूषको वाहनं प्रभु ॥७॥ जगति ब्रह्मणि स्थित्वा भोगान्भुङ्क्षि स्वयोगगः । जगद्भिर्ब्रह्मभिस्तेन चेष्टितं ज्ञायते न च ॥८॥ चौरवद्भोगकर्ता त्वं तेन ते वाहनं परम् । मूषको मूषकारूढो हेरम्बाय नमो नमः ॥९॥ किं स्तौमि त्वां गणाधीश योगशान्ति धरं परम् । वेदादयो

ययुः शान्तिमतं नमास्यहम् ॥१०॥ इति स्तोत्रम् समाकर्ण्य गणेशस्तमुवाच ह । वरं वृणु महाभाग दास्यामि दुर्लभं ह्यपि ॥११॥ त्वया कृतमिदं स्तोत्रं योगशान्तिप्रदं भवेत् । मयि भक्तकरं स्कन्द सर्वसिद्धिप्रदं तथा ॥१२॥ यं यमिच्छसि तं तं वै दास्यामि स्तोत्रयन्त्रितः । पठते शृण्वते नित्यं कार्तिकेय विशेषतः ॥१३॥

इति श्रीमुद्गलपुराणे भक्तमनोरथ सिद्धिप्रदं गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

६-विघ्नविनाशकस्तोत्रम्

ईशानो ढुण्ढिराजो गणपतिरखिलाद्यौघनाशोऽरेग्यो देवानामग्रगण्यः सकलगुणनिधिर्योऽग्रपूजाधिकारी । विद्याधीशो बलिष्ठः षडरिविदलनः सिद्धिबुद्धिप्रदाता जीवानां मुक्तिहेतुर्जयति भवहरः श्रीगुरुः सौख्यसिन्धुः ॥१॥ विघ्नान्हन्तीति योऽसौ श्रुतिषु निगदितोविघ्नहेतिप्रसिद्धो व्यक्तेवाऽव्यक्तरूपे प्रणववपुरयं ब्रह्मरूपः स्वमात्रः। यो व्यक्तो भक्तहेतुर्निरवधिरमलो निर्गुणो निष्क्रियोपि भक्तानां मुक्तिहेतौ विदलयति कृतं मायिक स्याद्वयः सः ॥२॥ सर्पोरज्जुर्हि यद्वन्न भुजग इति सा कथ्यते रज्जुसर्पे विश्वं ब्रह्मैव तद्वन्न च जगदिति तत्खल्विदं ब्रह्मवाक्ये । सत्तासामान्यरूपात्कथितमपि च यो दृश्यरूपो न तादृक् दृश्यं यद्विघ्नकृत्स्यात्तदपनयति

यो बोधतो विघ्नहाऽयम् ॥३॥ सर्वं ब्रह्मस्वरूपं परम-
परयुतं विश्वमाभाति यच्च चैतन्यस्याद्द्वयत्वाद् गदित
इति च यो दृश्यरूपोऽप्यरूपः। माया तत्सर्वकार्यं जड-
मिति कथितं यं विनाभावमेति सर्वत्रावस्थित त्वात्तदनु-
भव इति स्वादनाद्योऽद्वयः सः ॥४॥ भात्यस्त्यानन्द-
रूपोऽसदसुखजडतारूप दृश्येऽस्तियो वै नित्योनित्यादि-
कानां भयति किल तथा चेतनश्चेतनानाम्। सर्वस्यैतस्य
मायाकृतसुखमिहयत् प्रार्थ्यते तद्गणेशो यस्तं सर्वादि-
भूतं भमत जगति भोः सारभूतम् वरेण्यम् ॥५॥ नित्यं
यन्निर्विकारं निरतिशयसुखं ब्रह्मतन्मत्स्वरूपं ज्ञात्वा
विश्वातिभूतः सकलबिदलयन् स्वार्चिषास्वस्थे आसे।
माया तत्कार्यमेतत्स्पृशति न मयि वा दृश्यते नाऽविरा-
सीन् मायायाः सर्वशक्तेः पर इति सततं यः स एवा-
द्वयोऽहम् ॥६॥ ब्रह्मानन्दकरोऽयमात्ममतिदः श्री ढुंढि-
राज स्तनोविघ्नाद्यौघघनप्रचंडपवनः कामेभपञ्चाननः।
मायाब्यालकुलप्रमत्तगरुडो मोहाटवीहव्यवाड् अज्ञाना-
न्धनिवारणैकतरणिर्भेदाब्धिकुम्भोद्भवः ॥७॥

इति श्रीभगवती श्रीधरस्वामिना विरचितं विघ्न-विनाशकस्तोत्रम्
सम्पूर्णम्।

७—सन्तानगणपतिस्तोत्रम्

नमोऽस्तु गणनाथाय सिद्धिबुद्धियुताय च। सर्व-

प्रदाय देवाय पुत्रवृद्धिप्रदाय च ॥१॥ गुरुदराय गुरवे गोरत्त्रे गुह्यासिताय ते । गोप्याय गोपिताशेष भुवनाय चिदात्मने ॥२॥ विश्वमूलाय भव्याय विश्वसृष्टिकराय ते । नमो नमस्ते सत्याय सत्यपूर्णाय शुण्डिने ॥३॥ एकदन्ताय शुद्धाय सुमुखाय नमो नमः ॥ प्रपन्नजनपालाय प्रणतार्तिविनाशिने ॥४॥ शरणं भव देवेश सन्तति सुदृढां कुरु ॥ भविष्यन्ति च ये पुत्रा मत्कुले गणनायक ॥५॥ ते सर्वे तव पूजार्थं निरताः स्युर्वरोमतः ॥ पुत्रप्रदमिदं स्तोत्र सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥६॥

इति सन्तानगणपतिस्तोत्रं सम्पूर्ण ॥

८--गणेशदिव्यदुर्गस्तोत्रम्

श्रीकृष्ण उवाच ॥ वद शिवमहानाथ पार्वती रमणेश्वर ॥ दैत्यसंग्रामवेलायां स्मरणीयं किमीश्वर ॥ १ ॥ इश्वर उवाच ॥ शृणु कृष्ण प्रवक्ष्यामि गुह्यद्गुह्यतरं महत् ॥ गणेशदुर्गदिव्यं च शृणु यक्ष्याभि भक्तितः ॥२॥ त्रिपुरवध वेलायां स्मरणीयं कमीश्वर ॥ दिव्यदुर्गप्रसादेन त्रिपूराणां वधः कृतः ॥३॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ हेरम्बस्य दुर्गमिदं वद त्वं भक्त वत्सल ॥ ईश्वर उवाच । शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि दुर्गवैनायकम् शुभम् ॥४॥ संग्रामे च श्मशानेच अरण्ये चोरसंकटे ॥ नृपद्वारे ज्वरे घोरे येनैव मुच्यते भयात् ॥५॥

प्राच्यां रक्षतु हेरम्बः आग्नेयमाग्नितेजसा ।। याम्यां
लम्बोदरो रक्षेत् नैर्ऋत्यां पार्वतीसुतः ।।६।। प्रतीच्यां
वक्रतुण्डश्च वायव्यां वरदप्रभुः ।। गणेशः पातु औदिच्यां
ईशान्यामीश्वरस्तथा ।।७।। ऊर्ध्वं रक्षेत्धूम्रवर्णोह्यधस्ता-
त्पापनाशनः ।। एवं दशदिशो रक्षेत् हैरम्बो विघ्ननाशनः
।।८।। हेरम्बस्य दुर्गमिदं त्रिकालं यः पठेन्नरः ।। कोटि-
जन्मकृतं पापं एकावृत्तेन नश्यति ।।९।। गणेशाङ्गार-
शेषेण दिव्यदुर्गेण मन्त्रितम् ।। ललाटं र्चाचतं येन त्रै-
लोक्यवशमानयेत् ।। १० ।। मात्रागमसहस्त्राणि सुरा-
पानशतानि च ।। तत्क्षणात्तानि नश्यन्ति गणेशतीर्थं
वन्दनात् ।। ११ ।। नैवेद्यं वक्रतुण्डस्य नरो भुङ्क्ते तु
भक्तितः ।। राज्यदानसहस्त्राणि तेषां फलमवाप्नुयात्
।।१२।। कदाचित् पठ्यते भक्त्या हेरम्बस्य प्रसादतः ।।
शाकिनीडाकिनीभूत प्रेतवेताल राक्षसाः ।।१३।। ब्रह्म-
राक्षसकूष्माण्डाः प्रणश्यन्ति च दूरतः ।। भूर्जे वा ताड
पत्रे वा दुर्ग हेरम्बमालिखेत् ।।१४।। करमूले घृतं येन
करस्थाः सर्वसिद्धयः ।। एकमावर्तनं भक्त्या पठेन्नित्यं
तु यो नरः ।।१५।। कल्पकोटिसहस्त्राणि शिवलोके मही-
यते ।। लिंगदानसहस्त्राणि पृथ्विदान शतानि च ।।१६।।
गजदान सहस्त्रं च गणेशस्तयनात् फलम् ।।

इति श्री पद्मपुराणे गणेशदिव्यं दुर्गस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

९-गणेशनामाष्टकंस्तोत्रम्

विष्णुरुवाच ॥ गणेशमेकदन्तं च हेरम्ब विघ्ननायकम् ॥ लम्बोदरं शूर्पकर्णं गजवक्त्रम् गुहाग्रजम् ॥१॥ नामार्थं च पुत्रस्य शृणु मातर्हरप्रिये ॥ स्तोत्राणां सारभूतं च सर्वविघ्नहरं परम् ॥२॥ ज्ञानार्थवाचको गश्चणश्च निर्वाणवाचकः ॥ तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम् ॥३॥ एकशब्दः प्रधानार्थो दन्तश्च बलवाचकः ॥ बलं प्रधानं सर्वस्मादेकदन्तं नमाम्यहम् ॥४॥ दीनार्थवाचको हेश्च रम्बः पालकवाचकः ॥ दीनानां परिपालकं प्रणमाम्यहम् ॥५॥ विपत्तिवाचको विघ्नो नायकः खंडनार्थकः ॥ विपत्खंडनकारकं नमामि विघ्ननायकम् ॥६॥ विष्णुदत्तैश्च नैवेद्यर्यस्य लम्बोदरं पुरा ॥ पित्रा दत्तैश्च विविधैर्वन्दे लम्बोदरं च तम् ॥७॥ शूर्पाकारौ च यत्कर्णौ विघ्नवारणकारणौ ॥ सम्पदौ ज्ञानरूपौ च शूर्पकर्णं नमाम्यहम ॥८॥ विष्णु प्रसाद पुष्पं च यन्मूर्ध्नि मुनिदत्तकम् ॥ तद्गजेन्द्रवक्त्रयुक्तं गजवक्त्रम् नमाम्यहम् ॥९॥ गुहस्याग्रे च जातोऽयमाविर्भूतो हरालये ॥ वन्दे गुहाग्रजं देवं सर्वदेवाग्रपूजितं ॥१०॥ एतन्नामाष्टकं दुर्गे नामभिः संयुतं परं ॥ पुत्रस्य पश्य वेदे च तदा कोपं तथा कुरु ॥११॥ एतन्नामाष्टकं स्तोत्रं नानार्थ संयुतं शुभं ॥ त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं स सुखी सर्वतो

जयी ।।१२।। ततो विघ्नाः पलायन्ते वैनतेयाद् यथोरगाः
।। गणेश्वर प्रसादेन महाज्ञानी भवेद् ध्रुवम् ।।१३।।
पुत्रार्थी लभते पुत्रं भार्यार्थी विपुलां स्त्रियम ।। महा-
जड़ः कवीन्द्रश्च विद्यावांश्च भवेद् ध्रुवम् ।।१४।।

इति श्री ब्रह्मवैवर्ते विष्णुपदिष्टं गणेशनामाष्टकं स्तत्रोम्
सम्पूर्णम् ।

१०–गणेशावतारस्तोत्रम्

अङ्गिरस उवाच ।। अनन्ता अवतारश्च गणे-
शस्य महात्मनः ।। न शक्यते कथां वक्तुं मया वर्ष शतै-
रपि ।१। सङ्क्षेपेण प्रवक्ष्यामि मुख्यानां मुख्यतां गतान् ।
अवरांताश्च तस्याष्टौ विख्यातान ब्रह्म धारकान् ।।२।।
वक्रतुण्डावतारश्च देहानां ब्रह्म धारकः ।। मत्सरासुर-
हन्वा स सिंहवाहनगः स्मृतः ।।३।। एकदन्तावतारो वै
देहिनां ब्रह्मधारकः ।। मदासुरस्य हन्ता स आखुवाहन-
गः स्मृतः ।।४।। महोदर इति ख्यातो ज्ञान ब्रह्म प्रका-
शकः ।। मोहासुरस्य शत्रुर्वै आखुवाहनगः स्मृतः
।।५।। गजाननः स विज्ञेयः सांख्येभ्यः सिद्धदायकः
लोभासुर प्रहर्ता च मूषकगः प्रकीर्तितः ।। ६ ।।
लम्बोदरावतारो वै क्रोधासुर निबर्हणः ।। आखुगः
शक्तिब्रह्मासन् तस्यधारक उच्यते ।।७।। विकटो नाम
विख्यातः कामासुरप्रदाहकः ।। मयूरवाहनश्चायं सौर-

भात्मधरः स्मृतः ॥८॥ विघ्नराजावतारश्च शेषवाहन उच्यते । ममासुर प्रहन्ता स विष्णुब्रह्मेति वाचकः ।९। धूम्रवर्णावतारश्चाभिमानासुर नाशकः । आखुवाहनतां प्राप्तः शिवात्मकः स उच्यते ॥१०॥ एतेऽष्टौ ते मया प्रोक्ता गणेशांशा विनायकाः । एषां भजनमात्रेण स्व-स्वब्रह्मप्रधारकाः ॥११॥ स्वानन्दवासकारी स गणेशानः प्रकथ्यते । स्वानन्दे योगभिर्दृष्टो ब्रह्मणि नात्र संशयः ॥१२॥ तस्यावताररूपाश्चष्टौ विघ्नहरणाः स्मृताः । स्वानन्दभजनेनैव लीलास्तत्र भवन्ति हि ॥१३॥ माया तत्र स्वयं लीना भविष्यति सुपुत्रक । संयोगे मौनभावश्च समाधिः प्राप्यते जनैः ॥ १४ ॥ अयोगे गणराजस्य भजने नैव सिद्धयति । मायाभेदमयं ब्रह्म निर्वृतिः प्रात्यते परा ॥१५॥ योगात्मकगणेशानो ब्रह्मणस्पति वाचकः । तत्र शान्तिः समाख्याता योगरूपा जनैः कृता ॥१६॥ नानाशान्तिप्रभेदश्च स्थाने-स्थाने प्रकथ्यते । शान्तीनां शान्तिरूपा सा योगशान्तिः प्रकीर्तिता ॥१७॥ योगस्य योगता दृष्टा सर्वब्रह्म सुपुत्रक । न योगात्परम् ब्रह्म ब्रह्मभूतेन लभ्यते ॥१८॥ एतदेव परं गुह्यं कथितं वत्स तेऽखिलम् । भज त्वं सर्वभावेन गणेशं ब्रह्मनाय-कम् ॥१९॥ पुत्रपौत्रादिप्रदं स्तोत्रमिदं शोक बिना-शनम् । त्तनधान्यसमृद्धयादिप्रदं भावि न संशयः ।२०।

धर्मार्थकाममोक्षाणां साधनं ब्रह्मदायकम् । भक्तिदृढ़ करं चैव भविष्यति न संशयः ॥२१॥

इति श्री मुद्गलपुराणे गणेशावतार स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।

११—गणाधीशस्तोत्रम्

कर्दम उवाच । केनोपायेन भो वत्स योगशान्तिः प्रलभ्यते । तदर्थं पूजनीयं किं तद्वदस्व जनार्दन ।१। कपिल उवाच । गणेश भजनं मुख्यं शान्तियोगप्रदम् मतम् । योगाकारस्वरूपं तं ब्रह्मेश भजमानद ॥२॥ सर्वादिः सर्वपूज्योऽयं सर्वाधारो महामुने । य आदिः प्रलयान्ते स तिष्ठति शास्त्रसम्मतम् ॥३॥ ज्येष्ठराज गणेशानं वेदेषु प्रवदन्ति तम् । गणाः सममूहरूपाश्च तेषां स्वामी प्रकथ्यते ॥४॥ नानाजगत्स्वरूपं वैदेहरूपं कृतं मुने । नाना ब्रह्ममयं तेन शिरः कृतं महात्मना ॥५॥ यस्माज्जातमिदं यत्र ह्यन्ते गच्छति महामते । तद्वेदे गजशब्दाख्यं शिरस्तेन गजाननः ॥६॥ त्रिविधं भेदयुक्तं यद खण्डं वै तुरीयकम् । तयोर्योगे गणेशोऽयं देहमस्तकयोर्गतः ॥७॥ चित्तं पञ्चविधं प्रोक्तं तत्र मोहश्च पञ्चधा । मोहरूपा महासिद्धिर्बुश्चद्धि मोहधारका ॥८॥ तयोः स्वामी गणाधीशश्चित्ते नित्यं प्रतिष्ठितः । चिन्तामणिर्महाभागो लभ्यते योगसेवया ॥९॥ पञ्चधाचित्तमुत्सृज्य तदैश्वर्यं तथैव च । योगः शान्तिमयः सद्यः प्राप्यते ब्रह्मणस्पतिः

॥१०॥ तस्मात्त्वं भज मन्त्रेणैकाक्षरेण महामुने । तेन तुष्टो गणेशानो योगं दास्यति शान्तिदम् ॥११॥

॥ इति श्री मुद्गलपुराणे योगशान्तिप्रदं श्री गणाधीशस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।

१२-सिद्धिविनायकस्तोत्रम् ।

विघ्नेश विघ्नचयखण्डननामधेय श्रीशङ्करात्मज सुराधिपवन्द्यपाद । दुर्गामहाव्रतफलाखिलमंगलात्मन् विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥१॥ सत्पदमराग-मणिवर्णशरीरकान्तिः श्रीसिद्धिपरिचर्चितकुङ्कुम श्रीः । दक्षस्तेन वलयितातिमनोज्ञशुण्डोविघ्नं ममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥२॥ पाशाङ्कुशाब्जपरशूश्चं दध-च्चतुर्भिर्दोर्भिश्च शोणकुसुरस्त्रगुमांगजातः । सिन्दूरशो-भितललारविधुप्रकन्शोविघ्नं ममापहरसिद्धिविनायकत्वम् ॥३॥ कार्येषुविघ्नचयभीतविरञ्चिमुख्यैः संपूजितः सुख-रैरपिमोदकाद्यैः । सर्वेषु च प्रथममेव सुरेषु पूज्योविघ्नं ममापहरसिद्धिविनायकत्वम् ॥ ४ ॥ शीघ्रञ्चनस्खलन-तुंगरवोर्ध्वकण्ठस्थूलेन्दुरुद्रगणहासितदेवङ्घः । शूर्प-श्रुतिश्च पृथुवर्तुलतुङ्गतुन्दोविघ्नंममापहर सिद्धिविनाय-त्वम् ॥५॥ यज्ञपवीतपदलम्भितनागराजोमासादिपुण्य-दृट्शीकृतऋक्षराजः । भक्ताभयप्रद दयालयविघ्नराजवि-घ्नं ममापहरसिद्धिविनायकत्वम् ॥६॥ सद्रत्नसारतति-राजितसत्किरीटः कौसुम्भचारुवसनद्वप अजित श्रीः

सर्वत्रमङ्गलकरस्मरणप्रतापो विघ्नंममापहर सिद्धिविना
यकत्वम् ॥७॥ देवान्तकाद्यसुरभीत सुरातिहर्ता विज्ञान-
बोधनवरेण तमोऽपहर्ता । आनन्दितत्रिभुवनेश कुमार-
बन्धो विघ्नंममापहर सिद्धिविनायकत्वम् ॥८॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे विघ्ननिवारकं श्रीसिद्धिविनायकस्तोत्र सम्पूर्णम् ॥

१३-गजाननस्तोत्रम्

देवा ऊचुः । गजाननाय पूर्णाय सांख्यरूपमयाय
ते । विदेहेन च सर्वत्र संस्थिताय नमो नमः ॥१॥ अमे-
याय च हेरम्ब परशुधारकाय ते । मूषकवाहनायैव वि-
श्वेशाय नमो नमः ॥२॥ अनन्तविभवायैव परेशां पर-
रूपिणे । शिवपुत्राय देवाय गुहाग्रजाय ते नमः ॥३॥
पार्वती नन्दनायैव देवानां पालकाय ते । सर्वेषां पूज्यदे-
हाय गणेशाय नमो नमः ॥४॥ स्वानन्दवासिने तुभ्यं
शिवस्य कुलदैवत । विष्णवादीनां विशेषेण कुलदेवाय
ते नमः ॥ ५ ॥ योगाकाराय सर्वेषां योगशान्ति-
प्रदाय च । ब्रह्मेशाय नमस्तुभ्यं ब्रह्मभूत प्रदाय ते ।६।
सिद्धि बुद्धिपते नाथ सिद्धिबुद्धिप्रदायिने । मायिने मा-
यिकेभ्यश्च मोहदाय नमो नमः ॥७॥ लम्बोदराय वै
तुभ्यं सर्वोदरगताय च । अमायिने च मायाया आधा-
राय नमो नमः ॥८॥ गजः सर्वस्य बीजं यत्तेन चिह्नेन
विघ्नप । योगिनस्त्वां प्रजानन्ति तदाकारा भवन्ति ते

॥९॥ तेन त्वं गजवक्त्रश्च किं स्तुमस्त्वां गजानन। वेदादयो विकुण्ठाश्च शङ्कराद्याच देवयाः ॥१०॥ शुक्रादयश्च शेषाद्याः स्तोतुं शक्ता भवन्ति न। तथापिसंस्तुतोऽसि त्वं स्फूर्त्या त्वद्दर्शनात्मना ॥११॥ एवमुक्त्वा प्रणेमुस्तं गजाननं शिवादयः। स तानुवाच प्रीतात्मा भक्ति भावेन तोषितः ॥१२॥ श्री गजानन उवाच। भवत्कृतमिदं स्तोत्रं मदीयं सर्वदं भवेत्। पठते शृण्वते चैव ब्रह्मभूतप्रदायकम् ॥१३॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे शङ्करादिकृतं गजाननस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

१४-हेरम्बस्तोत्रम्।

गौर्युवाच। गजानन ज्ञानविहारकारिन्न मां च जानासि परावमर्षम्। गणेश रक्षस्व न चेच्छरीरं त्यजामि सद्यस्त्वयि भक्तियुक्ता ॥१॥ विघ्नेश हेरम्ब महोदरप्रिय लम्बोदर प्रेमविवर्धनाच्युत। विघ्नस्य हर्ताऽसुरसंघहर्ता मां रक्षदैत्यात्त्वयि भक्तियुक्ताम् ॥२॥ किं सिद्धि बुद्धिप्रप्रसरेण मोहयुक्तोऽसि किं वा निशि निद्रितोऽसि। किं लक्षलाभार्थविचारयुक्तः किं मां विस्मृत्य सुसंस्थितोऽसि ॥३॥ किं भक्तसंगेन च देवदेव नानोपचारैश्च सुयन्त्रितोऽसि। किं मोदकार्थे गणपाद्धृतोसि नानासिहारेषु च वक्रतुण्ड ॥४॥ स्वानन्दभोगेषु परिहृतोऽसि दासीं च विस्मृत्य महानुभाव। आनन्त्यलीलासु च लालसोऽसि

किं भक्तरक्षार्थसुसङ्कटस्थः ॥५॥ अहो गणेशामृतपानद-
क्षामरैस्तथा वासुरपैः स्मृतोऽसि । तदर्थ नानाविधि सं-
श्रुतोऽसिविसृज्य मां दासीमनन्यभावाम् ॥६॥ रक्षस्व
दीनतमां परेश सर्वत्र चित्तेषु च संस्थितस्त्वम् । प्रभो
विलम्बेन विनायकोऽसि ब्रह्मेश किं देव नमो नमस्ते
॥७॥ भक्ताभिमानीति च नाम मुख्यं वेदे त्वभावात्
नहिचेन्महात्मन् । आगत्य हत्वाऽदितिजं सुरेशमां रक्ष
दासीं हृदि पादनिष्ठाम् ॥८॥ अहो न दूरं तव किञ्चि-
देव कथं न बुद्धीश समागतोऽसि । सुचिन्त्यदेव प्रजहा-
भिदेहं यशः करिष्ये विपरीतमेवम् ॥९॥ रक्ष रक्ष दया
सिन्धोऽपराधान्मे क्षमस्व च । क्षणे क्षणे त्वहं दासी
रक्षितव्या विशेषतः ॥१०॥ स्तुवत्यामेव पार्वत्यां
शङ्करो बधोसंयुत । बभूव गणपानां वै श्रुत्वा हाहारवं
विधेः ॥९१॥ गणेशं मनसा स्मृत्वा वृषारूढः समाययौ ।
क्षणेन दैत्यराजं तं दृष्ट्वा डमरूणाहनत् ॥१२॥ ततः सो-
ऽपि शिवं वीक्ष्यालिङ्गितुं धावितोऽभवत् । शिवस्य
शूलिकादीनि शस्त्राणि कुण्ठितानि वै ॥१३॥ तं दृष्ट्वा
परमाश्चर्यं भयभीतो महेश्वरः । सस्मार गणपं सोऽपि
निर्विघ्ननार्थं प्रजापते ॥१४॥ पार्वत्याः स्तवनं श्रुत्वा-
गजाननः समाययो ।

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे हेरम्बस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१५-विष्णुकृतं गणेशस्तोत्रम् ।

नारायण उवाच । अथ विष्णुः सभामध्ये सम्पूज्य तं गणेश्वरम् । तुष्टव परया भक्त्या सर्वविघ्नविनाशकम् ॥१॥ विष्णु रुवाच । ईश त्वां स्तोतुमिच्छामि ब्रह्मज्योतिः सनातनम् । निरुपितुमशक्तोऽहमनुरूपमनीहकम् ॥१॥ प्रवरं सर्ववेदोनां सिद्धानां योगिनाम् गुरुम् । सर्वस्वरूपं सर्वेशं ज्ञानराशि स्वरूपिणम् ॥३॥ अव्यक्तमक्षरं नित्यं सव्यपात्मस्वरूपिणम् । वायुतुल्यातिनिर्लिप्तं चाक्षतं सर्वसाक्षिणम् ॥४॥ संसारार्णवपारे च मायापोते सुदुर्लभे । कर्णधारस्वरूपं च भक्तानुग्रहकारकम् ॥५॥ वरं वरेण्यं वरदं वरदानामपीश्वरम् । सिद्धिं सिद्धिस्वरूपं च सिद्धिदं सिद्धिसाधनम् ॥६॥ ध्यानातिरिक्तं ध्येयं च ध्यानासाध्यं च धार्मिकम् । धर्मस्वरूपं धर्मज्ञं धर्माधर्म फलप्रदम् ॥७॥ बीजं संसारवृक्षाणामङ्कुरं च तदाश्रयम् । स्त्रीपुन्नपुंसकानां च रूपमेतदतीन्द्रियम् ॥८॥ सर्वाधमग्रपूज्यं च सर्वपूज्यं गुणार्णवम् । स्वेच्छया सगुणं ब्रह्म निर्गुणं चापि स्वेच्छया ॥९॥ स्वयं प्रकृतिरूपं च प्राकृतं प्रकृतेः परम् । त्वां स्तोतुमक्षमोऽनन्तः सहस्रवदनेन च ॥१०॥ न क्षमः पञ्चवक्त्रश्च न क्षमश्चतुरनानः । सस्वती न शक्ता च न शक्तोऽरं तव स्तुतौ । न शक्ताश्च चतुर्वेदाः के वा ते वेदवा-

दिनः ॥११॥ इत्येवं स्तवनं कृत्वा सुरेशं सुरसंसदि । सुरेशश्च सुरैः सार्द्धं विराम रमापतिः ॥१२॥ इदं विष्णुकृतं स्तोत्रं गणेशस्य च यः पठेत् । सायंप्रातश्च मध्याह्ने भक्तियुक्तः समाहितः ॥१३॥ तद्विघ्ननिघ्नं कुरुतेंविघ्नेशः सततंमुने । वर्धते सर्वकल्याणं कल्याणजनकः सदा ॥१४॥ यात्राकाले पठित्वा तु यो याति भक्तिपूर्वकम् । तस्य सर्वाभीष्टसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ॥१५॥ तेन दृष्टं च दुःस्वप्नं सुस्वप्नमुपजायते । कदापि न भवेत्तस्य ग्रहपीडा च दारुणा ॥१६॥ भवेद् विनाशः शत्रूणां वन्धूनां च विवर्धनम् । शश्वद्विघ्नविनाशश्च शश्वत् सम्पद्विवर्धनम् ॥१७॥ स्थिरा भवेद् गृहे लक्ष्मीः पुत्रपौत्रविवर्धिनी । सर्वेश्वर्यमिह प्राप्य ह्यन्ते विष्णुपदं लभेत् ॥१८॥ फलं चापि च तीर्थानां यज्ञानां यद् भवेद् ध्रुवम् । महतां सर्वदानानां श्री गणेश प्रसादतः ॥१९॥

॥ इति श्री ब्रह्मवैवर्ते विष्णुकृतं गणेशस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

१६-मयूरेशस्तोत्रम् ।

ब्रह्मोवाच । पुराणपुरुषं देवं नानाक्रीडाकरं मुदा । मायाविनं दुर्विभाग्यं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥१॥ परात्परं चिदानंदं निर्विकारं हृदि स्थितम् । गुणातीतं गुणमयं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥२॥ सृजन्तं पालयन्तं च संहरंतं निजेच्छया । सर्वविघ्नहरं देवं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥३॥

नानादैत्यनिहन्तारं नानारूपाणिबिभ्रतम् । नानायुधधरं भक्त्या मयूरेशं नमाम्यहम् ॥४॥ इन्द्रादिदेवता वृन्दैरभिष्टुतमहर्निशम् । सदसद्व्यक्तमव्यक्तं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥५॥ सर्वशक्तिमयं देवं सर्वरूपधरं विभुम् । सर्वविद्याप्रवक्तारं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥६॥ पार्वतीनंदनं शभोरानंदपरिवर्द्धनम् । भक्तानंदकरं नित्यं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥७॥ मुनिध्येयं मुनिनुतं मुनिकामप्रपूरकम् । समष्टिव्यष्टिरूपं त्वां मयूरेशं नमाम्यहम् ॥८॥ सर्वज्ञाननिहन्तारं सर्वज्ञान करं शुचिम् । सत्यज्ञानमयं सत्यं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥९॥ अनेककोटिब्रह्माण्डनायकं जगदीश्वरम् अनंदविभवं विष्णुं मयूरेशं नमाम्यहम् ॥१०॥ मयूरेश उवाच ॥ इदं ब्रह्मकरं स्तोत्र सर्वपापप्रनाशनम् । सर्वकामप्रदां नृणां सर्वोपद्रवनाशनम् ॥११॥ कारागृहतानां च मोचनं दिनसप्तकात् । आधिव्याधिहरं चैव भुक्तिमुक्तिप्रदं शुभम् ॥१२॥

१७-गणेशपञ्चरत्नस्तोत्रम् ।

मुद्राकरात्तमोदकं सदा विमुक्तिसाधकं कलाधरावतंसकं विलासिलोकरंजकम् अनायकैकनायकं विनाशितेभदैत्यकं नताशुभाशु नाशकं नमामितंविनायकम् ॥१॥ नतेयरातिभीकरं नवोदितार्कभास्वरं नमत्सुरारिर्निजरंनताधिकापदुद्धरम् । सुरेश्वरं निधीश्वरं गजेश्वरं गणेश्वरं

महेश्वरं तमाश्रये-परात्परं निरन्तरम् ॥२॥ समस्तलो-
कशंकरं निरस्तदैत्यकुञ्जरं दरेतरोदरं वरंवरेभव-
क्त्रमक्षरम् । कृपाकरं क्षमाकरं मुदाकरं यशस्करं-
नमस्करम् नमस्कृतां नमस्करोमि भास्वरम् ॥३॥
अकिञ्चनार्तिमार्जनं चिरन्तनोक्तिभाजनंपुरारिपूर्वनन्दनं-
सुरारिगर्वचर्वणम् । प्रपञ्चनाशभीषणं धनञ्जयादि-
भूषणं कपोलदानवारणं भजे पुराणवारणम् ॥४॥
नितान्तकान्तदन्तकान्तिमन्तकान्तकात्मजमचिन्त्यरूपमन्त
हीनमन्त रायकृन्तनम् । हृदन्तरे निरन्तरं वसंन्तमेवयोगि-
नां तमेकदन्तमेवतंविचिन्तयामि सन्ततम् ।५। महागणेश
पञ्चरत्नमादरेण योऽन्वहं प्रगायति प्रभातकेहृदि-
स्मरन् गणेश्वरम् । अरोगतादोषतां सुसाहितीं सुपुत्रतां
समाहितायुरष्टभूतिमभ्युपैति सोऽचिरात् ॥६॥

इति श्री मच्छङ्कराचार्यकृतं गणेशपञ्चरत्नस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१८-गणाधिपस्तोत्रम् ।

सरागिलोकदुर्लभं विरागि लोक पूजितम् । सुरा-
सुरैर्नमस्कृतं जरादिमृत्युनाशकम् ॥१॥ गिरा गुरुं श्रिया
हरिं जयन्ति यत्पदार्चकाः ॥ नमामि तं गणाधिपं कृपा-
पयः पयोनिधिम् ॥१॥ गिरीन्द्रजामुखाम्बुजप्रमोददान
भास्करम् । करीन्द्रववक्त्रमानताद्य संघवारणोद्यतम् ।
सरीसृपेश बद्ध कुक्षिमाश्रयामि सन्ततम् । शरीरका-

न्तिर्निर्जितारुजबन्धु बालसन्ततिम् ॥२॥ शुकादिमौनिबन्दितं गकारवाच्यमक्षरम् । प्रकाममिष्टदायिनं सकाम नम्र पङ्क्तये । चकासनं चतुर्भुजैर्विकासिपद्मपूजितम् । प्रकाशितात्मतत्वकं नमाम्यहम् गणाधिपम् ॥ ३ ॥ नराधिपत्वदायकं स्वरादिलोकदायकम् । जरादिरोगवारकं निराकृतासुरव्रजम् । कराम्बुजैर्धरन्सृणीन्विकार शून्य मानसैः । हृदा सदा विभावितं मुदा नमामि विघ्नपम् ॥ ४ ॥ श्रमापनोदनक्षमं समादितान्तरात्मना । समादिभिः सदार्चितं क्षमानिधिं गणाधिपम् । रमाधवादिपूजितं यमान्तकात्मसम्भवम् । शमादिषड्गुणप्रदं नमामि तं विभूतये ॥५॥ गणाधिपस्य पञ्चकं नृणामभीष्टदायकं । प्रणामपूर्वकं जनपठन्ति ये मुदायताः । भवन्ति ते विदाम्पुरः प्रगीत वैभवाः जनाः । चिरायुषोऽधिकाः श्रियः सुसूनवो न संशयः ॥ ६ ॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं गणाधिपस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१९-संसारमोहन गणेशकवचं ।

विष्णुरुवाच । संसार मोहनस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः । ऋषिश्छन्दश्च बृहती देवो लम्बोदरः स्वयम् ॥ १ ॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः । सर्वेषां कवचानां च सारभूत मिदं मुने ॥२॥ ॐ गं

ह्रूँ श्री गणेशाय स्वाहा मे पातु मस्तकम् । द्वात्रिंशद-
क्षरो मन्त्रो ललाटं मे सदावतु ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं क्लीं
श्रीं गमिति च सन्ततं पातुलोचनम् । तालुकं पातु
विघ्नेश सन्ततं धरणीतले ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं-
मिति च सन्ततं पातु नासिकाम् । ॐ गौं गं शूर्पक-
र्णाय स्वाहा पात्वधरं मम ॥ ५ ॥ दन्तानि तालुकां
जिह्वां पातु मे षोडशाक्षरः ॥ ६ ॥ ॐ लं श्रीं लम्बो-
दरायेति स्वाहा गण्डं सदावतु । ॐ क्लीं ह्रीं विघ्नना-
शाय स्वाहा कर्ण सदावतु ॥७॥ ॐ श्रीं गं गजानन.
नायेति स्वाहा स्कन्धं सदावतु । ॐ ह्रीं विनायकायेति
स्वाहा पृष्ठं सदावतु ॥८॥ ॐ क्लीं ह्रीमिति कङ्कालं
पातु वक्षःस्थलम् च गम् । करौ पादौ सदा पातु सर्वाङ्गं
विघ्ननिघ्नकृत् ॥९॥ प्राच्यां लम्बोदरः पातु आग्ने-
य्यां विघ्ननायकः । दक्षिणे पातु विघ्नेशो नैर्ऋत्यां तु
गजाननः ॥१०॥ पश्चिमे पार्वतीपुत्रो वायव्यां शंक-
रात्मजः । कृष्णस्यांशश्चोत्तरे च परिपूर्णतमस्य च
॥११॥ एशान्यामेकदन्तश्च हेरम्बः पातु चोर्ध्वतः ।
अधो गणाधिपः पातु सर्वपूज्यश्च सर्वतः ॥ १२ ॥
स्वप्ने जागरणे चैव पातु मां योगिनां गुरुः ॥ १३॥
इति ते कथितं वत्स सर्वमन्त्रौघविग्रहम् । संसार मोहनं
नाम कवचं परमाद्भुतम् ।१४। श्री कृष्णेन पुरा दत्तं

गोलोके रासमण्डले । वृन्दावने विनीताय मह्यं दिन-करात्मज ॥१५॥ मया दत्तं च तुभ्यं च यस्मै कस्मै न दास्यसि । परं वरं सर्वपूज्यं सर्वसंकट तारणम् ॥१६॥ गुरुमभ्यर्च्य विधिवत् कवचं धारयेत्तु यः । कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न संशयः ॥१७॥ अश्वमेधसहस्त्राणि वाजपेयशतानि च । ग्रहेन्द्र कवचस्यास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥१८॥ इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेच्छङ्करात्मजम् । शतलक्ष प्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धिदायकः ॥१९॥

इति श्री ब्रह्मवैवर्त पुराणे संसारमोहनं गणेशकवचं सम्पूर्णम् ।

२०--त्रैलोक्यमोहन कवचम् ।

नमस्तस्मै गणेशाय सर्वविघ्नविनाशने । कार्यारम्भेषु सर्वेषु पूज्यते यः सुरैरपि ॥१॥ देव्युवाच । प्राणनाथाधुना ब्रूहि कवचं मन्त्रविग्रहम् । त्रैलोक्मोहनं चेति नामतः कथितं पुरा ॥२॥ इदानीं श्रोतुमिच्छामि सर्वार्थिकवचं स्फुटम् । ईश्वर उवाच । श्रुणु देवि-प्रवक्ष्यामि सुंदरि प्राण वल्लभे । त्रैलोक्यमोहनं नाम चेतत् विद्योद्यविग्रहम् ॥३॥ यत्धृत्वा दानवान्विष्णुर्निजघान मुहुर्मुहुः । सृष्टिं वितनुते ब्रह्मा यत्धृत्वा पठनाद्यतः ॥४॥ संहर्ताहं यतो देवि देवेशि वासवोद्यतः । धनाधिपः कुबेरोऽपि यतः सर्वे दिगीश्वराः ॥५॥ न

देयं परशिष्येभ्यो वेयं शिष्येभ्य एव च। अभक्तेभ्यो-ऽपि पुत्रेभ्यो दत्वा हानिस्तु जायते ॥६॥ श्री मन्म-हागणपतेः कवचस्य ऋषिः शिवः ॥ गणपतिर्देवता च गायत्री छन्द एव च ॥७॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु विनि-योगः प्रकीर्तितः। यस्यस्मरणमात्रेण न विघ्नाः प्रभ-वन्ति च ॥८॥ त्रिकालमेककालं वा ये पठन्ति सदा नराः। तेषां क्वापि भयं नास्ति संग्रामे संकट गिरौ ॥९॥ भूतवेतालकृत्यादिग्रहबाधा न जायते। शक्तिः स्वाहा ग्लौं बीजं विनियोगस्य कीर्तितः ॥ १० ॥ ॥ अथन्यासः ॥ ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं अगुष्ठाभ्यां नमः। ग्लौं गणपतये तर्जनीभ्यां नमः। वरवरद मध्यमाभ्याँ नमः। सर्वजम्भे अनामिकाभ्यां नमः। वशमानय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। स्वाहा करतल करपृष्ठाभ्यां नमः। एवं हृदयादि न्यासः।

॥ अथध्यानम्। हस्तींदाननमिंदुचूडलरूणच्छायं त्रिनेत्रं रसादाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया स्वाङ्कस्थया सन्ततम्। बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखयुक् चक्राब्ज पाशो-त्पल ब्रीह्यग्र स्वविषाण रत्नकलशान हस्तैर्वहन्तं भजेत्। ॐ ब्रह्मबीजं शिरः पातु केवल मुक्तिदायक श्री बीज भक्षिणी पातु सर्वशत्रुविनाशनं। कामबीजं कपोलौ च सर्वदुष्टनिवारणम् ॥ २ ॥ ग्लौं गं च गण-

पतये वाचं पातु विनायकः। वरबीजं तथा जिह्वां वरद हस्तयोस्तथा । ३ । सर्वजनं च मे बाहुद्वयं पातु गणेश्वरः। पातु मे वश हृदयं पातु सिद्धिश्वरस्तथा । ४ । नाभि मे वरदो पातु सर्वसिद्धिविनायकः ।। जङ्घयोर्गुल्फयोः स्वाहा सर्वांगं विघ्ननायकः । ५ । गणपतिस्त्वग्रतः पातु गणेशः पृष्ठतस्तथा। दक्षिणे सिद्धिदः पातु वामे विश्वार्तिहारकः । ६ । दुर्जयो रक्षतु प्राच्यामाग्नेयां गणपस्तथा। दक्षिणस्यां गिरिजजो नैर्ऋत्यां शम्भुनन्दनः । ७ । प्रतीच्यां स्थाणुजः पातु वायव्यां सिंहवाहनः। कौवेर्यामीश्वरः पातु ईशान्यामीश्वरात्मजः । ८ । अधो गणपतिः पातु ऊर्ध्वं पातुविनायकः ।। एताभ्यो दशदिग्भ्यस्तु पातु नित्यं गणेश्वरः । ९ । इदं कवचमाहात्म्यं न देयं यस्य कस्यचित् । यस्य स्मरणमात्रेण मृत्योर्मृत्युर्भवेत्स्वयम् । १० । इतीदं कथितं देवि ब्रह्मविद्याकलेवरम् । त्रैलोक्यमोहनं नाम कवचं ब्रह्मरूपकम् । ११ । सप्तकोटिमहामन्त्रास्त्रादौ कथिताः प्रिये । महागणपतेर्यद्दिव्यं कवचं मन्मुखोदितम । १२ । गुरुमभ्यर्च्य विधि वत्कवचं यः पठेद्यतेः त्रिः सकृद्वा यथान्यासं सोऽपि पुण्ययुतो नरः । १३ । देशिकः सर्व मन्त्रेषु ह्यधिकारी जपादिषु । देवमभ्यर्च्य विधिवत्पुरश्चर्यां समाचरेत् । १४ ।

अष्टोत्तरशतं जप्त्वा दशांशं हवनादिकम् । ततस्तु सिद्ध-
कवचः पूर्णतामदनोपमः ॥ १५ ॥ मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य
पुरश्चर्याविधानतः । गद्यपद्यमयी वाणी तस्य वक्त्रा-
त्प्रजापते ॥ १६ ॥ वक्त्रे तस्य वसेद्वाणी कमला निश्-
चला गृहे । पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्वा मूले नैव पठेत्सकृत्
॥ १७ ॥ अपि वर्षसहस्राया: पूजाया: फलमाप्नुयात् ।
विलिख्य भूर्जपत्रे तु स्वर्णस्थं धारयेद्यदि ॥ १८ ॥
कंठे वा दक्षिणे बाहौ स कुर्याद्दासवत् जगत् । त्रैलो-
क्यं क्षोभवत्येव त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥ १९ ॥ तद्-
मात्रं प्रात्य शस्त्राणि ब्रह्मस्त्रा दीनियति च । मान्या-
नि कुसुमानीव सुखदानि भवन्ति हि ॥ २० ॥ स्पर्धा
निर्धूय भवने लक्ष्मीर्वाणी मुखे वसेत् ॥ २१ ॥ इदं
कवचमज्ञात्वो यो जपेद्गणनायकम् । न स सिद्धिम-
वाप्नोति मूढो वर्षशतैरपि ॥ २२ ॥ सर्वशत्रुक्षयकरं
सर्वविघ्ननिवारणम् । सर्वापत्येकशमनं सर्वमोक्षस्य
हेतुकम् ॥ २३ ॥

इति श्री रुद्रयामले त्रैलोक्यमोहन कवचं सम्पूर्णम् ।

२१--एकाक्षरगणपतिकवचम् ।

नमस्तस्मै गणेशाय सर्वविघ्नविनाशिने । कार्यार-
म्भेषु सर्वेषु पूजितो यः सुरैरपि ॥१॥ पार्वत्युवाच ।
भगवन् देवदेवेश लोकानुग्रहकारक । इदानी श्रोतुमि-

च्छामि कवचं यत्प्रकाशितम् ॥२॥ एकाक्षरस्य मन्त्रस्य त्वया प्रीतेन चेतसा। गुह्याद्गुह्यतरं देव पुरा प्रोक्तम-भूत्किल ॥३॥ वदैतद्धियद्देव यदि ते वल्लभास्म्य-हम्। ईश्वर उवाच। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि नाख्येय-मपि ते ध्रुवम्। एकाक्षरस्य मन्त्रस्य कवचं सर्वकाम-दम् ॥४॥ यस्य स्मरणमात्रेण न विघ्नाः प्रभवन्तिहि। त्रिकालमेककालं वा ये पठन्ति सदा नराः ॥५॥ तेषां कांपि भयं नास्ति संग्रामे संकटैगिरौ। भूतवेतालरक्षो-भिर्ग्रहैश्चापि न वाध्यते ॥६॥ इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेद् गणनायकम्। न च सिद्धिमवाप्नोति मूढो वर्षश-तैरपि ॥७॥ अघोरो मे यथा मन्त्रो मन्त्राणामुत्तमोत्तमः। तथेदं कवचं देवि दुर्लभं भुवि मानवैः ॥८॥ गोपनीयं प्रयत्नेन नाख्येयं यस्य कस्यचित्। तव तीत्या महेशानि कवचं कथ्यतेऽद्भुतम् ॥९॥ एकाक्षरस्य मन्त्रस्य गणक-श्चर्षिरीरितः। त्रिष्टुप्छन्दस्तु विघ्नेशो देवता परिकी-र्तिता ॥१०॥ गं बीजं शक्तिरोङ्कारः सर्वकामार्थ सिद्धये। सर्वविघ्नविनाशाय विनियोगस्तु कीर्तितः ॥११॥ रक्ता-म्भोजस्वरूपं लसदरूणसरोजाधिरूढं त्रिनेत्रं पाशं चैवा-ङ्कुशं वा वरदमभयदं बाहुभिर्धारयन्त। शक्त्या युक्तं गजास्यं प्रथुतरजठरं नागयज्ञोपवीतं देवं चन्द्रार्धचूडं सकल भयहरं विघ्नराजं नमामि ॥१२॥ गणेशो मे

शिरः पातु भालं पातु गजाननः । नेत्रे गणपतिः पातु
गजकर्णः श्रुती मम ॥१३॥ कपोलौ गणनाथस्तु घ्राणं
गन्धर्वपूजितः । मुखं मे सुमुखः पातु चिबुकं गिरिजासुतः
॥१४॥ जिह्वां पातु गणक्रीडो दन्तान् रक्षतु दुर्मुखः ।
वाचं विनायकः पातु कण्ठं पातु महोत्कटः ॥१५॥ स्क-
न्धौ पातु गजस्कन्धो बाहू मेविघ्ननाशनः । हस्तौ रक्षतु
हेरम्बो वक्षः पातु महाबलः ॥१६॥ हृदयं मे गणपति-
रूदरं मे महोदरः । नाभिं गम्भीरहृदयः पृष्ठं पातु सुर-
प्रियः ॥१७॥ कटिं मे विकटः पातु गुह्यं मे गुहपूजितः ।
ऊरू मे पातु कौमारो जानुनी च गणाधिपः ॥१८॥
जङ्घे गजप्रदः पातु गुल्फो मे धूर्जटिप्रियः । चरणौ
दुर्जयः पातु सर्वाङ्गम् गणनायकः ॥१९॥ आमोद मेऽ-
ग्रतः पातु प्रमोदः पातु पृष्ठतः । दक्षिणे पातुसिद्धीशो
वामेविघ्न धरार्चितः ॥२०॥ प्राच्यां रक्षतु मां नित्यं
चिन्तामणिविनायकः । आग्नेयां वक्रतुण्डो मे दक्षिण-
स्यामुमासुतः ॥२१॥ नैर्ऋत्यां सर्वविघ्नेशः पातु नित्यं
गणेश्वरः । प्रतीच्यां सिद्धिदः पातु वायव्यां गजकर्णकः
॥२२॥ कौबेर्यां सर्वसिद्धीश ईशान्मामीशनन्दनः । ऊर्ध्वं
विनायकः पातु अधोमूषकवाहनः ॥२३॥ दिवा गोक्षीर
धवलः पातु नित्यं गजाननः रात्रौ पातु गणक्रीडः सन्ध्य-
योः सुखन्दितः ॥२४॥ पाशाङ्कुशाभयकरः सर्वतः पातु

मां सदा । ग्रहभूतपिशाचेभ्यः पातु नित्यं गजाननः ॥२५॥ सत्वं रजस्तमो वाचं बुद्धि ज्ञानं स्मृतिम् दयाम् । धर्मं चतुर्विधं लक्ष्मीं लज्जां कीर्ति कुलं वतुः ॥२६॥ धनं धान्यं गृहं दारान् पुत्रान् पौत्रान् सखींस्तथा । एकदन्तोऽवतु श्रीमान् सर्वतः शङ्करात्मजः ।२७। सिद्धिदं कीर्तिदं देवि प्रपठेन्नियतः शुचिः । एककालं द्विकालंबा त्रिकालं वापि भक्तिमान् ।२८। न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते । सर्वपापविनिर्मुक्तो जायते भुवि मानवः ॥२९॥ यं यं कामयते नित्यं सुदुर्लभ मनोरथम् । तं तं प्राप्नोति सकलं षण्मासान्नात्र संशयः ॥३०॥ मोहनस्तम्भनाकर्ष मारणोच्चाटनं वशम् । स्मरणादेव जायन्ते नात्र कार्या विचारणा ॥३१॥ सर्वविघ्नहरं देवं ग्रहपीडानिवारणम् । सर्वशत्रुक्षयकरं सर्वापत्तिनिवारणम् ॥३२॥ धृत्वेदं कवचं देवियो जपेन्मत्रमुत्तमम् । न बाध्यते स विघ्नौघैः कदाचिदपि कुत्रचित् ॥३३॥ भूर्जे लिखित्वा विधिवद्धारयेद्यो नरः शुचिः । एकबाहो शिरः कण्ठे पूजयित्वा गणाधिपम् ॥३४॥ एकाक्षरस्य मन्त्रस्य कवचं देवि दुर्लभम् । यो धारयेन्महेशानि न विघ्नैरभिभूयेत ॥३५॥ गणेशहृदयं नाम कवचं सर्वसिद्धिदम् । पठेद्वा पाठयेद्वापि तस्य सिद्धिः करे स्थिता ॥३६॥ न प्रकाश्यं महेशानि

कवचं यत्र कुत्रचित् । दातव्यं भक्तियुक्ताय गुरुदेवपराय च ॥३७॥

॥ इति श्रीरुद्रयामले एकाक्षरगणपति कवचं सम्पूर्णम् ॥

२२-हरिद्रागणेशकवचम् ।

ईश्वर उवाच । शृणु वक्ष्यामि कवचं सर्वं सिद्धि-
करं प्रिये । पठित्वा पाठयित्वा च मुच्यते सर्वसंकरात्
॥ १ ॥ अज्ञात्वा कवचं देवि गणेशस्य मनुं जपेत् ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥ २ ॥ ॐ
आमोदश्चं शिरः पातु प्रमोदश्च शिखोपरि । संमोदो
भ्रुयुगे पातु भ्रूमध्ये च गणाधिपः ॥ ३ ॥ गणक्रीडो
नेत्रयुगं नासायां गणनायकः । गणक्रीडान्वितः पातु
वदने सर्वसिद्धये ॥ ४ ॥ जिह्वायां सुमुखः पातु ग्रीवा-
यां दुर्मुखः सदा । विघ्नेशो हृदये पातु विघ्नाशच
वक्षसि ॥ ५ ॥ गणानाँ नायकः पातु बाहुयुग्मं सदा-
मम । विघ्नहर्ता च ह्युदरे विघ्नहर्ता त लिङ्गके ॥६॥
गजवक्त्रः कटीदेशे एकदन्तो नितम्बके । लम्बोदरः
सदा पातु गुह्यदेशे ममारुणः ॥ ७ ॥ व्यालयज्ञोपवीती
मां पातु पदयुगे सदा । जापकः सर्वदा पातु जानु-
जङ्घे गणाधिपः ॥८॥ हरिद्रः सर्वदा पातु सर्वाङ्गे
गणनायकः । य इदं प्रपठेन्नित्यं गणेशस्य महेश्वरि
॥ ९ ॥ कवचं सर्वसिद्धाख्यं सर्वविघ्नविनाशनम् । सर्व-

सिद्धिकरं साक्षात् सर्वपापविमोक्षणम् ॥ १० ॥ सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात् सर्वपापविमोक्षणम् । सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात् सर्वशत्रुक्षयंकर ॥ ११ ॥ ग्रहपीडा ज्वरारोगाये चान्ये गुह्यकादयः । पठनाद्धरणादेव नाशमायान्ति तत्क्षणात् ॥ १२ ॥ धनधान्यकरं देवि कवचं सुरपूजितम् । समं नास्ति महेशानि त्रैलोक्ये कवचस्य च ॥ १३ ॥ हारिद्रस्य महेशानि कवचस्य च भूतले किमन्यै रसदालापैः यत्रायुर्व्ययतामियात् ॥ १४ ॥

इति विश्वसारतन्त्रे हरिदागणेशकवचं समाप्तम् ।

२३-गणेशमंत्रोस्तोत्रम् ।

उद्दायक उवाच । शृणु पुत्र महाभाग योग शान्तिप्रदायकम् । येन त्वं सर्वयोगज्ञो ब्रह्मभूतो भविष्यसि ॥ १ ॥ चित्तं पञ्चविधं प्रोक्तं क्षिप्तं मूढं महामते । विक्षिप्तं च तथैकाग्रं निरोधं भूमि संज्ञकम् ॥२॥ तत्र प्रकाशकर्ता सौ चिन्तमणि हृदि स्थितः । साक्षाद्योगेन योगज्ञैर्लभ्यते भूमिनाशनात् ॥ ३ ॥ चित्तरूपा स्वयमबुद्धिश्चित्त भ्रान्तिकारो मता । सद्धिर्माया गणेशस्य मायाखेलक उच्यते ॥ ४ ॥ अतो गणेशमन्त्रेण गणेशं भज पुत्रक । तेन त्वं ब्रह्मभूतस्तं शान्तियोगमवारस्यसि ॥ ५ ॥ इत्युक्त्वा गणराजस्य ददौ मन्त्रं तथारुणिः । एकाक्षरं स्वपुत्राय ध्यानादिसुसंयुतम्

॥ ६ ॥ तेन तं साधयति स्म गणेशं सर्व सिद्धिदम् ।
क्रमेण शान्तिमापन्नो योगिवन्द्योऽभवत्ततः ॥ ७ ॥

इति श्री मुद्गलपुराणे श्री गणेशमन्त्रस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।

२४-दशाक्षरमन्त्रस्तोत्रम् ।

मुद्गल उवाच । असच्छक्तिश्च सत्सूर्य समो वि-
ष्णुर्महामुने । अव्यक्तः शंगरस्तेषां संयोगे गणपो
भवेत् ॥१॥ संयोगे मायया युक्तो गणेशो ब्रह्मनायकः ।
अयोगे मायया हीनो भवति मुनिसत्तम ॥ २ ॥ संयो-
गायोगयोर्योगयोगो गाणेश संज्ञितः । शान्तिश्यः शा-
न्तिदः प्रोक्तो भजने भक्तिसंयुतः ॥ ३ ॥ एवमुक्त्वा
गणेशस्य ददौ मन्त्रं ह मुद्गलः । एकाक्षरं विधियुतं
ततः सोऽन्तर्हितोऽभवत् ॥ ४ ॥ ततोऽहं गणराजं तम-
भजं सर्वभावतः । तेन शान्तिसमायुक्तश्चरामि त्वकुतो-
भयः ॥ ५ ॥ न गणेशात्परं ब्रह्म न गणेशात्परं तपः ।
न गणेशात्परं कर्म ज्ञानं न गणपात्परम् ॥ ६ ॥ न
गणेशात्परो योगो भक्तिर्न गणपात्परा । तस्मात्स सर्व-
पूज्योऽयं सर्वादौ सिद्धिदायकः ॥ ७ ॥ गणेशानं परि-
त्यज्य कर्मज्ञानादिकं चरेत् । तत्सर्वं निष्फलं याति
भस्मनि प्रहुतं यथा ॥ ८ ॥ सर्वान्तस्तज्य गणेशं यो
भजतेऽनन्यचेतसा । सर्वसिद्धिं लभेत्सद्यो ब्रह्मभूतः स
कथ्यते ॥ ९ ॥ एवमुक्त्वाऽत्रिस्तस्मै ददौ मन्त्र दशा-

क्षरम् । विधियुक्तं ततः साक्षादन्तर्धानं चकार ह ॥ १० ॥

५२-गणेशद्वादशनामस्तोत्रम् ।

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥२॥ गणानामधिपश्चण्डो गजवक्त्रस्त्रिलोचनः । प्रसन्नो भव मे नित्यं वरदातर्विनायकम् ॥३॥ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥४॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि गणाधीशस्य यः पठेत् ॥ ५ ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी विपुलं धनम् । इष्टकामं तु कामार्थी धर्मार्थी मोक्षमक्षयम् ॥ ६ ॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ ७ ॥

॥ इति श्रीमुद्गलपुराणे गणेशद्वादशनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२६-गणेशभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम् ।

रणत्क्षुद्रघण्टानिनादाभिरामं चलत्ताण्डवोद्दण्डवत्पद्मतालम् । लसत्तुन्दिलाङ्गोपरिव्यालहारं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥१॥ ध्वनिध्वंसवीणालयोल्लासिवक्त्रं स्फुर-

च्छुण्ड्दण्डोल्लसद्बीजपूरम् । गलद्दर्पसौगन्ध्यलोलालि-
मालं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥१॥ प्रकाशज्जपार-
क्तरत्नप्रसूनप्रवालप्रभातारुणज्योतिरेकम् । प्रलम्बोदरं
वक्रतुण्डैकदन्तं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥३॥ विचित्र
स्फुरद्रत्नमालाकिरीटं किरीटोल्लसच्चन्द्ररेखाविभूषं ।
विभूषैक भूषंभवध्वंसहेतुं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे
॥ ४ ॥ उदञ्चद्भुजवल्लरीदृश्यमूलोच्चलद्भ्रूलताविभ्रम
भ्राजदक्षम् । मरुत्सुन्दरीचामरैः सेव्यमानं गणाधीशमी-
शानसूनुं तमीडे ॥५॥ स्फुरन्निष्ठुरालोलपिङ्गाक्षितारं
कृपाकोमलोदारलीलावतारम् । कलाबिन्दुगंगीयते योगि-
वर्यैर्गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥६॥ यमेकाक्षरं निर्मलं
निर्विकल्पं गुणातितमानन्दमाकारशून्यं । परं पारमोङ्का-
रमाम्नायगर्भं वदन्ति प्रगल्भं पुराणं तमीडे ॥७॥ चिदा-
नन्दसान्द्राय शान्तायतुभ्यं नमोविश्वकर्त्रे च हर्त्रे च
तुभ्यम् । नमोऽनन्तलीलाय कैवल्यमासेन्नमो विश्वबीज
प्रसीदेशसूनो ॥८॥ इमं संस्तवं प्रातरुत्थाय भक्त्या पठे-
द्यस्तु मर्त्योलभेत्सर्वकामान् । गणेशप्रसादेनसिद्ध्यिन्ति
वाचो गणेशेविभौ दुर्लभंकि प्रसन्ने ॥९॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं गणेशभुजङ्गप्रयातस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२७—ढुण्ढिस्वरूपवर्णनस्तोत्रम् ।

जैमिनिरुवाच । न वक्तुं शक्यते राजन् केनापि

तत्स्वरूपकम् । नोपाधिना युतं ढुण्ढिं वदामि शृणु तत्वतः ॥१॥ अहं पुरा सुशान्त्यर्थं व्यासस्य शरणं गतः मह्य सङ्कथितं तेन साक्षान्नारायणेन च ॥२॥ तदेव त्वां वदिष्यामि स्वशिष्यं च निबोध मे । यदि तं भजसि ह्यद्य सर्वसिद्धि प्रदायकम् ॥३॥ देहदेहिमेयं सर्वं गकारा-क्षर वाचकम् । संयोगायोगरूपपं यद्ब्रह्मणकारवाचकम् ॥४॥ तयोः स्वामी गणेशश्च पश्य वेदे महामते । चित्ते निवासकत्वाद्वै चिन्तामणिः स कथ्यते ॥५॥ चित्तरूपा स्वयं बुद्धिर्भ्रान्तिरूपा महीपते । सिद्धिस्तत्र तयोर्योगे प्रलभ्यते तयोः पतिः ॥६॥ द्विज ऊवाच । शृणु राजन् गणेशस्य स्वरूपं योगदं परम् । भुक्तिमुक्तिप्रदं पूर्णं धा-रतं चेन्नरेण वै ॥७॥ चित्ते चिन्तामणिः साक्षात्पञ्च-चित्त प्रचालकः । पञ्चवृत्तिनिरोधेन प्रात्यते योगसेवया ॥८॥ असम्प्रज्ञातसंस्थश्च गजशब्दो महामते । तदेव मस्तकं यस्य देहः सर्वात्मकोऽभवत् ॥९॥ भ्रान्तिरूपा महामाया सिद्धिर्वामांगसंश्रिता । भ्रान्तिधारक रूपा सा बुश्चि दक्षिणांगके ॥१०॥ तयोः स्वामी गणेशश्च माया-भ्यां खेल्यते सदा । सम्भजस्व विधानेन तदा संलभसे नृप ॥११॥

श्रीमुद्गलपुराणे श्री ढुण्डिस्वरूपवर्णनस्तत्रोम् सम्पूर्णम् ॥

२८-ढुण्ढिराजाष्टकम् ।

उमा ङ्गोद्भवं दन्तिवक्त्रं गणेशं भुजाकङ्कणैः
शोभिनं धूम्रकेतुम् । गले हारमुक्तावलीशोभितं तं नमो
ज्ञान रूपं गणेशं नमस्ते ॥१॥ गणेशं वदेत्तं स्मरेत्
सर्वकार्ये स्मरन् सम्मुखं ज्ञानदं सर्वसिद्धिम् । मनश्चि-
न्तितं कार्यमेवाशु सिद्धयेन्नमो बुद्धिकान्तं गणेशं नमस्ते
॥२॥ महासुन्दरं वक्त्रचिन्हंविराटं चतुर्धाभुजं चैकद-
न्तैकवर्णम् । इदं देवरूपं गणं सिद्धिनाथं नमो भालचन्द्रं
गणेशं नमस्ते ॥ ३ ॥ ससिन्दूर सत्कुङ्कुमैस्तुल्यवर्णः
स्तुतैर्मोदकैः प्रीयतेविघ्नराजः । महासङ्कटच्छेदकं
धुम्रकेतुं नमो गौरिपुत्रं गणेशं नमस्ते ॥४॥ यथा
पातकच्छेदकं विष्णुनाम यथा ध्यायतां शङ्करं पापना-
शम् । यथा पूजितं षण्मुखं शोकनाशं नमोविघ्ननाशं
गणेशं नमस्ते ॥५॥ सदा सर्वदा ध्यायतामेकदन्तं सुसि-
न्दूरकं पूजितं रक्तपुष्पैः । सदा चर्चितं चन्दनैः कुङ्-
कुमाक्तं नमो ज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते ॥५॥ नमो गौ-
रिकागर्भजापत्य तुभ्यं नमो ज्ञानरूपिन्नमः सिद्धिकान्त ।
नमो ध्येयपूज्याय हे बुद्धिनाथ सुरास्त्वां भजन्ते गणेशं
नमस्ते ॥७॥ भुजङ्गप्रयातं पठेद्यस्तु भक्त्या प्रभाते
जपेन्नित्यमेकाग्रचितः । क्षयं यान्ति विघ्नां दिशः शोभ-
यन्त नमोज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते ॥८॥

२६-गीतिपूर्वं गणपतिस्तोत्रम् ।

सुमुख प्रथम स्वनामगायकपालक सेवल मङ्गलकारक । कामसुपूरक मङ्गलकारक, त्राहिविनायक भविकतारक ॥ १ ॥ सिन्दूरलेपक मोदक भक्षक, दुर्जनशिक्षकनिजजनवीक्षक । अङ्कुशधारक जगदुद्धारक, लोकविधारक संहारकारक ॥ २ ॥ अशेषकारक शक्तिविधारक, मूषकवाहक सुरदरदाहक । कलौ सुतारक त्वं हि विनायक, पालय सेवकमखिलप्रहारक ॥ ३ ॥ करुणारससम्पूर्णकटाक्षामलवीक्षणैः । योऽनु गृह्णाति भवतान्स प्रसन्न सुमुखः स्मृतः ॥४॥ ये परित्यज्य विहितं निषिद्धं प्रचरन्ति ते । वक्रस्तान्तुण्डयत्येष वक्रतुण्डः प्रकीर्तितः ॥५॥ प्रथमं मंगलायैव गणेशः स्मर्यते बुधैः । सर्वदेवार्चितत्वात्स गणेशः प्रणमः स्मृतः ॥ ६ ॥ स्मरणान्निजभक्तानां सर्वविघ्नान्निवार्य यः । कामान् पूरयति क्षिप्रं गणेशः कामपूरकः ॥७॥ निवार्यामंगलान्याशु स्मरणाद्गणनायकः । करोति मंगलान्येव ततो मंगलकारकः ॥ ८ ॥ इन्द्रादीनां तु देवानां विविधा नायकाः खलु । न नायको गणेशस्यं कोऽत्यतोऽसौ विनायकः ॥९॥

इति श्री वासुदेवानन्दसरस्वती विरचितं गीतिपूर्वं गणपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३०-कव्यष्टकम् ।

चतुः षष्टिकोट्याख्यविद्याप्रदं त्वां सुराचार्यविद्याप्रदानापदानम् । कनाऽभीष्ठविद्यार्तकं दन्तयुग्म कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि ॥१॥ स्वनाथं प्रधानं महाविघ्ननाथम् निजेच्छाविसृष्टाण्डवृन्देशनाथम् । प्रभुं दक्षिणस्यास्यविद्या प्रदंत्वां कविं बुद्धिनाथं कविनां नमामि ॥ २ ॥ विभोर्व्यासशिष्यादिविद्याविशिष्ठप्रियानेकविद्याप्रदातारमाद्यम् । महाशाक्तदीक्षागुरोः श्रेष्ठदं त्वां कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि ॥३॥ विधात्रे त्रयीमुख्यवेदांश्च योगं महाविष्णवे चागमान् शंकराय । दिशं तं च सूर्यायविद्यारहस्यं कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि ॥४॥ महाबुद्धिपुत्राय चैकः पुराणं दिशं तं गजास्यास्य माहात्म्ययुक्तम् । निजज्ञानशक्त्या समेतं पुराणं कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि ॥५॥ त्रयीशीर्षसारं रुचानेकमारं रमाबुद्धिदारं परं ब्रह्म पारम् । सुरस्तोमकायं गणौघाधिनाथम् कविं बुद्धिनाथं कवीनाँ नमामि ॥६॥ चिदानन्दरूपं मुनिध्येयरूपं गुणातीतमीशं सुरेशं गणेशम् । धरानन्दलोकादिवासप्रियं त्वां कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि ॥७॥ अनेकतारं सुरक्ताब्जहारं परं निर्गुणं विश्वसद्ब्रह्मरूपम् । महावाक्यसन्दोहतात्पर्यमूर्ति कविं बुद्धिनाथं कवीनां नमामि ॥८॥ इदं ये तु कव्यष्टकं

भक्तियुक्तास्त्रिसन्ध्यं पठन्ते गजास्यं स्मरन्तः। कवित्वं सुवाक्यार्थमत्यद्भुतं ते लभन्ते प्रसादाद्गणेशस्य मुक्तिम् ॥९॥

इति श्री ब्रह्मपुराणे वाल्मीकिकृतं कव्यष्टकम् नाम गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

३१-चिन्तामणिषट्पदी।

द्विरदवदन विषमरद वरद जयेशान शान्तवरसदन सदनवसादन सादनमन्तरायस्य रायस्य ॥१॥ इन्दुकल कलितालिक सालिकशुम्भत्कपोलपालियुग। विकटस्फुट-कटधाराधारोऽस्य प्रपञ्चस्य ॥२॥ परपरशुपाणिपाणे पणि-तपणायेःपणायितोऽसियतः। आरुह्य वज्रदन्तं विदधासि विपदन्तम् ॥३॥ लम्बोदर दूर्वासन शयधृतसामोदका-शनक। शनकैरवलोकय मां यमान्तरायापहारिदृशा ॥४॥ आनन्दतुन्दिलाखिलवृन्दारकवृन्द वन्दिताङ्घ्रि-युग। सुराप्रदण्डरसालो नागजभालोऽतिवासि विभो ॥५॥ अगणेयगुणेशात्मज चिन्तकचिन्तामणे गणेशान। स्वचरणशरणं करुणावरुणावरुणालय पाहि मां दीनम् ॥६॥ रुचिरवचोमृतरावोन्नीता नीता द्विवस्तुतिः स्फीता। इति षट्पदी मदीया गणपतिपादाम्बुजे विशतु ॥७॥

इति गणपति स्तोत्राणि।

———————

शिवस्तोत्राणि

२३--शिवमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । पुष्पदंत उवाच । महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः । अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन् ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥१॥ अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयोरतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि । स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२॥ मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवतस्तव ब्रह्मन्किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम् । मम त्वेषा वाणी गुणकथनपुण्येन भवतः पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥३॥ तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु । अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं विहंतुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥४॥ किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च । अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ।५। अजन्मानो लोकाः किमवयववंतोऽपि जगतामधिष्ठातारं

कि भवविधिरनादृत्य भवति । अनीशो वा कुर्याद्भवन-जनने कः परिकरो यतो मंदास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥६॥ त्रयीसांख्य योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च । रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥७॥ महोक्षः खट्वांगं परशुमजिनं भस्म फणिनः कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम् । सुरास्तां तामृद्धिं दधाति तु भवद्भिः प्रणिहितां न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥८॥ ध्रुवं कश्चि-त्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये । समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥९॥ तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिंचो हरिरधः परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कंधवपुषः । ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृण-द्भ्यां गिरिश यत् स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥ १० ॥ अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान् । शिरः पद्म-श्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपु-रहर विस्फूर्जितमिदम् ॥११॥ अमुष्य त्वत्सेवासमधिग-तसारं भुजवनं बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रम-यतः । अलभ्या पातालेऽप्यलसचलितांगुष्ठशिरसि प्रतिष्ठा

त्वय्यासीद्ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥१२॥ यदृद्धि
सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सतीमधश्चक्रेबाणः परिज-
नविधेयस्त्रिभुवनः न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्च-
रणयोर्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः
।१३। अकांडब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपाविधेयस्यासाद्य
त्रिनयन विषं संहृतवतः । स कल्माषः कंठे तव न कुरुते
न श्रियमहो विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः
॥१४॥ असिद्धार्थो नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे निवर्तन्ते
नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः । स पश्यन्नीश
त्वामितरसुरसाधारणमभूत्स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि
वशिषु पथ्यः परिभवः ॥१५॥ महीपादाघाताद्व्रजति
सहसा संशयपदं पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रह-
गणम् । मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा जगद्र-
क्षायै त्वं नटसि ननु वाभैव विभुता ॥१६॥ वियद्व्यापी
तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः प्रवाहो वारां यः पृषत-
लघुदृष्टः शिरसि ते । जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन
कृतमित्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ॥१७॥
रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेंद्रो धनुरथो रथांगे चंद्रार्कौ
रथचरणपाणः शर इति । दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृण-
माडम्बरविधिर्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभु-
धियः ॥१८॥ हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदतो-

यदेकोने तस्मिन्निमसुदहरन्नेत्रकमलम् । गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम् ॥ १९ ॥ क्रतौ सुप्ते जाग्रत्वमसि फलयोगे क्रतुमतां क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते । अतस्त्वां संप्रेक्ष्य क्रतुषु फलदाप्रतिभुवं श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥२०॥ क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृतामृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः । क्रतुभ्रंषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो ध्रुवं कर्तुं श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥ २१ ॥ प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा । धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं त्रसंतं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥२२॥ स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत्पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि । यदि स्त्रैणं देवी यमनिरतदेहार्घघटनादवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः ॥ २३ ॥ श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराश्चिताभस्मालेपः स्त्रगपि नृकरोटीपरिकरः । अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मंगलमसि ॥२४॥ मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगितदृशः । यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निम-

ऽज्यामृतमये दधत्यंतस्तत्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ।।२५।। त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च । परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रति गिरं न विद्मस्तत्तत्वं वयमिह तु यत्वं न भवसि ।।२६।। त्रयी तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति । तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुंधानमणुभिः समस्तव्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम् ।।२७।। भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महांस्तथा भीमेशानाविति यद्भिधानाष्टकमिदम् । अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतरपि प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते ।।२८।। नमो नेदिष्ठाय प्रियदवदविष्ठाय च नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः । नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति शर्वाय च नमः ।।२९।। बहलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः । जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ।।३०।। कृशपरिणतिचेतः क्लेशवश्यं क्वचेदंक्व च तव गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः । इति चकितममंदीकृत्य मां भक्तिराधाद्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ।। ३१ ।। असित-

गिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी। लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥३२॥ असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमोलेर्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य। सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदंताभिधानो रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥३३॥ अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः। स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथोऽत्र प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च ॥ ३४ ॥ महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः। अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्वं गुरोः परम् ॥३५॥ दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः। महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥३६॥ कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः शशिधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः। स गुरुनिजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यै महिम्नः ॥ ३७ ॥ सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं पठति यदि मनुष्यः प्रांजलिर्नान्यचेताः। व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः स्तवनमिदममोघं पुष्पदंतप्रणीतम् ॥३८॥ श्रीपुष्पदंतमुखपंकजनिर्गतेन स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण। कंठस्थितेन पठितेन समाहितेन सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥३९॥ इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंक-

रपादयोः । अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः ॥४०॥

॥ इति श्रीपुष्पदंतविरचितं शिवमहिम्नः स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

३३-शिवमहिमस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । श्रीविष्णुरुवाच । महेशानन्ताद्य त्रिगुणरहितामेय विमल स्वराकारापारामितगुणगणाकारि निवृते । निराधाराधारामरवर निराकार परम प्रभापूराकारावर पर नमो वेद्य शिव ते ॥१॥ नमो वेदावेद्याखिलजगदुपादान नियतं स्वतन्त्रासामन्तानवधुतिनिजाकारविरते । निवर्तन्ते वाचः शिवभजनमप्राप्य मनसा यतोऽशक्ताः स्तोतुं सकृदपि गुणातीत शिव ते ॥२॥ त्वदन्यद्वस्त्वेकं नहि भव समस्तत्रिभुवने विभुस्त्वं विश्वात्मा न च परममस्तीश भवतः । ध्रुवं मायातीतस्त्वमसि सततं नात्र विषयो न ते कृत्यं सत्यं क्वचिदपि विपर्येति शिव ते ।३। त्वयैवेमं लोकं निखिलममलं व्याप्य सततं तथैवान्यां लोकस्थिति मनघ देवोत्तम विभो । त्वयैवैतत्सृष्टं जगदखिलमीशान भगवन्विलासोऽयं कश्चित्तव शिव नमो वेद्य शिव ते ॥ ४ ॥ जगत्सृष्टेः पूर्वं यदभवदुमाकान्त सततं त्वया लीलामात्रं तदपि सकलं रक्षितमभूत् । तदेवाग्रे भाल-

प्रकटनयनाद्भुतकराज्जगद्दग्ध्व स्थास्यत्यज हर नमो वेद्य शिव ते ॥५॥ विभूतीनामन्तो भव न भवतो भूति-विलसन्निजाकार श्रीमन्न गुणगणसीमाप्यवगता । अत-द्व्यात्याऽद्धा त्वयि सकलवेदाश्च चकिता भवन्त्येवा-सामप्रकृतिक नमो वर्य शिव ते ॥६॥ विराड्रूपं यत्ते सकलनिगमागोचरमभूत्तदेवेदं रूपं भवति किमिदं भिन्नमथवा । न जाने देवेश त्रिनयन सुराराध्यचरण त्वमोङ्कारो वेदस्त्वमसि हि नमोऽघोर शिव ते ॥७॥ यदन्तस्तत्वज्ञा मुनिवरगणा रूपमनघं तवेदं सञ्चिन्त्य स्वमनसि सदा सन्नविहताः । ययुर्दिव्यानन्दं तदिदम-थवा किं तु न तथा किमेतज्जानेऽहं शरणद नमः शर्व शिव ते ॥८॥ तथा शक्त्या सृष्ट्वा जगदथ च संरक्ष्य बहुधा ततः संहृत्यैतन्निवसति तदाधारमथवा । इदं ते किं रूपं निरुपम न जाने हर विभो विसर्गः को वा ते तमपि हि नमो भव्य शिव ते ॥९॥ तवानन्तान्याहुः शुचिपरमरूपाणि निगमास्तदन्तर्भूतं सत्सदसदनिरुक्तं पदमपि । निरुक्तं छन्दोभिर्निलयनमिदं वाऽनिलयनं न विज्ञातं ज्ञातं सकृदपि नमो ज्येष्ठ शिव ते ॥१०॥ तवा-भूत्सत्यं चानृतमपि च सत्यं कृतमभूद्दतं सत्यं सत्यं तदपि च यथा रूपमखिलम् । यतः सत्यं सत्यं श रमपि समस्तं तव विभो कृतं सत्यं सत्यानृतमपि नमो रुद्र शिव ते

।११। तवामेयं मेयं यदपि तदमेयं विरचितं न वाऽमेयं मेयं रचितमपि मेयं विरचितुम् । न मेयं मेयं ते न खलु परमेयं परमयं न मेयं नामेयं परमपि नमो देव शिव ते ।।१२।। तवाहारं हारं विदितमवविहारं विरहसं नवाहारं हारं हर हरसि हारं न हरसि । न वाहारं हारं परतर विहारं परतर परं पारं जाने नहि खलु नमो विश्व शिव ते ।।१३।। तदेतत्तत्वं ते सकलमपि तत्त्वेन विदितं न ते तत्वं तत्वं विदितमपि तत्वेन विदितम् । न चैतत्तत्वं चेन्नियतमपि तत्वं किमु भवै न तै तत्वं तत्वं तदपि च नमो वेद्य शिव ते ।।१४।। इदं रूपं सदसदमलं रूपमपि चेन्न जाने रूपं ते तरतमविभिन्नं परतरम् । ततो नान्यद्रूपं नियतमपि वेदनिगदितं न जाने सर्वात्मन्क्वचिदपि नमोऽनन्त शिव ते ।।१५।। महद्भूतं भूतं यदपि न च भूतं तव विभो सदा भूतं भूतं किमु न भवतो भूतविषये । यदा भूतं भूतं भवति हि न भव्यं भगवतो भवाभूतं भायं भवसि न नमो ज्येष्ठ शिव ते ।।१५।। वशीभूता भूता सततमपि भूतात्मकतया न ते भूताभूतास्तव यदपि भूता विभुतया । यतो भूता भूतास्तव तु न हि भूतात्मकतया न वा भूता भूताः क्वचिदपि नमो भूत शिव ते ।।१७।। न ते माया माया सततमपि मायामयतया ध्रुवं माया माया त्वयि वर न

मायामयमपि । यदा मायामाया त्वयि न खलु माया-मयतया न मायामाया वा परमथ नमस्ते शिव नमः ॥१८॥ यतन्तः संवेद्यं विदितमपि वेदैर्न विदितं न वेद्यं वेद्यं चेन्नियममपि वेद्यं न विदितम् । तदेवेदं वेद्यं विदितमपि वेदान्तनिकरैः करावेद्यं वेद्यं जितमिति नमोऽतर्क्य शिव ते ॥ १९ ॥ शिवं सेव्यं भावं शिवमतिशिवाकारमशिवं न सत्यं शैव तच्छिवमिति शिवं सेव्यमनिशम् । शिवं शान्तं मत्वा शिवपरमतत्वं शिवमयं न जाने रूपत्वं शिवमति नमो वेद्यं शिव ते ॥२०॥ यदज्ञात्वा तत्वं सकलमपि संसा-रपतितं जगज्जन्मावृत्ति दहति सततं दुःखनिलयम् । तदेतज्ज्ञात्वैवावहति च निवृत्ति परतरां न जाने तत्तत्वं परमिति नमो वेद्य शिव ते ॥२१॥ न वेदं यद्रूपं निगमविषयं मङ्गलकरं दृष्टं केनापि ध्रुवमिति विजाने शिव विभो । ततश्चित्तं शंभो नहि मम विषादोऽघ-विकृतिः प्रयत्नाल्लब्धेऽस्मिन्न किमपि नमः पूर्ण शिव ते ॥२२॥ तवाकर्ण्यागूढं यदपि परतत्वं श्रुतिपरं तदे-वातीतं सन्नयनपदवीं नात्र तनुते । कदाचित्किञ्चिद्वा स्फुरित कतिधा चेतसि तव स्फूरद्रूपं भव्य भवहर परा-वेद्य शिव ते ॥२३॥ त्वमिन्दुर्भानुस्त्वं हुतभुगसि वा-युश्च सलिलं त्वमेवाकाशोऽसि क्षितिरसि तथाऽऽत्मासि भगवन् । ततः सर्वाकारस्त्वमसि भवतो भिन्नमनघान्न तत्सत्यं सत्यं त्रिनयन नमोऽनन्त शिव ते ॥२४॥ विधुं

धत्से नित्यं शिरसि मृडुकण्ठोऽपि गरलं नवं नागाहारं भसितममलं भासुरतनुम् । करे शूलं भाले ज्वलनमनिशं तत्किमिति ते न तत्वं जानेऽहं भवहर नमः कूर्प शिव ते ॥ २५ ॥ तवापाङ्गः शुद्धो यदि भवति भव्ये शुभकरः कदाचित्कस्मिंश्चिद्घुतरनरे विप्रभवति । स एवैतांल्लोकान् रचयितुमलं सापि च महान्कृपाधारोऽयं ते सुखयति नमोऽनन्त शिव ते ॥२६॥ भवन्तं देवेशं शिवमितरगीर्वाणसदृशं प्रमादाद्यः कश्चिद्यदि यदपि चित्तेऽपि मनुते । स दुःखं लब्ध्वाऽन्ते नरकमपि याति ध्रुवमिदं ध्रुवं देवाराध्यामितगुण नमोऽनन्त शिव ते ।२७। प्रदोषे रत्नाढ्ये मृदुलतरसिंहासनवरे भवानीमारूढामसकृदपि संवीक्ष्य भवता । कृतं सम्यङ्नाट्यं प्रथितमिति वेदोऽपि भवति प्रभावः को वाऽयं तव हर नमो दीप शिव ते ॥२८॥ श्मशाने संचारः किमु शिव न ते क्वापि गमनं यतो विश्वं व्याप्याखिलमपि सदा तिष्ठति भवान् । विभुं नित्यं शुद्धं शिवमुपहतं व्यापकमिति श्रुतिः साक्षाद्वक्ति स्वयमपि नमः शुद्ध शिव ते ॥२९॥ धनुर्मेरुः शेषो धनुवरगुणौ यानमवनिस्तवैवेदं चक्रं निगमनिकरा वाजिनिकराः पुरो लक्ष्यं यन्ता विधिरिषुहरिश्चेति निगमः किमेवं त्वन्वेष्यो निगदति नमः पूर्ण शिव ते ।३०। मृदुः सवं सत्त्वेतद्भवमनघयुक्तं च रजसा तमो-

युक्तं शुद्धं हरमपि शिवं निष्कलमिति । वदत्येको वेदस्त्वमसि यदुपास्यं ध्रुवमिदं त्वमोंकाराकारो ध्रुवमिति नमोऽनन्त शिव ते ॥३१॥ जगत्सुप्तिं बोधं व्रजति भवतो निर्गतमपि प्रवृत्ति व्यापारं पुनरपि सुषुप्तिं च सकलम् । त्वदन्यं त्वत्प्रेक्ष्यं व्रजति शरणं नेति निगमो वदत्यद्धा शर्व शिव इति नमः स्तुत्य शिव ते ।३२। त्वमेवालोकानामधिपतिरुमानाथ जगतां शरण्यः प्राप्यस्त्वं जलनिधिरिवानन्तपयसाम् । त्वदन्यो निर्वाणं तट इति च निर्वाणयतिरप्यतः सर्वोत्कृष्टस्त्वमसि हि नमो नित्य शिव ते ।३३। तवैवांशो भानुस्तपति विधुरप्येति पवनः पवत्येषोऽग्निश्च ज्वलति सलिलं च प्रवहति । तवाज्ञाकारित्वं सकलसुरवर्गस्य सततं त्वमेकः स्वातन्त्र्यं वहसि हि नमोऽनन्त शिव ते ॥३४॥ स्वतन्त्रोऽयं सोमः सकलभुवनैकप्रभुरयं नियन्ता देवानामपि हर नियन्तासि न परः । शिवः शुद्धो मायारहित इति वेदोऽपि वदति स्वयं तामाशास्य त्र्यहर नमोऽनन्त शिव ते ॥३५॥ नमो रुद्रानन्तामरवर नमः शंकर विभो नमो गौरीनाथ त्रिनयन शरण्यांघ्रिकमल । नमः शर्वः श्रीमन्ननघ महदैश्वर्यनिलय स्मरारे पापारे जय जय नमः सेव्य शिव ते ॥३६॥ महादेवामेयानघगुणगणग्रामसवतन्नमो भूयो भूयः पुनरपि नमस्ते पुनरपि । पुराराते शंभो पुनरपि नमस्ते शिव विभो नमो

लाच्च तापात् ॥१०॥ प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो
विद्यावराभीतिकुठारमाणिः । चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रः
प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्रम् ॥११॥ कुठारवेदांकु-
शपाशशूलकपालढक्काक्षगुणान्दधानः । चतुर्मुखो नील-
रुचिस्त्रिनेत्रः पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ॥१२॥
कुंदेंदुशंखस्फटिकावभासो वेदाक्षमालावरदाभयांकः ।
त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र उरुप्रभावः सद्योऽधिजातोऽवतु मां प्रती-
च्याम् ॥१३॥ वराक्षमालाभयटंकहस्तः सरोजकिंजल्क-
समानवर्णः । त्रिलोचनश्चारुचतुर्मुखो मां पायादुदीच्यां
दिशि वामदेवः ॥१४॥ वेदाभयेष्टांकुशपाशटंककपाल-
ढक्काक्षकशूलपाणिः । सितद्युतिः पञ्चमुखोऽवतान्मामीं-
शान ऊर्ध्वं परमप्रकाशः ॥१५॥ मूर्धानमव्यान्मम चंद्र-
मौलिर्भालं ममाव्यादथ भालनेत्रः । नेत्रे ममाव्याद्भग-
नेत्रहारी नासां सदा रक्षतु विश्वनाथः ॥ १६ ॥
पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्तिः कपोलमव्यात्सततं
कपाली । वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्चवक्त्रो जिह्वां सदा
रक्षतु वेदजिह्वः ॥१७॥ कंठं गिरीशोऽवतु नीलकंठः
पाणिद्वयं पातु पिनाकपाणिः दोर्मूलमव्यान्मम धर्म-
बाहुर्वक्षः स्थलं दक्षमखांतकोऽव्यात् ॥१८॥ ममोदरं
पातु गिरींद्रधन्वा मध्यं ममाव्यान्मदनांतकारी । हेरम्ब-
तातो मम पातु नाभिं पायात्कटी धूर्जटिरीश्वरो मे

॥१९॥ ऊरुद्वयं पातु कुबेरमित्रो जानुद्वयं मे जगदीश्वरोऽव्यात् । जंघायुगं पुंगवकेतुरव्यात्पादौ ममाव्यात्सुरवंद्यपादः ॥ २० ॥ महेश्वरः पातु दिनादियामे मां मध्ययामेऽवतु वामदेवः । त्रिलोचनः पातु तृतीययामे वृषध्वजः पातु दिनांत्ययामे ॥२१॥ पायान्निशादौ शशिशेखरो मां गंगाधरो रक्षतु मां निशीथे । गौरीपतिः पातु निशावसाने मृत्युञ्जयो रक्षतु सर्वकालम् ॥२२॥ अन्तः स्थितं रक्षतु शङ्करो मां स्थाणुः सदा पातु बहिः स्थितं माम् । तदन्तरे पातु पतिः पशूनां सदाशिवो रक्षतु मां समन्तात् ॥२३॥ तिष्ठन्तमव्याद्भुवनैकनाथः पायाद्व्रजन्तं प्रमथाधिनाथः । वेदान्तवेद्योऽवस्तु मां निषण्ण मामव्ययः पातु शिवः शयानम् ॥२४॥ मार्गेषु माँ रक्षतु नीलकण्ठः शैलादिदुर्गेषु पुरत्रयारिः । अरण्यवासादिमहाप्रवासे पायान्मृगव्याध उदारशक्तिः ॥२५॥ कल्पांतकाटोपपटुप्रकोपस्फुटाट्टहासोच्चलिताण्डकोशः । घोरारिसेनार्णवदुर्निवारमहाभयाद्रक्षतु वीरभद्रः ॥२६॥ पत्यश्वमातङ्गरथावरूथसहस्त्रलक्षायुतकोटिभीषणम् । अक्षौहिणीनां शतमाततायिनां छिद्यान्मृडो घोरकुठारधारया ॥२७॥ निहंतु दस्युन्प्रलयानलार्चिर्ज्वलत्त्रिशूलं त्रिपुरांतकस्य । शार्दूलसिंहर्क्षवृकादिहिंस्रान्संत्रासयत्वीशधनुः पिनाकः ॥२८॥ दुःस्वप्नदुःशकुनदुर्गतिदौर्मन-

स्यदुर्भिक्षदुर्व्यसनःदुसहदुर्यशांसि । उत्पाततापविषभीति-
मसद्ग्रहार्तिव्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः । ॐ
नमो भगवते सदाशिवाय सकलतत्वात्मकाय सर्वमन्त्र-
स्वरूपाय सर्वयन्त्राधिष्ठिताय सर्वतन्त्रस्वरूपाय सर्व-
तत्वविदूराय ब्रह्मरुद्रावतारिणे नीलकण्ठाय पार्वती मनो-
हरप्रियाय सोमसूर्याग्निलोचनाय भस्मोद्धूलितविग्रहाय
महामणिमुकुटधारणाय माणिक्यभूषणाय सृष्टिस्थिति-
प्रलयकालरौद्रावताराय दक्षाध्वरध्वंसकाय महाकाल-
भेदनाय मूलाधारैकनिलयाय तत्वातीताय गंगाधराय
सर्वदेवाधिदेवाय षडाश्रयाय वेदान्तसाराय त्रिवर्गसाधना-
यानन्तकोटिब्रह्मांडनायकायानन्तवासुकितक्षककर्कोटकशं-
कुलिकपद्ममहापद्मेत्यष्टमहानागकुलभूषणायः प्रणवस्व-
रूपाय चिदाकाशायाकाशदिक्स्वरूपाय ग्रहनक्षत्रमालिने
सकलाय कलंकरहिताय सकललोकैककर्त्रे सकललो-
कैक भर्त्रे सकतललोकैकसंहर्त्रे सकल लोकैक गुरुवे
सकललोकैकसाक्षिणे सकलनिगमगुह्याय सकल-
वेदांतपारगाय सकललोकैकवरप्रदाय सकललोकैकशंक-
राय शशाङ्कशेखराय शाश्वतनिजावासाय निराभासाय
निरामयाय निर्मलाय निर्लोभाय निर्मदाय निश्चिन्ताय
निरहङ्काराय निरंकुशाय निष्कलंकाय निर्गुणाय
निष्कामाय निरुपद्रवाय निरवद्याय निरन्तराय निष्का-
रणाय निरन्तकाय निष्प्रपंचाय निःसंगाय निर्द्वंद्वाय

निराधाराय निरागाय निष्क्रोधाय निर्मलाय निष्पापाय निर्भयाय निर्विकल्पाय निर्भेदाय निष्क्रियाय निस्तुलाय निःसंशयाय निरञ्जनाय निरुपम विभवाय नित्यशुद्ध-बुद्धपरिपूर्णसच्चिदानंदाद्वयाय परमशांतस्वरूपाय तेजो-रूपाय तेजोमयाय जय जय रुद्र महारौद्र भद्रावतार महाभैरव कालभैरव कलांतभैरव कपालमालाधर खट्वांडखड्गचर्मपाशांकुशडमरुशूलचापवाणगदाशक्तिभि-न्दिपालतोमरमूसलमुद्गरपाशपरिघभुशुण्डीशतघ्नीचक्रा-द्यायुधभीषणकर सहस्रमुखदंष्ट्रकरालवदन विकटाट्टहास विस्फारितब्रह्मांडमण्डल नागेंद्रकुण्डल नागेंद्रहार नागेंद्र-वलय नागेंद्रचर्मधर मृत्युञ्जय त्र्यंबक त्रिपुरांतक विश्वरूप बिरूपाक्ष विश्वेश्वर वृषभवाहन विषविभूषण विश्वतोमुख सर्वतो रक्ष रक्ष मां ज्वल ज्वल महामृत्यु-मपमृत्युभयं नाशय नाशय चोरभयमुत्सादयोत्सादय विषसर्पभय शमय शमय चोरान्मारय मारय मम शत्रू-नुच्चाटयोच्चाटय त्रिशूलेन विदारय विदार कुठारेण भिंधि भिंधि खड्गेन छिंधि छिंधि खट्वांगेन बिपोथय बिपोथय मुसलेन निष्पेषय निष्पेषय बाणैः संताडय संताडय रक्षांसि भीषय भीषयाशेषभूतानि विद्रावय विद्रावय कूष्मांडवेतालमारीचब्रह्मराक्षसगणान् संत्रासय संत्रासय मामभयं कुरु कुरु वित्रस्तं मामाश्वासयाश्वासय

नरकमहाभयात्मामुद्धरोद्धर संजीवय संजीवय क्षुत्तृड्भ्यां मामाप्यायाप्यय दुःखातुरं मामानंदयानंदय शिवकवचेन मामाच्छादयाच्छादय मृत्युंजय त्र्यंबक सदाशिव नमस्ते नमस्ते ॥२९॥ ऋषभ उवाच । इत्येतत्कवचं शैवं वरदं व्याहृतं मया । सर्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्वदेहिनाम् ॥३०॥ यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवं कवचमुत्तमम् । न तस्य जायते क्वापि भयं शम्भोरनुग्रहात् ॥३१॥ क्षीणायुः प्राप्तमृत्युर्वा महारोगहतोऽपि वा । सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विंदति ॥३२॥ सर्वदारिद्र्यशमनं सौमंगल्यविवर्धनम् । यो धत्ते कवचं शैवं स देवैरपि पूज्यते ॥३३॥ महापातकसंघातैर्मुच्यते चोपपातकैः । देहांते मुक्तिमाप्नोति शिवनर्मानुभावतः ॥३४॥ त्वमपि श्रद्धया वत्स शैवं कवचमुत्तमम् । धारयस्व मया दत्तं सद्यः श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ॥३५॥ सूत उवाच । इत्युक्त्वा ऋषभो योगी तस्मै पार्थिवसूनवे । ददौ शंखं महारावं खड्गं चारिनिषूदनम् ॥३६॥ पुनश्च भस्म संमंत्र्य तदङ्गं परितोऽस्पृशत् । गजानां षट्सहस्रस्य त्रिगुणस्य बलं ददौ ॥३७॥ भस्मप्रभावात्संप्राप्तबलैश्चर्यधृतिस्मृतिः । स राजपुत्रः शुशुभे शरदर्क इव श्रिया ॥३८॥ तमाह प्रांजलिं भूयः स योगी नृपनन्दनम् । एष खड्गो मया दत्तस्तपोमन्त्रानुभावितः ॥३९॥ शित-

धारमिमं खड्गं यस्मै दर्शयसे स्फुटम् ॥ स सद्यो म्रियते शत्रुः साक्षान्मृत्युरपि स्वयम् ॥ ४० ॥ अस्य शंखस्य निर्ह्रादंये शृण्वन्ति तवाहिताः ॥ ते मूर्छिताः पतिष्यन्ति न्यस्तशस्त्रा विचेतना ॥ ४१ ॥ खड्गशंखाविमौ दिव्यौ परसैन्यविनाशनौ ॥ आत्मसैन्यस्य पक्षाणां शौर्यतेजोविवर्धनौ ॥ ४२ ॥ एतयोश्च प्रभावेण कवचेन च ॥ द्विषट्सहस्रनागानां बलेन महतापि च ॥ ४३ ॥ भस्मधारणसामर्थ्याच्छत्रुसैन्यं विजेष्यसि ॥ प्राप्य सिंहासनं पित्र्यं गोप्ताऽसि पृथिवीमिमाम् ॥ ४४ ॥ इति भद्रायुषं सम्यगनुशास्य समातृकम् ॥ ताभ्यां संपूजितः सोऽथ योगी स्वैरगतिर्ययौ ॥ ४५ ॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे शिवकवचं समाप्तम् ॥

३६–शिवरक्षास्तोत्रम् ।

श्री गणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशिवरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य याज्ञवल्क्य ऋषिः ॥ श्रीसदाशिवो देवता ॥ अनुष्टुप् छन्द ॥ श्रीसदाशिवप्रीत्यर्थं शिवरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः ॥ चरितं देवदेवस्य महादेवस्य पावनम् ॥ अपारं परमोदारं चतुर्वर्गस्य साधनम् ॥ १ ॥ गौरीविनायकोपेतं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रकम् ॥ शिवं ध्यात्वा दशभुजं शिवरक्षां पठेन्नरः ॥ २ ॥ गंगाधरः शिरः पातु भालमर्धेन्दुशेखरः ॥ नयने मदनध्वंसी कर्णौ सर्पविभू-

षण: ॥३॥ घ्राणं पातु परारातिर्मुखं पातु जगत्पतिः । जिह्वां वागीश्वरः पातु कंधरां शितिकंधरः ॥ ४ ॥ श्रीकंठः पातु मे कंठं स्कन्धौ विश्वधुरन्धरः ॥ भुजौ भूभारसंहर्ता करौ पातु पिनाकधृक् ॥ ५ ॥ हृदयं शंकरः पातु जठरं गिरिजापतिः ॥ नाभिं मृत्युञ्जयः पातु कटी व्याघ्राजिनाम्बरः ॥ ६ ॥ सक्थिनी पातु दीनार्तशरणागतवत्सलः ॥ उरू महेश्वरः पातु जानुनी जगदीश्वरः ॥ ७ ॥ जंघे पातु जगत्कर्ता गुल्फौ पातु गणाधिपः ॥ चरणौ करुणासिंधुः सर्वांगानि सदाशिवः ॥८॥ एतां शिवबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत् ॥ स भुक्त्वा सकलान्कामान् शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ९ ॥ ग्रहभूतपिशाचाद्यास्त्रैलोक्ये विचरन्ति ये ॥ दूरादाशु पलायन्ते शिवनामाभिरक्षणात् ॥ १० ॥ अभयङ्करनामेदं कवचं पार्वतीपतेः ॥ भक्त्या बिभर्ति यः कण्ठे तस्य वश्यं जगत्त्रयम् ॥ ११ ॥ इमां नारायणः स्वप्ने शिवरक्षां यथाऽऽदिशत् ॥ प्रातरुत्थाय योगीन्द्रो याज्ञवल्क्यस्तथाऽलिखत् ॥ १२ ॥

इति श्रीयाज्ञवल्क्यप्रोक्तं शिवरक्षास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३७--महामृत्युञ्जयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीमहामृत्युंजयस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीमार्कण्डेय ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः ।

श्रीमृत्युंजयो देवता। गौरी शक्तिः। मम सर्वारिष्टसमस्तमृत्युशान्त्यर्थं सकलैश्वर्यप्राप्त्यर्थं च जपे विनियोगः ॥ अथ ध्यानम् ॥ चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तः स्थितं मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम् ॥ कोटीन्दुप्रगलत्सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं कान्तं विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत् ॥ ॐ रुद्रं पशुपतिं स्थाणुं नीलकण्ठमुमापतिम् ॥ नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ।१। नीलकण्ठं कालमूर्तिं कालज्ञं कालनाशनम् नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ।२। नीलकण्ठं विरूपाक्षं निर्मलं निलयप्रभम् ॥ नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ३ ॥ वामदेवं महादेवं लोकनाथं जगत्गुरुम् ॥ नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥४॥ देवदेवं जगन्नाथं देवेशं वृषभध्वजम् । नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ५ ॥ गङ्गाधरं महादेव सर्वाभरणभूषितम् ॥ नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ६ ॥ अनाथः परमानन्दं कैवल्यपददायिनम् ॥ नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ७ ॥ स्वर्गापवर्गदातारं सृष्टिस्थिति विनाशकम् ॥ नमामि शिरसा देवं किं मृत्युः करिष्यति ॥ ८ ॥ उत्पत्तिस्थितिसंहारकर्त्तारमीश्वरं गुरुम् ।

नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्यु करिष्यति ॥ ९ ॥
मार्कण्डेयकृतं स्तोत्रं यः पठेच्छिवसन्निधौ ॥ तस्य मृत्यु-
भयं नास्ति नाग्निचौरभयं क्वचित् ॥ १० ॥ शतावर्तं
प्रकर्तव्यं संकटे कष्टनाशनम् ॥ शुचिर्भूत्वा पठेत्स्तोत्रं
सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ ११ ॥ मृत्युञ्जय महादेव त्राहि
मां शरणागतम् ॥ जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्म-
बन्धनैः ॥ १२ ॥ तावतस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं
सदा मृड ॥ इति विज्ञाप्य देवेशं त्र्यंबकाख्यमनुं जपेत्
॥ १३ ॥ नमः शिवाय साम्बाय हरये परमात्मने ॥
प्रणतक्लेशनाशाय योगिनां पतये नमः ॥ १४ ॥ शता-
ङ्गायुर्मन्त्रः ॥ ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ह्रैं ह्रः हन हन दह
दह पच पच गृहाण मारय मर्दय मर्दय महामहाभैरव
भैरवरूपेण धुनुय धुनुय कम्पय कम्पय विघ्नय विघ्नय
विश्वेश्वर क्षोभय क्षोभय कटु कटु मोहय हुंफट्
स्वाहा । इति मन्त्रमात्रेण लब्धाभीष्टो भवति ॥ १५ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे मार्कण्डेयकृतं महामृत्युञ्जयस्तोत्रं सम्पूर्णं ।

३८-शिवताण्डवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जटाकटाहसंभ्रमभ्रमन्निलिं-
पनिर्झरीविलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्धनि ॥ धग-
द्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके किशोरचंद्रशेखरे रतिः
प्रतिक्षणं मम ॥ १ ॥ धाराधरेन्द्रनंदिनीविलासबंधुबंधुर-

स्फुरद्दिगंतसंतति प्रमोदमानमानसे ।। कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि क्वचिच्चिदंबरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ।। २ ।। जटाभुजंगपिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभाकदंबकुंकुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे ।। मदांधसिंधुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि ।। ३ ।। सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखरप्रसूनधूलिधोरणीविधूसरांघ्रिपीठभूः ।। भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः श्रियै चिराय जायतां चकोरबंधुशेखरः ।। ४ ।। ललाटचत्वरज्वलद्धनंजयस्फुलिङ्गभानिपीतपंचसायकं नमन्निलिंपनायकम् ।। सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं महाकपालिसंपदे शिरोजटाऽलमस्तु नः ।। ५ ।। करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धज्ज्वलद्धनंजयाधरीकृतप्रचंडपंचसायके ।। धराधरेन्द्रनंदिनीकुचाग्रचित्रपत्रकप्रकल्पनैकशिल्पिनि विलोचने मतिर्मम ।। ६ ।। नवीनमेघमंडलीनिरुद्धदुर्धरस्फुरत्कुहूनिशीथिनीतमः प्रबंधबंधुकंधर ।। निलिंपनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुरः कलानिधानबंधुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः ।। ७ ।। प्रफुल्लनीलपंकजप्रपञ्चकालिमच्छटाविडंबिकंठकंधरारुचिप्रबंधकंधरम् ।। स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं गजच्छिदांधकच्छिदं तमंतकच्छिदं भजे ।। ८ ।। अखर्वसर्वमंगलाकलाकदंबमंजरीरसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम् ।।

स्मरांतकं पुरांतकं भवांतकं मखांतकं गजांतकांधकांतकं तमंतकांतकं भजे ।। ९ ।। जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमभ्दुजंगमस्फुरद्धगद्धद्विनिर्गमत्करालभालहव्यवाट् ।। धिमिद्धिमिद्धिमिध्वनन्मृदंगतुंगमंगलध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचंडतांडवः शिवः ।। १० ।। दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजंगमौक्तिकस्त्रजोर्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः ।। तृणारविंदचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः समं प्रवर्तयन्मनः कदा सदाशिवं भजे ।। ११ ।। कदा निलिंपनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमंजलिं वहन् । विमुक्तलोललोचनो ललामभाललग्नकः शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम् ।। १२ ।। इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तमं स्तवं पठन्स्मरन्ब्रुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम् ।। हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नान्यथा गतिं विमोहनं हि देहिनां सुशंकरस्य चिन्तनम् ।। १३ ।। पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं यः शम्भुपूजनमिदं पठति प्रदोषे ।। तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः ।। १४ ।।

।। इति श्रीरावणविरचितं शिवतांडवस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

३९—शिवमानसपूजा (१)

श्रीगणेशाय नमः ।। ॐ प्रत्यक्प्रणवधीवृत्या हृद्गृहांतः प्रवेशनम् ।। मंडपान्तः प्रवेशोऽयं पूजार्थं तव

शंकर ।। १ ।। गुरुवाक्येषु विश्वासः स्थितिरासनसंस्थि-
तिः ।। सर्वसंकल्पसंत्यागः संकल्पस्तव पूजने ।। २ ।।
सर्वाधारस्त्वमेवेति निश्चयः पीठपूजनम् ।। ध्यानध्या-
तृध्येयबाधो ध्यानमानन्दकारणम् ।। ३ ।। दृश्यप्रमार्जन
चित्तान्निर्माल्यस्य विसर्जनम् ।। अहं ब्रह्मेत्यखण्डा या
वृत्तिर्धाराभिषेचनम् ।। ४ ।। पृथिव्यात्मकता दृष्टिस्तव
गन्धसमर्पणम् ।। बोधोपशमवैराग्यं त्रिदलं बिल्वमर्पये
।। ५ ।। आकाशात्मकताबोधः कुसुमार्पणमीश्वर ।। ज-
गराकाशपुष्पाभमिति पद्मं समर्पये ।। ६ ।। वायुतेजो-
मयत्वं ते धूपदीपावनुत्तमौ ।। दृश्यासंभवबोधेन निजा-
नंदेन तृप्तता ।। ७ ।। सर्वतः प्रीतिजनकं नैवेद्यं विनि-
वेदये ।। जलात्मकत्वबुद्धिस्तु पीयूषं तेऽर्पये पिब ।।८।।
कर्तव्येष्वप्रसक्तिस्तु हस्तप्रक्षालनं तव ।। ९ ।। दुर्वास-
नापरित्यागस्तांबूलस्य समर्पणम् ।। वाचां विसर्जनं
देव दक्षिणा श्रुतिसंमता ।। १० ।। फलाभिसंधिराहित्यं
फलार्पणमनुत्तमम् ।। अहमेव परं ब्रह्म सच्चिदानं-
दलक्षणम् ।। ११ ।। एवं निदिध्यासवाक्यं स्तुतिः
प्रियकरी तव ।। नामरूपाणि न त्वत्तो भिन्नानीति
मतिस्तु या ।। १२ ।। तव पुष्पाञ्जलिः शम्भो सर्व-
त्रोत्कीर्णपुष्पकः ।। स्वप्रकाशात्मबुद्धिस्तु महानीराजनं
तव ।। १३ ।। प्रादक्षिण्यं सर्वतस्ते व्याप्तबुद्धिः स्मृतं

शिव ॥ त्वमेवाहमिति स्थित्या लीनता प्रणतिस्तव ॥ १४ ॥ शुद्धसत्वस्याभिवृद्धिश्छत्रं तापापनोदनम् ॥ रजस्तमस्तिरस्कारश्चामरांदोलने तव ॥ १५ ॥ निजानन्दपरो धूर्णंदोलनांदोलने तव ॥ धन्योऽहं कृतकृत्योऽहमिति गानं तव प्रियम् ॥ १६ ॥ निरंकुशं महातृप्त्या नर्तनं ते मुदे शिव ॥ नानाविधैः शब्दजालैर्जृम्भणं वाद्यमुत्तमम् ॥ १७ ॥ शब्दातिगत्वबुद्धिस्तु कल्याणमिति डिंडिमः ॥ वेगवत्तरगंताऽसौ मनोऽश्वस्ते समर्पितः ॥ १८ ॥ अहंभावमहामत्तगजेन्द्रो भूरिलक्षणः ॥ तत्र देहाद्यनारोपनिष्ठा दृढतरोऽङ्कुशः ॥ १९ ॥ अद्वैतबोधदुर्गोऽयं यत्र शत्रुर्न कश्चन ॥ जनतारामविस्तारो रमस्वात्र यथासुखम् ॥ २० ॥ कल्पनासंपरित्यागो महाराज्यं समर्पये ॥ भोक्तृत्वाध्यासराहित्यं वरं देहि सहस्रधा ॥ २१ ॥ अखण्डा तव पूजेयं सदा भवतु सर्वतः ॥ आत्मत्वात्तव मे सर्वं पूजैवास्ति न चान्यथा ॥ २२ ॥ इमां पूजां प्रतिदिनं यः पठेद्यत्रकुत्रचित् ॥ सद्यः शिवमयो भूत्वा मुक्तश्चरति भूतले ॥ २३ ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमत्कृष्णानन्दसरस्वती-

विरचिता शिवमानसपूजा समाप्ता ।

४०-शिवमानसपूजा (२)

श्रीगणेशाय नमः । रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्यबांरं नानारत्नविभूषितं मृगमदादांकितं चंदनम् । जातीचंपकबिल्वपत्ररचितं पुण्यं च धूपं तथा दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥१॥ सौवर्णे मणिखण्डरत्नरचिते पात्रे धृतं पायसं भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं फाणितम् । शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलं तांबूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु ॥२॥ छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनके चादर्शकं निर्मलं वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकलागीतं च नृत्यं तथा । साष्टांगप्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत्समस्तं मया संकल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ॥३॥ आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा सामाधिस्थितिः । सचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥४॥ इत्येवं हरपूजने प्रतिदिनं यो वा त्रिसंध्यं पठेत्सेवाश्लोकचतुष्टयं प्रतिदिनं पूजा हरेर्मानसी । सोऽयं सौख्यमवाप्नुयाद्द्युतिधरं साक्षाद्धरेर्दर्शनं व्यासस्तेन महावसानसमये कैलासलोकं गतः ॥५॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा

मानसं वाऽपराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥६॥

१४--दारिद्र्यदहनशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः। विश्वेश्वराय नरकार्णवतारणाय कर्णामृताय शशिशेखरधारणाय । कर्पूरकांतिधवलाय जटाधराय दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥१॥ गौरीप्रियाय रजनीशकलाधराय कालांतकाय भुजगाधिपकंकणाय । गंगाधराय गजराजविमर्दनाय दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥२॥ भक्तप्रियाय भवरोगभयापहाय उग्रय दुर्गभवसागरतारणाय । ज्योतिर्मयाय गुणनामसुनृत्यकाय दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥३॥ चर्माम्बराय शवभस्मविलेपनाय भालेक्षणाय मणिकुंडलमंडिताय । मंजीरपादयुगलाय जटाधराय दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥४॥ पञ्चाननाय फणिराजविभूषणाय हेमांशुकाय भुवनत्रयमंडिताय । आनन्दभूमिवरदाय तमोमयाय दारिद्र्य० ॥५॥ भानुप्रियाय भवसागरतारणाय कालान्तकाय कमलासनपूजिताय । नेत्रत्रयाय शुभलक्षणलक्षिताय दारिद्र्य० ॥६॥ रामप्रियाय रघुनाथवरप्रदाय नागप्रियाय नरकार्णवतारणाय । पुष्येषु पुण्य भरिताय सुरार्चिताय दारिद्र्य० ॥७॥ मुक्तेश्वराय फलदाय गणेश्वरायगीतप्रिया-

यायवृषभेश्वरवाहनाय । मातङ्गचर्मवसनाय महेश्वराय दारिद्र्य० ।८। वसिष्ठेन कृतं स्तोत्रं सर्वरोगनिवारणम् । सर्वसंपत्करं शीघ्रं पुत्रपौत्रादिवर्धनम् । त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यं स हि स्वर्गमवाप्नुयात् ॥९॥

इति श्रीवसिष्ठविरचितं दारिद्र्यदहनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

४२-शिवापराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । आदौ कर्मप्रसंगात्कलयति कलुषं मातृकुक्षौ स्थितं मां विण्मूत्रामेध्यमध्ये क्वथयति नितरां जाठरो जातवेदाः । यद्यद्वै तत्र दुःखं व्यथयति नितरां शक्यते केन वक्तुं क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥१॥ बाल्ये दुःखातिरेकान्मललुलितवपुः स्तन्यपाने पिपासा नो शक्तश्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता जंतवो मां तुदंति । नानारोगादिदुःखाद्रुदनपरवशः शंकरं न स्मरामि क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेवशंभो ॥२॥ प्रौढोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैः पंचभिर्मर्मसंधौ दष्टो नष्टो विवेकः सुतधनयुवतिस्वादुसौख्ये निषण्णः । शैवींचिंताविहीनं मम हृदयमहो मानगर्वाधिरूढं क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥३॥ वार्धक्ये चेंद्रियाणां विगतगतिमतिश्चाधिदैवादितापैः पापै रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपुः प्रौढिहीनं च

दीनम् । मिथ्यामोहाभिलाषैर्भ्रमति मम मनो धूर्जटे-
ध्यानिशून्यं क्षंतव्योमेऽपराधः शिव शिव शिव भोः०
।।४।। नो शक्यं स्मार्तकर्म प्रतिपदगहनप्रत्यवायाकुलाख्यं
श्रौते वार्ता कथं मे द्विजकुलविहिते ब्रह्ममार्गे सुसारे ।
ज्ञातो धर्मो विचारैः श्रवणमननयोः किं निदिध्यासितव्यं
क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव शिव० ।।५।। स्नात्वा प्रत्यूष-
काले स्नपनविधिविधौ नाहृतं गांगतोयं पूजार्थं वा
कदाचिद्बहुतरगहनात् खण्डबिल्वीदलानि । नानीता
पद्ममाला सरसि विकसिता गंधपुष्पैर्दर्थं क्षंतव्यो
मेऽपराधः शिव शिव० ।।६।। मुग्धैर्मध्वाज्ययुक्तैर्दधिसि-
तसहितैः स्नापितं नैव लिंगं नो लिप्तं चन्दनाद्यैः
कनकविरचितं पूजितं न प्रसूनैः धूपैः कर्पूरदीपैर्विविधर-
सयुतैर्नैव भक्ष्योपहारैः क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव शिव०
।।७।। ध्यात्वा चित्ते शिवाख्यं प्रचुरतरधनं नैव दत्तं
द्विजेभ्यो हव्यं ते लक्षसंख्यैर्हुतवहवदने नार्पितं बीज-
मंत्रैः नो तप्तं गांगतीरे व्रतजपनियमै रुद्रजाप्यैर्न वेदैः
क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव० ।८। स्थित्वा स्थाने
सरोजे प्रणवमयमरुत्कुंडले सूक्ष्ममार्गे शांते स्वांते प्रलीने
प्रकटितविभवे ज्योतिरूपेऽपराख्ये । लिंगज्ञे ब्रह्मवाक्ये
सकलतनुगतं शंकरं न स्मरामि क्षंतव्यो मेऽपराधः
शिव शिव० ।।९।। नग्नो निःसाशुद्धस्त्रिगुणविरहितो

ध्वस्तमोहान्धकारो नासाग्रे न्यस्तदृष्टिर्विदितभवगुणो नैव दृष्टः कदाचित्। उन्मन्याऽवस्थया त्वां विगतकलिमलं शंकरं न स्मरामि क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव शिव० ॥१०॥ चंद्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे गंगाधरे शंकरे सर्पैर्भूषितकंठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे। दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमखिलामन्यैस्तु किं कर्मभिः ॥११॥ किं वाऽनेन धनेन वाजिकरिभिः प्राप्तेन राज्येन किं किं वा पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गेहेन किम्। ज्ञात्वेतत् क्षणभंगुरं सपदि रे त्याज्यं मनो दूरतः स्वात्मार्थं गुरुवाक्यतो भज भज श्रीपार्वतीवल्लभम् ॥१२॥ आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं प्रत्यायांति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः॥ लक्ष्मीस्तोयतरंगभङ्गचपला विद्युच्चलं जीवितं तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना ॥१३॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम्। विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥१४॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवापराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

४३-प्रदोषस्तोत्रम्।

जय देव जगन्नाथ जय शङ्कर शाश्वत। जय

सर्वसुराध्यक्ष जय सर्वसुरार्चित ॥१॥ जय सर्वगुणातीत जय सर्ववरप्रद । जय नित्य निराधार जय विश्वम्भराव्यय ॥२॥ जय विश्वैकवन्द्येश जय नागेन्द्रभूषण । जय गौरीपते शम्भो जय चन्द्रार्धशेखर ॥३॥ जय कोठ्यर्कसङ्काश जयानन्त गुणाश्रय । जय भद्र विरूपाक्ष जयाचिन्त्य निरञ्जन ॥४॥ जय नाथ कृपासिन्धो जय भक्तार्तिभञ्जन । जय दुस्तर-संसारसागररोत्तारण प्रभो ॥५॥ प्रसीद मे महादेव संसारार्तस्य खिद्यतः । सर्वपापक्षयं कृत्वा रक्ष मां परमेश्वर ॥६॥ महादारिद्र्यमग्नस्य महापापहतस्य च महाशोकनिविष्टस्य महारोगातुरस्य च ॥७॥ ऋणभारपरीतस्य दह्यमानस्य कर्मभिः । ग्रहैः प्रपीड्यमानस्य प्रसीद मम शङ्कर ॥८॥ दरिद्रः प्रार्थयेद् देवं प्रदोषे गिरिजापतिम् । अर्थाढ्यो वाऽथ राजा वा प्रार्थयेद् देवमीश्वरम् ॥९॥ दीर्घमायुः सदाऽऽरोग्यं कोषवृद्धिर्बलोन्नतिः । ममाऽस्तु नित्यमानन्दनः प्रसादात्तव शङ्कर ॥१०॥ शत्रवः संशयं यान्तु प्रसीदन्तु मम प्रजाः । नश्यन्तु दस्यवो राष्ट्रे जनाः सन्तु निरापदः ॥११॥ दुर्भिक्षमारिसन्तापाः शमं यान्तु महीतले । सर्वसस्यसमृद्धिश्च भूयात् सुखमया दिशः ॥१२॥ एवमाराधयेद् देवं पूजान्ते गिरिजापतिम् । ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाद् दक्षिणाभिश्च पूजयेत् ॥१३॥

सर्वपापक्षयकारी सर्वरोग-निवारिणी । शिवपूजा मया-ऽऽख्याता सर्वाभीष्टफलप्रदा ॥१४॥

४४–शिवाशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । त्रैलोक्यं मुदितं सर्वं दृष्ट्वा शक्त्या युतं शिवम् ॥ तदा स्तोत्रं हरिश्चक्रे शिवयोः परमात्मनोः ॥१॥ विष्णुरुवाच । मन्दारमालाकुलिता-लकायै कपालमालाङ्कितशेखराय । दिव्याम्बरायै च दिगम्बराय नमः शिवायै च नमः शिवाय ॥२॥ सुलोचनायै विषमेक्षणाय सुधाशनायै च गराशनाय । विभूतदायै विभवोज्झिताय नमः शिवाय ॥३॥ सर्वा-र्चितायै सकलार्चिताय कामप्रदायै स्मरनाशनाय । सुधां-शुभायै च शुधांशुभाय नमः शि० ॥४॥ इति स्तुतो महादेवो विष्णुना शक्तिसंयुतः । तमुवाच जगन्नाथं गिरा गम्भीरया हरः ॥५॥ शिव उवाच । प्रसन्नोऽस्मि-महाविष्णो तव भक्त्याऽनया हरे । वरं वरय मत्तस्त्वं यत्ते मनसि वर्त्तते ॥६॥ विष्णुरुवाच । शम्भो त्वच्च-रणाम्भोजे भक्तिर्नेऽस्त्वनपायिनी । सदा देहि सदा देहि वरं नान्यं वृणोमि ते ॥७॥ शिव उवाच । एव-मस्तु हृषीकेश ममात्माऽसि रमापते शिवेन सत्कृतो-ऽत्यर्थं जगाम भुवनं स्वकम् ॥८॥

४७-चन्द्रशेखराष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर पाहि माम् । चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर रक्ष माम् ॥१॥ रत्नसानुशरासनं रजताद्रिशृंगनिकेतनं सिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युताननसायकम् । क्षिप्रदग्धपुरत्रयं त्रिदिवालयैरभिवन्दितं चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥२॥ पञ्चपादपपुष्पगन्धपदाम्बुजद्वयशोभितं भाललोचनजातपावकदग्धमन्मथविग्रहम् । भस्मदिग्धकलेवरं भवनाशनं भवमव्ययं चन्द्र० ॥३॥ मत्तवारणमुख्यचर्मकृतोत्तरीयमनोहरं पङ्कजासनपद्मलोचनपूजितांघ्रिसरोरुहम् । देवसिन्धुतरंगसीकरसिक्तशुभ्रजटाधरं चन्द्रशेख० ॥ ४ ॥ यक्षराजसखं भगाक्षहरं भुजंगविभूषणं शैलराजसुतापरिष्कृतचारुवामकलेवरम् । क्ष्वेडनीलगलं परश्वधधारिणं मृगधारिणं चन्द्रशेखर० ।५। कुण्डलीकृतकुण्डलेश्वरकुण्डलं वृषवाहनं नारदादिमुनीश्वरस्तुतिवैभवं भुवनेश्वरम् । अन्धकान्धकमाश्रितामरपादपं शमनान्तकं चन्द्रशेखर० ॥ ६ ॥ भेषजं भवरोगिणामखिलापदामपहारिणं दक्षयज्ञविनाशनं त्रिगुणात्मकं त्रिविलोचनम् । भुक्तिमुक्तिफलप्रदं सकलाघसङ्घनिबर्हणं चन्द्रशेखर० ॥ ७ ॥ भक्तवत्सलमर्चितं निधिमक्षयं हरिदम्बरं सर्वभूतपतिं परात्परमप्रमेयमनु-

त्तमम् । सोमवारिदभूहुताशनसोमपानिलखाकृतिं चन्द्रशेखर० ॥८॥ विश्वसृष्टिविधायिनं पुनरेव पालनतत्परं संहरन्तमपि प्रपञ्चमशेषलोकनिवासिनम् । क्रीडयन्तमहर्निशं गणनाथयूथसमन्वितं चन्द्रशेखर० ॥९॥ मृत्युभीतमृकण्डुसूनुकृतस्तवं शिवसन्निधौ यत्र कुत्र च यः पठेन्न हि तस्य मृत्युभय भवेत् । पूर्णमायुररोगितामखिलार्थसम्पदमादरं चन्द्रशेखर एव तस्य ददाति मुक्तिमयत्नः ॥१०॥

४८—विश्वमूर्त्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । अकारणायाखिलकारणाय नमो महाकारणकारणाय नमोऽस्तु कालानललोचनाय कृतागसं मामव विश्वमूर्ते ॥१॥ नमोऽस्त्वहीनाभरणाय नित्यं नमः पशूनां पतये मृडाय । वेदान्तवेद्याय नमो नमस्ते कृता० ॥२॥ नमोऽस्तु भक्तेहितदानदात्रे सर्वौषधीनां पतये नमोऽस्तु । ब्रह्मण्यदेवाय नमो नमस्ते कृता० ॥३॥ कालाय कालानलसन्निभाय हिरण्यगर्भाय नमो नमस्ते । हालाहलादाय सदा नमस्ते कृता० ॥४॥ विरञ्चिनारायणशक्रमुख्यैरज्ञातवीर्याय नमो नमस्ते सूक्ष्मातिसूक्ष्माय नमोऽघहन्त्रे कृतागसं० ॥५॥ अनेककोटीन्दुनिभाय तेऽस्तु नमो गिरीणां पतयेऽघहन्त्रे । नमोऽस्तु ते भक्तविपद्धपात कृतागसं० ॥६॥ सर्वान्तर-

स्थाय विशुद्धधाम्ने नमोऽस्तु ते दुष्टकुलान्तकाय। समस्ततेजोनिधये नमस्ते कृतागसं० ॥७॥ यज्ञाय यज्ञादिफलप्रदात्रे यज्ञस्वरूपाय नमो नमस्ते। नमो महानन्दमयाव नित्यं कृतागसं मामव० ॥८॥ इति स्तुतो महादेवो दक्षं प्राह कृताञ्जलिम्। यत्तेऽभिलषितं दक्ष तत्ते दास्याम्यहं ध्रुवम् ॥९॥ अन्यच्च शृणु भो दक्ष यच्च किञ्चिद्ब्रवीम्यहम्। यत्कृतं हि मम स्तोत्रं त्वया भक्त्या प्रजापते ॥१०॥ ये श्रद्धया पठिष्यन्ति मानवाः प्रत्यहं शुभम्॥ निष्कल्मषा भविष्यन्ति सापराधा अपि ध्रुवम् ॥११॥

इति दक्षकृत शिवमृत्यष्टक सम्पूर्णम्।

४९—शङ्कराष्टकम्।

श्रीगणेशाय नमः। शीर्षजटागणभारं गरलाहारं समस्तसंहारम्। कैलासाद्रिविहारं पारं भववारिधेरहं वन्दे ॥१॥ चन्द्रकलोज्ज्वलभालं कण्ठव्यालं जगत्त्रयीपालम्। कृतनरमस्तकमालं कालस्य कोमलं वन्दे ॥२॥ कोपेक्षणहतकामं स्वात्मारामं नगेन्द्रजावामम्। संसृतिशोकविरामं श्यामं कण्ठेन कारणं वन्दे ॥३॥ कटितटविलसितनागं खण्डितयागं महाद्भुतत्यागम्। विगतविषयरसरागं भागं यज्ञेषु बिभ्रतं वन्दे ॥४॥ त्रिपुरादिकदनुजान्तं गिरिजाकान्तं सदैव संशान्तम्।

लीलाविजितकृतान्तं भान्तं स्वान्तेषु देहिनां वन्दे ॥५॥ सुरसरिदाप्लुतकेशं त्रिदशकुलेशं हृदालयावेशम् । विगताशेषक्लेशं देशं सर्वेष्टसम्पदा वन्दे ॥६॥ करतलकलितपिनाकं विगतजराकं सुकर्मणां पाकम् । परपदवीतवराकं नाकंगमपूगवन्दितं वन्दे ॥७॥ भूतिविभूषितकायं दुस्तरमायं विवर्जितापायम् । प्रथमसमूहसहायं सायंप्रातर्निरन्तरं वन्दे ॥८॥ यस्तु पदाष्टकमेतद्ब्रह्मानन्देन निर्मितं नित्यम् । पठति समाहितचेताः प्राप्नोत्यन्ते स शैवमेव पदम् ॥९॥

॥ इति श्रीमत्परमहंसब्रह्मानन्दविरचितं श्रीशंकराष्टकं सम्पूर्णम् ॥

५०--शिवरामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । शिव हरे शिव राम सखे प्रभो त्रिविधतापनिवारण हे विभो । अज जनेश्वर यादव पाहि मां शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥१॥ कमललोचन राम दयानिधे हर गुरो गजरक्षक गोपते । शिवतनो भव शंकर पाहि मां शिव हरे० ॥२॥ स्वजनरंजन मंगलमन्दिरं भजति तं पुरुषं परमं पदम् । भवति तस्य सुखं परमाद्भुतं शिव हरे० ॥३॥ जय युधिष्ठिरवल्लभ भूपते जय जयार्जितपुण्यपयोनिधे । जय कृपामय कृष्ण नमोऽस्तु ते शिव हरे० ॥४॥ भवविमोचन माधव मापते सुकविमानसहंस शिवारते ।

जनकजारत राघव रक्ष मां शिव हरे० ॥५॥ अवनि-
मण्डलमङ्गल मापते जलदसुन्दर राम रमापते । निग-
मकीर्तिगुणार्णव गोपते शिव हरे० ॥ ६ ॥ पतितपाव-
ननाममयी लता तव यशो विमलं परिगीयते । तदपि
माधव मां किमुपेक्षसे शिव हरे० ॥ ७ ॥ अमरतापर-
देव रमापते विजयतस्तव नाम धनोपमम् । मयि कथं
करुणार्णव जायते शिव हरे० ॥ ८ ॥ हनुमतः प्रिय
चापकर प्रभो सुरसरिद्धृतशेखर हे गुरो । मम विभो
किमु विस्मरणं कृतं शिव हरे० ॥ ९ ॥ नरहरेति परं
जनसुन्दरं पठति यः शिवरामकृतस्तवम् । विशति
रामरमाचरणांबुजे शिव० ॥ १० ॥ प्रातरुत्थाय यो
भक्त्या पठेदेकाग्रमानसः । विजयो जायते तस्य विष्णु-
सान्निध्यमाप्नुयात् ॥ ११ ॥

इति श्रीरामानन्दविरचितं शिवरामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

५१-शिवनामावल्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हे चन्द्रचूड मदनान्तक शूल-
पाणे स्थाणो गिरीश गिरिजेश महेश शंभो ॥ भूतेश
भीतभयसूदन मामनाथं संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष
॥ १ ॥ हे पार्वतीहृदयवल्लभ चन्द्रमौले भूताधिप
प्रथमनाथ गिरीशजाप ॥ हे वामदेव भव रुद्र पिनाक
पाणे संसारदुःख० ॥ २ ॥ हे नीलकण्ठ वृषध्वज पञ्च-

वक्त्र लोकेश शेषवलय प्रमथेश शर्व ॥ हे धूर्जटे पशुपते गिरजापते मां संसार० ॥३॥ हे विश्वनाथ शिव शंकर देवदेव गङ्गाधर प्रमथनायक नन्दिकेश ॥ बाणेश्वरान्धकरिपो हर लोकनाथ संसारदुःख० ॥ ४ ॥ वाराणसीपुरपते मणिकर्णिकेश- वीरेश दक्षमखकाल विभो गणेश ॥ सर्वज्ञ सर्वहृदयैकनिवास नाथ संसार दुःख० ॥५॥ श्रीमन्महेश्वर कृपामय हे दयालो हे व्योमकेश शितिकण्ठ गणाधिनाथ ॥ भस्माङ्गराग नृकपालकलापमाल संसार० ॥ ६ ॥ कैलासशैलविनिवास वृषाकपे हे मृत्युञ्जत त्रिनयन त्रिजगन्निवास ॥ नारायणप्रिय मदापह शक्तिनाथ संसार० ॥ ७ ॥ विश्वेश विश्वभवनाशित विश्वरूप विश्वात्मक त्रिभुवनैकगुणाभिवेश ॥ हे विश्वबन्धुकरुणामय दीनबन्धो संसार० ॥८॥ गौरीविलासभुवनाय महेश्वराय पञ्चाननाय शरणागतकल्पकाय ॥ शर्वाय सर्वजगतामधिपाय तस्मै दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥९॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवनामाल्यष्टकं सम्पूर्णम् ।

५२–विश्वनाथाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गंगातरंगरमणीयजटाकलापं गौरीनिरन्तरविभूषितवामभागम् ॥ नारायणप्रियमनङ्गमदापहारं वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥१॥

वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं वागीशविष्णुसुरसेवित-
पादपीठम् ।। वामेन विग्रहवरेण कलत्रवन्तं वाराणसी-
पुरपतिं भज विश्वनाथम् ।।२।। भूताधिपं भुजगभूष-
णभूषिताङ्गं व्याघ्राजिनाम्बरधरं जटिलं त्रिनेत्रम् ।
पाशांकुशाभयवरप्रदशूलपाणिं वाराणसीपुरपतिं भज०
।। ३ ।। शीतांशुशोभितकिरीटविराजमानं भालेक्षणा-
नलविशोषितपंचबाणम् । नागाधिपारचितभासुरकर्ण
पूरं वाराणसी० ।। ४ ।। पञ्चाननं दुरितमत्तमतंग-
जानां नागान्तकं दनुजपुंगवपन्नगानाम् । दावानलं
मरणशोकजराटवीनां वाराणसीपुर० ।।५।। तेजोमयं
सगुणनिर्गुणमद्वितीयमानन्दकन्दमपराजिमप्रमेयम् ।।
नागात्मकं सकलनिष्कलनात्मरूपं वाराणसीपुर० ।।६।।
आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां पापे रतिं च
सुनिवार्य मनः समाधौ ।। आदाय हृत्कमलमध्यगतं
परेशं वाराणसीपुर० ।।७।। रागादिदोषरहितं स्वज-
नानुरागवैराग्यशान्तिनिलयं गिरिजासहायम् ।। माधुर्य-
धैर्यसुभगं गरलाभिरामं वाराणसीपुर० ।।८।। वारा-
णसीपुरपतेः स्तवनं शिवस्य व्याख्यातमष्टकमिदं पठते
मनुष्यः ।। विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्ति सम्प्राप्य
देहविलये लभते च मोक्षम ।।९।। व्यासाष्टकमिदं

पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ॥ शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ १० ॥

इति श्रीव्यासदेवकृत विश्वनाथाष्टक सम्पूर्णम् ।

५३-प्रदोषस्तोत्राष्टकम् ।

सत्यं ब्रवीमि परलोकहितं ब्रवीमि सारं ब्रवीम्युपनिषद् हृदयं ब्रवीमि । संसारमुल्बणमसारमवाप्य जन्तोः सारोऽयमीश्वरपदाम्बुरुहस्य सेवा ॥ १ ॥ ये नाऽर्चयन्ति गिरिशं समये प्रदोषे ये नाऽर्चितं शिवमपि प्रणमन्ति चाऽन्ये । एतत् कथां श्रुतिपुटैर्न पिबन्ति मूढास्ते जन्म-जन्मसु भवन्ति नरा दरिद्राः ॥२॥ ये वै प्रदोषसमये परमेश्वरस्य कुर्वन्त्यनन्यमनसोऽङ्घ्रि-सरोजपूजाम् । नित्यं प्रवृद्ध-धन-धान्य-कलत्र-पुत्र-सौभाग्यसम्पदधिकास्त इहैव लोके ॥ ३ ॥ कैलासशैलभुवने त्रिजगज्जनित्रीं गौरीं निवेश्य कनकाचितरत्नपीठे । नृत्यं विधातुमभिवाञ्छति शूलपाणौ देवाः प्रदोषसमये नु भजन्ति सर्वे ॥४॥ वाग्देवी धृतवल्लकी शतमुखो वेणुं दधत् पद्मजस्तालोन्निद्रकरो रमा भगवती गेयप्रयोगान्विता । विष्णुः सान्द्रमृदङ्गवादनपटुर्देवाः समन्तात् स्थिताः सेवन्ते तमनु प्रदोषसमये देवं मृडानीपतिम् ॥५॥ गन्धर्व यक्ष पतगोरग सिद्ध साध्य विद्याधराऽमरवराप्सरसां गणांश्च । येऽन्ये त्रिलोकनिलयाः

सहभूतवर्गाः प्राप्ते प्रदोषसमये हरपार्श्वसंस्थाः ॥ ६ ॥
अतः प्रदोषे शिव एक एव पूज्योऽथ नाऽन्ये हरिपद्मजा-
द्याः । तस्मिन् महेशे विधिनेज्यमाने सर्वे प्रसीदन्ति सु-
राधिनाथाः ॥ ७ ॥ एष ते तनयः पूर्वजन्मनि ब्राह्मणा-
त्तमः । प्रतिग्रहैर्वयो निन्ये दानाद्यैः सुकर्मभिः ॥८॥
अतो दारिद्र्यमापन्नः पुत्रस्ते द्विजभामिनि । तद्दोषपार-
हारार्थं शरणं यातु शङ्करम् ॥ ९ ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं प्रदोषस्तोत्राष्टकं सम्पूर्णम् ।

५४—बिल्वाष्टकम् ।

त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रयायुधम् । त्रिज-
न्मपाप-संहारमेकबिल्वं शिवार्पणम् ॥ १ ॥ त्रिशाखै-
र्बिल्वपत्रैश्च ह्यच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः । शिवपूजां करि-
ष्यामि ह्येकबिल्वं शिवार्पणम् ॥२॥ अखण्डबिल्वपत्रेण
पूजिते नन्दिकेश्वरे । शुद्ध्यन्ति सर्वपापेभ्यो ह्येकबिल्वं
शिवार्पणम् ॥३॥ शालिग्रामशिलामेकां विप्राणां जातु
अर्पयेत् । सोमयज्ञ महापुण्यमेकबिल्वं शिवार्पणम् ॥४॥
दन्तिकोटिसहस्राणि वाजपेयशतानि च ॥ कोटिकन्या
महादानमेकबिल्वं शिवार्पणम् ॥५॥ लक्ष्म्याः स्तनत
उत्पन्नं महादेवस्य च प्रियम् । बिल्ववृक्षं प्रयच्छामि
ह्येकबिल्वं शिवार्पणम् ॥ ६ ॥ दर्शनं बिल्ववृक्षस्य
स्पर्शनं पापनाशनम् । अघोरपापसंहारमेकबिल्वं शिवा-

र्पणम् ॥७॥ मूलतो ब्रह्मरूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे । अग्रतः शिवरूपाय ह्येकबिल्वं शिवार्पणम् ॥ ८ ॥ बिल्वाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ । सर्वपाप विनिर्मुक्तः शिवलोकमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥

५५—रुद्रस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वाण्या ॐकाररूपिण्य अन्त उक्तोऽस्य नान्यथा ॥ सुरेशस्त्रिभुवनेशः स नः सर्वान्तः स्थितोऽवतु ॥ १ ॥ देवोऽयं सर्वदेवाद्यः सूरिरुन्मत्तवत्स्थतः ॥ वाहो बलीवर्दकोऽस्य याचकस्येष्टदः सतु ॥२॥ नन्दिस्कन्धाधिरूढोऽपि त्रिप्रमित्यतिगः स्वभूः ॥ दशा यस्य न शम्भुं ॥ दशा यस्य न शम्भुं तं सन्तं वन्देऽखिलात्मकम् ॥ ३ ॥ सद्योजातोऽष्टमूर्तिः स भूतबन्दिस्तुतोजितः । रक्ष मन्मथहन्नाथ तोकधर्माणमद्य माम् ॥ ४ ॥ स्वतो हेतोजगद्धेतो दयानाथाम्बिकापते ॥ तीव्रप्सुहृत्त्रिविधहृत्तापान्मृत्योश्च मामव ॥५॥ कृतागसमपि त्राहिमृत्योस्त्वं च भिषक्तमः ॥ तत्सन्धि भिन्धि सर्वांकयोनेर्मुञ्चस्व मां शिव ॥६॥ श्रीद पुष्टिद ते व्याप्तं दिक्षु क्षीरनिभं यशः ॥ रुङ् मार्ष्टिकृद्रक्ष मां त्वं गंगा यन्मूर्ध्नि चर्क्षराट् ॥७॥ द्रष्टा वसति सर्वत्र बत मामीक्षसे न किम् ॥ स्तुतेर्धर्मेश-

शक्तिर्निरस्तमृत्योनमेजते ॥ ८ ॥ तिष्ठानन्दद चित्ते मे समन्तात् परिपालय ॥९॥

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं रुद्रस्तोत्रम् ।

५६--हिमालयकृतं शिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हिमालय उवाच । त्वं ब्रह्मा सृष्टिकर्ता च त्वं विष्णुः परिपालकः । त्वं शिवः शिवदोऽनन्यः सर्वसंहारकारकः ॥ १ ॥ त्वमीश्वरो गुणातीतो ज्योतिरूपः सनातनः । प्रकृतिः प्रकृतीशश्च प्राकृतः प्रकृते परः ॥ २ ॥ नानारूपविधाता त्वं भक्तानां ध्यानहेतवे । येषु रूपेषु यत्प्रीतिस्तत्तद्रूपं बिभर्षि च ॥ ३ ॥ सूर्यस्त्वं सृष्टिजनक आधारः सर्वतेजसाम् । सोमस्त्वं सस्यपाता च सततं शीतरश्मिना ॥ ४ ॥ वायुस्त्वं वरुणस्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः । मृत्युञ्जयो मृत्युमृत्युः कालकालो यमांतकः ॥५॥ वेदस्त्वं वेदकर्ता च वेदवेदांगपारगः । विदुषां जनकस्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः ॥ ६ ॥ मंत्रस्त्वं हि जपस्त्वं हि तपस्त्वं सत्फलप्रदः वाक् त्वं रागाधिदेवी त्वं तत्कर्ता तद्गुरुः स्वयम् ॥ ७ ॥ अहो सरस्वतीबीजं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ इत्येवमुक्त्वा शैलेन्द्रस्तस्थौ धृत्वा पदांबुजम् ॥ ८ ॥ तत्रोवास तमाबोध्य चावरुह्य वृषाच्छिवः । स्तोत्रमेतन्महापुण्यं त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः ॥ ९ ॥ मुच्यते

सर्वपापेभ्यो भयेभ्यश्च भवार्णवे । अपुत्रो लभते पुत्रं मासमेकं पठेद्यदि ॥१०॥ भार्याहीनो लभेद्भर्यां सुशीलां सुमनोहराम् चिरकालगतं वस्तु लभते सहसा ध्रुवम् ।११। राज्यभ्रष्टो लभेद्राज्यं शङ्करस्य प्रसादतः । कारागारे श्मशाने च शत्रुग्रस्तेऽतिसङ्कटे ॥ १२ ॥ गम्भीरेऽति-जलाकीर्णे भग्नपोते विषादने । रणमध्ये महाभीते हिंस्रजन्तुसमन्विते ॥ सर्वतो मुच्यते स्तुत्वा शङ्करस्य प्रसादतः ॥१३॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे हिमालयकृतं शिवस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

५७--कल्किकृतं शिवस्तोत्र ।

श्रीगणेशाय नमः । गौरीनाथं विश्वनाथं शरण्यं भूतावासं वासुकीकण्ठभूषम् । त्र्यक्षं पञ्चास्यादिदेवं पुराणं वन्दे सान्द्रानन्दसन्दोहदक्षम् ॥ १ ॥ योगाधीशं कामनाशं करालं गंगासंगक्लिन्नमूर्धानमीशम् । जटा-जूटाटोपरिक्षिप्तभावं महाकालं चन्द्रभालं नमामि ॥ २ ॥ श्मशानस्थितं भूतवेतालसङ्गं नानाशस्त्रैः शूला-दिभिश्च । व्यग्रात्युग्रा बाहयो लोकनाशे यस्य क्रोधोद्भू-तलोकोऽस्तमेति ॥ ३ ॥ यो भूतादिः पञ्चभूतः सिसृक्षु-स्तन्मात्रात्मा कालकर्मस्वभावैः प्रहृत्येदं प्राप्य जीवत्व-मीशो ब्रह्मानन्दे क्रीडन्ते तं नमामि ॥ ४ ॥ स्थितो विष्णुः सर्वविष्णुः सुरात्मा लोकान्साधून् धर्मसेतुन्वि-

र्भति । ब्रह्मांद्यन्शे योऽभिमानो गुणात्मा शब्दाद्यंगैस्तं परेशं नमामि ॥ ५ ॥ यस्याज्ञया वायवो वान्ति लोके ज्वलत्यग्निः सविता याति तप्यन् । शीतांशुः खे तारकासंग्रेहश्च प्रवर्तन्ते तं परेशं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ तस्य श्वासात्सर्वधात्री धरित्री दैवो वर्षत्यम्बुकालः प्रयाता । मेरुर्मध्ये भुवनानां च भर्ता तमीशानं विश्वरूपं नमामि ॥ ७ ॥

इति श्रीकल्किपुराणे कल्किकृतं शिवस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

५८–शिवभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । गलद्दानगण्डं मिलद्भृंगखण्डं चलच्चारुशुण्डं जगत्त्राणशौंडम् । लसद्दंतकांडं विपद्भंगवण्डं शिवप्रेमपिंडं भजे वक्रतुण्डम ॥१॥ अनाद्यंतमाद्यं परं तत्वमर्थं चिदाकारमेकं तुरीयं त्वमेयम् । हरिब्रह्ममृग्यं परिब्रह्मरूपं मनोवागतीतं महः शैवमीडे ॥२॥ स्वशक्त्यादिशक्त्यंतसिंहासनस्थं मनोहारिसर्वांगरत्नादिभूषम् । जटाहींदुगंगास्थिशाश्यर्कमौलिं परं शक्तिमित्रं नुम, पञ्चवक्त्रम् ॥३॥ शिवेशानतत्पूरुषाधारवामादिभिर्ब्रह्मभिर्हृन्मुखैः षड्भिरंगैः । अनौपम्यषट्त्रिंशतं तंत्वविद्यामतीतं परं त्वां कथं वेत्ति को वा ॥४॥ प्रवालप्रवाहप्रभाशोणधर्मं मरुत्वन्मणिश्रीमहःश्याममर्धम् । गुणस्यूतमेकं वपुश्चैकमन्तः स्मरामि

स्मरापत्तिसंपत्तिहेतुम् ॥ ५ ॥ स्वसेवासमायातदेवासु-
रेंद्रनमन्मौलिमन्दारमालाभिषिक्तम् । नमस्यामि शंभो
पदांभोरुहं ते भवाम्भोधिपोतं भवानीविभाव्यम् ॥ ६ ॥
जगन्नाथ मन्नाथ गौरीसनाथ प्रपन्नानुकम्पिन्विपन्ना-
र्तिहारिन् । महःस्तोममूर्ते समस्तैकबन्धो नमस्ते नमस्ते
पुनस्ते नमोऽस्तु ॥ ७ ॥ महादेव देवेश देवाधिदेव
स्मरारे पुरारे यमारे हरेति ॥ ब्रुवाणः स्मरिष्यामि
भक्त्या भवन्तं ततो मे दयाशील देव प्रसीद ॥८॥
विरूपाक्ष विश्वेश विद्यादिकेश त्रयीमूल शम्भो शिव
त्र्यम्बक त्वम् । प्रसीद स्मर त्राहि पश्यावपुष्य
क्षमस्वाप्नुहीति क्षपा हि क्षिपामः ॥ ९ ॥ त्वदन्यः
शरण्यः प्रपन्नस्य नेति प्रसीद स्मरन्नेव हन्यास्तु
दैन्यम् । न चेत्ते भवेद्भक्तवात्सल्यहानिस्ततो मे दयालो
दयां सन्निधेहि ॥१०॥ अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं
भवान्नाथ दाता त्वदन्यं न याचे । भवद्भक्तिमेव
स्थिरां देहि मह्यं कृपाशील शम्भो कृतार्थोऽस्मि
तस्मात् ॥११॥ पशुं वेत्सि चेन्मां त्वनेवाधिरूढः कलं-
कीति वा मूर्ध्नि त्वमेव । द्विजिह्वः पुनः सोऽपि
ते कण्ठभूषा त्वदंगीकृताः शर्व सर्वेऽपि धन्याः ॥१२॥
न शक्नोमि कर्तुं परद्रोहलेशं कथं प्रीयसे त्वं न जाने
गिरीश । तदा हि प्रसन्नोऽसि कस्यापि कांतासुतद्रो-

द्रोहिणो वा पितृद्रोहिणो वा ॥१३॥ स्तुतिं ध्यानमर्चां यथावद्विधातुं भजन्नप्यजानन्महेशावलम्बे । त्रसंतं सुतं त्रातुमग्रे मृकण्डोर्यमप्राणनिर्वापणं त्वत्पदाब्जम् ॥१४॥ अकण्डे कलंकादनंगे भुजंगादपाणौ कपालादभालेऽनलाक्षात् । अमौलौ शशांकादवामे कलत्रादहं देवमन्यं न मन्ये न मन्ये ॥१५॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं श्रीशिवभुजंगप्रयातस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

५९-उपमन्युकृतं शिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । जय शंकर पार्वतीपते मृड शंभो शशिखंडमंडन । मदनांतक भक्तवत्सल प्रियकैलास दयासुधांबुधे ॥ १ ॥ सदुपायकथास्वपंडितो हृदये दुःखशरेण खंडितः । शशिखंडशिखंडमंडनं शरणं यामि शरण्यमीश्वरम् ॥ २ ॥ महसः परितः प्रसर्पतस्तमसो दर्शनभेदिनो भिदे । दिननाथ इव स्वतेजसा हृदयव्योम्नि मनागुदेहि नः ॥ ३ ॥ न वयं तव चर्मचक्षुषा पदवीमप्युपवीक्षितुं क्षमाः । कृपयाऽभयदेन चक्षुषा सकलेनेश विलोकयाशु नः ॥ ४ ॥ त्वदनुस्मृतिरेव पावनी स्तुतियुक्ता नहि वक्तुमीश सा । मधुरं हि पयः स्वभावतो ननु कीदृक्सितशर्करान्वितम् ॥ ५ ॥ सविषोऽप्यमृतायते भवाञ्छवमुंडाभरणोऽपि पावनः । भव

एव भवांतकः सतां समदृष्टिर्विषमेक्षणोऽपि सन् ॥ ६ ॥
अपि शूलधरो निरामयो दृढवैराग्यरतोऽपि रागवान् ।
अपि भैक्ष्यचरो महेश्वरश्चरितं चित्रमिदं हि ते प्रभो ।७।
वितरत्यभिवांछितं दृशा परिदृष्टाः किल कल्पपादपः ।
हृदये स्मृत एव धीमते नमतेऽभीष्टफलप्रदो भवान् ।८।
सहसैव भुजङ्गपाशवान्विनिगृह्णाति न यावदंतकः । अ-
भयं कुरु तावदाशु मे गतजीवस्य पुनः किमौषधैः ॥९॥
सविषैरिव भोगपन्नगैर्विषयैरेभिरलं परिक्षतम् । अमृतै-
रिव संभ्रमेण मामभिषिंचाशु दयावलोकनैः ॥१०॥ मु-
नयो बहवोऽद्य धन्यतां गमिताः स्वाभिमतार्थदर्शिनः ।
करुणाकर येन तेन मामवसन्नं ननु पश्य चक्षुषा ।११।
प्रणमाम्यथ यामि चापरं शरणं कं कृपणाभयप्रदम् ।
विरहीव विभो प्रियामयं परिपश्यामि भवन्मयं जगत् ।
॥१२॥ बहवो भवताऽनुकम्पिताः किमितीशान न मा-
ऽनुकम्पसे । दधता तिमु मंदराचलं परमाणुः कमठेन दु-
र्धरः ॥१३॥ अशुचिं यदि नाऽनुमन्यसे किमिदं मूर्ध्नि-
कपालदाम ते । उत शाठ्यमसाधुसंगिनं विषलक्ष्मासि-
न किं द्विजिह्वधृक् ॥१४॥ क्व दृशं विदधामि किं करो-
म्यनुतिष्ठामि कथं भयाकुलः । क्व नु तिष्ठसि रक्ष रक्ष मां
मयि शंभो शरणागतोऽस्मि ते ॥१५॥ विलुठाम्यवनौ
किमाकुलः किमुरो हन्मि शिरश्छिनद्मिवा ॥ किमुरो-

दिमि शरटीम किं कृपणं मां न यदीक्षसे प्रभो ।१६। शिव सर्वग शर्व शर्मदं प्रणतो देव दयां कुरुष्व मे ॥ नम ईश्वर नाथ दिक्पते पुनरेवेश नमो नमोऽस्तु ते ॥१७॥ शरणं तरुणेंदुशेखरः शरणं मे गिरिराजकन्यका। शरणं पुनरेव तावुभौ शरणं नान्यदुपैमि दैवतम् ।१८। उपमन्युकृतं स्तवोत्तमं जपतः शंभुसमीपवर्तिनः ॥ अभिवांछितभाग्यसंपद परमायुः प्रददाति शंकरः ॥१९॥ उपमन्युकृतं स्तवोत्तमं प्रजपेद्यस्तु शिवस्य सन्निधौ ॥ शिवलोकमवाप्य सोऽचिरात् सह तेनैव शिवेन मोदते ॥२०॥

६०-असितकृतं शिवस्तोत्रम् ।

श्री गणेशाय नमः ॥ असित उवाच ॥ जगद्गुरो नमस्तुभ्यं शिवाय शिवदाय च ॥ योगीन्द्राणां च योगीन्द्रं गुरूणां गुरवे नमः ॥ १ ॥ मृत्योर्मृत्युस्वरूपेण मृत्युसंसारखंडन ॥ मृत्योरीश मृत्युबीज मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ कालरूपं कलयतां कालकालेश कारण ॥ कालादतीत कालस्य कालकाल नमोऽस्तुते ।३। गुणातीत गुणाधार गुणबीज गुणात्मक ॥ गुणीश गुणिनां बीज गुणोनां गुरवे नमः ॥ ४ ॥ ब्रह्मस्वरूप ब्रह्मज्ञ ब्रह्मभावे च तत्पर ॥ ब्रह्मबीजस्वरूपेण ब्रह्मबीज नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥ इति स्तुत्वा शिवं नत्वा

पुरस्तस्थौ मुनीश्वरः ॥ दीनवत्साश्रुनेत्रश्च पुलकाङ्कितविग्रहः ॥ ६ ॥ असितेन कृतं स्तोत्रं भक्तियुक्तश्च यः पठेत् ॥ वर्षमेकं हविष्याशी शंकरस्य महात्मनः ॥ ७ ॥ स लभेद्वैष्णवं पुत्रं ज्ञानिनं चिरजीविनम् ॥ भवेद्धनाढ्यो दुःखी च मूको भवति पण्डितः ॥ ८ ॥ अभार्यो लभते भार्यां सुशीलां च पतिव्रताम् ॥ इह लोके सुखं भुक्त्वा यात्यन्ते शिवसन्निधिम् ॥ ९ ॥ इदं स्तोत्रं पुरा दत्तं ब्रह्मणा च प्रचेतसे ॥ प्रचेतसा स्वपुत्रायासिताय दत्तमुत्तमम् ॥ १० ॥

इति ब्रह्मवैवर्ते महापुराणे श्री कृष्णजन्मखण्डे असितकृतं शिवस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

६१-शंकरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ईशावास्यमिदं सर्वं चक्षोः सूर्यो अजायत ॥ इति श्रुतिरुवाचातो महादेवः परावरः ॥ १ ॥ अष्टमूर्तेरसौ सूर्यो मूर्तित्वे परिकल्पितः ॥ नेत्रं त्रिलोचनस्यैकमसौ सूर्यस्तदाश्रितः ॥ २ ॥ यस्य भासा सर्वमिदं विभाति च श्रुतेरिमे ॥ तमेव भान्तमीशानमनुभान्ति खगादयः ॥ ३ ॥ ईशानः सर्वविद्यानां भूतानां चेति च श्रुतेः ॥ वेदादीनामप्यधीशः स ब्रह्मा कैर्न पूज्यते ॥ ४ ॥ यस्य संहारकाले तु न किञ्चिदवशिष्यते ॥ सृष्टिकाले पुनः सर्वं स एकः सृजति प्रभुः ॥ ५ ॥

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वकल्पयत् ।। इति श्रुतेर्महा-
देवः श्रेष्ठोऽर्च्यः सकलाश्रितः ।। ६ ।। विश्वं भूतं भव-
द्भव्यं सर्वं रुद्रात्मकं श्रुतम् ।। मृत्युञ्जयस्तारकोऽतः स
यज्ञस्य प्रसाधनः ।।७।। विषमाक्षोऽपि समदृक् साशिवो-
ऽपि शिवः स च ।। वृषसंस्थोऽप्यतिवृषो गुणात्माऽप्यगु-
ऽणोमलः ।।८।। यदाज्ञामुद्वहन्त्यत्र शिरसा सासुराः
सुराः ।। अन्नं वातो वर्ष इतीषवो यस्य स विश्वपाः ।९।
भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमीति श्रुतेरयम् ।। स्वभक्त-
संसारमहारोगहर्ताऽपि शङ्करः ।।१०।।

इति श्रीवासुदेवसरस्वतीविरचितं शंकरस्तोत्रम् ।

६२–पशुपतिस्तोत्रम् ।

स पातु वो यस्य जटाकलापे स्थितः शशाङ्कः स्फु-
टहारगौरः ।। नीलोत्पलानामिव नालपुञ्जे निद्रायमाणः
शरदीव हंसः ।।१।। जगत्सिसृक्षाप्रलयक्रियाविधौ प्रय-
त्नमुन्मेषनिमेषविभ्रमम् ।। वदन्ति यस्येक्षणलोलपक्ष्मणां
पराय तस्मै परमेष्ठिने नमः ।।२।। व्योम्नीव नीरदभरः
सरसीव वीचिव्यूहः सहस्रमहसीव सुधांशुधाम ।। यस्मि-
न्निदं जगदुदेति च लीयते च तच्छांभवं भवतु वैभव-
मृद्धये वः ।।३।। यः कन्दुकैरिव पुरन्दरपद्मसद्मपद्माप्र-
भृतिभिः प्रभुरप्रमेयः ।। खेलत्यलङ्घ्यमहिमा स हिमा-
द्रिकन्याकान्तः कृतान्तदलनो गलयत्वघं वः ।।४।। दिश-

यात्स शीतकिरणाभरणः शिवं वो यस्योत्तमाङ्गभुवि विस्फुरदूर्मिपक्षा ॥ हंसीव निर्मलशशांककलामृणालकन्दार्थिनी सुरसरिन्नभतः पपात ॥५॥

६३-विश्वनाथनगरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यत्र देवपतिदेहिनां मुक्तिरेव भवतीति निश्चितम् ॥ पूर्वपुण्यनिचयेन लभ्यते विश्वनाथनगरी गरीयसी ॥१॥ स्वर्गतः सुखकरी दिवौकसां शैलराजतनयाऽतिवल्लभा ॥ ढुण्ढिभैरवविदारितविघ्ना विश्व० ॥२॥ यत्र तीर्थमलं मणिकर्णिका सा सदाशिवसुखप्रदायिनी ॥ या शिवेन रचिता निजायुधैर्विश्व० ॥३॥ सर्वदा अमरवृन्दवन्दिता गजेन्द्रमुखवारितविघ्ना । कालभैरवकृतैकशासना विश्व० ॥४॥ यत्र मुक्तिरखिलैस्तु जन्तुभिर्लभ्यते मरणमात्रतः शुभा ॥ साऽखिलामरगणस्पृहणीया विश्व० ॥५॥ उरगं तुरगं खग मृगं वा करिण प्रसरिणं खरं नरं वा ॥ सकृदाप्लुत एव देवनद्यां लहरी किं न वरं चरीकरीति ॥६॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं विश्वनाथनगरीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

६४-श्रीकाशीविश्वेश्वरादिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमः श्रीविश्वनाथाय देववन्द्यपदाय ते ॥ काशीशेशावतारं मे देवदेव हृद्युपादिश ॥१॥ मायाधीशं महात्मानं सर्वकारणम् ॥ वन्दे त

माधवं देवं यः काशीं चाधितिष्ठति ॥२॥ वन्दे तं धर्म-
गोप्तारं सर्वगुह्यार्थवेदिनम् ॥ गणदेवं ढुण्ढिराजं तं म-
हान्तं स्वविघ्नहम् ॥३॥ भारं वोढुं स्वभक्तानां यो योगं
प्राप्त उत्तमम् ॥ तं सद्ढुण्ढिं दंडपाणिं वन्दे गंगातटस्थि-
तम् ॥४॥ भैरवं दंष्ट्राकरालं भक्ता भयङ्करं भजे ॥ दु-
ष्टदंडशूलशीर्षधरं वामाध्वचारिणम् ॥५॥ श्रीकाशीं पा-
पशमनीं दमनीं दुष्टचेतसः ॥ स्वर्निःश्रेणिं वाविमुक्त-
पुरीं मर्त्यहितां भजे ॥६॥ नमामि चतुराध्यां सदाऽणि-
म्नि स्थितां गुहाम् ॥ श्रीगंगे भैरवीं दूरीकुरु कल्याणि
यातनाम् ॥७॥ भवानि रक्षान्नपूर्णे सद्गुणितगुणेऽम्बिके ।
देवर्षिवन्द्याम्बुमणिकर्णिकां मोक्षदां भजे ॥८॥

६५-शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भ-
स्मांगरागाय महेश्वराय ॥ नित्याय शुद्धाय दिगंबराय
तस्मै नकाराय नमः शिवाय ॥१॥ मंदाकिनीसलिलचं-
दनचर्चिताय नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय। मंदारपुष्प-
बहुपुष्पसुपूजिताय तस्मै मकाराय नमः शिवाय ॥२॥
शिवाय गौरीवदनाब्जवृंदसूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय ॥
श्रीनीलकंठाय वृषध्वजाय तस्मै शिकाराय नमः शिवाय
॥३॥ वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्यमुनींद्रदेवार्चितशेखराय ॥
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय तस्मै वकाराय नमः शिवाय

॥४॥ यक्षस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय सनातनाय । दिव्याय देवाय दिगम्बराय तस्मै यकाराय नमः शिवाय ॥५॥ पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥६॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रं संपूर्णम् ।

६६-शिवषडक्षरस्तोत्रम् ।

ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः । कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ॥१॥ नमन्ति ऋषयो देवो नमन्त्यप्सरसां गणाः । नरा नमन्ति देवेशं नकाराय नमो नमः ॥२॥ महादेवं महात्मानं महाध्यानं परायणम् । महापापहरं देवं मकाराय नमो नमः ॥३॥ शिवं शान्तं जगन्नाथं लोकानुग्रहकारकम् । शिवमेकपदं नित्यं शिकाराय नमो नमः ॥४॥ वाहनं वृषभो यस्य वासुकिः कण्ठभूषणम् । वामे शक्तिधरं देवं यकाराय नमो नमः ॥५॥ यत्र यत्र स्थितो देवः सर्वव्यापी महेश्वरः । यो गुरुः सर्वदेवानां यकाराय नमो नमः ॥६॥ षडक्षरमिदं स्तोत्रं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥७॥

इति श्रीरुद्रयामले उमामहेश्वर संवादे शिवषडक्षरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

६७-वीरेश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । एकं ब्रह्मैवाद्वितीयं समस्तं स-

त्वं सत्यं नेह नो नास्ति किञ्चित् । एको रुद्रो न द्वितीयोऽवतस्थे तस्मादेकं त्वां प्रपद्ये महेशम् ॥१॥ एकः कर्ता त्वं हि सर्वस्य शम्भो नानारूपेष्वेकरूपोऽप्यरूपः । यद्वत्प्रत्यक्पूर्ण एकोऽप्यनेकस्तस्मान्नान्यं त्वां दिनेशं प्रपद्ये ॥२॥ रज्जौ सर्पः शुक्तिकायां च रौप्यं पाथःपूरस्तन्मृगाख्ये मरीचौ । यद्वत्तद्वद्विष्वगेव प्रपञ्चो यस्मिञ्ज्ञाते तं प्रपद्ये महेशम् ॥३॥ तोये शैत्यं दाहकत्वं च वह्नौ तापो भानौ शीतभानौ प्रसादः । पुष्पे गन्धो दुग्धमध्ये च सर्पिर्यत्तच्छम्भो त्वं ततस्त्वां प्रपद्ये ॥४॥ शब्दं गृह्णस्यश्रवास्त्वं हि जिघ्रेरघ्राणस्त्वं व्यंघ्रिरायासि दूरात् । व्यक्षः पश्येस्त्वं रसज्ञोऽप्यजिह्वः कस्त्वां सम्यग्वेत्यतस्त्वां प्रपद्ये ॥५॥ नो वेदस्त्वामीश साक्षाद्विवेद नो वा विष्णुर्नो विधाताऽखिलस्य । नो योगीन्द्रा नेन्द्रमुख्याश्च देवा भक्तो वेद त्वामतस्त्वां प्रपद्ये ॥६॥ नो ते गोत्रं नेश जन्मापि नाख्या नो वा रूपं नैव शीलं न देशः । इत्थंभूतोऽपीश्वरस्त्वं त्रिलोक्याः सर्वान्कामान्पूरयेस्तद्भजे त्वाम् ॥७॥ त्वत्तः सर्वं त्वं हि सर्वं स्मरारे त्वं गौरीशस्त्वं च नग्नोऽतिशान्तः । त्वं वै शुद्धस्त्वं युवा त्वं च बालस्तत्त्वं यत्किं नास्त्यतस्त्वां नमोऽस्मि ॥८॥ स्तुत्वेति विप्रो निपपात भूमौ स दण्डवद्यावदतीव हृष्टः । तावत्स बालोऽखिलवृद्धवृद्धः प्रोवाच भूदेव वरं

गृणीहि ।।९।। तत उत्थाय हृष्टात्मा मुनिर्विश्वानरः कृतो । प्रत्यब्रवीत्किमज्ञातं सर्वज्ञस्य तव प्रभो ।।१०।। सर्वान्तरात्मा भगवान्सर्वः सर्वप्रदो भवान् । याच्ञां प्रति नियुंक्ते मां किमशो दैन्यकारिणीम् ।।११।। इति श्रुत्वा वचस्तस्य देवो विश्वानरस्यह । शुचे शुचिव्रतस्याथ शूचिस्मित्वाऽब्रवीच्छिशुः ।।१२।। बाल उवाच । त्वया शुचे शुचिष्मत्यां योऽभिलाषः कृतो हृदि । अचिरेणैव कालेन स भविष्यत्यसंशयम् ।।१३।। तव पुत्रत्वमेष्यामि शुचिष्मात्यां महामते । ख्यातो गृहपतिर्नाम्ना शुचिः सर्वामरप्रियः ।।१४।। अभिलाषाष्टकं पुण्यं स्तोत्रमेतन्मयेरितम् । शब्दं त्रिकालपठनात्कामदं शिवसंनिधौ ।।१५।। एतत्स्तोत्रस्य पठनं पुत्रपौत्रधनप्रदम् । सर्वशान्तिकरं वापि सर्वापत्यरिनाशनम् ।।१६।। स्वर्गापवर्गसम्पत्तिकारकं नात्र संशयः । प्रातरुत्थाय सुस्नातो लिङ्गमभ्यर्च्य शाम्भवम् ।।१७।। वर्षं जपन्निदं स्तोत्रगपुत्रः पुत्रवानः भवेत् । वैशाखे कार्तिके माघे विशेषनियमैर्युतः ।१८। यः पठेत्स्नानसमये स लभेत्सकलं फलम् । कार्तिकस्य तु मासस्य प्रासादादहमव्ययः ।।१९।। तव पुत्रत्वमेष्यामि यस्त्वन्यस्तत्पठिष्यति । अभिलाषाष्टकमिदं न देयं यस्य कस्यचित् ।।२०।। गोपनीयं प्रयत्नेन महावन्ध्याप्रसूतिकृत । स्त्रिया वा पुरुषेणापि नियमाल्लिगसान्निधौ

॥२१॥ अब्दं जप्तमिदं स्तोत्रं पुत्रदं नात्र संशयः । इत्यु-
क्त्वाऽन्तर्दधे बालः सोऽपि विप्रो गृहं ययौ ॥२२॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे काशीखण्डे श्रीवीरेश्वरस्तोत्रम् ।

६८-अर्द्धनारीश्वरस्तोत्रम् ।

मन्दारमालालुलितालकायै कपालमालाङ्कितशेख-
राय । दिव्याम्बरायै च दिगम्बराय नमः शिवायै च
नमः शिवाय ॥१॥ एकः स्तनस्तुंगतरः परस्य वार्ता-
मिव: प्रष्टमगान्मुखाग्रम् । यस्याः प्रियार्धस्थितिमुद्वहन्त्याः
सा पातु वः पर्वतराजपुत्री ॥२॥ यस्योपवीतगुण एव
फणावृतैतवक्षोरुहः कुचपटीयति वामभागे । तस्मै म-
मास्तु तमसामवसानसीम्ने चन्द्रार्धमौलिशिरसे महसे
नमस्या ॥३॥ स्वेदार्द्रवामकुचमण्डनपत्रभंगसंशोषिद-
क्षिणकरांगुलिभस्मरेणुः । स्त्रीपुंनपुंसकपदव्यतिलङ्घिनी
वः शंभोस्तनुः सुखयतु प्रकृतिश्चतुर्थी ॥४॥

६९-वेदसारशिवस्तवः ।

श्रीगणेशाय: नमः । पशूनां पतिं पापनाशं परेशं
गजेन्द्रस्य कृत्तिं वसानं वरेण्यम् । जटाजूटमध्ये स्फुरद्-
गांगवारिं महादेवमेकं स्मरामि स्मरारिम् ॥१॥ महेशं
सुरेशं सुरारातिनाशं विभुं विश्वनाथं विभूत्यंगभूषम् ।
विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्निन्त्रिनेत्रं सदानन्दमीडे प्रभुं पञ्चव-
क्त्रम् ॥२॥ गिरीशं गणेशं गले नीलवर्णं गवेन्द्राधिरूढं

गुणातीतरूपम् । भवं भास्वरं भस्मना भूषितांगं भवानीकलत्रं भजे पञ्चवक्त्रम् ॥३॥ शिवाकान्त शंभो शशांकार्धमौले महेशान शूलिन् जटाजूटधारिन् । त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप प्रसीद प्रसीद प्रभो पूर्णरूप ॥४॥ परात्मानमेकं जगद्बीजमाद्यं निरीहं निराकारमोंकारवेद्यम् । यतो जायते पाल्यते येन विश्वं तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम् ॥५॥ न भूमिर्न चापो न वह्निर्न वायुर्न चाकाशमास्ते न तंद्रा न निद्रा । न ग्रीष्मो न शीतं न देशो न वेशो न यस्यास्ति मूर्तिस्त्रिमूर्ति तमीडे ॥६॥ अजं शाश्वतं कारणं कारणानां शिवं केवलंभासकं भासकानाम् । तुरीयं तमःपारमाद्यन्तहीनं प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम् ॥७॥ नमस्ते नमस्ते विभो विश्वमूर्ते नमस्ते नमस्ते चिदानन्दमूर्ते । नमस्ते नमस्ते तपोयोगगम्य नमस्ते नमस्ते श्रुतिज्ञान गम्य ॥८॥ प्रभो शूलपाणे विभो विश्वनाथ महादेव शंभो महेश त्रिनेत्र । शिवाकान्त शान्त स्मरारे पुरारे त्वदन्यो वरेण्यो न मान्यो न गण्यः ॥९॥ शंभो महेश करुणामय शूलपाणे गौरीपते पशुपते पशुपाशनाशिन् । काशीपते करुणया जगदेतदेकस्त्वं हंसि पासि विदधासि महेश्वरोऽसि ॥१०॥ त्वत्तो जगद्भवति देव भव स्मरारे त्वय्येव तिष्ठति जगन्मृड विश्वनाथ । त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश

त्रिज्ञात्मकं हर चराचरविश्वरूपिन् ॥११॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितो वेदसारशिवस्तवः सम्पूर्णः

७०-शिवस्तुतिः ।

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे । त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शंभवे ॥१॥ वामाङ्गीकृतवामाङ्गि कुण्डलीकृतकुण्डलि ॥ आविरस्तु पुरो वस्तु भूतिभूत्यराम्बरम् ।२। निरुपादानसंभारमभित्तावेव तन्वते । जगच्चित्रं नमस्तस्मै कलाश्लाघ्याय शूलिने ॥३॥ चन्द्राननार्धदेहाय चन्द्रांशुसितमूर्तये ॥ चन्द्रार्कानलनेत्राय चन्द्रार्धशिरसे नमः ॥४॥ भुजंगकुंडलीव्यक्तशशिशुभ्रांशुशीतगुः । गन्त्यपि सदापायादव्याच्चेतोहरः शिवः ॥५॥ पिनाकफणिबालेन्दुभस्ममन्दाकिनीयुता ॥ पवर्गरचिता मूर्तिरपवर्गप्रदाऽस्तु वः ॥६॥

७१-शिवस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गले कलितकालिमः प्रकटितेन्दुभालस्थले विनाटितजटोत्करं रुचिरपाणिपाथोरुहे ॥ उदञ्चितकपालकं जघनसीम्नि सन्दर्शितद्विपाजिनमनुक्षणं किमपि धाम वंदामहे ॥१॥ वृषोपरि परिस्फुरद्धवलधाम धाम श्रियां कुबेरगिरिगौरिभप्रभवगर्वनिर्वासि तत् । क्वचित्पुनरुमाकुचोपचितकुंकुमै रञ्जितं गजाजिनविराजितं वृजिनभंगबीजं भजे ॥२॥ उदित्वरविलो-

चनत्रयविसृत्वरज्योतिषा कलाकरकलाकरव्यतिकरेण चार्हनिशम् ।। विकासि जटाटवीविहरणोत्सवप्रोल्लसत्तरामरतरंगिणीतरलचूडमीडे मृडम् ।।३।। विहाय कमलालयाविलसितानि विद्युन्नटीविडम्बनपटूनि मे विहरणं विधत्तां मनः ।। कपर्दिनि कुमुद्वतीरमणखण्डचूडामणौ कटितटपटीभवत्करटिचर्मणि ब्रह्मणि ।।४।। भवच्छ्द्वनदेहलीनिकटतुण्डदण्डाहतित्रुटन्मुकुकोटिभिर्मघवदाभिर्भूयते ।। व्रजेम भवदन्तिकं प्रकृतिमेत्य पैशाचिकीं किमित्यमरसंपदः प्रमथनाथ नाथामहे ।।५।। त्वदर्चनपरायणप्रमथकन्यकालुण्ठितप्रसूनसफलद्रुमं कमपि शैलमाशास्महे ।। अलं तटवितर्दिकाशयितसिद्धसीमन्तिनीप्रकीर्णसुमनोमनोरमणमेरुणामेरुणा ।।६।। न जातु हर यातु मे विषयदुर्विलासं मनो मनोभवकथास्तु मे न च मनोरथातिथ्यभूः ।। स्फुरत्सुरतरङ्गिणीतटकुटीरकोटौ वसन्नये शिव दिवानिशं तव भवानिपूजापरः ।।७।। विभूषणसुरापगाशुचितरालवालावलोवलद्वहलसीकरप्रकरसेकसंवर्धिता ।। महेश्वरसुरद्रुमस्फुरितसज्जटामञ्जरी निमज्जनफलप्रदा मम नु हंत भूयादियम् ।।८।। बहिर्विषयसङ्गतिप्रतिनिर्वर्तितक्षावलेः समाधिकलितात्मनः पशुपतेरशेषात्मनः ।। शिरःसुरसरित्तटीकुटिलकल्पकल्पद्रुमं निशाकरकलामहं बटुविमृश्यमानां भजे ।।९।। त्वदीयसुर-

वाहिनीविमलवारिधारावलज्जटागहनगाहिनी मतिरियं मम क्रामतु ॥ उपोत्तमसरित्तटीविटपिताटवीप्रोल्लसत-पस्विपरिषत्तुलाममलमल्लिकाभ प्रभो ॥१०॥

इति श्रीलंकेश्वरविरचिता शिवस्तुति. सम्पूर्णा ।

७२—शिवकण्ठस्तुतिः ।

पातु वो नीलकण्टस्य कण्ठः श्यामाम्बुदोपमः ॥ गौरीभुजलता यत्र विद्युल्लेखेव राजते ॥१॥ पातु वः शितिकण्ठस्य तमालश्यामलो गलः ॥ संसक्तपार्वतीबाहु-सुवर्णनिकषोपलः ॥२॥ कस्तूरीतिलकन्ति भालफलके देव्या मुखांभोरुहे रोलंबन्ति तमालबालमुकुलोत्तंसन्ति मौलिं प्रति ॥ याः कर्णे विकचोत्पलन्ति कुचयोरंसे च कालागुरुस्थासन्ति प्रथयन्तु तास्तव शिवं श्रीकण्ठकण्ठ-त्विषः ॥३॥ कस्तूरीयन्ति भाले तदनु नयपयोः कज्ज-लीयन्ति कर्णप्रान्ते नीलोत्पलीतन्त्युरसि मरकतालंकृती-यन्ति देव्याः ॥ रोमालीयन्ति नाभेरुपरि हरिमणीमेख-लोयन्ति मध्ये कल्याणं कुर्युरेते त्रिजगति पुरुजित्कण्ठ-भासां विलासाः ॥४॥

७३–शिवताण्डवस्तुतिः

देवा दिक्पतयः प्रयात परतः खं मुञ्चताम्भोमुचः पातालं व्रज मेदिनि प्रविशत क्षोणीतलं भूधराः ॥ ब्र-ह्मन्नुन्नय दूरमात्मभुवनं नाथस्य नो नृत्यतः शंभोः सं-

कटमेतदित्यवतु वः प्रोत्सारणा नन्दिनः ॥१॥ दोर्दण्डद्वयलीलयाचलगिरिभ्राम्यत्तदुच्चैरवध्वानोभ्दीतजगद्भ्रमत्पदभरालोलत्फणाग्र्योरगम् ॥ भृङ्गापिंगजटाटवीपरिसरोद्गङ्गोर्मिमालाचलच्चन्द्रं चारु महेश्वरस्य भवतां निःश्रेयसे मङ्गलम् ॥२॥ संध्याताण्डवडम्बरव्यसनिनो भर्गस्य चण्डभ्रमिव्यानृत्यद्भुजदण्डमण्डलभुवो झंझानिलाः पान्तु वः ॥ येषामुच्छलतां जवेन झटिति व्यूहेषु भूमीभृतामुड्डीनेषु विडौजसा पुनरसौ दम्भोलिरालोकिता ॥३॥ शर्वाणीपाणितालैश्चलवलयझणत्कारिभिः श्लाघ्यमानं स्थाने संभाव्यमान पुलकितवपुषा शंभुना प्रेक्षकेण ॥ खेलत्पिच्छालिकेकाकलकलकलितं क्रौञ्चभिद्बर्हियूना हेरम्बाकाण्डबृंहातरलितमनसस्ताण्डवं त्वा धिनोतु ॥४॥ देवस्त्रैगुण्यभेदात्सृजति वितनुते संहरत्येष लोकानस्यैव व्यापिनीभिस्तनुभिरपि जगद्व्याप्तमष्टाभिरेव ॥ वन्द्यो नास्येति पश्यन्निव चरणगतः पातु पुष्पाञ्जलिर्वः शंभोर्नृत्यावतारे वलयमणिफणाफूत्कृतैर्विप्रकीर्णः ॥५॥

७४ -- गौरीश्वरस्तुतिः ।

दिव्यं वारि कथं यतः सुरधुनी मौलौ कथं पावको दिव्यं तद्धि विलोचनं कथमहिर्दिव्यं स चाङ्गे तव ॥ तस्माद्द्यूतविधौ त्वयाऽद्य मुषितो हारः परित्यज्यता-

मित्थं शैलभुवाविहस्य लपितः शम्भुः शिवायास्तु वः ।१। श्रीकण्ठस्य सकृत्तिकार्तभरणी मूर्तिः सदा रोहिणी ज्येष्ठा भाद्रपदा पुनर्वसुयुता चित्रा विशाखान्विता ।। दिश्याद-क्षतहस्तमूलघटिताषाढा मघालंकृता श्रेयो वै श्रवणा-न्विता भगवतो नक्षत्रपालीव वः ।।२।। एषा ते हर का सुगात्रि कतमा मूर्ध्नि स्थिता किं जटा हंसः किं भजते जटां नहि शशी चन्द्रो जलं सेवते ।। मुग्धे भूतिरियं कुतोऽत्र सलिलं भूतिस्तरंगायते एवं यो विनिगूहते त्रिपथगां पायात्स वः शंकरः ।।३।।

७५–शिवलोचनस्तुतिः ।

जयति ललाठकटाक्षः शशिमौलेः पक्ष्मलः प्रियप्रण-तौ ।। धनुषि स्मरेण निहितः सकण्टकः केतकेषुरिव ।।१।। सानन्दा गणनायके सपुलका गौरीमुखाम्भोरुहे सक्रोधा कुसुमायुधे सकरुणा पादानते वज्रिणि ।। सस्मेरा गिरिजासखीषु सनया शैलाधिनाथे वहन्भूमीन्द्रं प्रदिश-न्तु शर्म विपुलं शम्भोः कटाक्षच्छटाः ।।२।। एकं ध्यान-निमीलनान्मुकुलितं चक्षुर्द्वितीयं पुनः पार्वत्या वदनाम्बु-जस्तनतटे शृङ्गारभारालसम् ।। अन्यद्दूरविकृष्टचाप-मदनक्रोधानलोद्दीपितं शंभोर्भिन्नरसं समाधिसमये नेत्र त्रयं पातु वः ।।३।। पक्ष्मालीपिङ्गलिम्नः कण इव तडि-तां यस्य कृत्स्नः समूहो यस्मिन् ब्रह्माण्डमीषद्विघटितसु-

कुले कालयजवा जुहाव ।। अर्चिर्निष्टप्तचूडाशशिगलितसुधाघोरझंकारकोणं तार्तीयं यत्पुरारेस्तदवतु मदनप्लोषणं लोचनं वः ।।४।।

७६-श्रीशिवजटाजूटस्तुतिः ।

स धूर्जटिजटाजूटो जायतां विजयाय वः ।। यत्रैकपलितभ्रान्ति करोत्यद्यापि जाह्नवी ।।१।। चूडापीडकपालसंकुलन्मन्दाकिनीवारयो विद्युत्प्रायललाटलोचनपुटज्योतिर्विमिश्रत्विषः ।। पान्तु त्वामकठोरकेतकशिखासन्दिग्धसृग्धेन्दवो भूतेशस्य भुजंगवल्लिकवलयस्रङ्नद्धजूटा जटाः ।।२।। गङ्गावारिभिरुक्षिताः फणिफणैरुत्पल्लवास्तच्छिखारत्नैः कोरकिताः सितांशुकलया स्मेरैकपुष्पश्रियः ।। आनन्दाश्रुपरिप्लुताक्षिहुतभुग्धूमैर्मिलद्दोहदा नाल्पं कल्पलताः फलं ददतु वोऽभीष्टं जटा धूर्जटेः ।।३।।

७७-शिवजटाजूटस्थितशशिलेखास्तुतिः ।

पूर्णनखेन्दुविगुणितमञ्जीरा प्रेमश्रृङ्खला जयति ।। हरशशिलेखा गौरीचरणाङ्गुलिमध्यगुल्फेषु ।।१।। जयति परमुषितलक्ष्मा भयादनुसर्पतेव हरिणेन ।। इह करणांकुरकुटिला विमला हरमौलिविधूलेखा ।।२।। श्रीकण्ठस्य कपर्दबन्धनपरिश्रान्तोरगग्रामणीसंदष्टां मुकुटावतसकलिकां वन्दे कलामैन्दवीम् । या त्रिम्बप्रतिपूर-

णाय परतो निष्पीड्य संदंशिकायंत्रेणेव ललाटलोचनज्वालाभिरावर्त्यते ॥३॥

७८-शिवगणस्तुतिः ।

सन्ध्याताण्डवडम्बरप्रणयिनो देवस्य चण्डीपतेर्भ्रष्टापीडविशीर्णमुंडचयनव्यग्रा गणा पान्तु वः । यैरोत्सुक्यवशैर्ग्रहगणाद्राहौ गृहीते हठात् सूर्याचन्द्रमसोर्मिथःस्मितवतोर्जातं करास्फालनम् ॥१॥

७९-शिवशिरोमालिकास्तुतिः ।

पित्रोः पादाब्जसेवागतगिरितनयापुत्रपौत्रादिभीतक्षुभ्यद्भूषाभुजंगश्वसनगुरुमरुद्दीप्तनेत्राग्निमापात् । स्विद्यन्मौलींदुखण्डस्रुतबहुलसुधासेकसंजातजीवा पूर्वाधीतं पठन्ती ह्यवतु विधिशिरोमालिका शूलिनो वः ॥१॥

८०-नन्दीस्तवः ।

कण्ठालङ्कागघण्टाघणघणरणिता ध्मातरोदःकटाहः कण्ठेकालाधिरोहोचितघनमुभंग भावुकस्निग्धपृष्ठः । साक्षाद्धर्मो वपुष्मान् धवलककुदनिर्धूतकैलासकूटः कूटस्थो वः ककुद्मान्निविडतरतमःस्तोमतृष्णां वितृष्यात् ॥१॥

८१-द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रम् ।

सौराष्ट्रदेशे विशदेऽतिरम्ये ज्योतिर्मयं चन्द्रकलावतंसम् । भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं तं सोमनाथं शरणं प्रपद्ये ॥१॥ श्रीशैलशृंगे विबुधातिसंगे तुलाद्रितुंगे-

ऽपि मुद्रा वसन्तम् । तमुर्जुनं मल्लिकपूर्वमेकं नमामि संसारसमुद्रसेतुम् ॥२॥ अवन्तिकायां विहितावतारं मुक्तिप्रदानाय च सज्जनानाम् । अकालमृत्योः परिरक्षणार्थं वन्दे महाकालमहासुरेशम् ॥३॥ कावेरिकानर्मदयोः पवित्रे समागमे सज्जनतारणाय । सदैव मान्धातृपुरे वसन्तमोङ्कारमीशं शिवमेकमीडे ॥४॥ पूर्वोत्तरे प्रज्वलिकानिधाने सदा वसन्तं गिरिजासमेतम् । सुराऽसुराऽसुराराधितपादपद्मं श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि ॥५॥ याम्ये सदंगे नगरेऽतिरम्ये विभूषितांगं विविधैश्च भोगैः । सद्भक्तिमुक्तिप्रदमीशमेकं श्रीनागनाथं शरणं प्रपद्ये ।६। महाद्रिपार्श्वे च तटे रमन्तं सम्पूज्यमानं सततं मुनीन्द्रैः । सुराऽसुरैर्यक्षमहोरगाद्यैः केदारमीशं शिवमेकमीडे ॥७॥ सह्याद्रिशीर्षे विमले वसन्तं गोदावरीतीरपवित्रदेशे । यद्दर्शनात् पातकमाशु नाशं प्रयाति तं त्र्यम्बकमीशमीडे ॥८॥ सुताम्रपर्णीजलराशियोगे निबध्य सेतुं विशिखैरसंख्यैः । श्रीरामचन्द्रेण समर्पितं तं रामेश्वराख्यं नियतं नमामि ॥९॥ यंडाकिनी शाकिनिकासमाजे निषेव्यमाणं पिशिताशनैश्च । सदैव भीमादिपदप्रसिद्धं तं शङ्करं भक्तहितं नमामि ॥१०॥ सानन्दमातनन्दवने वसन्तमानन्दकन्दं हतपापवृन्दम् । वाराणसीनाथमनाथनाथं श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ॥११॥ इलापुरे रम्यविशालकेऽस्मि-

न् समुल्लसतं च जगद्वरेण्यम् । वन्दे महोदारतरस्वभावं घृष्णेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये ॥१२॥ ज्योतिर्मयद्वादशलिंगकानां शिवात्मनां प्रोक्तमिदं क्रमेण। स्तोत्रं पठित्वा मनुजोऽतिभक्त्या फलं तदालोक्य निजं भजेच्च ॥१३॥

८३-द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरणम् ।

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम् । उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारममलेश्वरम् ॥१॥ परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशङ्करम् । सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने ॥२॥ वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे । हिमालये तु केदारं घुसृणेशं शिवालये ॥३॥ एतानि ज्योतिर्लिंगानि सायं-प्रातः पठेन्नरः । सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति ॥४॥

इति शिव स्तोत्राणि ।

विष्णु स्तोत्राणि ।

८३--विष्णुमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । महिम्नस्ते पारं विधिहरफणीन्द्रप्रभृतयो विन्दुर्नाद्याप्यज्ञश्चलमतिरहं नाथ नु कथम् । विजानीयामद्धा नलिननयनात्मीयवचसो विशुद्ध्यै वक्ष्यामोषदपि तु तथापि स्वमतितः ॥१॥ यदाहुर्ब्रह्मेके

पुरुषमितरे कर्म च परेऽपरे बुद्धं चान्ये शिवमपि च धातारमपरे। तथा शक्तिं केचिद्गणपतिमुतार्कं च सुधियो मतीनां वै भेदात्त्वमसि तदशेषं मम मतिः ॥२॥ शिवः पदाम्भस्ते शिरसि धृतवानादरयुतं तथाशक्तिश्चासौ तव तनुजतेजोमयतनुः। दिनेशं चैवामुं तव नयनमूचुस्तु नियमास्त्वदन्यः को ध्येयो जगति किल देवो वद विभो ।३। क्वचिन्मत्स्यः कूर्मः क्वचिदपि वराहो नरहरिः क्वचित्खर्वो रामो दशरथसुतो नन्दतनयः। क्वचिद्बुद्धः कल्किर्विहरसि कुमारापहृतये स्वतन्त्रोऽजो नित्यो विभुरपि तवाक्रीडनमिदम् ॥४॥ हृताम्नायेनोक्तं स्तवनवरमाकर्ण्य विधिना द्रुतं मात्स्यं धृत्वावपुरजरशंखासुरमथो। क्षयं नीत्वा मृत्योर्निगमगणमुद्धृत्य जलधेरशेषं संगुप्तं जगदपि च तेनैकशरणम् ॥५॥ निमज्जन्तं दार्धौ नगवरमुपालोक्य सहसा हितार्थं देवानां कमठवपुषाऽऽविश्य गहनम्। पयोराशिं पृष्ठे तमजित सलीलं धृतवतो जगद्धातुस्तेऽभूत्किमु सुलभभाराय गिरिकः ।६। हिरण्याक्षः क्षोणीमविशदसुरो नक्रनिलयं समादायामर्त्यैः कमलजमुखैरम्बरगतैः। स्तुतेनानन्तात्मन्नचिरमवभाति स्म विधृता त्वया दंष्ट्राग्रेऽसाववनिरखिला कन्दुक इव ॥७॥ हरिः क्वास्तीत्युक्ते दनुजपतिनाऽऽपूर्यं निखिलं जगन्नादैः स्तम्भान्नरहरिशरीरेण करजैः। समुत्पत्या-

शूरावसुरवरमादारितवतस्तवाख्यातः भूमन्किमु जगति नो सर्वगतता ॥८॥ विलोक्याजं द्वार्गं कपटलघुकार्य सुररिपुर्निरुद्धोऽपि प्रादादसुरगुरुणात्मीयमखिलम् । प्रसन्नस्तद्भक्त्या त्यजसि किल नाद्यापि भवनं बलेर्भक्ताधीन्यं तव विदिकमेवामरपते ॥९॥ समाधावासक्तं नृपतितनयैर्वीक्ष्य पितरं हरं बाणै रोषादुरुतरमुपादाय परशुम् । विना क्षत्रं विष्णो क्षितितलमशेषं कृतवतोऽसकृत्किं भूभारोद्धरणपटुता ते न विदिता ॥१०॥ समाराध्योमेशं त्रिभुवनमिदं वासवमुखं वशे चक्रे चक्रिन्नगणयदनीशं जगदिदम् । गतोऽसौ लङ्केशस्त्वचिरमथ ते बाणविजयं न केनाप्तं त्वत्तः फलमविनयस्यासुररिपो ॥११॥ क्वचिद्दिव्यं शौर्यं क्वचिदपि रणे कापुरुषता क्वचिद्गीताज्ञानं क्वचिदपि परस्त्रीविहरणम् । क्वचिन्मृत्स्नाशित्वं क्वचिदपि च वैकुण्ठविभवश्चरित्रं ते नूनं शरणद विमोहाय कुधियाम् ॥१२॥ न हिंस्यादित्येवं ध्रुवमवितथं वाक्यमबुधैरथाग्नीषोमीयं पशुमिति तु विप्रैर्निगदितम् । तवैतत्रास्थानेऽसुरगणविमोहाय गदतः समृद्धिर्नीचानां नयकर हि दुःखाय जगतः ॥१३॥ विभागे वर्णानां निगमनितये चावनितले विलुप्ते संजातो द्विजवरगृहे शम्भलपुरे । समारुह्याश्वं स्वं लसदसिकरस्म्लेच्छनिकरान्निहन्तास्युन्मत्तान्किल कलियुगान्ते युग-

पते ॥१४॥ गभीरे कसारे जलचरवराकृष्टचरणो रणे
ऽशक्तो मज्जन्नभयद जलेऽचिन्तयदसौ । यदा नागेन्द्र-
स्त्वां सपदि पदपाशादगगतो गतः स्वर्गं स्थानं भवति
विपदां ते किमु जनः ॥१५॥ सुतः पृष्टो वेधाः प्रतिवच-
न दानेऽप्रभुरसावथात्मन्यात्मानं शरणमगमत्वां त्रिज-
गताम् । ततस्तेऽस्तातंका ययुरथ मुदं हंसवपुषा त्वया
ते सार्वज्ञं प्रथितममरेशेह किमु नो ॥१६॥ समाविद्धो
मातुर्वचनविशिखेराशु विपिन तपश्चक्रे गत्वा त्व पर-
मतोषाय परमम् । ध्रुवो लेभे दिव्यं पदमचलमल्पेऽपि
वयसि किमस्त्यस्मिंल्लोके त्वयि वरद तुष्टे दुरधिगम्
॥१७॥ बृकाद्भीतस्तूर्णं स्वजनभयभित्वां पशुपतिर्भ्र-
मंल्लोकान्सर्वान शरणमुपयातोऽथ दनुजः । स्वयं भस्मी-
भूतस्तव वचनभङ्गोद्गतमतो रमे शाहोमाया तव दुर-
नुमेयाऽखिलजनैः ॥१८॥ हृतं दैत्यैर्दृष्ट्वाऽमृतघटमज-
य्यैस्तु नयतःकटाक्षैः सम्मोहं युवतिवरवेषेण दितिजा-
न् । समग्रं पीयूषं सुभग सुरपूगाय ददतः समस्यापि
प्रायस्तव खलु हि भृत्येष्वभिरतिः ॥१९॥ समाकृष्टा
दुष्टैर्द्रुपदतनयाऽलब्धशरणा सभायां सर्वात्मंस्तव शरण-
मुच्चैरुपगता । समक्षं सर्वेषामभवदचिरं चीरनिचयः
स्मृतेस्ते साफल्यं नयनविषयं नो किमु सताम् ॥२०॥
वदंत्येके स्थानं तव वरद वैकुण्ठमपरे गवां

णिनिलयपातालमियरे। तथाऽन्ये क्षीरोदं हृदयनलिनं चापि तु सतां न मन्ये तत्स्थानं त्वहमिह च यत्रासि न विभो ॥२१॥ शिवोऽहं रुद्राणामहममरराजो दिविषदां मुनिनां व्यासोऽहं सुरवर समुद्रोऽस्मि सरसाम्। कुबेरो यक्षामामिति तव वचो मंदमतये न जाने तज्जातं जगति ननु यन्नासि भगवन् ॥२२॥ शिरो नाको नेत्रे शशिदिनकरावम्बरमुरौ निशि श्रोत्रे वाणी निगमनिकरस्ते कटिरिला। अकूपारो वस्तिश्चरणमपि पातालमिति वे स्वरूपं तेऽज्ञात्वा नृतनुमवजनंति कुधियः ॥२३॥ शरीरं वैकुण्ठं हृदयनलिनं वाससदनं मनोवृत्तिस्तार्क्ष्यो मतिरियमथो सागरसुता। विहारस्तेऽवस्थात्रितयमसवः पार्षदगणो न पश्यत्यज्ञा त्वामिह बहिरहो याति जनता ॥२४॥ सुधीरं कांतारं विशति च तडागं सुगहनं तथोतुङ्गं श्रृंग सपदि च समारोहति गिरेः। प्रसूनार्थं चेतोऽम्बुजममलमेकं त्वयि विभो समर्प्याज्ञिस्तूर्णं बत न च सुखं विन्दति जनः ॥२५॥ कृतैकांतावासा विगतनिखिलाशाः शमपरा जितश्वासोच्छासास्त्रुटितभवपाशाः सुयमिनः। परं ज्योतिः पश्यंत्यनघ यवि पश्यतु मम तु श्रियाश्लिष्टं भूयान्नयनविषयं ते किल वपुः ॥२६॥ कदा गंगोत्तुंगामलतरतंरंगाच्छपुलिने वसन्नाशापाशादखिलखनदाशाढपगतः अये लक्ष्मीकांतांबुजनयन ता-

तामरपते प्रसीदेत्याजल्पन्नमरवर नेष्यामि समयम् ।२७। कदा शृंगैः स्फीते मुनिगणपरीते हिमनगे द्रुमावीते शीते सुरमधुरगीते प्रतिवसन् । क्वचिद्ध्यानासक्तो विषयसुविरक्तो भवहरं स्मारँस्ते पादाब्जंजनिहर समेष्यामि विलियम् ॥२८॥ सुधापानं ज्ञानं न च विपुलदानं न निगमो न यागो नो योगो न च निखिलभोगोपरमणम् । जपो नो नो तीर्थं व्रतमिह न चोग्रं त्वयि तपो विना भक्तिं तेऽलं भवभयविनाशाय मधुहन् ॥२९॥ नमः सर्वेष्टाय श्रुतिशिखरदृष्टाय च नमो नमोऽसंश्लिष्टाय त्रिभुवननिविष्टाय च नमः । नमो विस्पष्टाय प्रणवपरिमृष्टाय च नमो नमस्ते सर्वात्मन्पुनरपि पुनस्ते मम नमः ॥३०॥ कणान्कश्चिद्वृष्टेर्गगननिपुणस्तूर्णमवन्नेस्तथाऽशेषान्पांसूनमित कलयेच्चापि तु जनः । नभः पिंडीकुर्यादचिरमपि चेच्चर्मवदिदं तथापीशासौ ते कलयितुमलं नाखिलगुणान् ॥३१॥ क्व माहात्म्यं सीमोज्झितमविषयं वेदवचसां विभो ते मे चेतः क्व च विविधतापाहतमिदम् । मयेदं यत्किंचिद्गदितमथ बाल्येन तु गुरो गृहाणैतच्छ्रद्धार्पितमिह न हेयं हि महताम् ॥३२॥ इति हरिस्तवनं सुमनोहरं परमहंसजनेन समीरितम् । सुगमसुन्दरसारपदास्पदं तदिदमस्तु हरेरनिशं मुदे ॥३३॥ गदारथांगांबुजकम्बुधारिणो रमासमाश्लिष्टतनोस्तनोतु

नः । बिलेशयाधीशशरीरशायिनः शिवः स्तवोऽजलमयं परं हरेः ॥३४॥ पठेदिमं यस्तु नरः परं स्तवं समाहितोऽघौघघनप्रभञ्जनम् । स विन्दतेऽत्राखिलभोगसम्पदो महीयते विष्णुपदे ततो ध्रुवम् ॥३५॥

इति श्रीमत्परमहंसब्रह्मानन्दविरचितं श्रीविष्णुमहिम्नः स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

८४—विष्णुपञ्जरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीविष्णुपञ्जरस्तोत्रमन्त्रस्य नारद ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीविष्णुः परमात्मा देवता । अहं बीजम् । सोहं शक्तिः ॥ ॐ ह्रीं कीलकम् । मम सर्वदेहरक्षणार्थं जपे विनियोगः ॥ नारदऋषये नमः मुखे ॥ श्रीविष्णुपरमात्मदेवतायै नमः हृदये । अहं बीजं गुह्ये । सोहं शक्तिः पादयोः ॥ ॐ ह्रीं कीलकं पादाग्रे ॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः इति मन्त्रः ॥ ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इति करतलन्यासः ॥ अथ हृदयादिन्यासः ॥ ॐ ह्रां हृदयाय नमः ॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा ॥ ॐ ह्रूं शिखायै वषट् । ॐ ह्रैं कवचाय हुम् । ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ॐ ह्रः अस्त्राय फट् ॥ इति अङ्गन्यासः ॥ अहं बीजप्राणायामं मन्त्र-

येण कुर्यात् ॥ अथ ध्यानम् । परं परस्मात्प्रकृतेरनादि-मेकं निविष्टं बहुधा गुहायाम् ॥ सर्वालयं सर्वचराचर-स्थं नमामि विष्णुं जगदेकनाथम् ॥१॥ ॐ विष्णुपञ्जरकं दिव्यं सर्वदुष्टनिवारणम् ॥ उग्रतेजो महावीर्यं सर्व शत्रुनिकृन्तनम् ॥२॥ त्रिपुरं दहमानस्य हरस्य ब्रह्मणोदितम् ॥ तदहं संप्रवक्ष्यामि आत्मरक्षाकरं नृणाम् ।३। पादौ रक्षतु गोविन्दो जंघे चैव त्रिविक्रमः ॥ ऊरु मे केशवः पातु कटिं चैव जनार्दनः ॥४॥ नाभिं चैवाच्युतः पातु गुह्यं चैव तु वामनः ॥ उदरं पद्मनाभश्च पृष्ठं चैव तु माधवः ॥५॥ वामपार्श्वं तथा विष्णुर्दक्षिणं मधुसूदनः ॥ बाहू वै वासुदेवश्च हृदि दामोदरस्तथा ॥६॥ कण्ठं रक्षतु वाराहः कृष्णश्च मुखमण्डलम् ॥ माधवः कर्णमूले तु हृषीकेशश्च नासिके ॥७॥ नेत्रे नारायणो रक्षेल्ललाटं गरुड़ध्वजः ॥ कपोलौ केशवो रक्षेद्वैकुण्ठः सर्वतो दिशम् ॥८॥ श्रीवत्साङ्कश्च सर्वेषामङ्गानां रक्षको भवेत् ॥ पूर्वस्यां पुण्डरीकाक्ष आग्नेय्यां श्रीधरस्तथा ॥९॥ दक्षिणे नारसिंहश्च नैर्ऋत्यां माधवोऽवतु । पुरुषोत्तमो मे वारुण्यां वायव्यां च जनार्दनः ॥१०॥ गदाधरस्तु कौबेर्यामीशान्यां पातु केशवः ॥ आकाशे च गदा पातु पाताले च सुदर्शनम् ॥११॥ सन्नद्धः सर्वगात्रेषु प्रविष्टो विष्णुपञ्जरः ॥ विष्णुपञ्जरविष्टोऽहं वि-

चरामि महीतले ॥१२॥ राजद्वारेऽपथे घोरे संग्रासे शत्रु संकटे ॥ नदीषु च रणे चंव चोरव्याघ्रभयेषु च ॥१३॥ डाकिनीप्रेतभूतेषु भयं तस्य न जायते। रक्ष रक्ष महादेव जनेश्वर ।१४। रक्षन्तु देवताः सर्वा ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा । जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु यामनः ॥१५॥ अटव्यां नारसिंहश्च सर्वतः पातु केशवः ॥ दिवा रक्षतु मां सूर्यो रात्रो रक्षतु चन्द्रमाः ॥ १६ ॥ पन्थानं दुर्गमं रक्षेत्सर्वमेव जनार्दनः ॥ रोगविघ्नहतश्चैव ब्रह्महा गुरुतल्पगः ॥१७॥ स्त्रीहन्ता बालघाती च सुरापो वृषलीपतिः ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो यः पठेन्नात्र संशयः ॥१८॥ अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥१९॥ आपदो हरते नित्यं विष्णुस्तोत्रार्थसम्पदा । यस्त्विदं पठते स्तोत्रं विष्णुपञ्जरमुत्तमम् ॥२०॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ गोसहस्रफलं तस्य वाजपेयशतस्य च ।२१। अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥ सर्वकामं लभेदस्य पठनान्नात्र संशयः ॥२२॥ जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके ॥ ज्वालमालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥२३॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे इन्द्रनारदसंवादे विष्णुपञ्जरस्तोत्रम् ।

८५-श्रीविष्णुप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्त्ये नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभम् ॥ ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम् ॥१॥ प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः ॥ नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ॥२॥ प्रातर्भजामि भजतामभयंकरं तं प्राक्सर्वजन्मकृतपापभयापहत्यै ॥ यो ग्राहवक्त्रपतितांघ्रिगजेन्द्रघोरशोकप्रणाशनकरो धृतशंखचक्रः ॥३॥ श्लोकत्रयमिदं पुण्यं प्रातः प्रातः पठेन्नरः ॥ लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः ॥४॥

८६--सङ्कष्टनाशनं विष्णुस्तोत्रम् ।

नारद उवाच

पुनर्दैत्यं समाथान्तं दृष्ट्वा देवाः सवासवाः । भयप्रकम्पिताः सर्वे विष्णुः स्तोतुं प्रचक्रमुः ॥१॥

देवा ऊचुः

नमो मत्स्त । कूर्मादि नानास्वरूपैः सदा भक्तकार्योद्यतायार्तिहन्त्रे । विधात्रादि सर्गस्थितिध्वंसकर्त्रे गदा शङ्ख पद्मारिहस्ताय तेऽस्तु ।२। रमावल्लभायासुराणां निहन्त्रे भुजङ्गारियानाय पीताम्बराय । मखादि क्रियापाककर्त्रेविकर्त्रे शरण्याय तस्मै नताः स्मो नताः स्मः ।३।

नताः स्मः ॥३॥ नमो दैत्यसन्तापितामर्त्यदुःखाचलध्वं-
सदम्भोलये विष्णवे ते। भुजङ्गेश तल्पेशवायार्कचद्र-
द्विनेत्राय तस्मै नताः स्मो नताः स्मः ॥४॥

नारद उवाच

शङ्कष्टनाशन नाम स्तोत्रमेतत् पठेन्नरः। स कदा-
चिन्न सङ्कष्टैः पीड्यते कृपया हरेः ॥५॥

इति पद्मपुराणे पृथुनारदसंवादे सङ्कष्टनाशनं नाम विष्णुस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

८७-श्रीविष्णोरेकादशनामस्तोत्रम्।

राम नारायणानन्त मुकुन्द मधुसूदन ॥ कृष्ण के
शव कंसारे हरे वैकुण्ठ वामन ॥१॥ इत्येकादश नामानि
पठेद्यो पाठयेद्यतिः। जन्मकोटिसहस्राणा पातकादेव मु-
च्यते ॥२॥ हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविन्द
मुकुन्द शौरे। यज्ञेश नारायण कृष्ण विष्णो निराश्रयं
मां जगदीश रक्ष ॥३॥

८८-श्रीविष्णोः षोडशनामस्तोत्रम्।

श्रीगणेशाय नमः। औषधे चिन्तयेद्विष्णुं भोजने
च जनार्दनम्। शयने पद्मनाभं च विवाहे च प्रजाप-
तिम् ॥१॥ युद्धे चक्रधरं देवं प्रवासे च त्रिविक्रमम्।
नारायणं तनुत्यागे श्रीधरं प्रियसंगमे ॥२॥ दुःस्वप्ने
स्मर गोविन्दं सङ्कटे मधुसूदनम्। कानने नारसिंहं च
पावके जलशायिनम् ॥३॥ जलमध्ये वराहं च पर्वते

रघुनन्दनम् । गमने वामनं चैव सर्वकार्येषु माधवम् ।४।
षोडशैतानि नमानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । सर्वपापवि-
निर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ।।५।।

८९-श्री विष्णुरष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। अर्जुन उवाच । किं नु नाम-
सहस्राणि जपन्ते च पुनः पुनः । यानि नमानि दिव्या-
नि तानि चाचक्ष्व केशव ।।१।। श्रीभगवानुवाच । मत्स्यं
कूर्मं वराहं च वामनं च जनार्दनम् । गोविन्दं पुण्डरी-
काक्षं माधवं मधुसूदनम् ।।२।। पद्मनाभं सहस्राक्षं वन-
मालिं हलायुधम् । गोवर्धनं हृषीकेशं बैकुण्ठं पुरुषोत्त-
मम् ।।३।। विश्वरूपं वासुदेवं रामं नारायणं हरिम् ।
दामोदरं श्रीधरं च वेदाङ्गं गरुड़ध्वजम् ।।४।। अनन्तं
कृष्णगोपालं जपतो नास्ति पातकम् । गवां कोटिप्रदा-
नस्य अश्वमेधशतस्य च ।।५।। कन्यादानसहस्राणां फलं
प्राप्नोति मानवः अमायां वा पौर्णमास्यामेकादश्यां त-
थैव च ।।६।। सन्ध्याकाले स्मरेन्नित्यं प्रातः काले तथैव
च । मध्यान्हे च जपन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।७।।

९०-श्रीविष्णोः शतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । नारद उवाच । ॐ वासुदेवं
हृषीकेशं वामनं जलशायिनम् ।। जनार्दनं हरिं कृष्णं श्री-
वक्षं गरुड़ध्वजम् ।।१।। वराहं पुंडरीकाक्षं नृसिंहं नर-

कांतकम् । अव्यक्तं शाश्वतं विष्णुमनंतमजमव्ययम्
॥२॥ नारायणं गदाध्यक्षं गोविन्दं कीर्तिभाजनम् । गो-
वर्धनोद्धरं देवं भूधरं भुवनेश्वरम् ॥३॥ वेत्तारं यज्ञपु-
रुषं यज्ञेशं यज्ञवाहकम् । चक्रपाणिं गदापाणिं शंख-
पाणिं नरोत्तमम् ॥४॥ वैकुंठं दुष्टदमनं भूगर्भं पीतवास-
सम् । त्रिविक्रमं त्रिकालज्ञं त्रिमूर्तिं नन्दिकेश्वरम् ॥५॥
रामं रामं हयग्रीवं भीमं रौद्रं भवोद्भवम् । श्रीपतिं
श्रीधरं श्रीशं मङ्गलं मङ्गलायुधम् ॥६॥ दामोदरं दमो-
पेतं केशवं केशिसूदनम् । वरेण्यं वरदं विष्णुमानन्दं वसुदे-
वजम् ॥७॥ हिरण्यरेतसं दीप्तं पुराणं पुरुषोत्तमम् । सकलं
निष्कलं शुद्धं निर्गुणं गुणशाश्वतम् ॥८॥ हिरण्यतनुसंका-
शं सूर्यायुतसमप्रभम् । मेघश्यामं चतुर्बाहुं कुशलं कम-
लेक्षणम् ॥९॥ ज्योतिरूपमरूपं च स्वरूपं रूपसंस्थि-
तम् । सर्वज्ञं सर्वरूपस्थं सर्वेशं सर्वतोमुखम् ॥१०॥ ज्ञा-
नं कूटस्थमचलं ज्ञानन्द परमं प्रभुम् । योगीशं योग-
निष्णातं योनिनं योगरूपिणम् ॥११॥ ईश्वरं सर्वभूता-
नां वन्दे भूतमयं प्रभुम् ॥ इति नामशतं दिव्यं वैष्णवं
खलु पापहम् ॥१२॥ व्यासेन कथितं पूर्वं सर्वपापप्रणा-
शनम् । यः पठेत्प्रातरुत्थाय स भवेद्वैष्णवो नरः ॥१३॥
सर्वपापविशुद्धात्मा विष्णुसायुज्यमाप्नुयात । चान्द्रायणं-
सहस्राणि कन्यादानशतानि च ॥१४॥ गवां लक्षसहस्रा-

णि मुक्तिभागी भवेन्नरः । अश्वमेधायुतं पुण्यं फलं प्राप्नोति मानवः ॥१५॥

इति श्रीविष्णुपुराणे विष्णुशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

६१--नारायणवर्म ।

श्री गणेशाय नमः ॥ राजोवाच । येन गुप्तः सहस्राक्षः सवाहान् रिपुसैनिकान् । क्रीडन्निव विनिर्जित्य त्रिलोक्या बुभुजे श्रियम् ॥१॥ भगवंस्तन्ममाख्याहि वर्म नारायणात्मकम् । यथाऽऽततायिनः शत्रून् येन गुप्तोऽजयन्मृधे ॥२॥ श्रीशुक उवाच । वृतः पुरोहितस्त्वाष्ट्रो महेन्द्रायानुपृच्छते । नारायणख्यं वर्माहि तदिहैकमनाः शृणु ॥३॥ विश्वरूप उवाच । धौतांघ्रिपाणिराचम्य सपवित्र उदङ्मुखः । कृतस्वांगकरन्यासो मन्त्राभ्यां वाग्यतः शुचिः ॥४॥ नारायणमयं वर्म सन्नह्येद्भय आगते । दैवाभूतात्मकर्मभ्यो नारायणमयः पुमान् ॥५॥ पादयोर्जानुनोरूर्वोरुदरे हृद्यथोरसि । मुखे शिरस्यानुपूर्व्यादोङ्करादीनि विन्यसेत् ॥६॥ ॐ नमो नारायणयेति विपर्ययमथापि वा । करन्यासं ततः कुर्याद्द्वादशाक्षरविद्यया ॥७॥ प्रणवादि यकारान्तमंगुल्यंगुष्ठपर्वसु । न्यसेद्धृदय ओंकारं विकारमनु मूर्धनि ॥८॥ षकारं तु भ्रुवोर्मध्ये णकार शिखाया न्यसेत् । वेकारं नेत्रयोर्युञ्ज्यान्नकारं सर्वसन्धिषु ।९। मकारमस्त्रमुद्दिश्य मन्त्रमूर्ति-

भवेद्बुधः । सविसर्गं फडन्तं तत्सर्वदिक्षु विनिर्दिशेत् ॥१०॥ ॐ विष्णवे नमः । इत्यात्मानं परं ध्यायेद्ध्येयं षट्शक्तिभिर्युतम् । विद्यातेजस्तपोमूर्तिमिमं मन्त्रमुदाहरेत् ॥११॥ ॐ हरिर्विदध्यान्मम सर्वरक्षां न्यस्तांघ्रिपद्मः पतगेन्द्रपृष्ठे । दरारिचर्मासिगदेषुचापपाशान् दधानोऽष्टगुणोऽष्टबाहुः ॥१२॥ जलेषु मां रक्षतु मत्स्यमूर्तिर्यादोगणेभ्यो वरुणस्य पाशात् । स्थलेषु मायावटुवामनोऽव्यात् त्रिविक्रमः खेऽवतु विश्वरूपः ॥१३॥ दुर्गेष्वटव्याजिमुखादिषु प्रभुः पायान्नृसिंहोऽसुरयूथपारिः । विमुञ्चतो यस्य महाट्टहासं दिशो विनेदुर्न्यपतंश्च गर्भाः ॥१४॥ रक्षत्वसौ माऽध्वनि यज्ञकल्पः स्वदंष्ट्रयोन्नीतधरो वराहः । रामोऽद्रिकूटेष्वथ विप्रवासे सलक्ष्मणोऽव्याद्भरताग्रजो माम् ॥१५॥ मामुग्रधर्मादखिलात् प्रमादान्नारायणः पातु नरश्च हासात् । दत्तस्त्वयोगादथ योगनाथः पायाद्गुणेशः कपिलः कर्मबंधात् ॥१६॥ सनत्कुमारोऽवतु कामदेवाद्धयाननो मां पथि देवहेलनात् । देवर्षिवर्यः पुरुषार्चनान्तरात्कूर्मो हरिर्मां निरयादशेषात् ॥१७॥ धन्वन्तरिर्भगवान्पात्वपथ्याद् द्वन्द्वाद्भयादृषभो निर्जितात्मा । यज्ञश्च लोकादवताज्जनान्ताद्बलो गणात्क्रोधवशादहीन्द्रः ॥१८॥ द्वैपायनो भगवानप्रबोधाद्बुद्धस्तु पाखण्डगणात्प्रमादात् । कल्किः कलेः कालमलात्प्रपातु धर्मावनायो-

रुकृतावतारः ॥१९॥ मां केशवो गदया प्रातरव्याद्गो-
विन्दाआसङ्गव आत्तवेणुः । नारायणः प्राह्ण उदात्तश-
क्तिर्मध्यन्दिने विष्णुररीन्द्रपाणिः ।२०। देवोऽपराह्णे
मधुहोग्रधन्वा साय त्रिधामाऽवतु माधवो माम् । दोषे
हृषीकेश उतार्धरात्रे निशीथ एकोऽवतु पद्मनाभः ॥२१॥
श्रीवत्सधामाऽपररात्र ईशः प्रत्यूष ईशोऽसिधरो जनार्द-
नः दामोदरोऽव्यादनुसन्ध्यं प्रभाते विश्वेश्वरो भगवा-
न्कालमूर्तिः ॥१२॥ चक्रं युगान्तानलतिग्मनेमि भ्रमत्स-
मन्ताद्भगवत्प्रयुक्तम् । दन्दग्धि दन्दग्ध्यरिसैन्यमाशु क-
क्षं यथा वातसखो हुताशः ॥२३॥ यदेऽशनिस्पर्शनवि-
स्फुलिंगे निष्पिण्ढि निष्पिढ्यजितप्रियाणि । कूष्माण्ड-
वैनायकयक्षरक्षोभूतग्रहांश्चूर्णय चूर्णयारीन् ॥२४॥ त्वं
यातुधानप्रथमप्रेतमातृपिशाचविप्रहग्रेघोरदृष्टीन् । नरेन्द्र
विद्रावय कृष्ण पूरितो भीमस्वनोऽरेहृदयानि कम्पयान्
॥२५॥ त्वं तिग्मधारासिवरारिसैन्यमीशप्रयुक्तो मम छि-
न्धि छिन्धि चक्षूंपि चर्मन् शतचन्द्र छादय द्विषामघो-
नां हर पापचक्षुषाम् ॥२६॥ यन्नो भयं ग्रहेभ्योऽभूत्के-
तुभ्यो नृभ्य एव च । सरीसृपेभ्यो दंष्टिभ्यो भूतेभ्योऽवे-
भ्य एव च ॥२७॥ सर्वाण्येतानि भगवन्नामरूपास्त्रकीर्त-
नात् । प्रयातु संक्षयं सद्यो येऽन्ये श्रेयःप्रतीपकाः ॥२८॥
गरुडो भगवांस्तोत्रस्तोमश्छन्दोमयः प्रभुः । रक्षत्यशेष

कृच्छ्रेभ्यो विष्वक्सेनस्य वाहनम् ॥२५॥ सर्वाद्भयो
हरेर्नामरूपयानायुधानि मः । बुद्धीन्द्रियमनः प्राणाम् पा-
न्तु पार्षदभूषणाः ॥३०॥ यथा हि भगवानेव वस्तुतः
सदसच्च यत् । सत्येनानेन नः सर्वे यान्तु नाशमुपद्रवाः
॥३१॥ यथैकात्म्यानुभावानां विकल्परहितः स्वयम् ।
भूषणायुधलिंगाख्या धत्ते शक्तीः स्वमायया ॥३२॥
तेनैव सत्यमानेन सर्वज्ञो भगवान् हरिः । पातु सर्वैः
स्वरूपैर्नः सदा सर्वत्र सर्वगः ॥३३॥ विदिक्षु दिक्षूर्ध्व-
मधः समन्तादन्तर्बहिर्भगवान्नारसिंहः । प्रहापयँल्लोक-
भयं स्वनेन स्वतेजसा ग्रस्तसमस्ततेजाः ॥३४॥ मधव-
न्निदमाख्यातं वर्गं नारायणात्मकम् । विजेष्यस्यञ्जसा
येन दंशितोऽसुरयूथपान् ॥३५॥ एतद्धारयमाणस्तु यं
यं पश्यति चक्षुषा । पदा वा संस्पृशेत्सद्यः साध्वसात्स
विमुच्यते ॥३६॥ न कुतश्चिद्भयं तस्य विद्यां धारयतो
भवेत् । राजदस्युग्रहादिभ्यो व्याध्यादिश्यश्च कर्हिचित्
॥३७॥ इमां विद्यां पुरा कश्चित् कौशिको धारयन् द्वि-
जः । योगधारणया स्वागं जहौ स मरुधन्वनि ॥३८॥
तस्योपरि विमानेन गन्धर्वपतिरेकदा । ययौ चित्ररथः
स्त्रीभिर्वृतो यत्र द्विजक्षयः ॥३९॥ गगनान्न्यपतत्सद्यः
सविमानो ह्यवाक्शिराः । स वालखिल्यवचनादस्थीन्या-
दाय विस्मितः ॥४०॥ प्रास्य प्राचीसरस्वत्यां स्नात्वा

धाम स्वमवगात् ॥ य इदं शृणुयात्काले यो धारयति चादृतः । तं नमस्यंति भूतानि मुच्यते सर्वतो भयात् ॥४१॥ श्रीशुक उवाच ॥ एतां विद्यामधिगतो विश्वरूपाच्छतक्रतु ॥ त्रैलोक्यलक्ष्मीं बुभुजे विनिर्जित्य मृधेऽसुरान् ॥४२॥

इति श्रीमभद्रागवते षष्ठस्कन्धे नारायणवर्म सम्पूर्णम् ।

९२-रुद्रगीतम् ।

श्रीरुद्र उवाच ॥ जितं त आत्मविद्धुर्य स्वस्तये स्वस्तिरस्तु मे ॥ भवता राधसा राद्धे सर्वस्मा आत्मने नमः ॥१॥ नमः पंकजनाभाय भूतसूक्ष्मेंद्रियात्मने ॥ वासुदेवाय शांताय कूटस्थाय स्वरोचिषे ॥२॥ संकर्षणाय सूक्ष्माय दुरंतायांतकाय च ॥ नमो विश्वप्रबोधाय प्रद्युम्नायांतरात्मने ॥३॥ नमो नमोऽनिरुद्धाय हृषीकेशेंद्रियात्मने ॥ नमः परहंसाय पूर्णाय निभृतात्मने ।४। स्वर्गापवर्गद्वाराय नित्यं शुचिपदे नमः ॥ नमो हिरण्यवीर्याय चातुर्होत्राय तंतवे ॥५॥ नम ऊर्ज इषे त्रय्याः पतये यज्ञरेतसे ॥ तृप्तिदाय च जीवानां नमः सर्वरसात्मने ॥६॥ सर्वसत्वात्मदेहाय विशेषाय स्थवीयसे ॥ नमस्त्रैलोक्यपालाय सहओजोबलाय च ॥७॥ अर्थलिंगाय नभसे नमोऽतर्वहिरात्मने । नमः पुण्याय लोकाय अमुष्मै भूरवर्चसे ।८। प्रवृत्ताय निवृत्ताय पितृदेवाय कर्मणे ॥

नमो धर्मविपाकाव मृत्यवे दुःखदाय च ॥९॥ नमस्ते आ
शिषामीश मनवे कारणात्मने ॥ नमो धर्माय बृहते कृ-
ष्णायाकुंठमेधसे ॥ पुरुषाय पुराणाय सांख्ययोगेश्वराय
च ॥१०॥ शक्तित्रयसमेताय मोढषेऽहंकृतात्मने ॥ चे-
तआकूतिरूपाय मनोवाचोविभूतये ॥११॥ दर्शनं नो दि-
दृक्षणां देहि भागवतार्चितम् ॥ रूपं प्रियतमं स्वानां स-
र्वेन्द्रियगुणांजनम् ॥१२॥ स्निग्धप्रावृड्घनश्यामं सर्व-
सौन्दर्यसंग्रहम् ॥ चार्वायतचतुर्बाहुं सुजातरुचिराननम्
॥१३॥ पद्मकाशपलाशाक्षं सुंदरभ्रु सुनासिकम् ॥ सु-
द्विजं सुकपोलास्यं समकर्णविभूषणम् ॥१४॥ प्रीतिप्रह-
सितापांगमलकैरुपशोभितम् ॥ लसत्पंकजशिंजल्कदुकूलं
मृष्टकुण्डलम् ॥१५॥ स्फुरत्किरीटवलयहारनूपुरमेखलम् ।
शंखचक्रगदापद्ममालामण्युत्तमर्द्धिमत् ॥१६॥ सिंहस्कं-
धत्विषो बिभ्रत्सौभगग्रीवकौस्तुभम् ॥ श्रियाऽनपायिन्या-
क्षिप्तनिकषाश्मोरसोल्लसत् ॥१७॥ पूररेचकसंविग्नब-
लिबल्गुदलोदरम् ॥ प्रतिसंक्रामयद्विश्वं नाभ्याऽऽवर्तग-
भीरया ॥१८॥ श्यामश्रोण्याऽधिरोचिष्णु दुकुलस्वर्णमे-
खलम् ॥ समचवंध्रजंघोरुनिम्नभानुसुदर्शनम् ॥१९॥
पदा शरत्पद्मपलाशरोचिषा नखद्युभिर्नोऽन्तरघं विधु-
न्वता ॥ प्रदर्शय स्वीयमपास्तसाध्वसं पदं गुरो मार्गगु-
रुस्तमोजुषाम् ॥२०॥ एतद्रूपपमनुध्येयमात्मशुद्धिमभो-

प्सताम् ॥ यभ्दक्तियोगोऽभयदः स्धवर्ममनुतिष्ठताम् ।२१।
भवान्भक्तिमता लभ्यो दुर्लभः सर्वदेहिनाम् ॥ स्वराज्य-
स्याप्यभिमत एकान्तेनात्मविद्गतिः ॥२२॥ तं दुराराध्य-
माराध्य सतामपि दुरापया ॥ एकांतभक्त्या को वांछे-
त्पादमूलं बिना बहिः ॥२३॥ यत्र निर्विष्टमरणं कृतांतो
नाभिमन्यते ॥ विश्वं विध्वंसयन्वीर्यशौर्यविस्फूर्जितभ्रुवा
॥२४॥ क्षणार्द्धेनापि तुलये न स्वर्गं नापुनर्भवम् ॥ भ-
गवत्संगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥२५॥ अथानघांघ्रे-
स्तव कीर्तितीर्थयोरंतर्बहिः स्नानविधूतपाप्मनाम् ॥ भू-
तेष्वनक्रोशसुसत्वशालिनां स्यात्संगमोऽनुग्रह एष नस्तव
॥२६॥ न यस्य चित्तं वहिरर्थविभ्रमं तमोगुहायां च
विशुद्धमाविशत् ॥ यद्भक्तियोगानुगृहीतमंजसा मुनि-
र्विचष्टे ननु तत्र ते गतिम् ॥२७॥ यत्रेदं व्यज्यते विश्वं
विष्वस्मिन्नवभाति यत् ॥ तत्वं ब्रह्म परं ज्योतिराका-
शमिव विस्तृतम् ॥२८॥ यो माययेदं पुरुरूपयाऽसृज-
द्बिभर्ति भूयः क्षपवत्यविक्रियः ॥ यभद्देदबुद्धिः सदिवा-
त्मदुःस्थया तमात्मतंत्रं भगवन्प्रतीमहि ॥२९॥ क्रिया-
कलापैरिदमेव योगिनः श्रद्धान्विताः साधु जपंति सिद्ध-
ये ॥ भूतेंद्रियांतः करणोपलक्षितं वेदे च तन्त्रे च त एव
कोविदाः ॥३०॥ त्वमेक आद्यः पुरुषः सुप्तशक्तिस्तथा
रजःसत्वतमो विभिद्यते ॥ महानहं खं मरुदग्निवार्धराः

सुरर्षयो भूतगणा इदं यतः ॥३१॥ सृष्टं स्वशक्त्येदमनु-
प्रविष्टश्चतुर्विधं पुरमात्मांशकेन ॥ अथो विदुस्तं पुरुषं
संतमंतर्भुंक्ते हृषीकैर्मधु सारघं यः ॥३१॥ स एष लो-
कानतिचंडवेगो विकर्षसि त्वं खलु कालयानः ॥ भूतानि
भूतैरनुमेयतत्त्वो घनावलीर्वायुरिवाविषह्यः ॥३३॥ प्रम-
त्तमुच्चैरितिकृत्यचिन्तया प्रवृद्धलोभं विषयेषु लालसम् ।
त्वमप्रमत्तः सहसाऽभिपद्यसे क्षुल्लेलिहानोऽहिरिवाखुमेक-
तः ॥३४॥ कस्त्वत्पदाब्जं विजहाति पंडितो यस्तेऽव-
मानव्ययमानमंतकः ॥ विशंकयाऽस्मद्गुरुरर्चतिस्म य-
द्विनोपपत्तिं मनश्चतुर्दश ॥३५॥ अथ त्वमसि नो ब्र-
ह्मन्परमात्मन्विपश्चिताम् ॥ विश्वं रुद्रभयध्वस्तमकुत-
श्चियद्गया गतिः ॥३६॥ इदं जपत भद्रं वो विशुद्धा-
नृपनंदनाः । स्वधर्ममनुतिष्ठन्तो भगवत्यर्पिताशयाः ।३७।
तमेवात्मानमात्मस्थं सर्वभूतेष्ववस्थितम् ॥ पूजयध्वं
गृणन्तश्च ध्यायंतश्चासकृद्धरिम् ॥३८॥ इदमाह पुराऽ-
स्माकं भगवान्विश्वसृक्पतिः ॥ भृग्वादीनामात्मजानां
सिसृक्षुः संसिसृक्षताम् ॥३९॥ से वयं नोदिताः सर्वे
प्रजासर्गे प्रजेश्वराः ॥ अनेन ध्वस्ततमसः सिसृक्ष्मो
विविधाः प्रजा ॥४०॥ य इदं श्रद्धया युक्तो मद्गीतं
भगवत्स्तवम् ॥ अधीयानो दुराराध्यं हरिमाराधयत्यसौ
॥४१॥ विंदते पुरुषोऽमुष्माद्यद्यदिच्छत्यसत्वरम् ॥ मद्-

गीतगीतात्सुप्रीताच्छ्रेयसामेकवल्लभात् ॥४२॥ इदं यः कल्य उत्थाय प्रांजलिः श्रद्धयाऽन्वितः श्रृणुयाच्छ्रावयेन्मर्त्यो मुच्यते कर्मबन्धनैः ॥४३॥ मैत्रेय उवाच ॥ इति संदिश्य भगवान् बार्हिषदैरभिपूजितः ॥ पश्यतां राजपुत्राणां तत्रैवान्तर्दधे हरः ॥४४॥

८३–विष्णुस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पद्मोवाच ॥ योगेन सिद्धविबुधैः परिभाव्यमानं लक्ष्म्यालयं तुलसिकाचितभक्तभृङ्गम् ॥ प्रोत्तुङ्गरक्तनखरांगुलिपत्रचित्रं गङ्गारसं हरिपदाम्बुजमाश्रयेऽहम् ॥१॥ गुम्फन्मणिप्रचयघट्टितराजहंससिञ्जत्सुनूपुरयुतं पदपद्मवृंदम् ॥ पीताम्बराञ्चलविलोलचलत्पताकं स्वर्णत्रिवक्रवलयं च हरेः स्मरामि ॥२॥ जंघे सुपर्णगलनीलमणिप्रवृद्धशोभास्पदारुणपमणिद्युतिचंचुमध्ये ॥ आरक्तपादतललम्बनशोभमाने लोकेक्षणोत्सवकरे च हरेः स्मरामि ॥३॥ ते जानुनी मखपतेर्भुजमूलसङ्गरङ्गोत्सवावृततडिद्वसने विचित्रे ॥ चञ्चत्पतत्रिमुखनिर्गतसामगीतविस्तारितात्मयशसी च हरेः स्मरामि ॥४॥ विष्णोः कटिं विधिकृतान्तमनोजभूमिं जीवाण्डकोशगणसङ्गदुकूलमध्याम् ॥ नानागुणप्रकृतिपीतविचित्रवस्त्रां ध्याये निबद्धवसनां खगपृष्ठसंस्थाम् ॥५॥ शान्तोदर भगवतस्त्रिवलिप्रकाशमावर्तनाभिविक-

द्विधिजन्मपद्मम् ॥ नाडीनदीगणरसोत्थसितान्त्रसिन्धुं ध्यायेऽण्डकोशनिलयं तनुलोमरेखम् ॥६॥ वक्षः पयोधितनयाकुचकुंकुमेन हारेण कौस्तुभमणिप्रभया विभातम् । श्रीवत्सलक्ष्म हरिचन्दनजप्रसूनमालोचितं भगवतः सुभगं स्मरामि ॥७॥ बाहू सुवेषसदतौ वलयाङ्गदादिशोभास्पदौ दुरितदैन्यविनाशदक्षौ ॥ तौ दक्षिणौ भगवतश्च गदासुनाभतेजोर्जितौ सुललितौ मनसा स्मरामि ॥८॥ वामौ भुजौ मुररिपोर्धृतपद्मशंखौ श्यामौ करीन्द्रकरवन्मणिभूषणाढ्यौ । रक्तांगुलिप्रचयचुम्बितजानुमध्यौ पद्मालयाप्रियकरौ रुचिरौ स्मरामि ॥९॥ कण्ठं मृणालममलं मुखपङ्कजस्य लेखात्रयेण गनमालिकया निवीतम् ॥ किं वा विमुक्तिवशमन्त्रकसत्फलस्य वृन्तं चिरं भगवतः सुभगं स्मरामि ॥१०॥ वक्त्राम्बुजं दशनहासविकासरम्यं रक्ताधरोष्ठवरकोमलवाक्सुधाढ्यम् ॥ सन्मानसोभद्वचलेक्षणपत्रचित्रं लोकाभिराममलं च हरेः स्मरामि ॥११॥ सूरात्मजावसथगन्धमिदं सुनासं भ्रूपल्लवं स्थितिलयोदयकर्मदक्षम् ॥ कामोत्सवं च कमलाहृदयप्रकाशं सञ्चितयामि हरिवक्त्रविलादक्षम् ॥१२॥ कर्णौ लसन्मकरकुण्डलगन्धलोलौ नानादिशां च नभसश्च विकासगेहम् ॥ लोलालकप्रचयचुम्बनकुञ्चिताग्रौ लग्नौ हरेर्मणिकिरीटतटे स्मरामि ॥१३॥ भालं

विचित्रतिलकं प्रियचारुगन्धगोरोचनारचनया ललनाक्षिसख्यम् ॥ ब्रह्मैकधाम मणिकान्तकिरीटजुष्टं ध्याये मनोनयनहारकमीश्वरस्य ॥ १४ ॥ श्रीवासुदेवचिकुरं कुटिलं निबद्धं नानासुगन्धिकुसुमैः स्वजनादरेण ॥ दीर्घं रमाहृदयगाशमनं धुनन्तं ध्यायेऽम्बुवाहरुचिरं हृदयाब्जमध्ये ॥१५॥ मेघाकारं सोमसूर्यप्रकाशं सुभ्रूनासं शक्रचापैकमानम् ॥ लोकातीतं पुण्डरीकायताक्षं विद्युच्चेलं चाश्रयेऽहं त्वपूर्वम् ॥१६॥ दीनं हीनं सेवया दैवगत्या पापैस्तापैः पूरितं मे शरीरम् ॥ लोभाक्रान्तं शोकमोहादिविद्धं कृपादृष्ट्या पाहि मां वासुदेव ॥१७॥ ये भक्त्याऽऽद्यां ध्यायमानां मनोज्ञां व्यक्तिं विष्णोः षोडशश्लोकपुष्पैः ॥ स्तुत्वा नत्वा पूजयित्वा विधिज्ञाः शुद्धा मुक्ता ब्रह्मसौख्यं प्रयान्ति ॥१८॥ पद्मेरितमिदं पुण्यं शिवेन परिभाषितम् ॥ धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वार्यं स्वस्त्ययनं परम् ॥१९॥ पठन्ति महाभागास्ते मुच्यन्तेऽहसोऽखिलात् ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणां परत्रेह फल प्रदम् ॥२०॥

इति श्रीकल्किपुराणेऽनुभागवते पद्मप्रोक्तो विष्णुस्तवराजः समाप्तः ।

९४-विष्णुस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विष्णोर्हास्यमसौ माया तदाधारा जडाऽधमा ॥ प्रध्वंसोऽस्या अनादेश्च विष्णोः

पदविलोकनात् ॥१॥ देवानां परमो विष्णुरवमोऽग्नि-
रिति श्रुतेः ॥ अयं विष्णुरजोऽनादिरनन्तो विश्वकारणः
॥२॥ सूरयस्तत्पदं श्रेष्ठं सदा पश्यन्ति नेतरे ॥ वीर्याणि
तस्य कोऽप्यत्र न वेदोरुक्रमस्य च ॥३॥ प्रागुत्पाद्य विधिं
नाभेर्वेदान्दत्वा ततो जगत् ॥ उत्पादयत्यसावेव बुद्धि-
दीपो मुमुक्षुराट् ॥४॥ भीत्याऽप्यधिकृता अस्मा उद्व-
हन्ति बलिं सुराः ॥ माययाऽश्नन्त्यन्यदत्तं सम्राज इव
भूमिपाः ॥५॥ यस्य भ्रूभंगमात्रेण त्रिलोकी नश्यति
क्षणात् ॥ इच्छामात्रे पुनर्जाति सेश्वरोत्पद्यते च सा ।६।
आत्मभूतस्यास्य शत्रुः स क्रूरो यात्यधोगतिम् ॥ दुर-
त्ययामपि घ्नन्ति मायां यद्रूपचिन्तकाः ॥७॥ अर्वाचीनाः
सुराः केऽपि न विदुर्यं तदुभद्वाः ॥ स सर्वज्ञोऽपि चा-
त्मानं कात्स्न्यान्नो वेद वेद वा ॥ ८ ॥ यस्यैकपादियं
माया त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ स देवदेवो देवेशः कथं
नार्च्यस्त्रिविक्रमः ॥९॥ श्रीवैष्णवेशगाणेशसूर्यलाक्तादिरू-
पधृक् ॥ दत्तात्रेयोऽस्त्वजोऽनन्तः सदा मे हृदि सद्गुरुः
॥१०॥ कृत्वैकदेवभक्तिं ये मात्सर्येण द्विषन्ति च ॥ अ-
न्यदेवं च सभद्क्तं ते यान्ति नरकं ध्रुवम् ।११। विष्णुः
शिवो गणेशोऽर्कः शक्तिश्चेति पृथङ् न हि । एकोऽजः पञ्च-
धा जातः कुतो मदोऽस्ति दैवतैः ।१२। एता नीशाङ्गानि
तृप्येदेकस्यापीह दर्पणात् यथास्याक्ष्यादि तृप्त्याङ्गी चो-

द्विजेदेकनिन्दया ॥१३॥ देवद्रोहस्ततस्त्याज्यभद्‌क्तस्यापि-सर्वदा ॥ यथारुचीश्वरः सेव्यो नान्यथा भेदमाचरेत् ॥१४॥

इति श्रीवासुदेवसरस्वतीविरचितं विष्णुस्तोत्रम् ।

९५-विष्णुस्तोत्रम् । (२)

श्रीकरपिहितं चक्षुः सुखयतु वः पुण्डरीकनयनस्य । जघनमिवेक्षितुमागतमब्जनिभं नाभिसुषिरेण ॥ १ ॥ श्याम श्रीकुचकुंकुमपिंजरितमुरो मुरद्विषो जयति । दिनमुखनभ इव कौस्तुभविभाकरो यद्विभूषयति ॥२॥ प्रतिबिम्बितप्रियातनु सकौस्तुभं जयति मधुभिदो पक्षः । पुरूषायितमभ्यस्यति लक्ष्मीर्यद्वीक्ष्य मुकुरमिव ॥ ३ ॥ केलिचलांगुलिलम्भितलक्ष्मीनाभिर्मुरद्विषश्चरणः । स जयति येन कृता श्रीरनुरूपा पद्मनाभस्य ॥४॥ रोमावली मुरारेः श्रीवत्सविवेशिताग्रभागा वः । उन्नालनाभिनलिनच्छायेनोपात्तमाहरतु ॥५॥

९६-नारायणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । नारायण नारायण जय गोविन्द हरे । नारायण नारायण जय गोपाल हरे ॥ध्रु०॥ करुणापारावारा वरुणालयगम्भीरा । नारायण० ॥१॥ घननीरदसङ्काशा कृतमलिकल्मषनाशा । नारायण० ॥२॥ यमुनातीरविहारा धृतकौस्तुभमणिहारा । नारा-

यण० ॥३॥ पीताम्बरपरिधाना सुरकल्याणनिधाना ।
नारायण० ॥४॥ मञ्जुलगुञ्जाभूषा मायामानुषवेषा ।
नारायण० ॥५॥ राधाऽधरमधुरसिका रजनीकरकुलति-
लका । नारायण० ॥६॥ मुरलीगानविनोदा वेदस्तुतभू-
पादा । नारायण० ॥७॥ बर्हिनिबर्हापीडा नटनाटक-
फणिक्रीडा । ना० ॥८॥ वारिजभूषाभरणा राजीवरु-
क्मिणिरमणा । नारायण० ॥९॥ जलरुहदलनिभनेत्रा
जगदारम्भकसूत्रा । नारायण० ॥१०॥ पातकरजनी
संहर करुणालय मामुद्धर । नारायण० ॥११॥ अघब-
कक्षयकंसारे केशव कृष्ण मुरारे । नारायण० ॥१२॥
हाटकनिभपीताम्बर अभयं कुरु मे मावर । नारायण०
॥१३॥ दशरथराजकुमारा दानवमदसंहारा । नारायण०
॥१४॥ गोवर्धनगिरिरमणा गोपीमानसहरणा । ना०
॥१५॥ सरयूतीरविहारा सज्जनऋषिमन्दारा । नारा०
॥१६॥ विश्वामित्रमखत्रा विविधपरासुचरित्रा । ना०
॥१७॥ ध्वजवज्रांकुशपादा धरणीसुतसहमोदा । ना०
॥१८॥ जनकसुताप्रतिपाला जयजय संसृतिलीला ।
नारायण० ॥१९॥ दशरथवाग्धृतिभारा दण्डकवनसञ्चा-
रा । नारा० ॥२०॥ मुष्टिकचाणूरसंहारा मुनिमानस-
विहारा । नारायण० ॥२१॥ बालिविनिग्रहशौर्या वर-
सुग्रीवहितार्या । नारायण० ॥२२॥ मां मुरलीधर धीवर

पालय पालय श्रीधर । नारायण० ॥२३॥ जलनिधि-
बन्धनधीरा रावणकण्ठविदारा । नारायण० ।२४। ता-
टीमदननाढ्या गुणगणविविधधनाढ्या । नारा० ॥२५॥
गौतमपत्नीपूजन करुणाधनावलोकन । नारायण० ।२६।
सम्भ्रमसीताहारा साकेतपुरी विहारा । नारायण०
॥२७॥ अचलोद्धृतिश्चत्कर भक्तानुग्रहतत्पर । नारा०
॥२८॥ नैगमगानविनोदा रक्षःसुतप्रह्लादा । नारायण०
॥२९॥ भारतियतिवरशंकर नामामृतमखिलान्तर ।
नारायण नारायण जय गोपाल हरे ॥३०॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं नारायणस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

९७--श्रीहरिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । जगज्जालपालं चलत्कण्ठमालं शर-
च्चन्द्रभालं महादैत्यकालम । नभोनीलकायं दुरावारमायं
सपद्मासहायं भजेऽहं भजेऽहम् ॥१॥ सदाम्भोधिवासं गल-
त्पुष्पहासं जगत्सन्निदासं शतादित्यभासम् । गदाचक्रशस्त्रं
लसत्पीतवस्त्रं हसच्चारुवक्त्रं भजे० ॥२॥ रमाकण्ठहारं
श्रुतिव्रातसारं जलान्तर्विहारं धराभारहारम् । चिदानन्द
रूपं मनोज्ञस्वरूपं धृतानेकरूपं भजे० ॥३॥ जरांजन्म-
हीनं परानन्दपीनं समाधानलीनं सदैवानवीनम् । जग-
ज्जन्महेतुं सुरानीककेतुं त्रिलोकैकसेतुं भजे० ॥४॥ कृ-
ताम्नायगानं खगाधीशयानं विमुक्तेर्निदानं हरारातिः

मानम् । स्वभक्तानुकूलं जगद्वृक्षमूलं निरस्तार्तशूल भजे० ॥५॥ समस्तामरेशं द्विरेफाभकेशं जगद्विम्बलेशं हृदाकाशदेशम् । सदा दिव्यदेहं विमुक्ताखिलेहं सुवैकुण्ठगेहं भजे ॥६॥ सुरालीबलिष्ठं त्रिलोकीवरिष्ठं गुरूणां गरिष्ठं स्वरूपैकनिष्ठम् । सदा युद्धधीरं महावीरवीरं महाम्भोधितीरं भजे० ॥७॥ रमावामभागं तलानग्ननागं कृताधीनयागं गतारागरागम् । मुनीन्द्रैः सुगीतं सुरैः सम्परीतं गुणौघैरतीतं भजे० ॥८॥ इदं यस्तु नित्यं समायाग चित्तं पठेदष्टकं कण्ठहारं मुरारेः स विष्णोर्विशोकं ध्रुवं याति लोकं जराजन्मशोकं पुनर्विन्दते नो ॥९॥

इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं श्रीहरिस्तोत्रं संपूर्णम् ।

९८-शालिग्रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । ॐ अस्य श्रीशालिग्रामस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीभगवान् ऋषिः, नारायणो देवता, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीशालिग्रामस्तोत्रमंत्रजपे विनियोगः । युधिष्ठिर उवाच । श्रीदेवदेव देवेश देवतार्चनमुत्तमम् । तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि मे पुरुषोत्तम ॥१॥ श्रीभगवानुवाच । गण्डक्याश्चोत्तरे तीरे गिरिराजस्य दक्षिणे । दशयोजनविस्तीर्णा महाक्षेत्रवसुन्धरा ॥२॥ शालिग्रामो भवेद्देवो देवी द्वारावती भवेत् । उभयोः सङ्गमो यत्र

मुक्तिस्तत्र न संशयः ॥३॥ शालिग्रामशिला यत्र यत्र द्वारावती शिला। उभयोः सङ्गमो यत्र मुक्तिस्तत्र न संशयः ।४। अजन्मकृत्यपापानां प्रायश्चित्तं य इच्छति। शालिग्रामशिलावार पापहारिनमोऽस्तु ते ॥५॥ अकाल-मृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्। विष्णोः पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥६॥ शंखमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि। अंगलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यादिकं दहेत् ॥७॥ स्नानोदकं पिबेन्नित्यं चक्रांकितशिलोद्भवम्। प्रक्षाल्य इति तत्तोयं ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥८॥ अग्निष्टोमसहस्राणि वाजपेयशतानि च। सम्यक् फलमवाप्नोति विष्णोर्नैवेद्यभक्षणात् ॥९॥ नैवेद्ययुक्तां तुलसीं च मिश्रितां विशेषतः पादजलेन विष्णोः। योऽश्शश्नाति नित्यं पुरतो मुरारेः प्राप्नोति यज्ञायुतकोटिपुण्यम् ।१०। खण्डिता स्फुटिता भिन्ना अग्निदग्धास्तथैव च। शालिग्रामशिला यत्र तत्र दोषो न विद्यते ।११। न मन्त्रः पूजनं नैव न तीर्थं न च भावना। न स्तुतिर्नोपचारश्च शालिग्रामशिलार्चने ।१२। ब्रह्महत्यादिकं पापं मनोवाक्कायसम्भवम्। शीघ्रं नश्यति तत्सर्वं शालिग्रामशिलार्चनात् ॥१३॥ नानावर्णमयं चैव नानाभोगेन वेष्टितम्। तथा वरप्रसादेन लक्ष्मीकान्तं वदाम्यहम् ॥१४॥ नारायणोद्भवो देवश्चक्रमध्ये च कर्मणा। तथा वरप्रसादेन ल-

क्ष्मीकांतं वदाम्यहम् ॥१५॥ कृष्णे शिलातले यत्र सूक्ष्मं चक्रं सुदृश्यते । सौभाग्यं सन्ततिं धत्ते सर्वसौख्यं ददाति च ।१६। वासुदेवस्य चिह्नानि दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते । श्रीधरः सुकरे वामे हरिद्वर्णस्तु दृश्यते ॥१७॥ वराहरूपिणं देवं कूर्माङ्गैरपि चिह्नितम् । गोपदं तत्र दृश्येत वाराहं वामनं तथा ॥१८॥ पीतवर्णस्तु देवानां रक्तवर्णो भयावहः । नरसिंहो भवेद्देवो मोक्षदश्च प्रकीर्तितः ॥१९॥ शंखचक्रगदाकूर्माः शंखो यत्र प्रदृश्यते । शंखवर्णस्य देवानां वामदेवस्य लक्षणम् ॥२०॥ दामोदरं तथा स्थूलं मध्ये चक्रं प्रतिष्ठितम् । पूर्णा द्वारेण सङ्कीर्णा पीतरेखा च दृश्यते ॥२१॥ छत्राकारे भवेद्राज्यं वर्तुले च महाश्रियः । चिपिटे च महादुःखं शूलाग्रे तु रणं ध्रुवम् ॥२२॥ ललाटे शेषभोगस्तु शिरोपरि सुकाञ्चनम् । चक्रकाञ्चनवर्णानां वामदेवस्य लक्षणम् ॥२३॥ वामपार्श्वे च वै चक्रे कृष्णवर्णस्तु पिंगलम् । लक्ष्मीनृसिंहदेवानां पृथग्वर्णस्तु दृश्यते ॥२४॥ लम्बोष्ठे च दरिद्रः स्यात्पिङ्गले हानिरेव च । भग्नचक्रे भवेद्व्याधिर्विदारे मरणं ध्रुवम् ॥२५॥ पादोदकं च निर्माल्यं मस्तके धारयेत्सदा । विष्णोर्दृष्टं भक्षितव्यं तुलसीदलमिश्रितम् ॥२६॥ कल्पकोटिसहस्राणि वैकुण्ठे वसते सदा । शालिग्रामशिलाबिन्दुर्हत्याकोटिविनाशनः ॥२७॥

तस्मात्संपूजयेद्ध्यात्वा पूजितं चापि सर्वदा । शालिग्राम-शिलास्तोत्रं यः पठेच्च द्विजोत्तमः ।२८। स गच्छेत्परमं स्थानं यत्र लोकेश्वरो हरिः । सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णु-लोकं स गच्छति ॥२९॥ दशावतारदेवानां पृथग्वर्णस्तु दृश्यते । ईप्सितं लभते राज्यं विष्णुपूजामनुक्रमात् ।३०। कोट्यो हि ब्रह्महत्यानामगम्यागम्यकोटयः । ताः सर्वा नाशमायान्ति विष्णुनैवेद्यभक्षणात् ।३१। विष्णोः पादो-दकं पीत्वा कोटिजन्माघनाशनम् । तस्मादष्टगुणं पापं भूमौ बिन्दुनिपातनात् ॥३२॥

इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे श्रीकृष्णयुधिष्ठिरसंवादे
शालिग्रामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

९९-गरुडध्वजस्तोत्रम् ।

ध्रुव उवाच । योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्र-सुप्तां सञ्जीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना । अन्यांश्च हस्त-चरण-श्रवण-त्वगादीन् प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥१॥ एकस्त्वमेव भगवन्निदमात्मशक्त्या माया-ख्ययोरुगुणया महादाद्यशेषम् । सृष्ट्वाऽनुविश्य पुरुषस्तद-सद्गुणेषु नानेव दारुषु विभावसुवद् विभासि ॥२॥ त्वद्-दत्तया वयुनयेदमचष्ट विश्वं सुप्तप्रबुद्ध इव नाथ भवत्प्र-पन्नः । तस्याऽपवर्ग्यशरणं तव पादमूलं विस्मर्यते कृत-विदा कथमार्त्तबन्धो ॥३॥ नूनं विमुष्टमतयस्तव मायया

ते ये त्वां भवाप्ययविमोक्षणमन्यहेतोः । अर्चन्ति कल्पकतरुं कुणपोपभोग्यमिच्छन्ति तत्स्पर्शजं निपयेऽपि नृणाम् ॥४॥ या निर्वृतिस्तनुभृतां तव पादपद्मध्यानाद् भवार्जनकथाश्रवणेन वा स्यात् । स ब्रह्मणि स्वमहिमन्यपि नाथ मा भूत् किन्त्वन्तकासिलुलितात् पततां विमानात् ॥५॥ भक्तिं मुहुः प्रवहतां त्वयि मे प्रसङ्गो भूयादनन्त महतामभलाशयानाम् । येनाऽञ्जसोल्बणमुरुव्यसनं भवाब्धि नेष्ये भवद्गुणकथामृतपानमत्तः ॥६॥ ते न स्मरन्त्यतितरां प्रियमीशमर्त्यं ये चान्वदः सुतसुहृद्-गृह-वित्तदाराः । ये त्वब्जनाभ भवदीयपदारविन्द-सौगन्ध्य-लुब्ध-हृदयेषु कृतप्रसंगाः ॥७॥ तिर्यगंम-द्विज-सरीसृप-देवदैत्य-मर्त्यादिभिः परिचितं सदसद्विशेषम् । रूपं स्थविष्ठमज ते महदाद्यनेकं नाऽतः परं परम वेद्मि न यत्र वादः ।८। कल्पान्त एतदखिलं जठरेण गृह्णन् शेते पुमान् स्वदृगनन्तसखतदङ्के । यन्नाभिसिन्धु-रुहकाञ्चन-लोकपद्म-गर्भेद्युमान् भगवते प्रणतोऽस्मि तस्मै ॥९॥ त्वं नित्यमुक्तपरिशुद्ध विशुद्ध आत्मा कूटस्थ आदिपुरुषो भगवांस्त्र्यधीशः । यद्वद् व्यवस्थितिमखण्डितया स्वदृष्ट्या द्रष्टा स्थितावधिमखो व्यतिरिक्त आस्ते ॥१०॥ यस्मिन् विरुद्धगतयो ह्यनिशं पतन्ति विद्यादयो विविधशक्तय आनुपूर्व्यात् । तद्ब्रह्म विश्वभवमेकमनन्तमाद्यमानन्द-

मात्रमविकारमहं प्रपद्ये ॥११॥ सत्याशिषो हि भगवं-स्तव पादपद्ममाशीस्तथाऽनुभजतः पुरुषार्थमूर्तेः अप्ये-वमार्य भगवान् परिपाति दीनान् वाश्रेव वत्सकमनुग्र-हकातरोऽस्मान् ॥१२॥ मैत्रेय उवाच । अथाभिष्टुत एवं वै सत्सङ्कल्पेन धीमता । भृत्यानुरक्तो भगवान् प्रतिन-न्द्येदमब्रवीत् ॥१३॥ श्रीभगवानुवाच । वेदाऽहं ते व्यव-वसितं हृदि राजन्यबालक । तत्प्रयच्छामि भद्रं ते दुरा-पमपि सुव्रत ॥१४॥ नाऽन्यैरधिष्ठितं भद्र ! यद् भ्राजि-ष्णु ध्रुवक्षिति । यत्र ग्रहर्क्ष-ताराणां ज्योतिषां चक्रमा-हितम् ॥१५॥ मेढ्यां गोचक्रवत् स्थास्नु परस्तात् कल्प-वासिनाम् । धर्मोऽग्निः कश्यपः शुक्रो मुनयो ये वनौक-सः । चरन्ति दक्षिणीकृत्य भ्रमन्तो यत्सतारकाः ॥१६॥ इष्ट्वा मां यज्ञहृदयं यज्ञैः पुष्कलदक्षिणैः । भुक्त्वा चे-हाऽऽशिषः सत्या अन्ते मां संस्मरिष्यसि ॥१७॥ ततो गन्तासि मत्स्थानं सर्वलोकनमस्कृतम् । उपरिष्टादृषिभ्य-स्त्वं यतो नावर्तते गता ॥१८॥ मैत्रेय उवाच । इत्य-र्चितः स भगवानतिदिश्यात्मनः पदम् । बालस्य पश्यतो धाम स्वमगाद् गरुडध्वजः ॥१९॥

१००—श्रीमधुसूदनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ओमित ज्ञानमात्रेण रोगाजी-र्णेन निर्जितः ॥ कालनिद्रां प्रपन्नोऽस्मि त्राहि मां मधु-

सूदन ॥१॥ न गतिर्विद्यते चान्या त्वमेव शरणं मम ॥
पापपंके निमग्नोऽस्मि त्रा० ॥२॥ मोहितो मोहजालेन
पुत्रदारगृहादिषु ॥ तृष्णया पीड्यमानोऽस्मि त्रा० ।३।
भक्तिहीनं च दीनं च दुःखशोकातुरं प्रभो ॥ अनाश्रय-
मनाथं च त्रा० ॥४॥ गतागतेन श्रान्तोऽस्मि दीर्घसंसा-
रवर्त्मसु ॥ येन भूयो न गच्छामि त्रा० ॥५॥ बहवो
हि मया दृष्टाः क्लेशाश्चैव पृथक् पृथक् ॥ गर्भवासे मह-
द्दुःखं त्रा० ॥६॥ तेन देव प्रपन्नोऽस्मि त्राणार्थं त्वत्प-
रायणः ॥ दुःखार्णवपरित्राणात् त्रा० ॥७॥ वाचा यच्च
प्रतिज्ञातं कर्मणा नोपपादितम् ॥ तत्पापार्जितमग्नोऽस्मि
त्रा० ॥८॥ सुकृतं न कृतं किंचिद्दुष्कृतं च कृतं मया ।
संसारघोरे मग्नोऽस्मि त्रा० ॥ ९ ॥ देहान्तरसहस्रेषु
चान्योन्यभ्रामितो मया ॥ तिर्यक्त्वं मानुषत्वं च त्रा०
॥१०॥ वाचयामि यथोन्मत्तः प्रलपामि तवाग्रतः ॥
जरामरणभीतोऽस्मि त्रा० ॥११॥ यत्र यत्र च यातो-
ऽस्मि स्त्रीषु वा पुरुषेषु च ॥ तत्र तत्राचला भक्तिस्त्रा०
॥१२॥ गत्वा गत्वा निवर्तन्ते चन्द्रसूर्यादयो ग्रहाः ॥
अद्यापि न निवर्त्तन्ते द्वादशाक्षरचिन्तकाः ।१३। ऊर्ध्वं-
पातालमर्त्येषु व्याप्तं लोकं जगत्त्रयम् ॥ द्वादशाक्षरात्परं
नास्ति वासुदेवेन भाषितम् ॥१४॥ द्वादशाक्षरं महा-
मंत्रं सर्वकामफलप्रदम् । गर्भवासनिवासेन सुकेन परि-

भाषितम् ॥१५॥ द्वादशाक्षरं निराहारो यः पठेद्धरिवासरे ॥ स गच्छेद्वैष्णवं स्थानं यत्र योगेश्वरो हरिः ॥ १६ ॥

इति श्रीशुकदेवविरचितं मधुसूदनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१०१-हरिमीडेस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्तोऽमे भक्त्या विष्णुमनादिं जगदादिं यस्मिन्नेतत्संसृतिचक्रं भ्रमतीत्थम् ॥ यस्मिन्दृष्टे नश्यति तत्संसृतिचक्रं तं संसारध्वान्तविनाशं हरिमीडे ॥१॥ यस्यैकांशादित्थमशेषं जगदेतत् प्रादुर्भूतं येन पिनद्धं पुनरित्थम् ॥ येन व्याप्तं येन विबुद्ध सुखदुःखैस्तं संसारध्वांतविनाशं हरिमीडे ॥ २ ॥ सर्वज्ञो यो यश्च हि सर्वः सकलो यो यश्चानंदोऽतगुणो यो गुणधामा ॥ यश्चाव्यक्तो व्यस्तसमस्तः सहसद्यस्तं संसार० ॥३॥ तस्मादन्यन्नास्त्यपि नैनं परमार्थं दृश्यादन्यो निर्विषयज्ञानमयत्वात् ॥ ज्ञातृज्ञानज्ञेयविहीनोपि सदा ज्ञस्तं संसार० ॥ ४ ॥ आचार्येभ्यो लब्धसुसूक्ष्माच्युततत्वा वैराग्येणाभ्यासवलाच्चैव द्रढिम्ना ॥ भक्त्यैकाग्रध्यानपरा यं विदुरीश तं संसार० ॥५॥ प्राणानायम्योमिति चित्तं हृदि रुद्ध्वा नान्यत्स्मृत्वा तत्पुनरत्रैव विलाप्य क्षीणे चित्ते भाद्दृशिरस्मीति विदुर्यं तं संसार० ॥ ६ ॥ यं ब्रह्माख्यं देवमनन्यं परिपूर्णं हृत्स्थं भक्तैर्लभ्यमजं सू-

क्षममतर्क्यम् ॥ ध्यात्वाऽऽत्मस्थं ब्रह्मविदो यं विदुरीशं तं संसार० ॥७॥ मात्रातीतं स्वात्मविकाशात्मविबोधं ज्ञेयातीतं ज्ञानमयं हृद्युपलभ्यम् ॥ भावग्राह्यानन्दमनन्यं च विदुर्यं तं संसा० ॥ ८ ॥ यद्यद्वेद्यं वस्तु सतत्वं विषयाख्यं तत्तद्ब्रह्मैवेति विदित्वा तदहं च ॥ ध्यायन्त्येवं यं सनकाद्या मुनयोऽजं तं संसार० ॥९॥ यद्यद्वेद्यं तत्तदहं नेति विहाय स्वात्मज्योतिर्ज्ञानमयानन्दामवाप्य । तस्मिन्नस्मीत्यात्मविदो यं विदुरीशं तं संसार० ॥१०॥ हित्वा हित्वा दृश्यमशेषं सविकल्पं मत्वा शिष्टं भादृशिमात्रं गगनाभम् ॥ त्यक्त्वा देहं यं प्रविशंत्यच्युतभक्तास्तं सं० ॥ ११ ॥ सर्वत्रास्ते सर्वशरीरी न च सर्वः सर्वं वेत्त्येवेह न यं वेत्ति च सर्वः ॥ सर्वत्रांतर्यामितयेत्थं यमनन्यस्तं संसार० ।१२। सर्वं दृष्टाव स्वात्मनि युक्त्वा जगदेतद्दृष्टावत्मानं चैवमजं सर्वजनेषु ॥ सर्वात्मैकोऽस्मीति विदुर्यं जनहृत्स्थं तं संसार० ॥१३॥ सर्वत्रैकः पश्यति जिघ्रत्यथ भुंक्ते द्रष्टा श्रोता बुद्ध्यति चेत्याहुरिमं यम् ॥ साक्षी चास्ते कर्तृषु पश्यन्निति चान्ये तं संसार० ॥१४॥ पश्यन् शृण्वन्नत्र विजानन्त्रसयन् सन् जिघ्रन्बिभ्रद्देवमिमं जीवतयेत्थम् ॥ इत्यात्मानं यं विदुरीशं विषयज्ञं तं संसार० ॥१५॥ जाग्रद्दृष्टाव स्थूलंपदार्थानथ मायां दृष्टाव स्वप्नेऽथापि सुषुप्तौ सुखनिद्राम् ।

इत्यात्मानं वीक्ष्य मुदास्ते च तुरीये तं संसार० ॥१६॥ पश्यन् शुद्धोऽप्यक्षर एको गुणभेदान्नानाकारान् स्फाटिकवद्भाति विचित्रः ॥ भिन्नश्छिन्नश्चायमजः कर्मफलैर्यस्तं संसार० ॥१७॥ ब्रह्मा विष्णु रुद्रहुताशौ रविचन्द्राविन्द्रो वायुर्यज्ञ इतीत्थं परिकल्प्य ॥ एकं सन्तं यं बहुधा दुर्मतिभेदात्तं संसार० ॥१८॥ सत्यं ज्ञानं शुद्धमनन्तं व्यतिरिक्तं क्षान्तं गूढं निष्कलमानन्दमनन्यम् । इत्याहादौ यं वरुणोऽसौ भृगवेऽजं तं संसार० ॥१९॥ कोशानेतान्पञ्चरसादीनतिहाय ब्रह्मास्मीति स्वात्मनि निश्चित्य दृशिस्थः ॥ पित्रादिष्टो वेद भृगुर्यं यजुरन्ते तं संसार० ॥२०॥ येनाविष्टो यस्य च शक्त्या यदधीनः क्षेत्रज्ञोऽयं कारयिता जन्तुषु कर्तुः कर्त्ता ॥ भोक्ताऽऽत्मात्र हि चिच्छक्त्यधिरूढस्तं सं० ॥२१॥ सृष्ट्वा सर्वं स्वात्मतयैवेत्थमतर्क्यं व्याप्याथान्तः कृत्स्नमिदं सृष्टमशेषम् ॥ सच्च त्यच्चाभूत्परमात्मा स य एकस्तं सं० ॥२२॥ वेदान्तैश्चाध्यात्मिकशास्त्रैश्च पुराणैः शास्त्रैश्चान्यैः सात्वततन्त्रैश्च यमीशम्। दृष्ट्वाथान्तश्चेतसि बुद्ध्या विविशुर्यं तं संसार० ॥२३॥ श्रद्धाभक्तिध्यानशमाद्यैर्यतमानैर्ज्ञातुं शक्यो देव इहैवाशु य ईशः। दुर्विज्ञेयो जन्मशतैश्चापि विना तैस्तं सं० ॥२४॥ यस्यातर्क्यं स्वात्मविभूतेः परमार्थं सर्वं खल्वित्यत्र निरुक्तं श्रुतिविद्भिः ॥ तज्जा-

तित्वादब्धितरंगागमभिन्नं तं संसार० ॥२५॥ दृष्टाव गीतास्वक्षरतत्वं विधिनाजं भक्त्या गुर्व्या लभ्य हृदि-स्थं दृशिमात्रम् ॥ ध्यात्वा तस्मिन्नस्म्यहमित्यत्र विदुर्यं तं संसार० ॥२६॥ क्षेत्रज्ञत्वं प्राप्य विभुः पञ्चमुखैर्यो भुंक्तेऽजस्त्रं भोग्यपदार्थान् प्रकृतिस्थः ॥ क्षेत्रे क्षेत्रेऽप्स्विदु-वदेको बहुधाऽऽस्ते तं संसार० ॥२७॥ युक्त्याऽऽलोड्य-व्यासवचांस्यत्र हि लभ्यः क्षेत्रक्षेत्रज्ञान्तरविभिद्‌ः पुरु-षाख्यः ॥ योऽहं सोऽसौ सोऽस्म्यहमेवेति विदुर्यं तं संसार० ॥ २८ ॥ एकीकृत्यानेकशरीरस्थमिमं ज्ञं यं विज्ञायेहैव स एवाशु भवति ॥ यस्मिंल्लीना नेह पुन-र्जन्म लभन्ते तं संसार० ॥२९॥ द्वन्द्वैकत्वं यच्च म-धुब्राह्मणवाक्यैः कृत्वा शक्रोपासनमासाद्य विभूत्या ॥ योऽसौ सोऽहं सोऽस्म्यनेवेति विदुर्यं तं संसार० ॥३०॥ योऽयं देहे चेष्टयितान्तःकरणस्थः सूर्ये चासौ तापयिता सोऽस्म्यहमे ॥ इत्यात्मैक्योपासनया यं विदुरीशं त सं० ॥३१॥ विज्ञानांशो यस्य सतः शक्त्याधिरूढा बुद्धिर्बुद्ध-यत्यत्र बहिर्बोध्यपदार्थात् ॥ नैवांतःस्थं बुद्ध्यति तं बोधयितारं तं सं० ॥ ३२ ॥ कोऽयं देहे देव इतीत्थं सुविचार्य ज्ञाता श्रोताऽऽनन्दयिता चैष हि देवः ॥ इत्या-लोच्य ज्ञांशमिहास्मीति विदुर्यं तं संसार० ॥३३॥ को ह्येवान्यदात्मनि न स्यादयमेष ह्येवानन्दप्राणिनि चा-

पानिति चेति ॥ इत्यस्तित्वं वक्त्युपपत्या श्रुतिरेषा तं संसार० ॥३४॥ प्राणो वाहं वाक्श्रवणादीनि मनो वा बुद्धिर्वाहं व्यस्त उताहोऽपि समस्तः ॥ इत्यालोक्य ज्ञप्तिरिहास्मीति विदुर्यं तं सं० ॥३५॥ नाहं प्राणो नैव शरीरं न मनोऽहं नाहं बुद्धिर्नाह हङ्कारधियौ च। योऽत्र ज्ञांशः सोऽस्म्यहमेवेति विदुर्यं तं संसार० ॥३६॥ सत्तामात्रं केवलविज्ञानमजं सत् सूक्ष्मं नित्यं तत्वमसीत्यात्मसुताय ॥ नाम्नामन्ते प्राह पिता यं विभुमाद्यं संसार० ॥३७॥ मूर्तामूर्ते पूर्वमपोह्याथ समाधौ दृश्यं सर्वं नेति च नेतीति विहाय ॥ चेतन्यांशे स्वात्मनि सन्तं च विदुर्यं तं संसार० ॥३८॥ ओत प्रोतं यत्र च सर्गं गगनांतं यो स्थूलानण्वादिषु सिद्धोऽक्षरसंज्ञः ॥ ज्ञायाऽतोऽन्यो नेत्युपलभ्यो न च वेद्यस्तं संसार० ॥३९॥ तावत्सर्वं सत्यमिवाभाति यदेतद्यावत्सोऽस्मीऽत्मीत्यात्मनि यो ज्ञो न हि दृष्टः ॥ दृष्टे तस्मिन् सर्वमसत्यं भवतीदं तं संसार० ॥४०॥ रागामुक्तं लोहयुतं हेम यथाग्नौ तं संसार० ॥४१॥ यं विज्ञानज्योतिषमाद्यं सुविभागं हृद्यर्केन्द्वग्न्योकसमीढ्यं तडिदाभम् ॥ भक्त्याराध्येहैव विशन्त्यात्मनि तं सं० ॥४२॥ पायाभद्क्तं स्वात्मनि संतं पुरुषं यो भक्त्या स्तौत्वाङ्गिरसं विष्णुरिमं माम् ॥ इत्यात्मानं स्वात्मनि संहृत्य सदैकस्तं सन्सार० ॥४३॥

इत्थं स्तोत्रं भक्तजनेड्यं भवभीतिध्वांतार्कामं भगवत्पादीयमिदं यः ॥ विष्णोर्लोकं पठति शृणोति व्रजति ज्ञानं ज्ञेयं स्वात्मनि चाप्नोति मनुष्यः ॥४४॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं हरिमीडेस्तोत्रं समाप्तम् ।

१०२-षट्पदीस्तोत्रम् ।

अविनयमपनय विष्णो दमय मनः शमय विषयमृगतृष्णाम् । भूतदयां विस्तारय तारय संसारसागरतः ॥१॥ दिव्यधुनीमकरन्दे परिमल परिभोग सच्चिदानन्दे । श्रीपतिपदारविन्दे भवभयखेदच्छिदे वन्दे ॥ २ ॥ सत्यपि भेदापगमे नाथ तवाऽहं न मामकीनस्त्वम् । सामुद्रो हि तरङ्गः क्वचन समुद्रो न तारङ्गः ॥३॥ उद्धृतनग नगभिदनुज दनुजकुलामित्र मित्रशशिदृष्टे । दृष्टे भवति प्रभवति न भवति किं भवतिरस्कारः ॥ ४ ॥ मत्स्यादिभिरवतारैरवतारवताऽवता सदा वसुधाम् । परमेश्वर परिपाल्यो भवता भवतापभीतोऽहम् ॥ ५ ॥ दामोदर गुणमन्दिर सुन्दरवदनारविन्द गोविन्द । भवजलधिमथनमन्दर परम दरमपनय त्वं मे ॥६॥ नारायण करुणामय शरणं करवाणि तावकौ चरणौ । इति षट्पदी मदीये वदनसरोजे सदा वसतु ॥७॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं षट्पदीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१०३–विष्णोः पाञ्चजन्यशङ्खस्तोत्रम् ।

भिन्दन्नरातिहृदयानि हरेः पुनातु निःश्वासवातमुखरीकृतकोटरो वः । संक्रान्तकुक्षिकुहरास्पदसप्तसिन्धुसंघट्टघोरतरघोष इवाशु शङ्ख ॥१॥ पायात्स वः कुमुदकुन्दमृणालगौरः शङ्खो हरेः करतलाम्बरपूर्णचन्द्रः । नादेन यस्य सुरशत्रुविलासिनीयां कांच्यो भवन्ति शिथिला जघनस्थलीषु ॥२॥

१०४–श्रीविष्णोरष्टनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अच्युतं केशवं विष्णु हरिं सत्यं जनार्दनम् ॥ हंसं नारायणं चैवमेतन्नामाष्टकं पठेत् ॥१॥ त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं दारिद्र्यं तस्य नश्यति ॥ शत्रुसैन्यं क्षयं याति दुःस्वप्नः सुखदो भवेत् ॥२॥ गङ्गायां मरणं चैव दृढा भक्तिस्तु केशवे । ब्रह्मविद्याप्रबोधश्च तस्मान्नित्यं पठेन्नरः ॥३॥

इति वामनपुराणे श्रीविष्णोर्नामाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१०५–अच्युताष्टकम् । (१)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अच्युताच्युत हरे परमात्मन् रामकृष्ण पुरुषोत्तम विष्णो ॥ वासुदेव भगवन्ननिरुद्ध श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ॥ १ ॥ विश्वमङ्गल विभो जगदीश नन्दनन्दन नृसिंह नरेंद्र ॥ मुक्तिदायक मुकुंद मुरारे श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ॥२॥ रामचंद्र रघु-

नायक देव दीननाथ दुरितक्षयकारिन् ।। यादवेन्द्र यदु-
भूषण यज्ञ श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ।।३।। देवकीतनय
दुःखदवाग्ने राधिकारमण रम्य सुमूर्ते ।। दुःखमोचन
दयार्णव नाथ श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ।।४।। गोपिका-
वदनचन्द्रचकोर नित्य निर्गुण निरञ्जन विष्णो ।। पू-
र्णरूप जय शंकर शर्व श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ।।५।।
गोकुलेश गिरिधारणधीर यामुनाच्छतटकेलनवीर ।।
नारदादिमुनिवन्दितपाद श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ।६।
द्वारिकाधिप दुरन्तगुणाब्धे प्राणनाथ परिपूर्ण भवारे ।।
ज्ञानगम्य गुणसागर ब्रह्मन् श्रीपते शमय दुःखमशेषम्
।।७।। दुष्टनिर्दलन देव दयालो पद्मनाभ धरणीधर ध-
र्मिन् ।। रावणान्तक रमेश मुरारे श्रीपते शमय दुःखम-
शेषम् ।।८।। अच्युताष्टकमिदं रमणीयं निर्मितं भवभयं
विनिहन्तुम् । यः पठेद्विषयवृत्तिनिवृत्तिर्जन्मदुःखमखिलं
स जहाति ।।९।।

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितमच्युताष्टकं समाप्तम् ।

१०६–अच्युताष्टकम् । (२)

श्रीगणेशाय नमः ।। अच्युतं केशवं रामनारायणं कृष्ण-
दामोदरं वासुदेवं हरिम् । श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभं
जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे ।।१।। अच्युतं केशवं स-
त्यभामाधवं माधवं श्रीधरं राधिकाराधितम् ।। इन्दि-

रामन्दिरं चेतसा सुन्दरं देवकीनन्दनं नन्दनं संदधे।२।विष्णु-वे शङ्खिने जिष्णवे चक्रिणे रुक्मिणीरागिणे जानकीजान-ये ॥ बल्लवीवल्लभायार्चितायात्मने कंसविध्वंसिने वं-शिने ते नमः ॥३॥ कृष्ण गोबिन्द हे रामनारायण श्रीपते वासुदेवाजित श्रीनिधे ॥ अच्युतानन्त हे माधवाधोक्षज द्वारकानायक द्रौपदीरक्षक ॥ ४ ॥ राक्षसक्षोभितः सी-तया शोभितो दण्डकारण्यभुपुण्यताकारणः ॥ लक्ष्मणे-नान्वितो वानरैः सेवितोऽगस्त्यपूजितो राघवः पातु माम् ॥५॥ धेनुकारिष्टकोऽनिष्टकृद्द्वेषिणां केशिहा कंसहृ-द्वंशिकावादकः ॥ पूतनाकोपकः सूरजाखेलनो मालगो-पालकः पातु मां सर्वदा ॥६॥ विद्युदुद्योतवान्प्रस्फुरद्वा-ससं प्रावृडम्भोदवत्प्रोल्लसद्विग्रहम् ॥ वन्यया मालया शोभितोरःस्थलं लोहितांघ्रिद्वयं वारिजाक्षं भजे ॥७॥ कुञ्चितैः कुन्तलैर्भ्राजमानाननं रत्नमौलिंलसत्कुंडलंगण्डयोः ॥ हारकेयूरकंकङ्कणप्रोज्ज्वलं किङ्किणीमञ्जुलं श्यामलं तं भजे ॥ ८ ॥ अच्युतस्याष्टकं यः पठेदिष्टदं प्रेमतः प्रत्यहं पुरुषः सस्पृहम् ॥ वृत्ततः सुन्दरं कर्तृ विश्वम्भरं तस्य वश्यो हरिर्जायते सत्वरम् ॥९॥

इति श्रीमच्छङ्करा चार्यविरचितं अच्युताष्टकं सम्पूर्णम् ।

१०७-श्री हरिनामाष्टकं ।

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री केशवाच्युत मुकुन्द रथा-

ङ्गपाणे गोविन्द माधव जनार्दन दानवारे ॥ नारायणामरपते त्रिजगन्निवास जिह्वे जपेति सततं मधुपाक्षराणि ॥ १ ॥ श्रीदेवदेव मधुसूदन शार्ङ्गपाणे दामोदरार्णवनिकेतन कैटभारे ॥ विश्वम्भरणभूषित भूमिपाल जिह्वे० ॥ २ ॥ श्रीपद्मलोचन गदाधर पद्मनाभ पद्मेश पद्मपदपावन पद्मपाणे ॥ पीताम्बराम्बररुचे रुचिरावतार जिह्वे० ।३। श्रीकान्त कौस्तुभधरार्तिहराब्जपाणे विष्णो त्रिविक्रम महीधर धर्मसेतो ॥ वैकुण्ठवास वसुधाधिप वासुदेव जिह्वे० ॥४॥ श्रीनारसिंह नरकान्तक कान्तमूर्ते लक्ष्मीपते गरुडवाहन शेषशायिन ॥ केशिप्रणाशन सुकेश किरीटमौले जिह्वे० ॥५॥ श्रीवत्सलाञ्छन सुरर्षभ शङ्खपाणे कल्पान्तवारिधिविहार हरे मुरारे ॥ यज्ञेश यज्ञमय यज्ञभुगादिदेव जिह्वे० ।६। श्रीराम रावणरिपो रघुवंशकेतो सीतापते दशरथात्मज राजसिंह ॥ सुग्रीवमित्र मृगवेधन चापपाणे जिह्वे० ॥७॥ श्रीकृष्ण वृष्णिवर यादव राधिकेश गोवर्धनोद्धरणकंसविनाश शौरे ॥ गोपाल वेणुधर पाण्डुसुतैकबन्धो जिह्वे० ।८। इत्यष्टकं भगवतः सततं नरो यो नामाङ्कितं पठति नित्यमनन्यमनन्यचेताः। विष्णोः परं पदमुपैति पुनर्न जातु मातुः पयोधररसं पिबतीह सत्यम् ॥९॥

इति श्रीस्वामि-ब्रह्मानन्दविरचितं श्रीहरिनामाष्टकं सम्पूर्णम् ।

१०८-श्रीहरिशरणाष्टकम् ।

ध्येयं वदन्ति शिवमेव हि केचिदन्ये शक्ति गणेश-मपरे तु दिवाकरं वै । रूपैस्तु तैरपि विभासि यतस्त्व-मेकस्तस्मात् त्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥१॥ नो सोदरो न जनको जननी न जाया नैवात्मजो न च कुलं विपुलं बलं वा । संदृश्यते न किल कोऽपि सहायको मे तस्मात्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥ २ ॥ नोपासिता मदमपास्य मया महान्तस्तीर्थानि चास्तिकधिया नहि सेवितानि देवार्चनं च विधिवन्न कृतं कदापि तस्मात्व-मेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥३॥ दुर्वासना मम सदा परिकर्षयन्ति चित्तं शरीरमपि रोगगणा दहन्ति । सञ्जीवनं च परहस्तगतं सदैव तस्मात्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥४॥ पूर्वं कृतानि दुरितानि मया तु यानि स्मृत्वाऽखिलानि हृदयं परिकम्पते मे ख्याता च ते पतितपावनता तु यस्मात्तस्मात्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥५॥ दुःखं जराजननजं विविधाश्च रोगाः काक श्व सूकरजनिर्निरये च पातः । त्वद्विस्मृतेः फलमिदं वित-तं हि लोके तस्मात्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥६॥ नीचोऽपि पापवलितोऽपि विनिन्दितोऽपि ब्रूयात्तवाह-मिति यस्तु किलैकवारम् तं यच्छसीश निजलोकमिति व्रतं ते तस्मात्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥७॥ वेदेषु

धर्मवचनेषु तथाऽऽगमेषु रामायणेऽपि च पुराणकदम्बके वा । सर्वत्र सर्वविधिना गदितस्त्वमेव तस्मात्त्वमेव शरणं मम शङ्खपाणे ॥८॥

इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं श्रीहरिशरणाष्टकं सम्पूर्णम् ।

१०८-श्रीरमापत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । जगदादिमनादिमजं पुरुषं शरदम्बरतुल्यतनुं वितनुम् । धृतकञ्जरथाङ्गगदं विगदं प्रणमामि रमाधिपतिं तमहम् ॥१॥ कमलाननकञ्जरतं विरतं हृदि योगिजनैः कलितं ललितम् । कुजनैः सुलनैरलभं सुलभं प्रण० ॥२॥ मुनिवृन्दहृदिस्थपदं सुपदं निखिलाध्वरभागभुजं सुभुजम् । हृतवासवमुख्यमदं विमदं प्रण० ॥३॥ हृतदानवदृप्तबलं सुबलं स्वजनास्तसमस्तमलं विमलम् । समपास्तगजेन्द्रदरं सुदरं प्रण० ॥४॥ परिकल्पितसर्वबलं विकलं लकलागमगीतगुणं विगुणम् । भवपाशनिराकरणं शरणं प्रण० ॥५॥ मृतिजन्मजराशमनं कमनं शरणागतभीतिहरं दहरम् । परितुष्टरमाहृदयं सदयं प्रण० ॥६॥ सकलावनिबिम्बधरं स्वधरं परिपूरितसर्वदिशं सुदृशम् । गतशोकमशोककरं सुकरं प्रण० ॥७॥ मथितार्णवराजरसं सरसं प्रथिताखिललोकहृदं सुहृदम् । प्रथिमाद्भुतशक्तिगणं सुगणं प्रण० ॥८॥ सुखराशिकरं

भवबन्धहरं परमाष्टकमेतदनन्यमतिः । पटतीह तु योऽ-
निशमेव नरो लभते खलु विष्णुपदं स परम् ॥८॥

इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं श्रीरमापत्यष्टकं सम्पूर्णम् ।

११०–दीनबन्ध्वष्टकम् ।

यस्मादिदं जगदुदेति चतुर्मुखाद्यं यस्मिन्नवस्थित-
मशेषमशेषमूले । यत्रोपयाति विलयं च समस्तमन्ते
दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः । चक्रं सहस्रकरचा-
रुकरारविन्दे गुर्वी गदा दरवश्च विभाति यस्य । पक्षी-
न्द्रपृष्ठ-परिरोपित-पादपद्मो दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स
दीनबन्दुः । येनोद्धृता वसुमती सलिले निमग्ना नग्ना
च पाण्डववधूः स्थगिता दुकूलैः । सम्मोचितो जलचर-
स्य मुखाद् गजेन्द्रो दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः
यस्यार्द्र दृष्टिवशतस्तु सुराः समृद्धिं कोपेक्षणेन दनुजा वि-
लयं व्रजन्ति । भीताश्चरन्ति च यतोऽर्कयमानिलाद्या
दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः गायन्ति सामकुशला
यमजं मखेषु ध्यायन्ति वीरमतयो यतयो विविक्ते । प-
श्यन्ति योगिपुरुषाः पुरुषं शरीरे दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य
स दीनबन्धुः । आकाररूपगुण-योग-विवर्जितोऽपि भक्ता-
नुकम्पननिमित्तगृहीतमूर्तिः । यः सर्वगोऽपि कृतशेषशरी-
रशय्यो दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः । यस्यां-
घ्रिपङ्कजमनिद्रमुनीन्द्र-वृन्दैराराध्यते भवदवानलदाहशा-

न्त्यै । सर्वापराधमविचिन्त्य ममाऽखिलात्मा दृग्गोचरो
भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः । यन्नामकीर्तनपरः श्वपचोऽ-
पि नूनं हित्वाऽखिलं कलिमलं भुवनं पुनाति । दग्ध्वा-
ममाऽघमखिलं करुणेक्षणेन दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स
दीनबन्धुः । दीनबन्धवष्टकं पुण्यं ब्रह्मानन्देन भाषितम् ।
यः पठेत् प्रयतो नित्यं तस्य विष्णुः प्रसीदति ॥८॥

इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं दीनबन्धवष्टकं सम्पूर्णम् ।

१११-श्रीकमलापत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । भुजगतल्पगतं घनसुन्दरं गरुड-
वाहनमम्बुजलोचनम् । नलिनचक्रगदाकरमव्ययं भजत
रे मनुजाः कमलापतिम् ॥१॥ अलिकुलासितकोमलकु-
न्तलं विमलपीतदुकूलमनोहरम् । जलधिजाश्रितवाम-
कलेवरं भजत० ॥२॥ किमु जपैश्च तपोभिरुताध्वरैरपि
किमुत्तमतीर्थनिषेवणैः किमुत शास्त्रकदम्बविलोकनैर्भज-
त० ॥३॥ मनुजदेहमिमं भुवि दुर्लभं समधिगम्य सुरै-
रपि वांछितम् । विषयलम्पटतामपहाय वै भजत० ॥४॥
न वनिता न सुतो न सहोदरो न हि पिता जननी न
च बांधवाः । व्रजति साकमनेन जनेन वै भजत० ॥५॥
सकलमेव चलं सचराचरं जगदिदं सुतरां धनयौवनम् ।
समवलोक्य विवेकदृशा द्रुतं भजत० ॥६॥ विविधरोग-
युतं क्षणभंगुरं परवशं नवमार्गमलाकुलम् । परिनिरीक्ष्य

शरीरमिदं स्वकं भजत० ॥७॥ मुनिवरैरनिशं हृदि भावितं शिवविरिञ्चिमहेन्द्रनुतं सदा। मरणजन्मजराभयमोचनं भजत० ॥८॥ हरिपदाष्टकमेतदनुत्तमं परमहंसजनेन समीरितम्। पठति यस्तु समाहितचेतसा व्रजति विष्णुपदं स नरो ध्रुवम् ॥९॥

इति श्रीमत्प० स्वामिब्रह्मानन्दवि० कमलापत्यष्टकं सम्पूर्णम्।

११२–कमलेशमाला

मुकुन्दमिन्दीवरपत्रनेत्रं नन्दात्मजं योगिमनोनिकेतम्। वृन्दारकाभिष्टुतपादपद्मं पार्थस्य मित्रं मनसा स्मरामि ॥१॥ ब्रह्मेन्द्र-गंगाधर-वन्दिताय मुकुन्ददेवाय परात्पराय। नमः समस्ताऽसुर-नाशकाय पक्षीशयानाय रमेश्वराय ।२। आश्लिष्ट-राधाकुच-कुड्मलाय गोपलकृष्णायनमोऽस्तु तस्मै। गोवर्धनं यो गिरिमुच्चशृङ्गं लोकोपकाराय किलोद्दधार ॥३॥ कृपानिधे! दीनशरण्य! शौरे! दैत्याटवीदाव! रमेश देव!। त्वत्पादपङ्करुहयुग्मसेवां नक्तन्दिवं चाऽऽप्तुमहं समीहे ॥४॥ तदा मम स्यादभिलाषसिद्धिः तदैव जायते ममाऽतिमोदः। यदा यतीन्द्रेडित-सच्चरित्रो मयि प्रसन्नो भगवान् मुरारिः कुशाग्रसूक्ष्मापि मतिर्गतीनां ज्ञातुं न शक्नोति तव स्वरूपम् अहं कथं वा मुसलाग्रबुद्धिर्ज्ञातुं क्षमः स्यां खलु तं

भवन्तम् ॥६॥ नाऽहं नदीष्णो निखिलागमेषु न च प्रवीणः कविताकलायाम् । तस्मादशेषान् गदितुं गुणास्ते शौरे ! न शक्तो बत मन्दभाग्यः ॥७॥ कृपालुकृष्णस्य विधेयदासो नारायणाख्यः कवितल्लजो यः । श्रीतोण्डमूलेनिलियेन तेन व्यरच्यसौ श्लोकमलेशमाला ॥८॥

११३—श्रीविष्णुस्तुतिः ।

नमस्त्रिभुवनोत्पत्तिस्थितिसंहारहेतवे । विष्णवेऽपारसंसारपारोत्तरणहेतवे ॥१॥ आदिमध्यान्तरहितं दशाहीनं पुरातनम् । अद्वितीयमहं वन्दे तद्वस्त्रसदृशं हरिम् ॥२॥ लक्ष्मीकपोलसंक्रान्तपत्रपत्रलतोज्ज्वला । दोर्द्रुमाः पान्तु वः शौरेर्घनच्छाया महाफलाः ॥३॥ जयति स भगवान् कृष्णः शेते यः शेषभोगशय्यायाम् । मध्ये पयः पयोधेरपर इवाम्भोनिधिः कृष्णः ॥४॥ अतिविपुलं कुचयुगलं रहसि करैरामृशन्मुहुर्लक्ष्म्याः । तदपहृतं निजहृदयं जयति हरिर्मृगयमाण इव ॥५॥

इति विष्णोस्तोत्राणि ।

देवी स्तोत्राणि ।

११४–देवीस्तोत्रम् ।

नमऽस्तु दुर्गे सदानन्दरूपे सुरैः स्तूयमाने मुनीनां सुपूज्ये । नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे नमस्ते भवाम्भोधिसन्तारदक्षे ॥१॥ नमस्ते नमस्ते सदा दैवतेज्ये तथा दीनदुःखे दयाक्रान्तचित्ते । नमस्ते महादेवमान्ये भवानि सुदीनं स्वदासं जनं पाहि शश्वत् ॥२॥ नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे सदा योगिगम्ये स्वभक्त्यैकलभ्ये । रमा-शारदा-शम्भुकान्तास्वरूपे नमस्ते महाकालिके शुद्धरूपे ॥३॥ नमस्तेऽम्बिके भक्तसंसेव्यपादे नमस्तेऽघविध्वंसिके सर्वशक्ते । जगत्कानने क्रोध-कामादिहिस्रे; परीतोऽस्मि मातः सदा रक्ष रक्ष ॥४॥ नमस्ते जगद्बीजरूपे महेशि स्वभक्तेषु रक्ते शरण्ये त्रिनेत्रे । त्वदन्या न चास्ते विपन्नाशकारी सुसम्पत्प्रदा त्वां सदा सन्तोऽस्मि ॥५॥ अहं देवि याचे पदाम्भोजसेवां भवत्यास्तथा भक्तिभाव भवेदय् । प्रसीदाम्ब दासे सदा शैलपुत्रि शिवां शङ्करीं पार्वतीं त्वां भजामि ॥६॥ त्वदन्यो न मान्यो न चाऽन्यश्च गण्यस्त्वमेकाऽसि मातर्जगज्जालहेतुः । जगन्नाशिका पालिका च त्वमेव गिरेर्बालिकां कालिकां सन्तोऽहम् ॥७॥ श्रिय शारदां शम्भुशक्तिं महेशीं त्रिनेत्रीं च दुर्गां

तथा कालरात्रिम् । तुषाराद्रिपुत्रीं जगद्-दुःखहन्त्रीं स्मरन् दुःखनाशो भवेन्मानवानाम् ॥८॥ इदं स्तोत्रं महादेव्या योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेत् प्रातरुत्थाय स नरो वाञ्छितं लभेत् ॥९॥

इति योगानन्दप्रणीतं देवीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

११५–देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः । न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं परं जाने मास्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥१॥ विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युरितभूत् । तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२॥ पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः । मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥ जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया । तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥ परित्यक्त्वा देवान्विविधविधसेवाकुलतया मया पंचाशीतेरधिकमप-

नीते तु वयसि । इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता निरालम्बो लम्बोदरिजननि कं यामि शरणम् ॥५॥ श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा निरान्तको रङ्को विहरति चिरं कोटिकनकैः । तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं जनः को जनीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥६॥ चिताभस्मलेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारो कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः । कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं भवानि त्वंत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥७॥ न मोक्षस्याकांक्षा न च विभववांछाऽपि च न मे न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छाऽपि न पुनः । अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥८॥ नाराधिताऽसि विधिना विविधोपचारैः किं रूक्षचिंतनपरैर्न कृतं वचोभिः । श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव ॥९॥ आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि । नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥ जगदम्ब विचित्रमत्र किं प्ररिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि । अपराधपराम्परावृतं नहि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥ मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा नहि । एवं ज्ञात्वा महादेवि यथा योग्यं तथा कुरु ॥१२॥

इति श्रीमच्छं० देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

११६-भगवतीपुष्पाञ्जलिस्तोत्रम् ।

श्रीत्रिपुरसुन्दर्यै नमः ॥ भगवती भगवत्पदपङ्कजं भ्रमरभूतसुरासुरसेवितम् ॥ सुजनमानसहंसपरिस्तुतं कमलयाऽमलया निभृतं भजे ॥१॥ ते उभे अभिवन्देऽहं विघ्नेशकुलदैवते ॥ नरनागाननस्त्वेको नरसिंह नमोऽस्तु ते ॥२॥ हरिगुरुपदपद्मं शुद्धपद्येऽनुरागाद्विगतपरपभागे सन्निधायादरेण ॥ तदनुचरि करोमि प्रीतये भक्तिभाजां भगवति पदपद्मे पद्यपुष्पाञ्जलिं ते ॥३॥ केनैते रचिताः कुतो न निहिताः शुम्भादयो दुर्मदाः केनैते तव पालिता इति हि तत् प्रश्ने किमाचक्ष्महे ॥ ब्रह्माद्या अपि शंकिताः स्वविषये यस्याः प्रसादावधि प्रीता सा महिषासुरप्रमथिनी च्छिद्यादवद्यानि मे ॥४॥ पातु श्रीस्तु चतुर्भुजा किमु चतुर्बाहोर्महौजान्भुजान्धत्तेऽष्टादशधा हि कारणगुणान्कार्ये गुणारम्भकाः ॥ सत्यं दिक्पतिदन्तिसंख्यभुजवृच्छम्भुः स्वयम्भूः स्वयं धामैकप्रतिपत्तये किमथवा पातुं दशाष्टौ दिशः ॥५॥ प्रीत्याऽष्टादशसंमितेषु युगपद्द्वीपेषु दातुं वरान् त्रातुं वा भयतो बिभर्षि भगवत्यष्टादशैतान् भुजान् । यद्वाऽष्टादशधा भुजांस्तु बिभृतः काली सरस्वत्युभे मीलित्वैकमिहानयोः प्रथयितुं सा त्वं रमे रक्ष माम् ॥६॥ छन्दः ॥ अयि गिरिनन्दिनि नन्दितमेदिनि विश्वविनो-

दिनी गिरिवरनिध्यशिरोऽधिनिवासिनि विष्णुविलासिनि विष्णुनुते । भगवति हे शितिकंटकुटुम्बिनि भूरिकुटुम्बिनि भूरिकृते जय जय हे महिषासुरमर्दिनि रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥७॥ सुरवरवर्षिणि दुर्धरधर्षिणि दुर्मुखमर्षिणि हर्षरते, त्रिभुवनपोषिणि शंकरतोषिणि किल्बिषमोषिणि घोषरते । दनुजनिरोषिणि दितिसुतरोषिणि दुर्मदशोषिणि सिंधुसुते. जय जय हे० ॥८॥ अयि जगदम्ब मदम्ब कदम्बवनप्रियवासिनि हासरते, शिखरिशिरोमणितुङ्गहिमालयशृङ्गनिजालयमध्यगते । मधु मधुरे मधुकैटभङ्गजिनि कैटभभञ्जिनि रासरते, जय जय हे० ॥९॥ अयि शतखण्डविखण्डितरुण्डवितुण्डितशुण्डगजाधिपते, रिपुगजगंधविदारणचंडपराक्रमशुण्डमृगाधिपते ॥ निजभुजदण्डनिपातितखंडनिपातितमुण्डभटाधिपते, जय जय हे० ॥१०॥ अयि रणदुर्मदशत्रुवधोदितदुर्धरनिर्जरशक्तिभृते, चतुरविचारधुरीणमहाशिवधूतकृतप्रथमाधिपते । दुपितदुरीहदुराशयदुर्मतिदानवदूतकृतांतमते, जय जय हे० ॥११॥ अयि शरणागतवैरिवधूवरवीरवराभयदायिकरे, त्रिभुवनमस्तकशूलविरोधिशिरोधिकृतामलशूलकरे । दुमिदुमितामरदुन्दुभिनादमहो सुखरीकृततिग्मकरे, जय जय हे० ।१२। अयि निजहुंकृतिमात्रनिराकृतधूम्रविलोचनधूम्रशते, स-

मरविशोषितशोणितबीजसमुद्भवशोषितबीजलते । शिव शिव शुम्भनिशुम्भमहाहवतर्पितभूतशाचरते, जय जय हे० ॥१३॥ धनुरनुसंगरणक्षसंगप्ररिस्फुरदङ्गनटत्कटके, कनककपिशंगपृषत्कनिषगंरसद्भटश्शृंगसतावटुके । कृतचतुरंगबलक्षितिरंगघटद्बहुरंगरटद्बटुके, जय जय हे० ॥१४॥ सुरललनाततथेयितथैयितथाभिनयोत्तरनृत्यरते, हासविलासहुलासमयि प्रणतार्तजनेऽमितप्रेमभरे । धिमिकटधिक्कटधिकटधिमिध्वनिघोरमृदंगनिनादरते जय० ॥१५॥ जय जय जप्यजये जयशब्दपरस्तुतिमत्परविश्वनुते, झणझणझिंझिमिझिंकृतनूपुरसिंजितमोहितभूतपते । नटितनटार्धनटीनटनायकनाटितगाट्यसुगानरते, जय जय० ॥१६॥ अयि सुमनःसुमनःसुमनःसुमनः सुमनोहरकान्तियुते, श्रितरजनीरजनीरजनीरजनीरजनीकरवक्त्रवृते । सुनयनविभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमरापते, जय० ॥१७॥ सहितमहाहवमल्लमतल्लिकमल्लितरल्लकमल्लरते, विरचितवल्लिकपल्लिकमझिल्लिकझिल्लिकझिल्लिकवर्गविते । सितकृतफुल्लसमुल्लसितारुणमल्लजपल्लवसल्ललिते. जय जय० ॥१८॥ अविरलगंडगलन्मदमेदुरमत्तमतंगजराजपते, त्रिभुवनभूषणभूतकलानिधिरूपपयोनिधिराजसुते । अयि सुदतीजनलालसमानसमोहनमन्मथराजसुते, जय जय हे० ॥१९॥ कमलदलामलकोमल-

कांतिकलकालितामलभाललते, सकलविलासकलानिलयक्रमकेलिचलत्कलहंसकुले । अलिकुलसंकुलकुवजयमण्डलमौलिमिद्वकुलालिकुले, जय० ॥२०॥ करमुरलीरववीजितकूजितलज्जितकोकिलमंजुमते, मिलितपुलिंदमनोहरगुञ्जितरञ्जितशैलनिकुंजगते । निजगुणभूतमहाशबरीगणसद्‍गुणसंभृतकेलितले, जय० ॥२१॥ कटितटपीतदुकूलविचित्रमयूखतिरस्कृतचंद्ररुचे, प्रणतसुरासुरमौलिमणिस्फुरदंशुकसन्नखचन्द्ररुचे । विजितकनकाचलमौलिपदोर्जितनिर्झरकुञ्जरकुम्भकुचे, जय० ॥२२॥ विजितसहस्रकरैकसहस्रकरैकसहस्रकरैकनुते, कृतसुरतारकसंगरतारकसूनुसुते । सुरथसमाधिसमानसमाधिसमाधिसमाधिसुजातरते, जय जय० ॥२३॥ पदकमलं करुणानिलये वरिवस्यति योऽनुदिनं स शिवे, अयि कमले कमलानिलये कमलानिलयः स कथं न भवेत् । तव पदमेव परंपदमेमनुशीलयतो मम किं न शिवे, जय० ।२४। कनकलसत्कलसिंधुजलैरनुसिञ्चिजुते गुणरंगभुवं, भजति स किं न शचीकुचकुम्भतटोपरिरम्भसुखानुभवम् । तव चरणं शरणं करवाणि नतामरवाणिनिवासि शिवे, जय० ॥२५॥ तव विमलेंदुकुलं वदनेन्दुमल सकलं ननु कूलयते, किमु पुरुहूतपुरींदुमुखीसुमुखीभिरसौ विमुखीक्रियते । मम तु मतं शिवनामधने भवती कृपया

किमुत क्रियते, जय० ॥२६॥ अयि मयि दीनदयालुतया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे, अयि जगतो जननी कृपया-ऽसि यथाऽसि तथाऽनुमितासि रते। यदुचितमत्र भव-त्युररीकुरुतादुरुतापमपाकुरुते, जय० ॥२७॥ स्तुतिमि-तस्तिमितः सुसमाधिना नियमतोऽयमतोऽनुदिनं पठेत्। परमया रमयापि निषेव्यते परिजनोऽरिजनोऽपि च तं भजेत् ॥२८॥ रम्यातिं किल कर्षस्तेषु चित्तं नराणाम-वरजवरयस्माद्रामकृष्णः कवीनाम्। अकृत सुकृतगम्यं रम्यपद्यैकहर्म्यं स्तवनमवनहेतुं प्रीतये विश्वमातुः ।२९। इन्दुरम्यो मुहुर्बिन्दुरम्यो मुहुर्बिन्दुरम्यो यतः सोऽनवद्यः स्मृतः। श्रीपतेः सूनुना कारितो योऽधुना विश्वमातुः पदे पद्यपुष्पाञ्जलिः ॥३०॥

११७–देव्यष्टकम्।

महादेवीं महाशक्तिं भवानीं भववल्लभाम्। भवार्ति-भञ्जनकारीं वन्दे त्वां लोकमातरम् ।१। भक्तप्रियां भक्ति-गम्यां भक्तानां कीर्तिवर्धिकाम्। भवप्रियां सतीं देवीं वन्दे त्वां भक्तवत्सलाम् ।२। अन्नपूर्णां सदापूर्णां पार्वतीं पर्वपू-जिताम्। महेश्वरीं वृषारूढां वन्दे त्वां परमेश्वरीम् ।३। कालरात्रिं मोहरात्रिं महारात्रिं जनेश्वरीम्। शिवकान्तां शम्भुशक्तिं वन्दे त्वां जननीमुमाम् ।।४।। जगत्कर्त्रीं ज-जगद्धात्रीं जगत्संहारकारिणीम्। मुनिभिः संस्तुतां भद्रां

वन्दे त्वाँ मोक्षदायिनीम् ॥५॥ देवदुलःखहरामम्बां सदा देवसहायकाम् । मुनिदेवैः सदा सेव्यां वन्दे त्वां देवपूजिताम् ॥६॥ त्रिनेत्रां शङ्करीं गौरी भोममोक्षप्रदां शिवाम् । महामायां जगद्वीजां बन्दे त्वां जगदीश्वरीम् ॥७॥ शरणागतजीवानां सर्वदुःख-विनाशिनीम् । सुखसम्पत्कारीं नित्यां वन्दे त्वां प्रकृति पराम् ॥८॥ देव्यष्टकमिदं पुण्यं योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेद् भक्तिभावेन लभते स पयं सुखम् ॥९॥

११८-देवीषट्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः । अम्ब शशिबिम्बवदने कम्बुग्रीवे कठोरकुचकुम्भे । अम्बरसमानमध्ये शम्बरपिवैर देवि मां पाहि ॥१॥ कुन्दमुकुलाग्रदन्तां कुंकुमपङ्केन लिप्तकुचभाराम् । आनीलनोलदेहामम्बामखिलाण्डनायकीं वन्दे ॥२॥ सरिगमपधनिसतान्तां वीणासंक्रान्तचारुहस्तां ताम् । शान्तां मृदुलस्वान्तां कुचभरतान्तां नमामि शिवकान्ताम् ॥३॥ अरटततटघटितजूटीताडिततालीकपालताटंकाम् । वीणावादनलाकम्पितशिरसं नमामि मातङ्गीम् ॥४॥ वीणारसानुषंगं विकचमदामोदमाधुरीभृंगम् । करुणापूरितरंगं कलये मातंगकन्यकापांगम् ॥५॥ दयमानदीर्घनयनां देशिकरूपेण दर्शिताभ्युदयाम् । वामकुचनिहित्वीणां वरदां संगीतमातृकां वन्दे ॥६॥

माणिक्यबीणामुपलालयन्तीं मदालसां मंजुलवाग्विला-
सान्। माहेन्द्रनीलद्युतिकोमलांगीं मातंगकन्यां मनसा
स्मरामि ॥७॥

इति श्रीकालिकापुराणोक्तं देवीषट्कं समाप्तम्।

११९-सङ्कटानामाष्टकम्।

श्रीगणेशाय नमः॥ नारद उवाच। जैगीषव्य मुनिश्रेष्ठ सर्वज्ञ सुखदायक। आख्यातानि सुपुण्यानि श्रुतानि त्वत्प्रसादतः॥१॥ न तृप्तिमधिगच्छामि तव वागमृतेन च। वदस्वैकं महाभाग संकटाख्यानमुत्तमम्॥२॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा जैगीषव्योऽब्रवीत्ततः। संकष्टनाशनं स्तोत्रं शृणु देवर्षिसत्तम॥३॥ द्वापरे तु पुरा वृत्ते भ्रष्टराज्यो युद्धिष्ठिरः। भ्रातृभिः सहितो राज्यनिर्वेदं परमं गतः॥४॥ तदानीं तु ततः काशीं पुरीं यातो महामुनिः। मार्कंडेय इति ख्यातः सह शिष्यैर्महायशाः॥५॥ तं दृष्ट्वा स समुत्थाय प्रणिपत्य सुपूजितः। किमर्थं म्लानवदन एतत्वं मां निवेदय॥६॥ युधिष्ठिर उवाच। संकष्टं मे महत्प्राप्तमेतादृग्वदनं ततः। एतन्निवारणोपायं किंचिद्ब्रूहि मुने मम॥७॥ मार्कण्डेय उवाच। आनन्दकानने देवी संकटा नाम विश्रुता। वीरेश्वरोत्तमे भागे पूर्वं चन्द्रेश्वरस्य च॥८॥ शृणु नामाष्टक तस्याः सर्वसिद्धिकरं नृणाम्। संकटा प्रथमं नाम

द्वितीयं विजया तथा ॥९॥ तृतीयं कामदा प्रोक्ता चतुर्थं दुःखहारिणी । शर्वाणी पञ्चमं नाम षष्ठं कात्यायनी तथा ॥१०॥ सप्तमं भीमनयना सर्वरोगहराऽष्टमम् । नामाष्टकमिदं पुण्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयाऽन्वितः ॥११॥ यः पठेत्पाठयेद्वापि नरो मुच्यते संकटात् । इत्युक्त्वा तु द्विजश्रेष्ठमृषिर्वाराणसीं ययौ ॥१२॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा नारदो हर्षनिर्भरः । ततः सम्पूजितां देवीं वीरेश्वरसमन्विताम् ॥१३॥ भुजैस्तु दशभिर्युक्तां लोचनत्रयभूषिताम् । मालाकमंडलुयुतां पद्मशंखगदायुताम् ॥१४॥ त्रिशूलडमरूधरां खड्गचर्मविभूषिताम् । वरदाभयहस्तां तां प्रणम्य विधिनंदनः ॥१५॥ वारत्रयं गृहीत्वा तु ततो विष्णुपुरं ययौ । एतत्स्तोत्रस्य पठनं पुत्रपौत्रविवर्धनम् ॥१६॥ संकष्टनाशनं चैव त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् । गोपनीयं प्रयत्नेन महावंध्याप्रसूतिकृत् ॥१७॥

इति श्रीपद्मपुराणे सङ्कटानामाष्टकं संपूर्णम् ।

१२०–महालक्ष्म्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इन्द्र उवाच । नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते । शंखचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥१॥ नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयंकरि । सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मि न० ॥२॥ सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्टभयंकरि । सर्वदुःखहरे देवि महालक्ष्मि न० ॥३॥

सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनि । मन्त्रमूर्ते सदा देवि महालक्ष्मि न० ॥४॥ अद्यन्तरहिते देवि आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्ति महेश्वरि । योगजे योगसंभूते महालक्ष्मि न० ।५। स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ति महोदरे । महापापहरे देवि महालक्ष्मि न० ।६। पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणि । परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मि न० ।७। श्वेताम्बरधरे देवि नानालंकारभूषिते । जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि न० ।८। महालक्ष्म्यष्टकस्तोत्रं यः पठेद्भक्तिमान्नरः । सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यं प्राप्नोति सर्वदा ॥९॥ एककाले पठेन्नित्यं महापापविनाशनम् । द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्यसमन्वितः ॥१०॥ त्रिकालं यः पठेन्नित्यं महाशत्रुविनाशनम् । महालक्ष्मी भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा ॥११॥

इतीन्द्रकृतं महालक्ष्म्यष्टकं सम्पूर्णम् ।

१२१-अम्बाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चेटीभवन्निखिलखेटीकदम्बतरुवाटीषु नाकिपटलीकोटीचारुतरकोटी मणिकिरणकोटी करम्बितपदा । पाटीरगन्धकुचशाटीकवित्वपरिपाटीनगाधिपसुता घोटी कुलादधिकघाटीमुदारमुखवीटीरसेन तनुताम् ॥१॥ कूलातिगामिभयतूलावलिज्वलनशीला निजस्तुतिविधाकोलाहलक्षपितकालामरी कुशलकोलाल-

पीणघनभाः स्थूला कुचे जलदनीला कचे कलितलीला कदम्बविपिने शूलायुधप्रणतिशीला विभातु हृदि शैलाधिराजतनया ॥२॥ यत्राशयो लगति तत्रागजा वसतु कुत्रापि निस्तुलशुका सुत्रामकालमुखसंत्राशनप्रकरसूत्राणकारिचरणा । छत्रानिलातिरयपत्राभिरामगुणमित्रामरीसमवधूः कुत्रासहन्मणिविचित्राकृतिः स्फुरितपुत्रादिदाननिपुणा ॥३॥ द्वैपायनप्रभृतिशापायुधात्रिदेवसोपानधूलिचरणा पापापहस्वमनुजापानुलीनजनतापापनोदनिपुणा । नीपालया सुरभिभूपालका दुरितकूपादुदञ्चयतु मां रूपाधिका शिखरिभूपालवंशमणिदीपायिता भगवती ॥४॥ यालीभिरात्मतनुतालो सकृत्प्रियकपालीषु खेलति भयव्यालीनकुल्यसितचूलिभरा चरणधूलीलसन्मुनिवरा । बालीभृति श्रवसि तालिदलं वहति यालीकशोभितिलका सालीकरोतु मम काली मनः स्वपदनालीकसेवनविधौ ॥५॥ न्यङ्कुकारे वपुषि कङ्कादिरक्तपुषि कङ्कादिपक्षिविषये त्वं कामनामयसि किं कारणं हृदयपङ्कारिमेहि गिरिजाम् । शङ्काशिलानिशितटङ्कायमानपदसंकाशमानसुमनोझंकारिमानततिमंकानुपेतशशिवक्त्रकमलम् ।६। कुम्भावतीसमविडम्बा गलेन नवतुंबाभवीणासविधा शं बाहुलेयशशिबिम्बाभिराममुखसंबाधितस्तनभरा । अम्बाकुरंगमदजम्बालरोचिरिह लम्बालका दिशतु मे बिम्बा-

धरा विनतशम्बायुधादिनकुरम्बा कदम्बविपिने ॥७॥
इन्धानकीरमणिबन्धा भवे हृदयबन्धावतीवरसिका सं-
धावती भुवनसन्धारणेऽप्यमृतसिन्धावुदारनिलया ॥ ग-
न्धानुमानमुहुरन्धालिवीतकचबन्धा समर्पयतु मे शं धाम
भानुमपि संधानमाशु पदसंधानमप्यगसुता ॥८॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितमम्बाष्टकं समाप्तम् ।

१२२-भगवत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमोऽस्तु ते सरस्वति त्रिशूल-
चक्रधारिणि सितांबरावृते शुभे मृगेन्द्रपीठसंस्थिते ॥
सुवर्णबंधुराधरे सुझल्लरीशिरोरुहे सुवर्णपद्मभूषिते नमो-
ऽस्तु ते महेश्वरि ॥१॥ पितामहादिभिर्नुते स्वकांतिलुप्त-
चंद्रभे सुरत्नमालयावृते भवाब्धिकष्टहारिणि ॥ तमाल-
हस्तमंडिते तमालभालशोभिते गिरामगोचरे इले नमो-
ऽस्तु ते महेश्वरि ॥ २ ॥ स्वभक्तवत्सलेऽनघे सदाऽपवर्ग-
भोगदे दरिद्रदुःखहारिणि त्रिलोकशंकरीश्वरि ॥ भवानि
भीम अंबिके प्रचंडतेजसोज्ज्वले भुजाकलापमंडिते न-
मोऽस्तु ते महेश्वरि ॥३॥ प्रसन्नभीतिनाशिके प्रसूनमा-
ल्यकंधरे धियस्तमोनिवारिके विशुद्धबुद्धिकारिके ॥
सुरार्चितांघ्रिपंकजे प्रचंडविक्रमेऽक्षरे विशालपद्मलोचने
नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥४॥ हतस्त्वया स दैत्यधूम्रलो-
चनो यदा रणे तदा प्रसूनवृष्टयस्त्रिविष्टपे सुरैः कृताः ॥

निरीक्ष्य तत्र ते प्रभामलज्जत प्रभाकरस्त्वघे सुधाकरे ध्रुवे नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥ ५ ॥ ननाद केसरी यदा चचाल मेदिनी तदा जगाम दैत्यनायकः स्वसेनया द्रुतं भिया ॥ सकोपकंपदच्छदे सचंडमुण्डघातिके मृगेंद्रनाद-नादिते नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥६॥ कुचंदनार्दितालके सितोष्णवारणाधरे सबर्करानने वरे निशुम्भशुम्भमर्दि-के ॥ प्रसीद चंडिके अजे समस्तदोषघातिके शुभामति-प्रदे चले नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥ ७ ॥ त्वमेव विश्व-धारिणी त्वमेव विश्वकारिणी त्वमेव सर्वहारिणी न गम्यसेऽजितात्मभिः ॥ दिवौकसां हिते रता करोषि दैत्यनाशनं शताक्षि रक्तदंतिके नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥८॥ पठंति ये समाहितं इमं स्तवं सदा नरा अनन्य-भक्तिसंयुता अहर्मुखेऽनुवासरम् ॥ भवन्ति ते तु पंडिताः सुपुत्रधान्यसंयुताः कलत्रभूतिसंयुता व्रजंति चामृतं सु-खम् ॥ ९ ॥

इति अम·दासविविरचित भगवत्यष्टकं समाप्तम् ।

१२३-भवानीस्तवनाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सकलसेवकमानसमोदिनी भ-जकसङ्कटसङ्गविनाशिनी ॥ तिलकनामवने सुविलासिनी अवतु मां जगतां जननी सदा ।१। हरसुरेशरमेशपूजिता मुनिजनेशधनेशनमस्कृता ॥ तव भवानि भजे कुलदेवते

त्रिपुरसुन्दरि देवि पदाम्बुजम् ॥२॥ तव पदाम्बुजमर्चयतोऽनिशं अतिगतानि बहूनि दिनानि मे ॥ नहि मनागुदियाय दया मयि अहह देवि मनस्तव दारुणम् ॥३॥ अशनमागलमन्नमथो गृहं सुवसनं न च निःस्वतयाऽस्ति मे ॥ अयि दयार्द्रदृशा मम दीनतां अपनयाशु कुशेशयसंश्रये ॥४॥ अशुचितो यदि मां दयसे न चेत् कुत इयं सुविराजति ते गले ॥ नरशिरोरचिता किल मालिका किमिति निर्दयसे मयि दुर्विधे ॥५॥ निपतितः खलु संसृतिसारे तरणिभिर्नितरामपि दुस्तरे ॥ त्रिविधतापझषैश्च भयङ्करे अयि समुद्धर मां तव किंकरम् ॥६॥ निखिलभारतवर्तिजनोऽधुना अशनदुर्लभतः परिशोचति । करुणयाऽऽर्द्रदृशाऽऽशु विलोक्य तं जगदिदं जगदम्ब सुखीकुरु ॥७॥ अहिपतिर्न सहस्ररसनया तव गुणानुपवर्णयितुं क्षमः ॥ कथमहाप्रभवेयमहं नरो मितमतिर्बत भूसुरबालकः ॥८॥

इति श्रीभवानीस्तवनाष्टकं समाप्तम् ।

१२४-ताराष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मातर्नीलसरस्वति प्रणमतां सौभाग्यसम्पत्प्रदे प्रत्यालीढपदस्थिते शिवहृदि स्मेराननाम्भोरुहे ॥ फुल्लेन्दीवरलोचनत्रययुते कर्त्री कपालोत्पले खड्गं चादधती त्वमेव शरणं त्वामीश्वरीमाश्रये

।।१।। वाचामीश्वरि भक्तकल्पलतिके सर्वार्थसिद्धिप्रदे गद्यप्राकृतपद्यजातरचना सर्वत्र सिद्धिप्रदे ।। नीलन्दीवर-लोचनत्रययुते कारुण्यवारां निधे सौभाग्यमृतवर्षणेन कृपया सिञ्च त्वमस्मादृशम् ।।२।। शर्वे गर्वसमूहपूरिततनो सर्पादिवेषोज्ज्वले व्याघ्रत्वक्परिवीतसुंदरकटिव्याधूत-खंटाङ्किते ।। सद्यः कृत्तगलद्रजःपरिमिलन्मुंडद्वयीमूर्धज-ग्रंथिश्रेणिनृमुंडदामललिते भीमे भयं नाशय ।। ३ ।। मायानंगविकाररूपललनाबिन्द्वर्धचंद्रात्मिके हुंफट्कार-मयि त्वमेव शरणं मंत्रात्मिके मादृशः ।। मूर्तिस्ते जननि त्रिधामघटिता स्थूलाऽतिसूक्ष्मा परा विदानां न हि गोचरा कथमपि प्राप्तां तु तामाश्रये ।।४।। त्वत्पादांबुजसेवया सुयमिनो गच्छंति सायुज्यतां तस्य स्त्री परमेश्वरी त्रिनयनब्रह्मादिसाम्यात्मनः ।। संसारांबुधिमज्जने पटुतनून्देवेंद्रमुख्यान्सुरान्मातस्त्वत्पदसेवने हि विमुखो यो मंदधीः सेवते ।।५।। मातस्त्वत्पदपंकजद्वयरजोमुद्रांककोटीरिणस्ते देवा जयसंगरे विजयिनो निःशंकमंके गताः ।। देवोऽहं भुवने न मे सम इति स्पर्धां वहंतः परे तत्तुल्यं नियतं यथाऽसुभिरमी नाशं व्रजंति स्वयम् ।। ६ ।। त्वन्नामस्मरणात्पलायनपरा द्रष्टुं च शक्ता न ते भूत-प्रेतपिशाचराक्षसगणा यक्षाश्चा नागाधिपाः ।। दैत्या दानवपुंगवाश्च खचरा व्याघ्रादिका जंतवो डाकिन्यः

कुपितांतकाश्च मनुजं मातः क्षणं भूतले ॥७॥ लक्ष्मीः सिद्धगणाश्च पादुकमुखाः सिद्धास्तथा चारणाः स्तम्भश्चापि रणांगणे गजघटास्तंभस्तथा मोहनम् ॥ मातस्त्वत्पदसेवता खलु नृणां सिद्ध्यन्ति ते ते गुणा कांतिः कांतमनोभवस्य भवति क्षुद्रोऽपि वाचस्पतिः ॥८॥ ताराष्टकमिदं रम्यं भक्तिमान् यः पठेन्नरः। प्रातर्मध्याह्नकाले च सायाह्ने नियतः शुचिः ॥९॥ लभते कवितां दिव्यां सर्वशास्त्रार्थविद्भवेत् ॥ लक्ष्मीमनश्वरां प्राप्य भुक्त्वा भोगान् यथेप्सितान् ॥ १० ॥ कीर्तिं कांतिं च नैरुज्यं सर्वेषां प्रियतां व्रजेत् ॥ विख्यातिं चापि लोकेषु प्राप्यांते मोक्षमाप्नुयात् ॥११॥

इति नीलतन्त्रे ताराष्टकं सम्पूर्णम् ।

१२५-शीतलाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः ॥ अनुष्टुप् छन्दः ॥ शीतला देवता ॥ लक्ष्मी बीजम् ॥ भवानी शक्तिः ॥ सर्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः ॥ ईश्वर उवाच ॥ वंदेऽहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ॥ मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालंकृतमस्तकाम् ॥१॥ वंदेऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ॥ यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥२॥ शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः ॥ वि-

स्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य प्रणश्यति ॥३॥ यस्त्वा-मुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः ॥ विस्फोटभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥४॥ शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगंध-युतस्य च ॥ प्रणष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जीवनौषधम् ॥५॥ शीतले तनुजान्रोगान्नृणां हरसि दुस्त्यजान् ॥ विस्फोटकविदीर्णानां त्वमेकाऽमृतवर्षिणी ॥६॥ गलगंड-ग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् । त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यांति संक्षयम् ॥७॥ न मन्त्रो नौषधं तस्य पाप-रोगस्य विद्यते ॥ त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्या-मि देवताम् ॥८॥ मृणालतंतुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थि-ताम् ॥ यस्त्वां संचिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥९॥ अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः प्रपठेत्सदा ॥ विस्फोटक-भयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥१०॥ श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः ॥ उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्य-यनं महत् ॥११॥ शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता ॥ शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः ॥ १२ ॥ रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाख नंदनः ॥ शीतलावाहन श्चेव दूर्वाकंदनिकुंतनः ॥१३॥ एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत् ॥ तस्य गेहे शिशूनां च शीतलारुङ् न जायते ।१४। शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्य कस्यचित् ॥ दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धा-भक्तियुताय वै ॥१५॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे शीतलाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१२६–अन्नपूर्णाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नित्यानंदकरी वराभयकरी सौन्दर्यरत्नाकरी निर्धूताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी ॥ प्रलेयाचलवंशपावनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपावलंबनकरी मातान्नपूर्णेश्वरी ॥ १ ॥ नानारत्नविचित्रभूषणकरी हेमांबराडंबरी मुक्ताहारविलंबमानविलसद्वक्षोजकुम्भान्तरी ॥ काश्मीरागुरुवासिताङ्गरुचिकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥२॥ योगानन्दकरी रिपुक्षयकरी धर्मार्थनिष्ठाकरी चन्द्रार्कानलभासमानलहरी त्रैलोक्यरक्षाकरी ॥ सर्वैश्वर्यसमस्तवाञ्छितकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥३॥ कैलासाचलकन्दरालयकरी गौरी उमा शंकरी कौमारी निगमार्थगोचरकरी ओंकारबीजाक्षरी ॥ मोक्षद्वारकपाटपाटनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥४॥ दृश्यादृश्यप्रभूतपावनकरी ब्रह्माण्डभाण्डोदरी लीलानाटकसूत्रभेदनकरी विज्ञानदीपाङ्करी ॥ श्रीविश्वेशमनःप्रसादनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी मातान्नपूर्णेश्वरी ॥५॥ उर्वी सर्वजनेश्वरी भगवती मातान्नपूर्णेश्वरी वेणीनीलसमानकुन्तलहरी नित्यान्नदानेश्वरी ॥ सर्वानन्दकरी दशां शुभकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥६॥ आदिक्षान्ति-

समस्मवर्णनकरी शम्भोस्त्रिभावाकारी काश्मीरा त्रिजलेश्वरी त्रिलहरी नित्याङ्कुरा शर्वरी ॥ कामाकांक्षकरी जनोदयकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ।७। देवी सर्वविचित्ररत्नरचिता दाक्षायणी सुन्दरी वामं स्वादुपयोधरप्रियकरी सौभाग्यमाहेश्वरी ॥ भक्ताभीष्टकरी दशाशुभकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥८॥ चन्द्रार्कानलकोटिकोटिसदृशा चन्द्रांशुबिम्बाधरी चन्द्रार्काग्निसमानकुन्तलधरी चन्द्रार्कवर्णेश्वरी ॥ मालापुस्तकपाशसाङ्कुशधरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥ ९ ॥ क्षत्रत्राणकरी महाऽभयकरी माता कृपासागरी साक्षान्मोक्षकरी सदा शिवकरी विश्वेश्वरी श्रीधरी ॥ दक्षाक्रन्दकरी निरामयकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपा० ॥१०॥ अन्नपूर्णे सदापूर्णे शङ्करप्राणवल्लभे ॥ ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि च पार्वति ॥११॥ माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः ॥ बान्धवाः शिवभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥ १२ ॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितअन्नपूर्णाष्टस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१२७–वाराह्यनुग्रहाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ईश्वर उवाच ॥ मातर्जगद्रचननाटकसूत्रधारः सद्रूपमाकलयितुं परमार्थतोऽयम् ॥

ईशोऽप्यनीश्वरपदं समुपैति तादृक्कोऽन्यः स्तवं किमिव तावकमादधातुम् ।। १ ।। नमामि किं नु गुणतस्तव लोकतुण्डे नाडम्बरं स्पृशति दण्डधरस्य दण्डः ।। यल्लेशलम्बितभवाम्बुनिधिर्यतो यत्वन्नामसंस्मृतिरियं ननु नः स्तुतिस्ते ।।२।। त्वच्चिन्तनादरसमुल्लसदप्रमेयानन्दोदयात्समुदितः स्फुटरोमहर्षः ।। मातर्नमामि सुदिनानि सदेत्यमुं त्वामभ्यर्थयेऽर्थमिति पूरयताद्दयालो ।। ३ ।। इन्द्रेन्दुमौलिविधिकेशवमौलिरत्नरोचिश्चयोज्ज्वलितपादसरोजयुग्मे ।। चेतो मतौ मम सदा प्रतिबिम्बितं त्वं भूया भवानि विदधातु सहोरुहारे ।।४।। लीलोद्धृतिक्षितितलस्य वराहमूर्तेर्वाराहमूर्तिरखिलार्थकरी त्वमेव ।। प्रालेयरश्मिसुकलोल्लसितावतंमा त्वं देवि वामतनुभागहरा हरस्य ।।५।। त्वामम्ब तप्तकनकोज्ज्वलकान्तिमन्तर्ये चिन्तयन्ति युवतीतनुमागलान्ताम् ।। चक्रायुधत्रिनयनाम्बरपोतृवक्त्रां तेषां पदाम्बुजयुगं प्रणमन्ति देवाः ।।६।। त्वत्सेवनस्खलितपापचयस्य मातर्मोक्षोऽपि यत्र न सतां गणनामुपैति ।। देवासुरोरगनृपालनमस्यपादस्तत्र श्रियः पटुगिरः कियदेवमस्तु ।।७।। किं दुष्करं त्वयि मनोविषयं गतायां किं दुर्लभं त्वयि विधानवदर्चितायाम् । किं दुष्करं त्वयि सकृत्स्मृतिमागतायां किं दुर्जयं त्वयि कृतस्तुतिवादपुंसाम् ।।८।।

१२८-वाराहीनिग्रहाष्टकम् ।

श्री गणेशाय नमः ॥ देवि क्रोडमुखि त्वदंघ्रिकमलद्वन्द्वनुरक्तात्मने मह्यं द्रुह्यति यो महेशि मनसा कायेन वाचा नरः । तस्याशु त्वदयोग्रनिष्ठुरहलाघातप्रभूतव्यथापर्यस्तन्मनसो भवन्तु वपुषः प्राणाः प्रयाणोन्मुखाः ॥१॥ देवि त्वत्पदपद्मभक्तिविभवप्रक्षीणदुष्कर्मणि प्रादुर्भूतनृशंसभावमलिनां वृत्तिं विधत्ते मयि । यो देही भुवने तदीयहृदयान्निर्मत्वरैर्लोहितैः सद्यः पूरयसे कराब्जचषकं वाञ्छाफलैर्मामपि ॥२॥ चण्डोत्तुण्डविदीर्णदुष्टहृदयप्रोद्भिन्नरक्तच्छटाहालापानमहाट्टहासनिनदाटोपप्रतापोत्कटम् । मातर्मत्परिपंथिनामपहृतैः प्राणैस्त्वदंघ्रिद्वयं ध्यानोद्दामरवैर्भवोदयवशात्सन्तर्पयामि क्षणात् ॥३॥ श्यामां तामरसाननांघ्रिनयनां सोमार्धचूडां जगत्त्राणव्यग्रहलायुधाग्रमुसलां संत्रासमुद्रावतीम् । ये त्वां रक्तकपालिनीं हरवरारोहे वराहाननां भावैः सन्दधते कथं क्षणमपि प्राणन्ति तेषां द्विषः ॥४॥ विश्वाधीश्वरवल्लभे विजयसे या त्वं नियन्त्रात्मिका भूतान्ता पुरुषायुषावधिकरी पाकप्रदा कर्मणाम् । त्वां याचे भवतीं किमप्यवितथं को मद्विरोधी जनस्तस्यायुर्मम वाञ्छितावधि भवेन्मातस्तवैवाज्ञया ॥५॥ मातः सम्यगुपासितुं जडमतिस्त्वां नैव शक्नोम्यहं यद्यप्यन्वितदैशिकांघ्रिकम-

लानुक्रोशपात्रस्य मे । जन्तुः कश्चन चिन्तयत्यकुशलं य-
स्तस्य तद्वैशसं भूयाद्देवि विरोधिनो मम च ते श्रेयः
पदामङ्गिनः ॥६॥ वाराहि व्यथमानमानसगलत्सौख्य
तदाशावलिं सीदन्तं यमपाकृताध्यवसितं प्राप्ताखिलो-
त्पादितम् । क्रन्दद्बन्धुजनैः कलङ्कितकुलं कण्ठव्रणोद्य-
त्कृमिं पश्यामि प्रतिपक्षमाशु पतितं भ्रान्तं लुठन्तं मुहुः
॥७॥ वाराहि त्वमशेषजन्तुषु पुनः प्राणात्मिका स्पन्दसे
शक्तिव्याप्तचराचरा खलु यतस्त्वामेतदभ्यर्थये । त्वत्पा-
दाम्बुजसङ्गिनो मम सकृत्पापं चिकीर्षन्ति ये तेषां मा
कुरु शङ्करप्रियतमे देहान्तरावस्थितिम् ॥८॥

१२६-गायत्रीस्तोत्रम् । (१)

श्रीनारद उवाच ॥ भक्तानुकम्पिन् सर्वत्र हृदयं
पापनाशनम् । गायत्र्याः कथितं यस्माद्गायत्र्याः स्तोत्र-
मीरय ॥१॥ श्रीनारायण उवाच ॥ आदिशक्ते जगन्मा-
तर्भक्तानुग्रहकारिणि । सर्वत्र व्यापिकेऽनन्ते श्रीसंध्ये ते
नमोऽस्तु ते ॥२॥ त्वमेव सन्ध्या गायत्री सावित्री च
सरस्वती । ब्राह्मी च वैष्णवी रौद्री रक्ता श्वेता सितेत-
रा ॥३॥ प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था भवेत्पुनः ।
वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सदा ॥४॥ हंस-
स्थाना गरुडारूढा तथा वृषभवाहिनी । ऋग्वेदाध्यायिनी
भूमौ दृश्यते या तपस्विभिः ॥५॥ यजुर्वेदं पठन्ती च

अन्तरिक्षे विराजते । सा सामगापि सर्वेषु भ्राम्यमाणा तथा भुवि ॥६॥ रुद्रलोकं गता त्वं हि विष्णुलोकनिवासिनी । त्वमेव ब्रह्मणो लोकेऽमर्त्यानुग्रहकारिणी ॥७॥ सप्तर्षिप्रीतिजननी माया बहुवरप्रदा । शिवयोः करनेत्रोत्था ह्यश्रुस्वेदसमुद्भवा ॥८॥ आनन्दजननी दुर्गा दशधा परिपठ्यते । वरेण्या वरदा चैव वरिष्ठा वरवर्णिनी ।९। गरिष्ठा च वराहा च वरारोहाश्च सप्तमी । नीलगंगा तथा संध्यासर्वदा भोगमोक्षदा ।१०। भागीरथी मर्त्यलोके पाताले भोगवत्यपि । त्रिलोकवाहिनी देवी स्थानत्रयनिवासिनी ॥११॥ भूर्लोकस्था त्वमेवासि धरित्री लोकधारिणी । भुवो लोके वायुशक्तिः स्वर्लोके तेजसां निधिः ॥१२॥ महर्लोके महासिद्धिर्जनलोकेऽजनेत्यपि । तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥१३॥ कमला विष्णुलोके च गायत्री ब्रह्मलोकदा । रुद्रलोके स्थिता गौरी हरार्धांगनिवासिनी ॥१४॥ अहमो महतश्चैव प्रकृतिस्त्वं हि गीयसे । साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपिणी ॥१५॥ ततः परा परा शक्तिः परमा त्वं हि गीयसे । इच्छाशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिस्त्रिशक्तिदा ।१६। गंगा च यमुना चैव विपाशा च सरस्वती । सरयूर्देविका सिंधुर्नर्मदैरावती तथा ॥१७॥ गोदावरी शतद्रुश्च कावेरी देवलोकगा । कौशिकी चन्द्रभागा च बितस्ता च सर-

स्वती ।१८। गण्डकी तापिनी तोया गोमती वेत्रवत्यपि । इडा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ।१९। गांधारी हस्तिजिह्वा च । पूषाऽपूषा चथैव च अलम्बुषा कुहूश्चैव शंखिनी प्राणवाहिनी ।२०। नाड़ो च त्वं शरीरस्था गीयसे प्राक्तनैर्बधैः । हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्था स्वप्न-नायिका ।।२१।। तालुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिंदु-मालिनी । मूले तु कुण्डलीशक्तिर्व्यापिनी केशमूलगा ।।२२।। शिखामध्यासना त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मानी । मिन्यद्बहुनोक्तेन यत्किंचिज्जगतीत्रये ।।२३।। तत्सर्वं त्वं महादेवि श्रिये संध्ये नमोऽस्तु ते । इतीदं कीर्तितं स्तोत्रं संध्यायां बहुपुण्यदम् ।२४। महापापप्रशमनं महासिद्धि-विधायकम् । य इदं कीर्तयेत् स्तोत्रं संध्याकाले समा-हितः ।२५। अपुत्रः प्राप्नुयात्पुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात् । सर्वतीर्थतपोदानयज्ञयोगफलं लभेत् ।।२६।। भोगान्भु-क्त्वा चिरं कालमन्ते मोक्षमवाप्नुयात् । तपस्वभिः कृतं स्तोत्रं स्नानकाले तु यः पठेत् ।।२७।। यत्र कुत्र जले मग्नः संध्यामज्जनजं फलम् ।। लभते नात्र सन्देहः सत्यं सत्यं च नारद ।।२८।। शृणुयाद्योऽपि तद्भक्त्या स तु पापात्प्रमुच्यते । पीयूषसदृशं वाक्यं संध्योक्तं नारदेरि-तम् ।।२९।।

१३०-गायत्रीस्तोत्रम् । (२)

श्रीगणेशाय नमः ।। यस्मिन्दृष्टे नैव दृश्येत विश्वं यस्मिंल्लब्धे नैव लब्धव्यशेषः । यस्मिन् ज्ञाते नैव वेद्यांतराशा गायत्र्यर्थं पञ्चवक्त्रं प्रपद्ये ।।१।। का गायत्रीनामधेयं महार्थं सार्थं केतुं संप्रविष्टोपनाये । मार्गे मन्त्रान् सर्वतो दर्शयित्वा तारे लीना सर्ववेदार्थदीपे ।२। श्रोतव्यं मे वाक्यमेतत्समस्तैर्वर्णैर्भाव्यं स्वाश्रमप्राप्तचिह्नैः । तेभ्यस्तुष्येच्छंकरः श्रीहरिर्वा प्रष्टव्यो वः श्रीगुरुः स्वैर्विनीतैः ।।३।। गायत्री चेत्सम्यगाप्ता क्रमेण सा संजप्ता कर्मशुद्ध्या द्विजेन । सा विज्ञाता गोपिता संप्रदायात्किं नो दद्याद्वेदमाता मता चेत् ।।४।। बुद्धावीशारोहणं कर्म तस्याः सा चेत्यक्ता त्यक्त ईशो द्विजेन । यस्यां सर्वा देवताः संप्रविष्टाः सर्वात्मानं मन्त्रराजं प्रपद्ये ।।५।। विष्णुः शम्भुर्भास्करो विघ्नराजो या वा का वा देवताऽस्या विभूतिः । सैकोपास्या वेदमार्गैकनिष्ठैः क्षीराब्धौ किं दुग्धभिक्षाप्रयासः ।।६।। नेयं लभ्या मानुषाणां झषाणां गङ्गाशब्दो मानुषत्वैकहेतुः । यस्या लब्ध्यै वैदिकाग्रेसराणां वंशे वेदैः संस्कृते जन्महेतुः ।।७।। मंत्रैः किं तैस्तैः प्रतीक्ष्येत देवी गायत्र्येवा संप्रवेष्टुं द्विजेषु । देवैः किं तैरग्निना पुष्टिमद्भिस्तस्माद्भस्मोद्भूषितैः सा निषेव्या ।।८।। दत्तं भस्म श्रीत्रिपादाम्बयैतल्लब्धं

घ्रोरग्नेः शेषरूपं स्वरूपम् । तस्माद्भस्म प्रोच्यते भा-
सनाच्च भूतिर्गायत्र्यंबर्यैश्चया त्रिपुण्ड्रम् ॥९॥ शैवोऽन्यो
वा यां विना किं द्विजः स्याच्छैवोऽन्यो वा दीक्षया वेद-
मातुः । तस्माच्छैवो वैष्णवोऽन्येषु गण्यो गायत्र्याप्ता
ब्रह्मता वेदमान्या ॥१०॥ भेदापोहव्याप्तिं सा विभर्ति
ध्यानैर्भिन्नैर्ध्याननिष्ठैकवेद्यम् । तस्मान्नामान्यत्र संया-
न्ति सर्वाण्यस्या निष्ठा शांभवी वैष्णवी च ॥ ११ ॥
लोकस्थास्ते विष्णुरुद्रादिदेवाः कैश्चित्कामैः कैश्चिदेवाधि-
कारैः । गायत्र्यास्ता भूतयः सेवनीया गायत्र्यां ते सेवि-
ताः संभ्रमेण ॥१२॥ ब्रह्मत्वं चेदाप्तुकामोऽस्युपास्व
गायत्रीं चेल्लोककामोऽन्यदेवम् । कामो ज्ञातः स्वीयपा-
कप्रवृत्त्या वादः को वा तृप्तिहीने प्रवृत्तिः ॥१३॥ बुद्धेः
साक्षी बुद्धिगम्यो जपादौ गायत्र्यर्थः सोऽनघो वेदसारः ।
तद्ब्रह्मैव ब्रह्मतोपासकस्याप्येवं मंत्रः कोऽस्ति तंत्रे पुरा-
णे ॥१४॥ जात्यश्वः किं जातिमाप्तुं सकामो गत्यभ्या-
सात्स्पष्टतामेति जातिः । ब्रह्मत्वाप्तौ कः प्रयासो द्विजानां
यद्गायत्र्यां व्यज्यते चाष्टमेऽब्दे ॥१५॥ ब्रह्मत्वस्य ख्या-
पनार्थं प्रविष्टा गायत्रीयं तावताऽस्य द्विजत्वम् । कर्णद्वा-
रा ब्रह्मजन्मप्रदानादुक्तो वेदे ब्राह्मणो ब्रह्मनिष्ठः ॥१६॥
एषा निष्ठा दुर्लभा मर्त्यबुद्धौ तस्माल्लोके वैष्णवाः शां-
भवाश्च । भिन्नं भिन्नं मार्गमास्थाय वेदं क्षामं कुर्वन्त्या-

स्तिकच्छद्मने मे ।।१७।। पक्षिद्वंद्वं विद्यते स्वस्वदेहे भोक्तारं सा ध्यातमाचष्ट एतत् ।। यावत्क्षीणा भोक्तृता स्यात्ततस्तु ज्ञात्वा ब्रूयाद्ब्रह्मतां स्वस्य विद्वान् ।।१८।। गायत्र्यर्थं नो वजानाति कश्चित्तस्मादन्यं देवमाह द्विजोऽपि । विज्ञातश्चेतत्सर्ववादस्य शांतिर्मुक्तिर्हस्ते गायमानस्य मंत्रम् ।। १९ ।। भस्मांतं चेद्विश्वमेतत्समस्तं भस्मोद्भूतं भस्म संभासते च ।। तस्माद्ब्रह्म प्राहुराद्यैर्वचोभिर्वेदास्तस्माभद्स्म लिंगं द्विजानाम् ।।२०।। इति श्रीशंकराचार्याभिप्रायः कृष्णभिक्षुणा । वर्णितस्तेन गायत्री विभूत्या सह नंदतु ।।२१।।

इति श्रीमत्प० कृष्णानंदसरस्वतीवि० गायत्रीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१३१-सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। वाग्वादिनी पापहराऽस भेदचोद्यादिकं मध्वर दिव्यमूर्ते ।। सुशर्मदे वन्द्यपदेऽस्तु चित्तं दया च तेऽहो मयि पुण्यकीर्ते ।।१।। देव्यै नमः कलिजितेऽस्तु मात्रे या सर्वथा अस्यखिलार्थदे त्वम् ।। वासोऽत्र ते नः स्थितये शिवायात्रीशस्य पूर्णास्य कलासि सा त्वम् ।। २ ।। नन्दप्रदे सत्यनुते भवाय सूक्ष्मां धियं सम्प्रति मे विधेहि ।। दयस्व सारस्वजलाधिसंविन्नृलोकपेऽरम्मयि सन्निधेहि ।। ३ ।। सत्यं सरस्वत्यसि मोक्षसद्म तारिण्यसि स्वस्य जनस्य भर्म ।। रम्यं हिते

तारमिदं शिवाहे नांगीकरोतीहि पतेत्स मोहे ।। ४ ।। स्वभूतदे वाधिहरेऽस्मि वाऽचेता अपि प्रज्ञ उपासनात्ते । तीव्रैस्तरं जेतुमशक्यमेव तन्निश्चलं चेत इदं कृतं ते ।५। विचित्रवाग्भिर्ज्ञदुरूनसाधून् तीर्थाश्च यां तत्वत एव गातुम् ।। रजस्तनुर्वा क्षमतेत्यधीता सुकीर्तिरायच्छतु मे धियं सा ।।६।। चित्रांगि वाजिन्यघनाशनीयमसौ च मूर्तिस्तव चाम्मयीह ।। तमोऽपहं नीरमिदं यदा धीतीति भ्रमं केऽपि न तं त्यजन्ति ।।७।। सद्योगिभावप्रतिमं सुधाम नांदीमुखं तुष्टिदमेव धाम ।। मन्त्रो व्रतं तीर्थमितोऽधिकं हि यन्मे मतं नास्त्यत एव पाहि ।। ८ ।। त्रयी तपो यज्ञमुखा नितांत ज्ञं पांति नाधिघ्न इमे शमार्थे ।। कः स्वल्पसंज्ञं हि दयेत यो नो दयार्हं आर्योज्झित ईशवर्ये ।।९।। समस्तदेवर्षिनुते प्रसीद धेह्यस्य के विश्वगते करं ते ।। रक्षस्व सुष्टिवत्युदिते प्रसत्तः सत्यं न विश्वान्तर एव मत्तः ।।१०।। स्वज्ञं हि मां धिक्कृतमत्र विप्ररत्नैर्वरं विप्रतरं विधेहि । तीक्ष्णद्युतेर्याधिरुगिष्टवाचः स्वस्थाय मे वा त्विति तैरिरीहि ।।११।। स्तोतुं न चैव प्रभुरस्मि वेदतीर्थाधिपे जन्महरे प्रसीद ।। त्रय्येव यत् सुष्टुतयेस्ति पायात् सा जाड्यहातिप्रियदा विपभद्य् ।।१२।।

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीकृतं सरस्वतीस्तोत्रम् ।

१३२-सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। ब्रह्मस्पतिरुवाच ।। सरस्वती नमस्यामि चेतनां हृदि संस्थिताम् ।। कंठस्थां पद्मयोनिं त्वां ह्रींकारां सुप्रियां सदा ।।१।। मतिदां वरदाँ चैव सर्वकामफलप्रदाम् ।। केशवस्य प्रियां देवीं वीणाहस्तां वरप्रदाम ।।२।। मंत्रप्रियां सदा हृद्यां कुमतिध्वंसकारिणीम् ।। स्वप्रकाशां निरालंबामज्ञानतिमिरापहाम् ।।३।। मोक्षप्रियाँ शुभां नित्यां सुभगां शोभनप्रियाम् ।। पद्मोपविष्टां कुंडलिनीं शुक्लवस्त्रां मनोहराम् ।।४।। आदित्यमंडले लीनां प्रणमामि जनप्रियाम् । ज्ञानाकरां जगद्द्वीमां भक्तविघ्नविनाशिनीम् ।।५।। इति सत्यं स्तुता देवी वागीशेन महात्मना ।। आत्मानं दर्शयामाम शरदिन्दुसमप्रभा ।। ६ ।। श्रीसरस्वत्युवाच ।। वरं वृणीष्व भद्रं त्वं यत्ते मनसि वर्तते ।। बृहस्पतिरुवाच ।। प्रसन्ना यदि मे देवि परिज्ञानं प्रयच्छ मे ।७। श्रीसरस्वत्युवाच ।। दत्तं ते निर्मलं ज्ञानं कुमतिध्वंसकारकम् ।। स्तोत्रेणानेन मां भक्त्या ये स्तुवन्ति सदा नराः ।।८।। लभन्ते परमं ज्ञानं मम तुल्यपराक्रमाः ।। कवित्वं मत्प्रसादेन प्राप्नुवन्ति मनोगतम् ।।९।। त्रिसंध्यं प्रयतो भूत्वा यस्त्विदम पठते नरः ।। तस्य कण्ठे सदा वासं

करिष्यामि न संशयः ॥१०॥

इति श्रीरुद्रयामले बृहस्पतिविरचितं सरस्वतीस्तोत्रम् ।

१३३-सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीसरस्वतीस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः ॥ गायत्री छंदः ॥ श्रीसरस्वती देवता ॥ धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः ॥ आरूढा श्वेतहंसे भ्रमति च गगने दक्षिणे चाक्षसूत्रं वामे हस्ते च दिव्याम्बरकनकमयं पुस्तकं ज्ञानगम्या ॥ सा वीणां वादयन्ती स्वकरकरजपैः शास्त्रविज्ञानशब्दैः क्रीडन्ती दिव्यरूपा करकमलधरा भारती सुप्रसन्ना ।१। श्वेतपद्मासना देवी श्वेतगन्धानुलेपना ॥ अर्चिता मुनिभिः सर्वैर्ऋषिभिः स्तूयते सदा ॥ एवं ध्यात्वा सदा देवीं वांछितं लभते नरः ॥ २ ॥ शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् । हस्ते स्फटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां वन्देतां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ।३। या कुन्देदुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ।४। ह्रीं ह्रीं हृद्यैकबीजे शशिरुचिकमले कल्पविस्पष्टशोभे भव्ये भव्यानुकूले कुमतिवनदवे विश्ववन्द्यांघ्रिपद्मे पद्मे पद्मोप-

विष्टे प्रणतजनमनोदसंपादयित्रि प्रोत्फुल्लज्ञानकूटे हरिनिजदयिते देवि संसारसारे ।५। ऐं ऐं ऐं दृष्टमन्त्रे कमलभवमुखांभोजभूते स्वरूपे रूपारूप्रकाशे सकलगुणमये निर्गुणे निर्विकारे । स्थूले नैव सूक्ष्मेऽप्यविदितविभवे नापि विश्वंतरात्मे विज्ञानवत्वे विश्वे सुरवरनमिते निष्कले नित्यशुद्धे ।।६।। ह्रीं ह्रीं ह्रीं जाप्यतुष्टे हिमरुचिमुकुटे वल्लकीव्यग्रहस्ते मातर्मातर्नमस्ने दह दह जडतां देहि बुद्धिं प्रशस्ताम् ।। विद्ये वेदान्तवेद्ये परिणतपठिते मोक्षदे मुक्तिमार्गे मार्गातीतस्वरूपे भव मम वरदा शारदेशुभ्रहारे ।।७।। धीं धीं धीं धारणाख्ये धृतिमतिनतिभिर्नामभिः कीर्तनीये नित्येऽनित्ये निमित्ते मुनिगणनमिते नूतने वै पुराणे ।। पुण्ये पुण्यप्रवाहे हरिहरनमिते नित्यशुद्धे सुवर्णे मातर्मात्रार्धतत्वे मतिमतिमदिते माधवप्रीतिमोदे ।। ८ ।। ह्रूं ह्रूं ह्रूं स्वस्वरूपे दह दह दुरितं पुस्तकव्यग्रहस्ते सन्तुष्टाकारचित्ते स्मितमुखि सुभगे जृम्भिणि स्तम्भविद्ये ।। मोहे मुग्धप्रवाहे कुरु मम विमतिध्वान्तविध्वंसमोडे गीर्गौर्वाग्भारति त्वं कविवररसनासिद्धिदे सिद्धिसाध्ये ।।९।। स्तौमि त्वां त्वां च वन्दे मम खलु रसनां नो कदाचित्यजेथा मा मे बुद्धिर्विरुद्धा भवतु न च मनो देवि मे यातु पापम् ।। मा मे दुःखं कदाचित्क्वचिदपि विषयेऽप्यस्तु मे नाकुलत्वं

शास्त्रे वादे कवित्वे प्रसरतु मम धीर्मास्तु कुण्ठा कदापि ।१०। इत्येतैः श्लोकमुख्यैः प्रतिदिनमुषसि स्तौति यो भक्तिनम्रो वाणी वाचस्पतेरप्यविदितविभवो वाक्पटुमुर्ष्टकंठः । स स्यादिष्टार्थलाभैः सुतमिव सततं पाति तं सा च देवी सौभाग्यं तस्य लोके प्रभवति कविता विघ्नमस्तं प्रयाति ।।११।। निर्विघ्नं तस्य विद्या प्रभवति सततं चश्रुतग्रन्थबोधः कीर्तिस्त्रैलोक्यमध्ये निवसति वदने शारदा तस्य साक्षात् । दीर्घायुर्लोकपूज्यः सकलगुणनिधिः सन्ततं राजमान्यो वाग्देव्याः संप्रसादात्त्रिजगति विजयी जायते सत्सभास ।।१२।। ब्रह्मचारी व्रती मौनी त्रयोदश्यां निरामिषः ।। सारस्वतो जनः पाठात्स कृदिष्टार्थलाभवान् ।१३। पक्षद्वये त्रयोदश्यामेकविंशतिसंख्यया । अविच्छिन्नः पठेद्धीमान्ध्यात्वा देवीं सरस्वतीम् ।१४। सर्वपापविनिर्मुक्तः सुभगो लोकविश्रुतः । वाञ्छितं फलमाप्नोति लोकेऽस्मिन्नात्र संशयः ।।१५।। ब्रह्मणेति स्वयं प्रोक्तं सरस्वत्याः स्तवं शुभम् । प्रयत्नेन पठेन्नित्यं सोऽमृतत्वाय कल्पते ।।१६।।

इति श्रीब्रह्मणा विरचितं सरस्वतीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१३४-नीलसरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । घोररूपे महारावे सर्वशत्रुभयंकरि । भक्तेभ्यो वरदे देवि त्राहि माँ शरणागतम् ।१।

ॐसुरासुरार्चिते देवि सिद्धगन्धर्वसेविते । जाडय्पापहरे देवि त्रा० ॥२॥ जटाजूटसमायुक्ते लोलजिह्वान्तकारिणि द्रुतबुद्धिकरे देवि त्रा० ॥३॥ सौम्यक्रोधधरे रूपे चण्डरूपे नमोऽस्तु ते सृष्टिरूपे नमस्तुभ्यं त्रा० ।४। जडानाँ जडतां हन्ति भक्तानां भक्तवत्सला । मूढतां हर मे देवि त्रा० ।५। वं ह्लूं ह्लूं कामये देवि बलिहोमप्रिये नमः । उग्रतारे नमो नित्यं त्रा० ॥६॥ बुद्धिं देहि यशो देहि कवित्वं देहि देहि मे । मूढत्वं च हरेद्देवि त्रा० ॥७॥ इन्द्रादिविलसद्द्वन्द्ववदिते करुणामयि । तारे ताराधिनाथास्ये त्रा० ॥८॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्याँ नवम्याँ यः पठेन्नरः । षण्मासैः सिद्धिमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥९॥ मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी लभते धनम् । विद्यार्थी लभते विद्याँ तर्कव्याकरणादिकम् ॥१०॥ इदं स्तोत्रं पठेद्यस्तु सततं श्रद्धयाऽन्वितः । तस्य शत्रुः क्षयं याति मपाप्रज्ञा प्रजायते ॥११॥ पीड़ायाँ वापि संग्रामे जाडय् दाने तथा भवे । य इदं पठति स्तोत्रं शुभं तस्य न संशयः । इति प्रणम्य स्तुत्वा च योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥१२॥

१३५-श्रीसरस्वतीगीतिः ।

श्रीगणेशाय नमः । एहि लसत्सितशतदलवासिनि भारति मामकमास्यम् । देहि च मे त्वदमरनिकरार्चि-

तपातले निजदास्यम् । ध्रुवम् ॥१॥ जगदघपारिणि मधुरिपुजाये हिमगिरिजित्वरसिततमकाये । श्रुतिततिसंस्कृतपकद्‌मलाहृतमिह भुवि नान्यदुपास्यम् । भारति० ॥२॥ जडतरजीवनमहह मदीयं श्रुतिविरहान्न हि नृषु गणनीयम् । निरवधि कृपाँ कुरुष्व दयामयि व्यपगच्छेन्मम दास्यम् । भारति० ॥३॥ विकसितनीलजलजकुलवासे विहितबृहस्पतिसमनिजदासे जनति कृशोदरि मम रसनोपरि विरचय शाश्वतहास्यम् । भारति० ।४। भवमुखभावित भवदवदानं रचयतु मानसमविरतगानम् । निपततु ते मयि दृगयि दयामयि किमपरमात्मजभाव्यम् ॥५॥

इति श्रीसरस्वतीगीतिः समाप्ता ।

१३६-देवकृतं लक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ क्षमस्व भगवत्यंब क्षमाशीले परात्परे । शुद्धसत्वस्वरूपे च कोपादिपरिवर्जिते ॥१॥ उपमे सर्वसाध्वीनां देवीनां देवपूजिते । त्वया बिना जगत्सर्वं मृततुल्यं च निष्फलम् ॥२॥ सर्वसंपत्स्वरूपा त्वं सर्वेषां सर्वरूपिणी । रासेश्वर्याधिदेवी त्वं त्वत्कलाः सर्वयोषितः ॥३॥ कैलासे पार्वती त्वं च क्षीरोदे सिन्धुकन्यका । स्वर्गे च स्वर्गलक्ष्मीस्त्वं मर्त्यलक्ष्मीश्च भूतले ॥४॥ वैकुण्ठे च महालक्ष्मीर्देवदेवी सरस्वती ॥ गङ्गा

च तुलसी त्वं च सावित्री ब्रह्मलोकतः ॥१॥ कृष्णप्राणाधिदेवी त्वं गोलोके राधिका स्वयम् । रासे रासेश्वरी त्वं च वृन्दावनवने वने ॥६॥ कृष्णप्रिया त्वं भांडीरे चंद्रा चदनकानने । विरजा चंपकवने शतशृङ्गे च सुन्दरी ॥७॥ पद्मावती पद्मवने मालती मालतीवने । कुंददंती कुन्दवने सुशीला केतकीवने ॥८॥ कदंबमाला त्वं देवि कदम्बकाननेऽपि च । राजलक्ष्मी राजगेहे गृहलक्ष्मीर्गृहे गृहे ॥९॥ इत्युक्त्वा देवताः सर्वा मुनयो मनवस्तथा । रुरुदुर्नम्रवदनाः शुष्ककंठोष्ठतालुकाः ॥१०॥ इति लक्ष्मीस्तवं पुण्यं सर्वदेवैः कृतं शुभम् । यः पठेत्प्रातरुत्थाय स वै सर्तं लभेद्ध्रुवम् ॥११॥ अभार्यो लभते भर्यां विनीतां सुसुतां सतीम् । सुशीलां सुन्दरीं रम्यामतिसुप्रियवादिनीम् ॥१२॥ पुत्रपौत्रवतीं शुद्धां कुलजां कोमलां वराम् । अपुत्रो लभते पुत्रं वैष्णवं चिरजीविनम् ॥१३॥ परमैश्वर्ययुक्तं च विद्यावंतं यशस्विनम् । भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं भ्रष्टश्रीर्लभते श्रियम् ।१४। हतबंधुर्लभेद्बन्धुं धनभ्रष्टो धनं लभेत् । कीर्तिहीनो लभेत्कीर्तिं प्रतिष्ठां च लभेद्ध्रुवम् ॥१५॥ सर्वमंगलदं स्तोत्रं शोकसन्तापनाशनम् । हर्षानन्दकरं शश्वद्धर्ममोक्षसुहृत्प्रदम् ॥१६॥

१३७–लक्ष्मीस्तोत्रम् ।

जयन्ति जगतां मातुः स्तनकुंकुमबिन्दवः । मुकुन्दाश्लेषसंक्रान्तकौस्तुभश्रीविडम्बिनः ॥१॥ पायात्पयोधिदुहितुः कपोलामलचन्द्रमाः । यत्र संक्रान्तबिम्बेन हारिणा-हरिणायितम् ॥२॥ देवेऽर्पितवरणस्रजि बहुमाये वहति कैटभीरूपम् । जयति सुरासुरहसिता लज्जाजिह्मेक्षणा लक्ष्मीः ।३। तल्पीकृताहिरगणितगरुडो हाराभिहतविधिर्जयति । फणशतपीतश्वासो रागान्धायाः श्रियः केलिः ।४। स्मेराननेन हरिणा सस्पृहमाकारवेदिनाकलितम् । जयति पुरुषायितायाः कमलायाः कैटभीध्यानम् ॥५॥ कमलासनकमलेक्षणकमलारिकिरीटकमलभुद्वाहैः । नुतपदकमला कमलाकरधृतकमला करोतु मे कमलम् ॥६॥ किञ्जल्कराजिरिव नीलसरोजलग्ना लेखेव काञ्चनमयी निकषोपलस्था । सौदामिनीमण्डलगामिनीव पायादुरःस्थलगता कमला मुरारेः ॥७॥

१३८–श्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । पुष्कर उवाच । राजलक्ष्मीस्थिरत्वाय यथेन्द्रेण पुरा श्रियः स्तुतिः कृता तथा राजन् जयार्थं स्तुतिमाचरेत् ॥१॥ इन्द्र उवाच । नमस्ते सर्वलोकानाँ जननीमब्धिसम्भवाम् । श्रियमुन्निद्रपद्माक्षीं विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम् ।२। त्वं सिद्धिस्त्वंस्वक्षा स्वाहा

सुधा त्वं लोकपावनी । संध्या रात्रिः प्रभा भूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ॥३॥ यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने । आत्मविद्या च देवी त्वं विमुक्तिफलदायिनी ॥४॥ आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च । सौम्यासौम्यैर्जगद्रूपैस्त्वयैतद्देवि पूरितम् ॥५॥ का त्वन्या त्वामृते देवि सर्वयज्ञमयं वपुः अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचिन्त्यं गदाभृतः ॥६॥ त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् । विनष्टप्रायमभवत् त्वयेदानीं समेधितम् ॥७॥ दाराः पुत्रास्तथागारं सुहृद्धान्यधनादिकम् । भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम् ॥८॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम् । देवि त्वद्दृष्टिदृष्टानां पुरुषाणाँ न दुर्लभम् ॥९॥ त्वमम्बा सर्वलोकानां देवदेवो हरिः पिता । त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद्व्याप्तं चराचरम् ॥१०॥ मानं कोपं तथा कोषं मा गृहं मा परिच्छदम् । मा शरीरं कलत्रं च त्यजेथाः सर्वपावनि ॥११॥ मा पुत्रान्मा सुहृद्वर्गान् मा पशून्मा विभूषणम् । त्यजेथाः मम देवस्य विष्णोर्वक्षः स्थलालये ॥१२॥ सत्वेन सत्यशौचाभ्याँ तथा शीलादिभिर्गुणैः । त्यजन्ते ते नराः सद्यः सन्त्यक्ता ये त्वयाऽमले ॥१३॥ त्वयाऽवलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलैर्गुणैः । कुलैश्वर्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि ॥ १४ ॥ स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स

कुलीनः स बुद्धिमान् ॥ स शूरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवी वीक्षितः ॥१५॥ सद्यो वैगुण्यमायान्ति शीलाद्याः सकला गुणाः ॥ पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णुवल्लभे ॥१६॥ न ते वर्णयितुं शक्ता गुणान् जिह्वापि वेधसः । प्रसीद देवि पद्माक्षि माऽस्मांस्त्याक्षीः कदाचन ॥१७॥ पुष्कर उवाच । एवं स्तुता ददौ श्रीश्च वरमिन्द्राय चेप्सितम् । सुस्थिरत्वं च राज्यस्य संग्रामविजयादिकम् ॥१८॥ स्वस्तोत्रपाठश्रवणकर्तृणां भुक्तिमुक्तिदम् ॥ श्रीस्तोत्रं सततं तस्मात्पठेच्च शृणुयान्नरः ॥१९॥

इति अग्निपुराणान्तर्गतं श्रीस्तोत्रं समाप्तम् ।

१३९-दुर्गापदुद्धारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे ॥ नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥१॥ नमस्ते जगच्चिन्त्यमानस्वरूपे नमस्ते महायोगिनि ज्ञानरूपे ॥ नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे नमस्ते० ॥ २ ॥ अनाथस्य दीनस्य तृष्णातुरस्य भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः ॥ त्वमेका गतिर्देवि निस्तारकर्त्री नमस्ते० ॥३॥ अरण्ये रणे दारुणे शत्रुमध्येऽनले सागरे प्रान्तरे राजगेहे ॥ त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका नमस्ते० ॥४॥ अपारे

महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे विपत्सागरे मज्जतां देहभाजाम् । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारहेतुर्नम० ॥५॥ नमश्चण्डिके चण्डदुर्दण्डलीलासमुत्खण्डिताखण्डिताशेषशत्रो ॥ त्वमेका गतिर्देवि निस्तारबीजं नम० ॥६॥ त्वमेवाघभावाधृता-सत्यवादीर्नजाताजितक्रोधनात् क्रोधनिष्ठा ॥ इडा पिङ्ग-ला त्वं सुषुम्ना च नाडी नम० ॥७॥ नमो देवि दुर्गे शिवे भीमपादे सरस्वत्यरुन्धत्यमोघस्वरूपे । विभूतिःशची कालरात्रिः सती त्वं नम० ।८। शरणमसि सुराणां सिद्ध-विद्याधराणां मुनिमनुजपशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम् ॥ नृपतिगृहगतानां व्याधिभिः पीडितानां त्वमसि शरणमे-का देवि दुर्गे प्रसीद ॥९॥ इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तमापदु-द्धारहेतुकम् ॥ त्रिसंध्यमेकसन्ध्य वा पठनाद्घोरसङ्कटात् ॥ १० ॥ मुच्यते नात्र संदेहो भुवि स्वर्गे रसातले ॥ सर्वं वा श्लोकमेकं वा यः पठेद्भक्तिमान् सदा ॥११॥ स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा प्राप्नोति परमं पदम् ॥ पठना-दस्या देवेशि किं न सिद्ध्यति भूतले ॥ स्तवराजमिदं देवि संक्षेपात्कथितं मया ॥१२॥

इति श्रीसिद्धेश्वरीतन्त्रे उमामहेश्वरसंवादे श्रीदुर्गादुद्धारस्तोत्रम् ।

१४०-श्रीपार्वतीस्तोत्रम् ।

हरकण्ठाग्रहानन्दमीलिताक्षीं नमाम्युमाम् ॥ काल-कूटविषस्पर्शजातमूर्च्छागमामिव ॥१॥ पार्वतीमोषधीमे-

कामपर्णां मृगयामहे ॥ शूली हालाहलं पीत्वा यया मृत्युञ्जयोऽभवत् ॥२॥ अपर्णैव लता सेव्या विद्वद्भिरिति मे मतिः ॥ ययाऽऽवृतः पुराणोऽपि स्थाणुः सूतेऽमृतं फलम् ॥ ३ ॥ मृणालव्यालवलया वेणीबंधा कपर्दिनी ॥ हरानुकारिणी पातु लीलया पार्वती जगत् ॥४॥ जन्मान्तरीणरमणस्याङ्गसङ्गसमुत्सुका ॥ सलज्जा चान्तिके सख्याः पातु नः पार्वती सदा ॥५॥

१४१-भवानीभुजंगप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ षडाधारपंकेरुहांतर्विराजत्सुषुम्नांतरालेऽतितेजोल्लसंतीम् ॥ सुधामंडलं द्रावयंती पिबन्तीं सुधामूर्तिमीडेऽहमानंदरूपाम् ॥१॥ ज्वलत्कोटिबालार्कभासारुणांगीं सुलावण्यशृंगारशोभाभिरामाम् ॥ महापद्मकिंजल्कमध्ये विराजत्त्रिकोणोल्लसंतीं भजे श्रीभवानीम् ॥२॥ क्वणत्किंकिणीनूपुरोभद्दासिरत्नप्रभालीढलाक्षार्द्रपादारविंदाम् ॥ अजेशाच्युताद्यैः सुरैः सेव्यमानां महादेवि मन्मूर्ध्नि ते क्षावयामि ॥३॥ सुशोणांबराबद्धनीवीविराजन्महारत्नकांचीकलापं नितंबम् ॥ स्फुरद्दक्षिणावर्तनाभिं ज तिस्रो वली रम्यते रोमराजीं भनेऽहम् ॥४॥ लसद्वृत्तमुत्तुङ्गमाणिक्यकुंभोपमश्रीस्तनद्वन्द्वमम्बांबुजाक्षीम् ॥ भजे पूर्णदुग्धाभिरामं तवेदं महाहारदीप्तं सदा प्रस्नुतास्यम् ॥५॥ शिरीषप्रसूनोल्ल-

सद्बाहुदंडैर्ज्वलद्बाणकोदंडपाशांकुशैश्च । चलत्कंकणोदा-
रकेयूरभूषाज्वलभिद्‌ः स्फुरंतीं भजे श्रीभवानीम् ॥६॥
शरत्पूर्णचंद्रप्रभापूर्णबिंबाधरस्मेरवक्त्रारविंदश्रियं ते ॥
सुरत्नावलीहारताटंकशोभां भजे सुप्रसन्नामहं श्रीभ०
॥७॥ सुनासापुटं पद्मपत्रायताक्षं यजंतः श्रियं दानदक्षं
कटाक्षम् ॥ ललाटोल्लसद्‌गंधकस्तूरिभूषोज्ज्वलभिद्‌ः
स्फुरंतीं भजे श्रीभ० ॥८॥ चलत्कुंडलां ते भ्रमद्भृङ्ग-
वृंदां घनस्निग्धधम्मिल्लभूषोज्ज्वलंतीम् ॥ स्फुरन्मौलि-
माणिक्यमध्येंदुरेखाविलासोल्लसद्दिव्यमूर्धानमीडे ॥६॥
स्फुरत्वम्ब बिंबस्य मे हृत्सरोजे सदा वाङ्मयं सर्वते-
जोमयं च ॥ इति श्रीभवानोस्वरूपं तदेवं प्रपंचात्परं
चातिसूक्ष्मं प्रसन्नम् ॥ १० ॥ गणेशाणिमाद्याखिलैः श-
क्तिवृन्दैः शिवांकोपरिस्थाँ शिवाँ भावयेऽहम् ॥ ११ ॥
त्वमर्कस्त्वमग्निस्त्वमिंदुस्त्वमापस्त्वमाकाशभूवायवस्त्वं
चिदात्मा ॥ त्वदन्यो न कश्चित्प्रकाशोऽस्ति सर्वं सदा-
नन्दसंवित्स्वरूपं तवेदम् ॥ १२ ॥ गुरुस्त्वं शिवस्त्वं च
शक्तिस्त्वमेव त्वमेवासि माता पिताऽसि त्वमेव ॥ त्व-
मेवासि विद्या त्वमेवासि बुद्धिर्गतिर्मे मतिर्देवि सर्वं त्व-
मेव ॥ १३ ॥ श्रुतीनामगम्यं सुवेदागमाद्यैर्महिम्नो न
जानाति पारं तवेदम् ॥ स्तुतिं कर्तुमिच्छामि ते त्वं
भवानि क्षमस्वेदमंब प्रमुग्धः किलाहम् ॥१४॥ शरण्ये

वरेण्ये सुकारुण्यपूर्णे हिरण्योदराद्यै रगम्येऽतिपुण्ये ॥ भवारण्यभीतं च मां पाहि भद्रे नमस्ते नमस्ते नमस्ते भवानि ॥१५॥ इमामन्वहं श्रीभवानीभुजंगस्तुतिं यः पठेच्छ्रोतुमिच्छेत तस्मै ॥ स्वकीयं पदं शाश्वतं चैव सारं श्रियं चाष्टसिद्धीश्च देवी ददाति ॥१६॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं भवानीभुजंगप्रयातस्तोत्रम् संपूर्णम् ।

१४२–त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । कदंबवनचारिणीं मुनिकदंबकादंविनीं नितंबजितभूधरां सुरनितंबिनीसेविताम् । नवाम्बुरुहलोचनामभिनवांबुदश्यामलां त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ।१। कदम्बवनवासिनीं कनकवल्लकीधारणीं महार्हमणिहारिणीं मुखसमुल्लसद्वारुणीम् ॥ दयाविभवकारिणीं विशदलोचनीं चारिणीं त्रिलोटनकुटुम्विनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रयेः ॥२॥ कदंबचनशालया कुचभरोल्लसन्मालया कुचोपमितशैलया गुरुकृपालसद्वेलया ॥ मदारुणकपोलया मधुरगीतवाचालया कयाऽपि घननीलया कवचिता वयं लीलया ॥३॥ कदंबवनमध्यगां कनकमंडलोपस्थितां षडंबुरुहवासिनीं सततसिद्धसौदामिनीम् ॥ विडंबितजपारुचिं विकचचन्द्रचूडामणिं त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥ ४ ॥ कुचांचितविपंचिकां कुटिलकुन्तलालंकृतां कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्तविद्वेषिणीम् । मदारुणविलोचनां मनसिजारिसं-

मोहिनीं मतंगमुनिकन्यकांमधुरभाषिणामाश्रये ॥५॥ स्मेरप्रथमपुष्पिणीं रुधिरबिन्दुनीलाम्बरां गृहीतमधुपात्रिकां मधुविघूर्णनेत्राञ्चलाम् ॥ घनस्तनभरोन्नतां गलितचूलिकां श्यामलां त्रिलोचनकुटुम्बिनीं त्रिपुरसुन्दरीमाश्रये ॥६॥ सकुंकुमविलेपनामलकचुंबिकस्तूरिकां समंदहसितेक्षणां सशरचापपाशांकुशाम् ॥ अशेषजनमोहिनीमरुणमाल्यभूषाम्बरां जपाकुसुमभासुरां जपविधौ स्मराम्यंबिकाम् ॥ ७ ॥ पुरंदरपुरन्ध्रिकाचिकुरबन्धसैरन्ध्रिकाँ पितामहपतिव्रताँ पटुपाटीरचर्चारताम् ॥ मुकुन्दरमणीं मणिलसत्लंक्रियाकारिणीं भजामि भुवनाम्बिकां सुरवधूटिकाचेटिकाम् ॥८॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यकृतं त्रिपुरसुन्दरीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१४३--लघुस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीत्रिपुरसुन्दर्यै नमः । आधारे तरुणार्कबिंबरुचिरं सोमप्रभं वाग्भवं बीजं मन्मथमिंद्रगोपकनिभं हृत्पङ्कजे संस्थितम् । रंध्रं ब्रह्मपदे च शाक्तमपरं चन्द्रप्रभाभासुरं ये ध्यायंति पदत्रयं तव शिवे ते यांति सौख्यं पदम् ॥१॥ ॐ अस्य श्रीलघुस्तवस्तोत्रस्य वृद्धसारस्वतऋषिः त्रिपुराभैरवी देवता । शार्दूलविक्रीडितं छन्दः । मम सर्वकामफलप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः । ॐ ऐं द्रस्येव शर.स.रय दधतो मध्ये ललाटप्रभां शौक्लीं

कान्तिममुष्य गोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः । एषाऽसौ त्रिपुरा हृदि द्युतिरिवोष्मांशोः सदा संस्थिता छिद्यान्नः सहसा पदैस्त्रिभिरघं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी ॥१॥ या मात्रा त्रिपुषीलतातनुलसंतुस्थितिस्पर्धिनी वाग्बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तां मन्महे ते वयम् । शक्ति कुण्डलिनीति विश्वजननव्यापारबद्धोद्यमां ज्ञात्वेत्थं न पुनः स्पृशंति जननीगर्भेऽर्भकत्वं नराः ।२। दृष्ट्वा संभ्रमकारिवस्तु सहसा ऐं ऐमिति व्याहृतं येनाकूतवशादपीह वरदे बिंदु बिनाप्यक्षरम् । तस्यापि ध्रुवमेव देवि तरसा जाते तवानुग्रहे वाचः सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्यान्ति वक्त्रोदरात् ॥३॥ यन्नित्ये तव कामराजमपरं मंत्राक्षरं निष्कलं तत्सारस्वतमित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि । आख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो यत्कीर्तयंतो द्विजाः प्रारम्भे प्रणवास्पदं प्रणयितं नित्योच्चरन्ति स्फुटम् ।४। यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधैस्तार्तीयं तदहं नमामि मनसा तद्बीजमिंदुप्रभम् । अस्त्वौर्वोपि सरस्वतीमनुगते जाड्यांबुविच्छित्तये गोशब्दो गिरि वर्तते सुनियतं योगं विना सिद्धितः ॥५॥ एकैकं तव देवि जन्म ह्यनघं सव्यं जनाव्यञ्जनं कूटस्थं यदि वा पृथक् क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात् । यं यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिन्तितं जप्तं वा सफलीकरोति तर-

सा तं तं समस्तं नृणाम् ॥६॥ वामे पुस्तकधारिणीमभयदां साक्षस्रजं दक्षिणे भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां कर्पूरकन्दोज्ज्वलाम् । उज्जृम्भाम्बुजपत्रकान्तिनयनां स्निग्धप्रभालोकिनीं ये त्वामंब न शीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ।७। ये त्वां पांडुरपुंडरीकपटलस्पष्टाभिरामप्रभां सिंचंतीममृतद्रवैरिव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम् । अश्रान्तं विकटं स्फुटाक्षरपदा निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात्तेषां भारति भारति सुरसरित्कल्लोललोलोर्मयः।८।

ये सिंदूरपरागपुञ्जपिहितां त्वत्तेजसाद्यामिमामुर्वीं चापि विलीनयावकरसप्रस्तारमग्नामिव । पश्यन्ति क्षणमप्यनन्यमनसस्तेषामनंगज्वरक्लांन्तस्रस्तकुरङ्गदारकदृशो वश्या भवानी ध्रुवम् ॥९॥ चञ्चत्काञ्चनकुण्डलाङ्गदधरामाबद्धकाञ्चिस्रजं ये त्वां चेतसि तद्गतेक्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थिराम् । तेषां वेश्मसु विभ्रमादहरहः कारीभवंत्यश्चिरं माद्यत्कुञ्जरकर्णताललतरलाः स्थैर्यं भजन्ति श्रियः ॥१०॥ आर्भक्याशशिखण्डमण्डितजटाजूटां नृमुण्डस्रजं बन्धूकप्रसवारुणांबरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम् । त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयमामापीनतुङ्गस्तनीं मध्ये निम्नवलित्रयांकिततनुं त्वद्रूपकं चिन्तये ॥११॥ जातोऽप्यल्पपरिच्छिदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे कुले निःशेषावनिचक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः यद्विद्या-

धरवृन्दवन्दितपदः श्रीवत्सराजोऽभवद्देवि त्वच्चरणाँ-बुजप्रणतितः सोऽयं प्रसादोदयः ॥१२॥ चण्डि त्वच्चर-णाम्बुजार्चनकृते बिल्वोदलोल्लुण्ठनात् त्रुटयत्कंटककोटि-भिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः । दण्डांकुशचक्रचाप-कुलिशश्रीवत्सवत्सांकितैर्जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवा-म्भोजप्रभैः पाणिभिः ॥१३॥ विप्राः क्षोणिभुजो विश-स्तदितरे क्षीराज्यमध्वासवैस्त्वां देवि त्रिपुरे परां परक-लाँ सन्तर्प्य पूजाविधौ । याँ याँ प्रार्थयते मनः स्थिर-धियाँ येषां त एव ध्रुवं तां तां सिद्धिमवाप्नुवन्ति तरसा विघ्नैरविघ्नीकृताः ।१४। शब्दानाँ जननि त्वमत्र भूवने वाग्वादिनीत्युच्यसे त्वत्तः केशववासवप्रभृतयोऽप्याविर्भ-वन्ति ध्रुवम् । लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादय-स्तेऽप्यमी सा त्वं काचिदचिन्त्यरूपगहना शक्तिः परा गीयसे ॥१५॥ देवानां त्रितयं त्रयीहुतभुजाँ शक्तित्रयं त्रिस्वरास्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथो त्रिब्रह्मकर्णा-स्त्रयः यत्किंचिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गादिकं तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते सत्वतः ॥१६॥ लक्ष्मीं राजकुले जयं रणमुखे क्षेमंकारीमध्वनि क्रव्याद-द्विपसर्पभाचि शबरीकान्तारदुर्गे गिरौ । भूतप्रेतपिशाच-जृम्भकभयं स्मृत्वा महाभैरवीं व्यामोहे त्रिपुराँ तरन्ति विपदस्ताराश्चताँ यत्प्लवे ॥१७॥ या या कुण्डलिनी

क्रिया मधुमती काली कलामालिनी मातंगी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी। शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी ह्रींकारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि ॥१८॥ आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाक्षरैः काद्यैः क्षान्तगतैः स्वरादिभिरथ क्षतिश्च तैः सस्वरैः। नामानि त्रिपुरे भवन्ति खलु या नित्यं तु गुह्यानि ते तेभ्यो भैरवपत्नी विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥१९॥ बोद्धव्या निपुणं बुधैः स्तुतिरियं कृत्वा मनस्तद्गतं भारत्यास्त्रिपुरेत्यनन्य मनसा यत्राद्यवृत्तिः स्फुटम्। एकाद्वित्रिपदक्रमेण कथितस्तत्पादसंख्याक्षरैर्मन्त्रोद्धारविधिर्विशेषसहितः सत्सप्रदायान्वितः ॥२०॥ सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा किंवाऽनया चिंतया नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति जनो यस्यास्ति भक्तिस्त्वयि। सञ्चिन्त्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं सञ्जायमानं हठात्त्वभद्क्त्या मुखरीकृतेन रचितं यत्स्यान्मयाऽपि ध्रुवम् ॥२१॥ आनंदोभद्वकम्पधूर्णनयनं निद्रा्ट्टहासादिकं वेदव्याकरणावगाहकविताकीर्त्तिमुक्तिप्रदम् ॥ वश्याकर्षपुरप्रवेशनगरक्षोभादिसिद्धचाटकं लब्ध्वाचार्यमिदं करोति सततं सौभाग्यमारोग्यताम् ॥ २२ ॥ गौरि त्र्यम्बकपत्नि पार्वति सति त्रैलोक्यगाने शिवे शर्वाणि त्रिपुरे भवानि वरदे रुद्राणि कात्यायनि ॥ भीमे भैरवि

चण्डिसर्ववरदे कालेऽक्षये शूलिनि त्वत्पादप्रणतं ह्यनन्यमनसा पर्याकुलं पाहि माम् ॥२३॥ यदि भजति जडात्मा त्रैपुरं मन्त्रराजं स हि भवति कवीन्द्रः सर्ववादीन्द्रजेता ॥ इदमपि कविभानुर्मत्तमातंगचण्डाच्च्यवति मदगजानाँ पिच्छिलद्वारदेशे ॥२४॥ आईमवल्लरजनीवरबिन्दुनादमेकाक्षरं पदमिद क्रमुका वदन्ति ॥ मन्त्रं च येन भुवनत्रयकाँक्षितस्य सृष्टिस्थितिप्रलयहेतुमचिन्त्यरूपम् ॥२५॥

इति श्रीलध्वाचार्यविरचितं श्रीलघुस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१४४–इन्द्राक्षीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीइन्द्राक्षीस्तोत्रमन्त्रस्य सहस्राक्ष ऋषिः ॥ इन्द्राक्षी देवता ॥ अनुष्टुप् छन्दः ॥ महालक्ष्मी बीजम् ॥ भुवनेश्वरीति शक्तिः ॥ भवानीति कीलकम् ॥ ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं इति बीजानि । मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे श्रीमदिन्द्राक्षीस्तोत्रजपे विनियोगः ॥ ॐ इन्द्राक्षी इत्यंगुष्ठभ्यां नमः ॥ ॐ महालक्ष्मीरिति तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ महेश्वरीति मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ अम्बुजाक्षीत्यनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ कात्यायनीति कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ कौमारीति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ इन्द्राक्षीति हृदयाय नमः ॥ ॐ महालक्ष्मीरिति शिरसे स्वाहा ॥ ॐ माहेश्वरीति

शिखायै वौषट् ।। ॐ अम्बुजाक्षीति कवचाय हुम् ।। ॐ कात्यायनीति नेत्रत्रयाय वौषट् ।। ॐ कौमारीत्यस्त्राय फट् ।। ॐ भूर्भुवःस्वरोम् इति दिग्बन्धनम् ।। पूर्वस्यां पातु मां ब्राह्मी चाग्नेय्यां तु महेश्वरी ।। कौमारी पातु याम्ये वै नैर्ऋत्यां पातु भैरवी ।। १ ।। पश्चिमे पातु वाराही वायव्ये नारसिंहिका ।। कालरात्रिरुदीच्यां वा ऐशान्यां सर्वशक्तिधृक् ।।२।। उर्ध्वं मे भैरवी पातु चाधःस्थं विंध्यवासिनी ।। यद्यत्तु विषमं स्थानं तत्तद्रक्षतु त्र्येश्वरी ।।३।। अथ ध्यानम् ।। इन्द्राणीं द्विभुजां देवीं पीतवस्त्रद्वयान्विताम् ।। वामहस्ते वज्रधरां दक्षिणेन वरप्रदाम् ।१। इन्द्राक्षीं युवतीं देवीं नानालंकारभूषिताम् । प्रसन्नवदनाम्भोजामप्सरोगणसेविताम् ।। २ ।। द्विभुजां सौम्यवदनां पाशांकुशधरां पराम् ।। त्रैलोक्यमोहिनीं देवीमिंद्राक्षीनामकीर्तिताम् ।। ३ ।। अथ मंत्रः ।। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्लूं इन्द्राक्ष्यै नमः ।। इन्द्र उवाच । इंद्राक्षी नाम सा देवी दैवतैः समुदाहृता ।। गौरी शाकंभरी देवी दुर्गानाम्नीति विश्रुता ।।४।। कात्यायनी महादेवी चंद्रघण्टा महातपा ।। सावित्री सा च गायत्री ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी ।।५।। नारायणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्णपिंगला ।। अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ।६। मेघश्यामा सहस्राक्षी मुक्तकेशी जलोदरी ।

महादेवी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला ॥ ७ ॥ अजिता भद्रदा नन्दा रोगहन्त्री शिवप्रिया ॥ शिवदूती कराली च प्रत्यक्षा परमेश्वरी ॥८॥ सदा संमोहिनी देवी सुन्दरी भुवनेश्वरी ॥ इन्द्राक्षी इन्द्ररूपा च इन्द्रशक्तिः परायणा ॥९॥ महिषासुरसंहर्त्री चामुण्डा गर्भदेवता ॥ वाराही नारसिंही च भीमा भैरवनादिनी ॥१०॥ श्रुति स्मृति-धृतिर्मेधा विद्या लक्ष्मीः सरस्वती ॥ अनन्ता विजया पूर्णा मानस्तोकाऽपराजिता ॥११॥ भवानी पार्वती दुर्गा हैमवत्यम्बिका शिवा ॥ एतैर्नामशतैर्दिव्यैः स्तुता शक्रेण धीमता ॥१२॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यं वित्तं ज्ञानं यशो बलम् ॥ नाभिमात्रे जले स्थित्वा सहस्रपरिसंख्यया ॥१३॥ जपेत्स्तोत्रमिमं मन्त्रं वाचां सिद्धिर्भवेत्ततः ॥ अनेन विधिना भक्त्या मन्त्रसिद्धिश्च जायते ॥१४॥ संतुष्टा च भवेद्देवी प्रत्यक्षा सम्प्रजायते ॥ शतमावर्तये-द्यस्तु मुच्यते नात्र संशयः ॥१५॥ आवर्तनसहस्रेण लभ्यते वाञ्छितं फलम् ॥ सायं शतं पठेन्नित्यं षण्मासा-त्सिद्धिरुच्यते ॥१६॥ चोरव्याधिभयस्थाने मनसा ह्यनु-चिन्तयन् ॥ संवत्सरमुपाश्रित्य सर्वकामार्थसिद्धये ॥१७॥ राजानं वश्यमाप्नोति षण्मासान्नात्र संशयः ॥१८॥

१४५–तारास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विरुद्धवाक्यार्थशरीरमण्डले

नवाम्बुदाभां गुरुमुन्नतोदरीम् ॥ अतीवखर्वां नवयौवनस्थां अधःस्थशार्दुलकक्रुत्तिमूर्धजाम् ॥१॥ अनेकमाहात्म्यशवोपरि स्थितां शवार्धमालीढपरीतमध्याम् ॥ विशीर्णवर्णां नृशिरःस्रजोद्भवां त्रयीविवर्तारुणलोचनत्रयाम् ॥२॥ अभेदपिंगैकजटाविराजितां विभूषणच्छिन्नसितास्थिभीषणाम् ॥ महाष्टसिद्धिप्रकराहिभूषणामट्टाट्टहासैर्जगतामभीष्टदाम् ।३। जटास्वनन्तः श्रवयोश्च तक्षको महाहिपद्मं हृदि हारभूषणम् ॥ तथैव कर्कोटकृतोपवीतिकां सुमेखलायामथ देववासुकिः ॥४॥ सशंखपालः किल कंकणो मतः पदेषु पद्मः किल नूपुरश्रियम् ॥ भुजेषु नागः कुलिकोऽगंदो मतो भुजोर्ध्वमाला महतास्थिभिः कृता ॥५॥ सितश्च रक्तो धवलोऽथ मेचकस्तथैव नागोऽथ सितश्च पांडुरः ॥ भुजंगमानामिह वर्णजातयो भवन्ति सर्वैर्मुनिभिर्ज्वलच्चिताम् ॥६॥ कपालकर्त्रीं ग्रथितोग्रमूर्धजां सनालमिन्दीवरकांचनस्रजाम् ॥ विकोशखंग सततं च दक्षिणे स्वपौरुषोत्थैर्दधतीं भुजैः सदा ॥७॥ पदार्थदंष्टाद्वयपंचमुद्रया विराजमानावसितोत्पलस्रजम् ॥ विचिन्तयेत्तां च कवित्वकारिणीं मन्येगतार्थां प्रजपेच्च तारिणीम् ॥८॥ इत्युपनिषदि ज्वलत्पावंकज्वालज्वालातिभास्वच्चितामध्यसंस्थां सुपुष्टां सुखर्वाम् ॥ शर्वं दक्षपादेन कंठे निपीडय् स्थितां वाम-

केनांघ्रिणांघ्री निपीडय् ॥९॥ बृहद्भद्रोमलंबोदरीं मेघ-
वर्णां समुत्तुगं पीनस्तनाभोगरम्याम् ॥ जपारागरागप्र-
वृतत्रिनेत्राँ ललज्जिह्वया दंष्ट्रया भीषणास्याम् ॥१०॥
लसद्द्वीपिचर्मावृतांगीं स्मितास्यां जटाजूटमध्ये स्थिते-
न्दीवरालिम् ॥ शिरोदेशभास्वत्पिशंगाग्निसर्पा जटजूट-
मध्यस्थिताक्षोभ्यमूर्तिम् ॥ ११ ॥ मिथः केशबद्धाचिर-
च्छिन्नसम्यक् गलल्लोहितां मानवीं मुण्डमालाम् ॥ द-
धानां च पंचाशदाख्यानसंख्यायुतच्छिन्नमुण्डावली नि-
र्मलांगीम् ॥१२॥ महासृक्समांसोत्कराधार्यसख्यस्फुर-
त्पाणिना धारयन्तीं महासिम् ॥ भुजे वाम ईषत्स्फुर-
द्रक्तनालस्फुरन्नीलपंकेरुहं धारयंतीम् ॥१३॥ करे सव्य
उच्चैरधस्ताद्दधानां शिताँ कर्तृकाँ वामपाणौ कृपाणा-
म् ॥ जगद्वर्तिसंसारजांड्यातिपूर्णस्फुरत्कर्तृकाधारया खं-
डयंतीम् ॥१४॥ यदीयप्रसादादिदं विश्वजातं जनः
प्राप्नुयान्मोदते सम्यगेव ॥ सदेमं स्तवं यः पठेदेकचित्तो
वशस्तस्य लोको भवेत्तत्र नूनम् ॥ न दारिद्र्यपापे न
वा दुर्मतिः स्याल्लभेतापि मोक्षं तथा धर्मकामौ ।१५।

इति श्रीब्रह्मसंहितायां तारास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१४६—भारतभूमातृस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वन्दे मातरमव्यक्ताँ व्यक्ताँ च
जननीं पराम् । दीनोऽहं बालकः काँक्षे सेवाँ जन्मनि

जन्मनि ॥१॥ सागरालिङ्गितां लक्ष्मीं जगज्जनककन्यकाम् ॥ स्थितां हिमनगस्यांके पार्वतीमपरां भजे ॥२॥ शुभ्रं धर्मध्वजं मातुः किंवा राशीकृतं यशः ॥ रौप्यं वा मुकुटं दिव्यं वन्देऽहं तं हिमालयम् ॥३॥ जाह्नवीयमुनासिंधुब्रह्मपुत्राशतद्रुभिः ॥ भूदेवीं पञ्चधाराभिः सततं साऽभिषिंचति ॥४॥ नगाधिपं धारयंतीं मस्तके रत्नमद्वयम् ॥ काश्मीरं च ललाटे भ्रूमध्ये नेपालिकां शुभाम् ॥५॥ नर्मदातापतीविंध्यसप्तपीठकमेखलाम् ॥ पूर्वापराचलोरूं च मलयं पादपीठके ॥ मध्यदेशोदरे गुप्तानक्षयान् धनसञ्चयान् ॥६॥ असुराणां पुरी लंका दासी यच्चरणयोः कृता ॥ तां देवीं भारती वन्दे मातरं विश्वपूजिताम् ।७। द्रष्टा चैवोपनिषदां गीतशास्त्रप्रवर्तकः ॥ षड्दर्शनप्रवक्ता च भगवान्पाणिनिर्मुनिः ॥८॥ वाल्मीकिश्च तथा व्यासः कालिदासो महाकविः । आर्यभट्टश्च भरतः शंकरोऽद्वैतकेसरी ॥९॥ भीष्मरामार्जुना वीरा नृपौ रामयुधिष्ठिरौ ॥ सावित्री द्रौपदी सीता दमयंती च तारका ॥१०॥ महाधान्यद्वितीयानि रत्नान्येतानि भूतले ॥ जननी भारती तेषां रत्नगर्भा कथं न सा ॥११॥ वसुन्धरा रत्नगर्भा रसा विश्वंभरा क्षमा ॥ सर्वसहा स्थिरा चैव भारती भूसुकन्यका ।१२। रत्नाकरः स्वयं भक्त्या मुक्तोपायनपूर्वकम् ॥ चरणा-

न्क्षालयत्यस्या अतंद्रश्च दिवानिशम् ॥१३॥ कैलासद्वारकाधीशौ रामेश्वरपुरीश्वरौ ॥ द्वारपाला बभूवुश्च सौभाग्यं मातु रभद्‌तम् ॥१४॥ पोषयन्ति सदा मातुः पर्वतस्तनमडलात् ॥ निःसृताश्च पयोधाराः संततीनां परंपराः ॥१५॥ पुत्रवत्सलता मातुरगाधा हरिणा स्वयम् ॥ अधतीर्योदरे सोढं गर्भदुःखं पुनः पुनः ॥ १६ ॥ मरणे जन्मकाले च मुमूर्षुर्नबालकः ॥ त्वदंके चैव संशेते अहो वत्सलता तव ॥ १७ ॥ पद्मालया त्वमेवासि त्वमेव च सरस्वती ॥ अन्नपूर्णा त्वमेवासि त्वमेव च शिवा सती ॥१८॥ त्वद्वृक्षाः कल्पवृक्षाश्च चिन्तामणिशिलाः शिलाः ॥ त्वद्वनं नंनदं साक्षात्साक्षात्त्वं स्वर्गदेवता ॥ १९ ॥ प्रतिजन्मनि मे चितं चित्तं देहश्च संततिः ॥ त्वत्सेवानिरता भूयुर्माता त्वं करुणामयी ।२०। न मे वांछाऽस्ति यशसि विद्वत्वे न च वा सुखे ॥ प्रभुत्वं नैव वा स्वर्गे मोक्षेऽत्यानंददायके ॥ २१ ॥ परं च भारते जन्म मानवस्य च वा पाशोः ॥ विहंगस्य च वा जन्तोर्वृक्षपाषणयोरपि ॥२२॥ निरन्तरं भवतु मे मातृसेवांशभाग्यभाक् ॥ एषैव वांछा हृदये साक्षी सर्वात्मकः प्रभुः ॥ २३ ॥

इति श्रीभारतभूमास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१४७-जन्ममङ्गलास्तोत्रम् ।

वीणावादनतत्परांगुलिनदल्लोलांचितैः किङ्किणीजालैः शोभितकङ्कणे शशिमुखे बालेंदुचूडामणे ।। हेलाराजितचारुनेत्रयुगले ग्रैवेयशोभांचिते बाले पालय पापसंहतितमस्तारे जगन्मङ्गले ।।१।। कुक्षौ ते बहुजीवलोकसमितेः कोटिं चिरं बिभ्रती कल्पादौ त्रिपुरे सृजस्यवसि तान् सर्वास्ववस्थास्वहो ।। अन्ते तानखिलान्विनाशयसि सर्वं भो विलास्तव बाले पालय० ।।२।। लोके नीरधराग्निवायुगगनाः सर्वे भवल्लीलया माता संवलिता हि तारकगणाः सूर्यादि सर्वे ग्रहाः ।। सर्वं खल्विह ते स्वरूपमपि च त्वं चोदयित्री सदा बाले पालय० ।। ३ ।। मायामेयविलासमात्रविभवा मातस्तवेयं कृतिर्गेया सर्वगुणान्विता च बहुधा मेयापि वेद्या नहि ।। ध्येया ज्ञानविशारदैश्च विविधैः शास्त्रैर्विलोक्यापि वै बाले पालय० ।४। नेत्रैः श्वेतमृडालशोणरुचिभिः पूर्णानुकंपान्वितैः पापानां मम भर्जनाय गिरिजे पूरत्रयाणामिव ।। तीर्थानामुपसंगमस्य नयसीत्येतद्ध्रुवं मा तथा बाले पालय० ।। ५ ।। मातस्ते दरलोलशीतविमलैर्नेत्रैः शिवे पश्य मां दुःखात्यन्तविपाकदीनवदनं शीघ्रं दयाद्रैर्यतः ।। ग्रामे वा विपिनेऽपि वा हिमकरो ज्योत्स्नानिपातैः समं बाले पालय० ।। ६ ।। वेदानां शिखराणि

पादयुगलो धत्ते तवाम्बाऽन्वहं पाद्मं तद्धरमौलिजूटत-टिनीलाक्षांकितो रागिमा ॥ श्रीविष्णोर्हि किरीटरत्न-सुषमा यस्यास्तु वंदेतरां बाले पालय० ॥७॥ या शं-भोश्चरितामृतेन रचिता रोषा च गंगाह्रदे या संख्या परमादरात् शिवगले या संगता सर्वदा ॥ दृष्ट्या ते शशिशीतया च दिशती सन्मङ्गलं संततं बाले पालय० ॥८॥ वाग्देवी चतुराननस्य गृहिणीमाहुर्विधिज्ञा नराः श्रीविष्णोर्गृहिणीं सुधाब्धितनयां श्रीकण्ठपत्नीमुमाम् ॥ मातः का भवती विलासचतुरा माया पुरा देवता बाले पालय० ॥९॥

इति श्रीजगन्मङ्गलास्तोत्रम् ।

१४८-सुरभारतीस्तोत्रम् ।

श्री गणेशाय नमः । अष्टपदी । रुचिरगभीरा भारतभूषा ॥ म्लायति संप्रति वरसुरभाषा ॥१॥ पाणिनिमुनिकृतवागनुशासननियमितविमलपदा ॥ जैमिनिमुनिवरमतनयनिश्चितवाक्यविधा विशदा ॥२॥ कपिलपतञ्जलिकश्यपगौतममतवर्धितमहती ॥ सुश्रुतचरकसुसंस्कृतवैद्यकविस्मापितजगती ॥३॥ विविधालंकृतिभूषितकविताध्वनियुतपदनिचया ॥ निजस्वनजनितप्राकृतभाषासमुदयदृढतररचितचया ॥४॥ उपनिषदुदितैकास्यविचारैर्दीपितनिखिलधरा ॥ कालिदासमुखकविव-

रकृतिततिसहृदयहृदयहरा ॥५॥ भरतमतंगादिकमुनि-
साधितमानकलामधुरा ॥ जगतीरञ्जकबोधकशुभकरवा-
ङ्मयचयचतुरा ।६। प्राक्तनभारतभूपैरतिशयसादरमिह
महिमा ॥ प्रकृतिसुखावहशासनवाचकवाचापदनिदिता
॥ ७ ॥ निजभाषाप्रियपरदृढशासनविगलितपूर्वपदा ॥
कलहसमाकुलदुर्बलजनतायतनाऽसाध्यगदा ॥ ८ ॥ मां
गिरिशोक्तमिदं सुरभाषावृतं हरिहृदये ॥ प्रविशतु येन
स पायादेतां ह्रासमये समये ॥९॥

१४९–राधाकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पार्वत्युवाच ॥ कैलासवासिन्
भगवन् भक्तानुग्रहकारक ॥ राधिकाकवचं पुण्यं कथय-
स्व मम प्रभो ॥१॥ यद्यस्ति करुणा नाथ त्राहि मां दुः-
खतो भयात् ॥ त्वमेव शरणं नाथ शूलपाणे पिनकधृक्
॥२॥ शिव उवाच ॥ शृणुष्व गिरिजे तुभ्यं कवचं पूर्व-
सूचितम् ॥ सर्वरक्षाकरं पुण्यं सर्वहत्याहरं परम् ॥३॥
हरिभक्तिप्रदं साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रसाधनम् ॥ त्रैलोक्या-
कर्षणं देवि हरिसान्निध्यकारम् ॥४॥ सर्वत्र जयदं देवि
सर्वशत्रुभयावहम् ॥ सर्वेषां चैव भूतानां मनोवृत्तिहरं
परम् ॥५॥ चतुर्धा मुक्तिजनकं सदानन्दकरं परम् ॥
राजसूयाश्वमेधानां यज्ञानां फलदायकम् ॥६॥ इदं क-
वचमज्ञात्वा राधामन्त्रं च यो जपेत् ॥ स नाप्नोति

फलं तस्य विघ्नान्यस्य पदे पदे ॥७॥ ऋषिरस्य महादेवोऽनुष्टुप् छन्दश्च कीर्तितम् ॥ राधाऽस्य देवता प्रोक्ता रांबीजं कीलकं स्मृतम् ॥ ८ ॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ श्रीराधा मे शिरः पातु ललाटं राधिका तथा ॥ ९ ॥ श्रीमती नेत्रयुगलं कर्णौ गोपेन्द्रनन्दिनी ॥ हरिप्रिया नासिकां मे भ्रूयुगं शशिशोभना ॥ १० ॥ ओष्ठं पातु कृपादेवी अधरं गोपिका तथा ॥ वृषभानुसुता दन्तांश्चिबुकं गोपनन्दिनी ॥११॥ चंद्रावली पातु गण्डं जिह्वां कृष्णप्रिया तथा ॥ कण्ठं पातु हरिप्राणा हृदयं विजया तथा ॥ १२ ॥ बाहू द्वौ चन्द्रवदना उदरं सुबलस्वसा । कोटियोगान्विता पातु पादौ सौभद्रिका तथा ॥१३॥ नखाँश्चन्द्रमुखी पातु गुल्फं गोपालवल्लभा ॥ जानुदेशं जया पातु गोपी पादतलं तथा ॥१४॥ शुभप्रदा पातु पृष्ठं कक्षौ श्रीकान्तवल्लभा ॥ जानुदेशं जया पातु हरिणी पातु सर्वतः ॥१५॥ वाक्यं वाणी सदा पातु धनागारं धनेश्वरी ॥ पूर्वां दिशं कृष्णरता कृष्णप्राणा च पश्चिमाम् ॥१६॥ उत्तरां हरिता पातु दक्षिणां वृषभानुजा ॥ चन्द्रावली नैशमेव दिवा क्ष्वेडितमेखला ॥१७॥ सौभाग्यदा मध्यदिने सायाह्ने कामरूपिणी ॥ रौद्री प्रातः पातु मां हि गोपिनी रजनीक्षये ॥१८॥ हेतुदा सम्भवे पातु केतुमाला दिना-

धंके ॥ शेषाऽपराह्णसमये शमिता सर्वसन्धिषु ॥१९॥
भोगिनी भोगसमये रतौ रतिप्रदा सदा ॥ कामेशी कौ-
तुके नित्यं योगे रत्नावली मम ॥२०॥ सर्वदा सर्वका-
र्येषु राधिका कृष्णमानसा ॥ इत्येतत्कथितं देवि कवचं
परमाद्भुतम् ॥ २१ ॥ सर्वरक्षाकरं नाम महारक्षाकरं
परम् ॥ प्रातर्मध्याह्नसमये सायाह्ने प्रपठेद्यदि ॥२२॥
सर्वार्थसिद्धिस्तस्य स्याद्यद्यन्मनसि वर्तते ॥ राजद्वारे
सभायाँ च संग्रामे शत्रुसंकटे ॥२३॥ प्राणार्थनाशसमये
यः पठेत्प्रयतो नरः ॥ तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि न भयं वि-
द्यते क्वचित् ॥२४॥ आराधिता राधिका च तेन सत्यं
न संशयः ॥ गंगास्नानाद्धरेर्नामग्रहणाद्यत्फलं लभेत्
॥२५॥ तत्फलं तस्य भवति यः पठेत्प्रयतः शुचिः ॥
हरिद्रारोचनाचन्द्रमंडितं हरिचन्दनम् ॥२६॥ कृत्वा लि-
खित्वा भूर्जे च धारयेन्मस्तके भुजे ॥ कंठे वा देवदेवेशि
स हरिर्नात्र संशयः ॥२७॥ कवचस्य प्रसादेन ब्रह्मा सृष्टिं
स्थितिं हरिः ॥ संहारं चाहं नियतं करोमि कुरुते यथा
॥२८॥ वैष्णवाय विशुद्धाय विरागगुणशालिने ॥ दद्या-
त्कवचमव्यग्रमन्यथा नाशामाप्नुयात् ॥२९॥

इति नारदपञ्चरात्रे ज्ञानामृतसारे राधाकवचम् ।

१५०-श्रेयस्करीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रेयस्करि श्रमनिवारिणि सि-

द्धविद्ये स्वानन्दपूर्णहृदये करुणातनो मे ।। चित्ते वस प्रियतमेन शिवेन सार्धमागंल्यमातनु सदैव मुदैव मातः ।।१।। श्रेयस्करि श्रितजनोद्धरके सुदक्षे दाक्षायणि क्षपितपातकतूलराशे ।। शर्मण्यपादयुगले जलजप्रमोदे मित्रे त्रयीप्रसृमरे रमतां मनो मे ।।२।। श्रेयस्करि प्रणतपामरदानज्ञानषदानसरणिश्रितपादपीठे ।। श्रेयांसि सन्ति निखिलानि सुमगंलानि तत्रैव मे वसतु मानसराजहंसः ।।३।। श्रेयस्करीति तव नाम गृणाति भक्त्या श्रेयांसि तस्य सदने च करी पुरस्तात् ।। किं किं न सिद्धयति सुमगंलनाममालां धृत्वा सुखं स्वपिति शेषतनौ रमेशः ।। ४ ।। श्रेयस्करीति वरदेति दयापरेति वेदोदरेति विधिशंकरपूजितेति ।। वाणीति शंभुरमणीति च तारिणीति श्रीदेशिकेन्द्रकरूणेति गृणामि नित्यम् ।४। श्रेयस्करि प्रकटमेव तवाभिधानं यत्रास्ति तत्र रविवत्प्रथमानवीर्यम् । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदादिगृहाणि सौख्यैः पूर्णानि नाममहिमा प्रथितस्त्रिलोक्याम् ।६। श्रेयस्करि प्रणतवत्सलता त्वयीति वाचं शृणुष्व सरलां सरसां च सत्याम् ।। भक्त्या नतोऽस्मि विनतोऽस्मि सुमगंले त्वत्पादाम्बुजे प्रणिहिते मयि संनिधत्स्व ।।७।। श्रेयस्करीचरणसेवनतत्परेण कृष्णेन भिक्षुवपुषा रचितं पठेद्यः ।। तस्य प्रसीदति सुरारिविमर्दनीयमम्बा तनोति सदनेषु सुमगंलानि ।। ८ ।।

यथामति कृतस्तुतो मुदमुपैति माता न किं यथाविभव-
दानतो मुदमुपैति पात्रं न किम् ॥ भवानि तव संस्तुतिं
विरचितुं न चाहं क्षमस्तथापि मुदमेष्यसि प्रदिशसोष्ट-
मम्ब त्वरात् ॥९॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यकृष्णानन्दसरस्वतीविरचितं

१५१-भवानी स्तुतिः ।

आनन्दमन्थरपुरन्दरमुक्तमाल्यं मौलौ हठेन निहितं
महिषासुरस्य । पादाम्बुजं भवतु वो विजयाय मंजुमं-
जीरशिंजितमनोहरमम्बिकायाः ॥१॥ ब्रह्मादयोऽपि य-
दपांगतरंगभङ्ग्या सृष्टिस्थितिप्रलयकारणतां व्रजंति ।
लावण्यवारिनिधिवीचिपरिप्लुतायै तस्यै नमोऽस्तु सततं
हरवल्लभायै ॥२॥ पौलस्त्यपीनभुजसंपदुदस्यमानकैला-
ससंभ्रमविलोलदृशः प्रियायाः । श्रेयांसि वो दिशतु नि-
ह्नुतकोपचिह्नमालिङ्गनोत्पुलकभासितमिन्दुमौलेः ॥३॥
दिश्यान्महासुरशिरःसरसोप्सितानि प्रेंखन्नखावलिमयू-
खमृणालनालम् । चण्ढ्याश्चलच्चटुलनूपुरचंचरीकझांका-
रहारिचरणाम्बुरुहद्वयं वः ॥४॥

१५२-सिद्धिलक्ष्मीस्तुतिः ।

आकारब्रह्मरूपेण ॐकारं विष्णुमव्ययम् । सिद्धि-
लक्ष्मि ! परालक्ष्मि ! लक्ष्यलक्ष्मि ! नमोऽस्तु ते ॥१॥
याः श्रीः पद्मवने कदम्बशिखरे राजगृहे कुञ्जरे श्वेते

तनुहारिणी दुरितसंघसंहारिणी भजन्मतिविवर्धिनी प्रबलदानवोन्मादनी । तुषारगिरिनन्दिनी मुनिहृदन्तरालम्बिनी कुमारमुखचुम्बिनी हरनितम्बिनी पातु वः ॥३॥ सत्वादिस्थैरगणितगुणैर्हन्त विश्वं प्रसूय व्यक्तं धत्ते प्रहसनकरीं या कुमारीति संज्ञाम् । मोहध्वान्तप्रसरविरति विश्वमूर्तिः समंतादाद्या शक्तिः स्फुरतु मम सा दीपवद्देहगेहे ॥४॥

१६९--सिद्धशारदा-स्तुतिः ।

सरस्वतीं शारदां च कौमारीं ब्रह्मचारिणीम् । वागीश्वरीं बुद्धिदात्रीं भारतीं भुवनेश्वरीम् ॥ १ ॥ चन्द्रघण्टां मरालस्थां जगन्मातरमुत्तमाम् । वरदायिनीं सदा वन्दे चतुर्वर्गफलप्रदाम् ॥२॥ द्वादशैतानि नामानि सततं ध्यानसंयुतः । यः पठेत् तस्य जिह्वाग्रे नूनं वसति शारदा ॥३॥

इति श्री 'द्विजेन्द्र' कविकृता सिद्धशारदा-स्तुतिः समाप्ता।

१७०-राधास्तवः ।

राधा पुनातु जगदच्युतदत्तचित्ता मंथानमाकलयती दधिरिक्तपात्रे । यस्याः स्तनस्तबककञ्चुकलोलदृष्टिर्देवोऽपि दोहनधिया वृषभं दुदोह ॥१॥ सुधाधाम्नः कान्तिस्तव वदन पंकेरुहगुणैर्जितेव म्लानत्वं व्रजति सहसा प्राणदयिते । वदत्येवं कान्ते दिवसविरहातङ्कचकिता तदङ्गे

संलग्ना तव दिशतु राधा प्रियशतम् ॥२॥

१७१-अक्षमाला-स्तुतिः ।

श्रीगायत्रीं त्रयीं विद्यां प्रणम्य परमेश्वरीम् । 'अक्षमात्रा-स्तुतिं' दिव्याँ करोमि सुखदां सताम् ॥ १ ॥ अथाऽव्यक्ताऽऽदिशक्तिर्या महादेवीन्दिरेश्वरी । उमोर्ध्वकेशी ऋग्वेदा 'ऋ'रूपा ऋद्धिदायिनी ॥२॥ लृप्तधर्माऽस्ति 'क्षृ'नाम्नी त्वेकाक्षरविहारिणी । ऐन्द्री ह्योङ्कार-रूपा या चौपासनफलप्रदा ॥३॥ अण्डमध्यस्थिता देवी 'अः'कार-मनुरूपिणा । षोडशीं लोकपूज्यां तांसर्वदा संस्मराम्यहम् ॥४॥ ततो व्यञ्जनवर्णस्थां कमलां खगवाहनाम् । गङ्गा च धर्मदीं देवीं 'ङ' क्षरीं प्रणमाम्यहम् ॥५॥ चण्डिकां सततं वन्दे देवीं छन्दोऽगुगां पराम् । जयन्तीं झणनिर्घोषीं 'ञ' रूप-वृषबा नाम् ॥६॥ टङ्कवर्णान्विता दिव्यां 'ठ-ठ' शब्दनिनादिनीम् । डमरूभूषणीं देवीं ढक्काहस्तां नामाम्यहम् ॥७॥ 'ण' वर्णरूपिणीं दिव्यां तप्तकाञ्चनभूषणाम् । थावरां सततं बन्दे दण्डकारण्यवासिनीम् ॥८॥ धर्मशीलां नदीरूपां परब्रह्मात्मिकां तथा । फलदां बहुनेत्रां च भवानीं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥९॥ माकिनीं तां महामायां पञ्चविंशतिवर्णिकाम् । नत्वा पुनः स्मराम्यत्र य-क्षवर्णात्मिकाद्भुताम् ॥१०॥ यक्षिणा योगमायां तां रामीं लक्ष्मीं सुखप्रदाम् । वरदीं

शारदां दिव्यां षण्मुखीं च सरस्वतीम् ॥११॥ हरि-रुद्र-
प्रियां देवीं क्षमाशीलां नवात्मिकाम् । पञ्चाशद्वर्णरूपा
तां स्मरामि सर्वदा शुभाम् ॥१२॥ यस्य स्मरणमात्रेण
प्रसन्ना वर्णमात्रिका । सम्भूयात् सा सदा लोके सर्वम-
ंगलकारिणी ॥१३॥ नेत्रद्वय-ख-युग्मेऽब्दे श्री 'द्विजेन्द्र'
विनिर्मिता । ज्येष्ठमासेऽत्र काश्यां वै प्रोन्दता साऽक्षमा-
लिका ॥१४॥ इति रत्नमयीं देवीं गायत्री-तुष्टिकारा-
रिणीम् । स्तुति पठन्नरो नित्यं ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात्
॥१५॥

इति श्रीगार्ग्यमुनि 'द्विजेन्द्र' कविकृता-अक्षमालास्तुतिः सम्पूर्णा ।

१७२-पार्वतीपञ्चकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विनोदमोदमोदिता दयोदयो-
ज्ज्वलान्तरा निशुम्भशुम्भदम्भदारणे सुदारुणाऽरुणा ।
अखण्डगण्डदण्डमुण्डमण्डलीविमण्डता प्रचंडचंडरश्मिर-
श्मिराशिशोभिता शिवा ॥१॥ अमन्दनन्दिनन्दिनी धरा-
धरेन्द्रनन्दिनी प्रतीर्णशीर्णतारिणी सदार्यकार्यकारिणी ।
तदन्धकान्तकान्तकप्रियेशकान्तकान्तका मुरारिकामचा-
रिकाममारिधारिणी शिवा ॥२॥ अशेषवेषशून्यदेशभर्तृ-
केशशोभिता गणेशदेवतेशशेषनिर्निमेषवीक्षिता । जित-
स्वशिञ्जिताऽलिकुञ्जपुञ्जमञ्जुगुञ्जिता समस्तमस्तकस्थि-
तां निरस्तकामकस्तवा ॥३॥ ससंभ्रमं भ्रमं भ्रमं भ्रम-

न्ति मूढमानवा मुधाऽबुधाः सुधां विहाय धावमानमानसाः । अधीनदीनहीनवारिहीनमीजीवना ददातु शंप्रदाऽनिशं वशंवदार्थमाशिषम् ॥४॥ विलोललोचनाञ्चितोचितैश्चिता गुणैरपास्य दास्यमेवमास्यहास्यलास्यकारिणी । निराश्रयाऽऽश्रयाश्रयेश्वरी सदा वरीयसी करोतु शं शिवाऽनिशं हि शङ्करांकशोभिनी ॥५॥

१७३-भगवती-स्तुतिः ।

प्रातः स्मरामि शरदिन्दु-करोज्ज्वलाभां सद्रत्नवन्मकर-कुण्डल-हारभूषाम् । दिव्यायुधोर्जित सुनील-सहस्रहस्तां रक्तोत्पलाभ-चरणां भवतीं परेशाम् ॥१॥ प्रातर्नमामि महिषासुर-चण्ड-मुंड-शुम्भासुर-प्रमुखदैत्य-विनाशदक्षाम् । ब्रह्मेन्द्र-रुद्र-मुनि-मोहन-शील-लीलां चंडी समस्त-सुर-मूर्तिमनेकरूपाम् ॥२॥ प्रातर्भजामि भजतामभिलाषदात्री धात्री समस्त-जगतां दुरितापहन्त्रीम् । संसार-बन्धन-विमोचन-हेतुभूतां मायां परां समधिगम्य परस्य विष्णोः ॥३॥

१७४-षोडशमातृकास्तुतिः ।

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ॥१॥ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥२॥

१७५-शैलपुत्रीस्तुतिः।

जगत्पूज्ये जगद्-वन्द्ये सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि। सर्वात्मिकेशि ! कौमारि ! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते।

१७६-शनिपत्नीनामस्तुतिः।

ध्वजिनी धामिनी चैव कङ्काली कलहप्रिया। कण्टकी कलही चाऽथ तुरङ्गी महिषीअजा ॥१॥ शनेर्नामानि पत्नीनामेतानि सञ्जपन् पुमान्। दुःखानि नाशयेन्नित्यं सौभाग्यमेधते सुखम् ॥२॥

१७७-दशमहाविद्यानामानि।

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी। भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा। बगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका। एता दश महाविद्याः सिद्धिविद्याः प्रकीर्तिताः।

१७८-कालीस्तुतिः।

काली काली महाकाली कालिके परमेश्वरी। सर्वानन्दकरे देवि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥

१७९-तारा स्तुति।

मातर्नीलसरस्वति प्रणमतां सौभाग्य सम्पत्प्रदे प्रत्यालीढ पदस्थिते शवहृदि स्मेराननाम्भोरुहे ॥ फुल्लेन्दीवरलोचने त्रिनयने कर्त्रीं कपालोत्पले खडगञ्चादधती त्वमेव शरण स्वामीश्वरीमाश्रये ॥ १ ॥ वाचामीश्वरि

भक्तकल्पलतिके सर्वार्थसिद्धीश्वरि गद्य प्राकृत पाद्यजात रचना सर्वार्थसिद्धिप्रदे ।। नीलेन्दीवर लोचनत्रययुते कारुण्यवारींनिधे सौभाग्यामृत वर्द्धनेन कृपया सिञ्चत्व-मस्मादृशम् ।।२।।

१८०-षोडशीस्तुतिः ।

बालव्यक्त विभाकरामितनिभाँ भव्यप्रदाँ भारतीम् ईषत्फुल्ल मुखाम्बुज स्मितकरैराशा भवान्धापहान् ।। पाशं साभयमङ्कुश च वरद संबिभ्रतीं भूतिदाँ भ्राजन्तीं चतुरम्बुजाकृतिकरैर्भक्त्या भजे षोडशीम् ।।१।। बालार्कमण्डलाभासाँ चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम ।। पाशाङ्कुश शराँश्चापं धारयन्तीं शिवाँ भजे ।।२।।

१८१-भुवनेश्वरी स्तुतिः ।

उद्यदिनद्युति मिन्दुकिरीटाँ तुङगकुचां नयनत्रययुताम् ।। स्मेरमुखीं वरदाङ्कुश पाशा भींतिकराँ प्रभजे भुवनेशीम् ।।१।। जगज्जनानन्दकरीं जयाख्याँ यशस्विनीं यन्त्रसुयज्ञयोनिम ।। जितामितामित्र कृतप्रपञ्चाँ भजामहे श्रीभुवनेश्वरीं ताम् ।। २ ।। हरौ प्रसुप्ते भुवनत्रयान्ते अवातरन्नाभिजपद्मजन्मा ।। विधिस्ततोऽन्धे विदधारयत्पद भजामहे श्रीभुवनेश्वरीं ताम ।।३।।

१८२-त्रिपुरभैरवी स्तुतिः ।

उद्यद्भानु सहस्रकान्तिमरुण क्षौमाँ शिरोमालिमाँ

रक्तालिप्त पयोधरां जपपटीं विद्यामभीतिं वरम् ॥ हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद् वक्त्रारविन्दश्रियं देवीं बद्ध हिमांशु रत्नमुकुटां वन्दे समन्द स्मिताम् ॥

१८३-छिन्नमस्ता स्तुतिः ।

नाभौ शुद्ध सरोज वक्त्र विलसद् बन्धूक पुष्पारुण भास्वद् भास्कर मण्डल तदुदरे तद्योनिचक्रं महत् ॥ तन्मध्ये विपरीत मैथुनरत प्रद्युम्न सत्कामिनी पृष्ठस्थाँ तरुणार्क कोटि विलसत्तेजः स्वरूपाँ भजे ॥

१८४-धूमावती स्तुतिः ।

प्रातर्या स्यात् कुमारी कुसुम कलिकया जापमाला जपन्ती मध्याह्ने प्रौढरूपा विकसित वदना चारुनेत्रा निशायाम् ॥ सन्ध्यायाँ वृद्धरूपा गलित कुचयुगा मुण्डमालाँ वहन्ती सा देवी देवदेवी त्रिभुवनजननी कालिका पातु युष्मान् ॥

१८५-बगला स्तुतिः ।

मध्ये सुधाब्धि मणि मण्डप रत्नवेद्याँ सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ॥ पीताम्बराभरण माल्य विभूषिताङ्गीं देवीं स्मरामि धृत मुद्गर वैरिजिह्वाम् ॥१॥ चलत्कनक कुण्डलोल्लसित चारुगण्डस्थलाँ लसत्कनक चम्पक द्युतिमदिन्दु बिम्बाननाम् ॥ गदाहत विपक्षकां कलित लोलजिह्वां चलां स्मरामि बगला-

मुखीं विमुख वाङ् मनः स्तम्भिनीम् ॥२॥ जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ॥ गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥३॥ प्रभातकाले प्रयतो मनुष्यः पठेत् सुभक्त्या परिचिन्त्य पीताम् ॥ द्रुतं भवेत् तस्य समस्त वृद्धिर्विनाशमायाति च तस्य शत्रुः ॥४॥

१८६–मातङ्गी स्तुतिः ।

श्यामां शुभ्रांशुभालां त्रिकमल नयनां रत्नसिंहासनस्थां भक्ताभीष्ट प्रदात्रीं सुर निकरकरा सेव्यकञ्जाङ्घ्रि-युग्माम् ॥ नीलाम्भोजांशुकान्ति निशिचर निकरारण्य दावाग्निरूपां पाशं खड्गं चतुर्भिर्वर कमलकरैः खेटकं चाङ्कुशं च ॥१॥ नमस्ते मातङ्ग्यै मृदुमुदित तन्वै तनुमतां परश्रेयोदायै कमलचरण ध्यान मनसाम् ॥ सदा ससेव्यायै सदसि विबुधैर्दिव्य धिषणै र्दयाद्रायै देव्यै दुरितदलनोद्दण्डमनसे ॥२॥

१८७–महालक्ष्मीस्तुतिः ।

वन्दे लक्ष्मीं परशिवमयीं शुद्धजाम्बूनदाभां तेजोरूपां कनकवसनां सर्वभूषोज्ज्वलाङ्गीम् ॥ बीजापुरं कनक कलशं हेमपद्मं दधानामाद्यां शक्तिं सकलजननीं विष्णुवामाङ्कसंस्थाम् ॥१॥ सुराऽसुरेन्द्रादि किरीट मौक्तिकैर्युक्तं सदा यत्तव पादपङ्कजम् ॥ परावरं पातु

वरं सुमंगलं नमामि भक्त्या तव कामसिद्धये ॥ २ ॥
भवानि त्वं महालक्ष्मीः सर्वकामप्रदायिनि ॥ सुपूजिता
प्रसन्ना स्यान्महालक्ष्म्यै नमोऽस्तु ते ॥३॥

१८८-कामाक्षीसंक्षिप्तवर्णनम् ।

श्रीभगवानुवाच ॥ कामार्थमागता यस्मान्मया सार्धं महागिरौ ॥ कामाख्या प्रोच्यते देवी नीलकूटे रहोगता ॥ १ ॥ कामदा कामिनी कांता कामा कामागंदायिनी ॥ कर्मागंनाशिनी यस्मात्कामाख्या तेन चोच्यते ॥२॥ एका समस्तजगतां प्रकृतिः सा यतस्ततः ॥ ब्रह्मविष्णुशिवैर्देवैः स्तुता सा जगतां प्रसूः ॥ ३ ॥ तत्र पूर्वो ब्रह्मशैलः श्वेत इत्युच्यते बुधैः ॥ मद्रूपधारी शैलस्तु नील इत्युच्यते तथा ॥४॥ अजीर्णपत्रः सुच्छायो वृक्षस्तत्र तु संस्थितः ॥ आम्रातकः कल्पवृक्षः कल्पवल्लीसमन्वितः ॥५॥ पीठे तु सिद्धगङ्गाख्या स्वयं गङ्गा समुत्थिता ॥ आम्रातकस्य निकटे मम प्रीतिविवृद्धये ॥ ६ ॥ तत्रत्या पृथिवी सर्वा देवीरूपा स्मृता बुधैः ॥ नातः परतरं स्थानं पूज्यमस्ति जगत्त्रये ॥७॥

१८९-मातृस्तुतिरत्नपञ्चकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ललिता ललिताननेन्दुबिम्बा विजिताब्जातदलप्रभायताक्षी ॥ विनताश्रितभक्तपोषिणी सा भवतापं तनुतां नरस्य जन्म ॥१॥ करुणावरुणालया

गुणाचरणा सर्वसुपर्ववन्दिता ॥ चरणानतसिद्धचारणा
शरणं मेऽस्तु सदा मुदाऽम्बिका ॥ २ ॥ गिरिजा मुनि-
जातसन्नुता दनुजारण्यमहत्कुठारिका ॥ मनुजापसर्वका-
मदा तनुजान्नोऽवतु भारतीभद्रवान् ॥ ३ ॥ या कालि-
दासादिमहाकवीन्द्रैः सूपूजिता सर्वकलाप्रपूर्त्यै । सा श्या-
मला संस्कृतराष्ट्रभाषाप्रचारकाणां सहकारिणी स्यात्
॥४॥ दुर्गानर्गलवाग्झरीविलसिता स्वर्गापवर्गप्रदा भर्गा-
र्धाङ्गहरा निसर्गविभवा सर्गादिसंधायिनी ॥ शुम्भोद्द-
म्भनिशुम्भमुख्यदनुजग्रावोग्रदम्भोलिका माता संस्कृत-
भारती विकसनं कुर्यात्सदा भारते ॥५॥

१९० — गीर्वाणवाणी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भारत्यम्बा वीणानिक्वणल-
ब्धोदया सुपुण्यकरी । कविजन रसनासिंहाकारमहास्था-
नसाम्राज्ञी ॥१॥ कामदुघा भक्तिमतां लोकद्वयसाधनी
प्रबुद्धानाम् । प्रतिभा महाकवीनां ध्वन्यध्वन्यध्वनीना-
नाम् ॥२॥ अजरामसुन्दरवपुरुद्भासितनित्यनवतवाक-
ल्पा । सरसासततङ्क्षयताद्वाणी गीर्वाणगणगीता ॥३॥
संस्कृतमित्यन्वर्थामाख्यामेकेयमेव धारयति । अन्याः स-
र्वा भाषाः प्राकृतनाम्ना प्रपञ्च्यन्ते ॥४॥ पाणिन्यादि-
महर्षिभिरस्यां संस्कार एष आरचितः । यदसौ काल-
त्रितये विकृतिं नोपैति काञ्चिदपि ॥५॥ इन्द्राणीव

सहस्रै रक्षणां नित्यं निभायिता सरसम् । कृतबुधजनसे-
वनशतमखसुमनःस्वेव रतिमेति ॥६॥ पद्मेव पद्मगर्भ-
कोमलदलजित्पदप्रभावेण । नारायणस्य वक्षसि विहर-
ति नवनीतवन्मसृणे ॥७॥ गिरिजेव सर्वविद्याधिपतेरपि
परशिवस्य गुरुमूर्तेः । अमृतमयैरालापैर्नूनं शाणायिता
भवति ॥८॥ वेदजडोऽपि विधाता वन्दीकृत्यात्मकण्ठकू-
टेऽमुम् । एतद्रसमदमोहित आधुनुते नित्यमेव शीर्षाणि
॥९॥ व्याससुतः शुकनामा योगिवरोऽप्याश्रयन्निमा-
मेव । पक्वरसालोन्मधुरं निर्मितवान् विष्णुभागवतम्
॥१०॥ तमसातीररसालावासी यत्कोकिलोऽकूजत् ।
वाल्मीकी रामायणमस्त्येतत्सुरगिरो भाग्यम् ॥११॥
व्यासवचांसि जगत्त्रयविख्यातानीति कथ्यन्ते । संस्कृत-
वाणी संस्कृतसौभाग्यस्यैव फलमेतत् ।१२। एषा शेषम-
हर्षिभिरास्तिकधुर्यैश्च शास्त्रकारैश्च । सविशेषमादृताऽऽस्ते
नव्याकल्पोपहारसम्मानैः ।१३। सन्त्यपि केचन तादृग्दुर्दै-
वाटोन्मृष्टसाधुसौभाग्याः । एनां भाषाराज्ञीं सिंहासनवा-
सिनीं न कांक्षन्ते ॥१४॥ किं तैर्न स्मर्यन्ते कवयित्र्यो
विज्जकाप्रमुखाः । सञ्जयविदुरप्रभृतय आगमपारीण-
वीरवराः ॥१५॥ "स्त्रीशूद्रौ नाधीयाता" मिति वेदैकगो
निषेधोऽयम् । आगमपठने सर्वे वर्णावर्णाः कथं निवार्य-
न्ते ॥१६॥ अमृतांशोर्दीधितयश्छत्रं धृत्वा नु केन वार्य-

न्ते। प्रावृड्वारिदशीतलजलधाराः कस्य न ग्राह्याः ॥१७॥ वाणी संस्कृतिविमला देवैर्दत्ता प्रसह्य साऽस्मभ्यम्। अनिवारितप्रवेशं सर्वैरास्वाद्यतामेषा ॥१८॥ वैदिककर्मविधाने वेदाङ्गानां तथाऽध्ययने। शास्त्रानुगा वयं किल नानधिकारप्रवेशमिच्छामः ॥१९॥ इयमिह दैवी वाणी कविजनरसनामवाप्य मसृणाऽभूत्। शब्दार्थालङ्कारैः कर्णे झङ्कारमातनुते ॥२०॥ प्रत्यक्षरं स्फुरद्भिर्ध्वनिभिश्चित्रैरनेकविधरूपैः इयमेव भावुकानां वर्षति चित्तेषु मधुधाराम् ॥२१॥ हन्त न सम्प्रति विक्रमभूपतिरस्ति प्रशंसितौदार्यः। कविभवने हेमशिला लिखिता यस्य प्रशस्तयोऽभूवन् ॥ २२ ॥ स च नास्ति भोजराजो धारानगरी कवीकृता येन। चौरोऽपि यस्य रास्ये नाकविरासीत् कथा तु विदुषां का ॥२३॥ यद्यपि सम्प्रति कालः क्रकचकरालः समापतितः। भारत्यम्बकरुणापाङ्गमहिम्ना तरेमैतम् ॥२४॥

१९१–आनन्दलहरी।

श्रीगणेशाय नमः॥ भवानि स्तोतुं त्वां प्रभवति चतुर्भिर्न वदनैः प्रजानामीशानस्त्रिपुरमथनः पञ्चभिरपि। न षड्भिः सेनानीर्दशशतमुखैरप्यहिपतिस्तदाऽन्येषां केषां कथय कथमस्मिन्नवसरः ॥१॥ घृतक्षीरद्राक्षामधुमधुरिमा कैरपि पदैर्विशिष्यानाख्येयो भवति रसना-

मात्रविषयः। तथा ते सौन्दर्यं परमशिवदृङ्मात्रविषयः कथङ्कारं ब्रूमः सकलनिगमागोचरगुणे ॥२॥ मुखे ते ताम्बूलं नयनयुगले कज्जलकला ललाटे काश्मीरं विलसति गले मौक्तिकलता। स्फुरत्काञ्ची शाटी पृथुकटितटे हाटकमयी भजामस्त्वां गौरीं नगपतिकिशोरीमविरतम् ॥३॥ विराजन्मन्दारद्रुमकुसुमहारस्तनतटी नदद्वीणानादश्रवणविलसत्कुण्डलगुणा। नताङ्गी मातङ्गी रुचिरगतिभङ्गी भगवती सती शम्भोरम्भोरुहचटुलचक्षुर्विजयते ॥४॥ नवीनार्कभ्राजन्मणिकनकभूषापरिकरैर्वृतांगी सारंगी रुचिरनयनांगीकृतशिवा। तडित्पीता पीताम्बरललितमञ्जीरसुभगा ममापर्णा पूर्णा निरवधिसुखैरस्तु सुमुखी ॥५॥ हिमाद्रेः सम्भूता सुललितकरैः पल्लवयुता सुपुष्पा मुक्ताभिर्भ्रमरकलिता चालकभरैः। कृतस्थाणुस्थाना कुचफलनता सूक्तिसरसा रुजां हन्त्री गन्त्री विलसति चिदानन्दलतिका ॥६॥ सपर्णामाकीर्णां कतिपयगुणैः सादरमिह श्रयन्त्यन्ये वल्लीं मम तु मतिरेवं विलसति। अपर्णैका सेव्या जगति सकलैर्यत्परिवृतः पुराणोऽपि स्थाणुः फलति किल कैवल्यपदवीम् ॥७॥ विधात्रीं धर्माणां त्वमसि सकलाम्नायजननी त्वमर्थानां मूलं धनदनमनीयांघ्रिकमले। त्वमादिः कामानां जननि कृतकन्दर्पविजये सतां मुक्तेर्बीजं त्वमसि

परमब्रह्ममहिषी ॥८॥ प्रभूता भक्तिस्ते यदपि न ममा-
लोलमनसस्त्वया तु श्रीमत्या सदयमवलोक्योऽहमधुना ।
पयोदः पानीयं दिशति मधुरं चातकमुखे भृशं शंके कैर्वा
विधिभिरनुनीता मम मतिः ॥९॥ कृपापांगालोकं वितर
तरसा साधुचरिते न ते युक्तोपेक्षा मयि शरणदीक्षामुप-
गते । नचेदिष्टं दद्यादनुपदमहो कल्पलतिका विशेषः
सामान्यैः कथमितरवल्लीपरिकरैः ॥१०॥ महान्तं वि-
श्वासं तव चरणपंकेरुहयुगे निधायान्यन्नैवाश्रितमिह
मया देवतमुमे । तथापि त्वच्चेतो यदि मयि न जायेत
सदयं निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम्
॥११॥ अयः स्पर्शेलग्नं सपदि लभते हेमपदवीं यथा
रथ्यापाथः शुचि भवति गंगौघमिलितम् । तथा तत्तत्पा-
पैरतिमलिनमन्तर्मम यदि त्वयि प्रेम्णासक्तं कथमिव
न जायेत विमलम् ॥१२॥ त्वदन्यस्मादिच्छाविषयफल-
लाभेन नियमस्त्वमर्थानामिच्छाधिकमपि समर्था वितर-
णे । इति प्राहुः प्राञ्चः कमलभवनाद्यास्त्वयि मनस्त्व-
दासक्तं नक्तंदिवमुचितमीशानि कुरु तत् ॥१३॥ स्फुर-
न्नानारत्नस्फटिकमयभित्तिप्रतिफलं त्वदाकारं चंचच्छ-
शधरशिलासौधशिखरम् । मुकुन्दब्रह्मेन्द्रप्रभृतिपरिवारं
विजयते तवागारं रम्यं त्रिभुवनमहाराजगृहिणि ॥१४॥
निवास कैलासे विधिशतमखाद्याः स्तुतिकराः कुटुम्बं

त्रैलोक्यं कृतकरपुटः सिद्धिनिकरः । महेशः प्राणेशस्तद-वनिध्रराधीशतनये न ते सौभाग्यस्य क्वचिदपि मनागस्ति तुलना ॥१५॥ वृषो वृद्धो यानं विषमशनमाशा निवस-नं श्मशानं क्रीडाभूर्भुजगनिवहो भूषणविधिः । समग्रा सामग्री जगति विदितैव स्मररिपोर्यदेतस्यैश्वर्यं तव ज-ननि सौभाग्यमहिमा ॥१६॥ अशेषब्रह्मांडप्रलयविधि-नैसर्गिकमतिः श्मशानेष्वासीनः कृतभसितलेपः पशुपतिः । दधौ कण्ठे हलाहलमखिलभूगोलकृपया भवत्याः संगत्या फलमिति च कल्याणि कलये ॥१७॥ त्वदीयं सौन्दर्यं निरतिशयमालोक्य परया भियैवासीद्गंगा जलमयतनुः शैलतनये । तदेतस्यास्तास्म्यद्वदनकमलं वीक्ष्य कृपया प्रतिष्ठामातेने निजशिरसि वासेन गिरिशः ॥१८॥ वि-शालश्रीखण्डद्रवमृगमदाकीर्णघुसृणः प्रसूनव्यामिश्रं भग-वति तवाभ्यंगसलिलम् । समादाय स्रष्टा चलितपदपांसू-न्निजकरैः समाधत्ते सृष्टिं बिबुधपुरपंकेरुहदृशाम् ॥१९॥ वसंते सानन्दे कुसुमितलताभिः परिवृते स्फुरन्नानापद्मे सरसि कलहंसालिसुभगे । सखीभिः खेलन्तीं मलयपव-नांदोलितजलैःस्मरेद्यस्त्वां तस्य ज्वरजनितपीडाऽपसर-ति ॥२०॥

इतिदेवी स्तोत्राणि ।

परब्रह्मस्तोत्राणि ।

१६२-अनन्त-स्तुतिः ।

अनन्त-संसार-महासमुद्रे मग्नं समभ्युद्धर वासुदेव ।
अनन्तरूपे विनियोजयस्व अनन्तसूत्राय नमो नमस्ते ।

१६३-परब्रह्मस्तोत्रम् ।

अथ स्वस्थाय देवाय नित्याय हतपाप्मने । त्यक्तक्रमविभागाय चैतन्यज्योतिषे नमः ॥१॥ अनन्तनामधेयाय सर्वाकारविधायिने । समस्तमंत्रवाच्याय विश्वैकपतये नमः ॥२॥ दिक्कालाद्यनवछिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये । स्वनुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे ॥३॥ कर्णिकादिष्विव स्वर्णमर्णवादिष्विवोदकम् । भेदिष्वभेदि यत्तस्मै परस्मै महसे नमः ॥४॥ नमो वाङ्मनसातीतमहिम्ने परमेष्ठिने । त्रिगुणाष्टगुणानन्तगुणनिर्गुणमूर्तये ॥५॥ यथा तथापि यः पूज्यो यत्र तत्रापि योऽर्चितः । योऽपि वा सोऽपि वा योऽसौ देवस्तस्मै नमोऽस्तु ते ॥६॥ नमः स्वतन्त्रचिच्छक्तिमुद्रितस्वविभूतये । अव्यक्तव्यक्तरूपाय कस्मैचिन्मन्त्रमूर्तये ।७। चराचरजगज्जगत्स्फारस्फुरत्तामात्रधर्मिणे । दुर्विज्ञेयरहस्याय युक्तैरप्यात्मने नमः ॥८॥

१६४--परब्रह्मस्तुतिः ।

नित्यं निरावृति निजानुभवैकमानमानन्दधाम जगदंकुरबीजमेकम् । दिग्देशकालकलनादिहतस्तमर्दासहं दिशतु शर्म महन्महो वः ॥१॥ लोकत्रयस्थितिलयोदयकेलिकारः कार्येण यो हरिहरद्रुहिणत्वमेति । देवः स विश्वजनवाङ्मनसातिवृत्तशक्तिः शिवं दिशतु शश्वदनश्वरं वः ॥२॥ सर्वः किलायमवशः पुरुषाणुकर्मकायादिकारणगणो यदनुग्रहेण । विश्वप्रपञ्चरचनाचतुरत्वमेति स त्रायतां त्रिभुवनैकमहेश्वरो वः ॥३॥ मध्याह्नार्कमरीचिकास्विव पयःपूरो यदज्ञानतः खं वायुर्ज्वलनो जलं क्षितिरिति त्रैलोक्यमुन्मूलति । यत्तत्वं विदुषो निमीलति पुनः सम्भोगिभोगोपमं सान्द्रानन्दमुपास्महे तदमलं स्वात्मावबोधं महः ॥४॥ विष्णुर्वा त्रिपुरान्तको भवतु वा ब्रह्मा सुरेन्द्रोऽथवा भानुर्वा शशलक्षणोऽथ भगवान्बुद्धोऽथ सिद्धोऽथवा । रागद्वेषविषार्तिमोहरहितः सत्वानुकम्पोद्यतो यः सर्वैः सह संस्कृतो गुणगणैस्तस्मै नमः सर्वदा ॥५॥

१६५-ब्रह्मस्तोत्रम् (१) ।

जितं ते पुण्डरीकाक्ष ! पूर्णषाड्-गुण्यविग्रह । परानन्द परंब्रह्म नमस्ते चतुरात्मने ।

१९६–ब्रह्मस्तोत्रम् (२)।

तं वन्दे पद्मसद्मानमुपवीतच्छटाछलात् । गङ्गा-स्रोतस्त्रयेणैव यं सदैव निषेवते ॥१॥ कुलशैलदलं पूर्ण-सुवर्णगिरिकर्णिकम् । नभसोऽतिष्ठतेऽनन्तनालं कमलवि-ष्टरम् ॥२॥ कृतकान्तकेलिकुतुकः श्रोशीतश्वाससेकनिद्रा णः । चोरितवितलालिरूपो नाभिसरोजे विधिर्जयति ॥३॥ अविरताम्बुजसंगतिगलद्बहलकेसरसंवलितेव वः । ललितवस्तुविधानसुखोल्लसत्तनुरुहा तनुरात्मभुवोऽव-तात् ॥४॥

१९७–ईश्वरनामोच्चारणम् ।

हे जिह्वे रससारज्ञे सर्वदा मधुरप्रिये । नारायणा-ख्यं पीयूषं पिब जिह्वे निरन्तरम् ॥१॥ त्रैलोक्यचैत-न्यमयाद्यदेव श्रीनाथ विष्णो भवदाज्ञयैव ॥ प्रातः समु-त्थाय तव प्रियार्थं संसारयात्रात्नुवर्तयिष्ये ॥२॥ सुप्तः प्रबोधितो विष्णो हृषीकेशेन यत्वया । यद्यत्कारयते कर्म तत् करोमि तवाज्ञया ॥३॥

१९८–ईश्वराराधनावश्यकता ।

आत्मनो न सहायार्थं पिता माता च तिष्ठति न पुत्रदारा न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलम् ॥१॥ अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ॥ दानं दया दमः-क्षान्तिः सर्वेषां धर्मसाधनम् ॥२॥ आलोड्य सर्वशास्त्रा-

णि विचार्यैवं पुनः पुनः । इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा ॥३॥ आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् । धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण पीनाः पशुभिः समानाः ॥४॥

इति परब्रह्मस्तोत्राणि ।

अवतारस्तोत्राणि ।

१८८-श्रीचतुर्विंशत्यवतारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पातालगं क्षितितलं सुरवृन्दपाता हस्वादिदैत्यमुदधेर्निदयौ जलोर्ध्वम् । उद्धृत्य चातनुत यस्तनुते यजूंषि तं शंकरं प्रथमप्रथमं नमामि ॥१॥ स्वायम्भुवं मनुमपाच्च भुवं समस्तां भूत्वा तदीयतनयातनयोऽथ हत्वा । यः स्वात्मजैः सुरगणैरसुरव्रजं तं यज्ञं द्वितीयमभवाय भजेऽद्वितीयम् ॥२॥ प्रादुर्बभूव भवदुर्बलचित्तवृत्तीन् ज्ञानोपदेशरहितामुपदेष्टु कामः । यो देववन्द्यचरणो ननु देवहूत्यां वन्देऽवगाहकपिशं कपिलं तृतीयम् ॥३॥ यः सूनुकामुकमसूनुपरोधयन्तं सन्तोषयन् स्वजनकं स्वजनार्तिहाऽत्रिम् । यज्ञे विधूतभवभीरवधूतवेषो दत्तो भवप्रभवदुःखहरोऽस्तु तुर्यः ॥४॥ सङ्कल्पमात्रकरणाद्गतकल्पनष्टं गूढं स्वमत्वनिगमं सुगसं क-

रिष्यन् । धातुर्विचारचतुरोऽजनि यश्चतुर्धा सेवस्व पंच-ममपञ्चशरं कुमारम् ॥५॥ सत्कारमर्हति सतामपकारकोऽपीत्येवंबिधामृषिगिरं विशदां विधास्यन् । योऽशेषदोषसदने मदनेऽदयिष्ट नारायणो विजयदो जयतात् स षष्ठः ॥६॥ यः केशवेऽकृत रतिं किल शैशवेऽपि दृष्ट्वा स्वदुःखहरणं शरणं तदेव । तस्मै सुनीतितनयाय नयान्विताय नित्यं ध्रुवाय वरदं वरयेऽश्वसंख्यम् ॥७॥ किं वेनमुत्पथगतं पुपुवे न भूमिं किं दुग्धरूपमथ सारमदुग्ध यो न । तं वै हिताय जगतां विहितावतारं वन्देऽष्टमस्पृथुमहं पृथुलप्रतापम् ॥८॥ पूर्वं निजाचरणतो गृहिणामपूर्वं धर्मं जनाय निदिदेश जनान्तरज्ञः । योऽन्ते तथैव विरजस्तमसां विरज्य सत्यर्षभोऽस्तु नवमो नवसिद्धिदः सः ॥९॥ निद्रान्वितस्य मुखतो हि चतुर्मुखस्य स्नाता जले प्रतिददेऽप्रतिमः श्रुतीर्यः । हत्वा तुरगंवदनं चतुरं रणे तं सौख्येहया किल भजे दशमं हयास्यम् ॥१०॥ सर्वं जगद्धरिमयं जगतीति वाक्यं तथ्यं विधातुमथ चित्रतनुं विधाय । स्तम्भादयत सदा यततां दुरापः सोऽस्तु त्रियुक्तदशनः शमदो नृसिंहः ॥११॥ सत्यव्रताय निजभक्तिरताय नित्य गुह्यं पुरा विविदिषुः स्वपुराणतत्वम् । योऽकालजे प्रलयकालजले व्यहार्षीदेकादशो जगति मे गतिरस्तु मत्स्यः ॥१२॥ पृष्ठेन मन्दरममन्द-

भरङ्गिरिं यः क्षीरोदधावमरदैत्यकृते दधार । निःश्वासन-ततरङ्गसुरंगलुब्धः स द्वादशोऽस्तु कुदशोपशमाय कूर्मः ॥१३॥ वात्सल्यमात्मपुरुषेषु पुरुप्रतापः सन्दर्शयन्नविरतं निरतं स्वभक्तौ । ग्राहादमोचयदमोघबलो गजेन्द्रं भूत्यै हरिर्मनुमितोऽस्त्वमितोपमः सः ॥१४॥ सर्वस्वमेव बलयेऽर्पयते स्वमेष प्रत्यर्पयत्तदपरं न तदर्हमग्र्यम् । लोकत्रये किमपि वस्तु विलोकमानः श्रीवामनो वसतु पञ्चदशो मनोऽब्जे ॥१५॥ पृष्टान्निगूढविषयान्सुविषण्णचित्ते जाते विधातरि विधातृसुतैः सुविज्ञैः । उद्भूय सुष्ठुतरमुत्तरयाञ्चकार स्यात् षोडशः परमहंसगतिः स हंसः ॥१६॥ आविर्बभूव भुवि भूवलयं प्रपातुं यः सज्जनेषु किल कल्पपलाशिकल्पः ॥ दुष्टव्रजस्य दहनेदहनोऽद्वितीयस्तं त्वं मनुं पुरुषसप्तदशं मनुष्व ॥१७॥ योऽर्थाय विष्णुरुदधेरुदभूत्सुराणां नानाविधामयविनाश विधानविज्ञः पीयूषयूषपरिपूर्णघटं गृहीत्वा धनवन्तरिः सुखकरोऽस्तु कारोनविंशः ॥१८॥ राजन्यकं प्रवरराजगुणैर्विहीनं गर्वात्स्वधपरधर्मविचारशून्यम् । योऽनेकवारमवधीदवधीरिस्तमेकोनविंशमवबुध्यति को न रामम् ॥१९॥ पित्र्यं नियोगमतिदीर्घवियोगदायि सम्मानयन् मनुसमा व्यनयद्वनेषु । यः स्वीयरक्षणकृते विहितक्षणस्तं श्रीराममाश्रयवरं श्रय चित्त विशम् ॥२०॥

सम्पीडितां मतुं जपैर्दनुजस्दभावैरुज्जीवयन् वसुमतीं वसुदेवगेहे । आविवर्वभूव जनतापरितापहृत स कृष्णोऽस्तु मेऽपि गदहा गदयैकविंशः ॥२१॥ कालेन नष्टधिषणान् प्रबलेन वीक्ष्य लोकान् पराशरमुनेः शरणेऽवतीर्णः भक्तप्रियः श्रुतिगणं वहुधा व्यमक्त व्यासोऽस्तु मे शिवकरः करनेत्रसंख्यः ॥२२॥ लोके मखादिमिषतस्त्वसुखादिवीजां व्यासां प्रभूतकरणोऽमितभूतहिंसाम् । यो मूलतः किल विमूलयितुं प्रजज्ञे चित्ते त्रिनेत्रकलनं कलयामि बुद्धम् ॥२३॥ प्राप्तेषु सत्सु तनुताम्प्रचुरेष्वसत्सु धर्मे तिरोहितवति प्रसृते त्वधर्मे । जज्ञेऽथ विष्णुयशसो निलये यशस्वी कल्की प्रसिद्धचरितोऽवतु सिद्धसंख्यः ॥२४॥

२००-दशावतारस्तोत्रम् ।

यस्यालीयत शल्कसीम्नि जलधिः पृष्ठे जगन्मण्डलं दंष्ट्रायां धरणी नखे दितिसुताधीशः पदे रोदसी ॥ क्रोधे क्षत्रगणः शरे दशमुखः पाणौ प्रलम्बासुरो ध्याने विश्वमसावधार्मिककुलं कस्मैचिदस्मै नमः ॥ १ ॥ वेदा येन समुद्धृता वसुमती पृष्ठे धृताप्युद्धृता दैत्येशो नखरैर्हतः फणिपतेर्लोकं वलिः प्रापितः । क्ष्माऽक्षत्रा जगती दशास्यहिता माता कृता रोहिणी हिंसादोपवती धराप्ययवना पायात्स नारायणः ॥२॥

२०१–मत्स्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नूनं त्वं भगवान्साक्षाद्धरिर्नारायणोऽव्ययः ॥ अनुग्रहाय भूतानां धत्से रूपं जलौकसाम् ॥ १ ॥ नमस्ते पुरुषश्रेष्ठ स्थित्युत्पत्त्यप्ययेश्वर ॥ भक्तानां नः प्रपन्नानां मुख्यो ह्यात्मगतिर्विभो ॥ २ ॥ सर्वे लीलावतारास्ते भूतानां भूतिहेतवः ॥ ज्ञातुमिच्छाम्यदो रूपं यदर्थं भवता धृतम् ॥३॥ न तेऽरविन्दाक्ष पदोपसर्पणं मृषा भवत्सर्वसुहृत्प्रियात्मनः ॥ यथेतरेषाँ पृथगात्मनां सतामदीदृशो यद्वपुरभद्‌ुतं हि नः ॥४॥

इति श्रीमद्भागवतान्तर्गतं मत्स्यस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२०२–मत्स्यावतारस्तुतिः ।

मग्ने मेरौ पतति तपने तोयबिन्दाविवेन्दावन्तर्लीने जलधिसलिले व्याकुले देवलोके । मात्स्यं रूपं मुखपुटतटाकृष्टनिर्मुक्तवेदं श्रीकान्तस्य स्थलजलगतं वेत्यलक्ष्यं पुनातु ॥ १ ॥ मायामीनतनोस्तनोतु भवतां पुण्यानि पङ्कस्थितिः पुच्छाच्छोटसमुच्छलज्जलगुरुप्राग्भाररिक्तोदधेः । पातालावटमध्यसंकटतया पर्याप्तकष्टस्थितेर्वेदोद्धारपरायणस्य सततं नारायणस्य प्रभोः ॥२॥

२०३–कूर्मस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा ऊचुः ॥ नमाम ते देव पदारविन्दं प्रपन्नतापोपशमातपत्रम् ॥ यन्मूलकेता यत-

योऽञ्जसोरु संसारदुःखं बहिरुत्क्षिपन्ति ॥१॥ धातर्यद-
स्मिन्भव ईश जीवास्तापत्रयेणोपहता न शर्म ॥ आत्म-
ल्लभन्ते भगवंस्त्वांघ्रिच्छायां सविद्यामत आश्रयेम
॥२॥ मार्गन्ति यत्ते मुखपद्मनीडैश्छन्दः सुपर्णैर्ऋषयो
विविक्ते ॥ यस्याघमर्षोदसरिद्वरायाः पदं पदं तीर्थपदः
प्रसन्नाः ॥३॥ यच्छ्रद्धया श्रुतवत्या च भक्त्या संमृज्य-
माने हृदयेऽवधार्य ॥ ज्ञानेन वैराग्यबलेन धीरा व्रजेम
तत्तेऽङ्घ्रिसरोजपीठम् ॥ ४ ॥ विश्वस्य जन्मस्थितिसंय-
मार्थे कृतावतारस्य पदाम्बुजं ते ॥ व्रजेम सर्वे शरणं य-
दीश स्मृतं प्रयच्छत्यभयं स्वपुंसाम् ॥५॥ यत्सानुबन्धे-
ऽसति देहगेहे ममाहमित्यूढदुराग्रहाणाम् ॥ पुंसां सुदूरं
वसतोऽपि पुर्यां भजेम तत्ते भगवन्पदाब्जम् ॥६॥ ता-
न्वा असद्वृत्तिभिरक्षिभिर्ये पराहृतान्तर्मनसः परेश ॥
अथो न पश्यन्त्युरुगाय नूनं ये ते पदन्यासविलासलक्ष्म्याः
॥७॥ पानेन ते देव कथासुधायाः प्रवृद्धभक्त्या विशदा-
शया ये ॥ वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं यथाऽञ्जसान्वी-
युरकुण्ठधिष्ण्यम् ॥८॥ तथाऽपरे चात्मसमाधियोगबलेन
जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम् ॥ त्वामेव धीराः पुरुषा विश-
न्ति तेषां श्रमः स्यान्नतु सेवया ते ॥९॥ तत्ते वयं लोक-
सिसृक्षयाऽद्य त्वयाऽनुसृष्टास्त्रिभिरात्मभिः स्म ॥ सर्वे
वियुक्ताः स्वविहारतन्त्रं न शक्नुमस्तत्प्रतिहर्तवे ते

॥१०॥ यावद्बलिं तेऽज हराम काले यथा वयं चान्नमदाम यत्र ॥ यथोभयेषां त इमे हि लोका बलिं हरन्तोऽन्नमदन्त्यनूहाः ॥११॥ त्वं नः सुराणामसि सान्वयानां कूटस्थ आद्यः पुरुषः पुराणः ॥ त्वं देवशक्त्यां गुरुकर्मयोनौ रतस्त्वजायाँ कविमादधेऽजः ॥१२॥ ततो वयं सत्प्रमुखा यदर्थे बभूविमात्मन्करवाम किं ते ॥ त्वं नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या देवक्रियार्थे यदनुग्रहाणाम् ॥१३॥

इति श्रीमद्भागवतान्तर्गतं कूर्मस्तोत्रं समाप्तम् ।

२०४-कूर्मावतारस्तुतिः ।

निरवधि च निराश्रयं च यस्य स्थितमनिवर्तितकौतुकप्रतंचम् । प्रथम इह भवान्स कूर्ममूर्तिर्जयति चतुर्दशलोकवल्लिकन्दः ॥१॥ भ्राम्यन्महागिरिनिघर्षणलब्धपृष्ठकण्डूयनक्षणसुखायितगाढनिद्रः । सुष्वाप दीर्घतरघर्घरघोरघोषः श्वासाभिभूतजलधिः कमठः स वोऽव्यात् ॥ २ ॥ निष्प्रत्यूहमनल्पकल्पचरितस्त्रैलोक्यरक्षागुरुः क्रीडाकूर्मकलेवरः स भगवान्दिश्याद मन्दां मुदम् । कल्पान्तोदधिमध्यमज्जनवशाद्व्यासर्पतः संलुठत्पृष्ठे यस्य बभूव सैकतकणच्छायं धरित्रीतलम् ॥३॥

२०५-कच्छपरूपधारिभगवत्स्तोत्रम् ।

नमस्कुर्मः कूर्मं नमदमकोटीरनिकरप्रसर्पन्माणिवयच्छविमिलतमांजिष्ठवपुषम् । जरीजृम्भड्डिम्भद्यु म-

णिरमणीयांशुलहरीपरीरम्भस्फूर्जद्दलभिदुपलाद्रिप्रतिभ-
टम् ॥१॥ पृष्ठे भ्राम्यदमन्दमन्दरगिरिग्रावाग्रकण्डूयनै-
र्निद्रालोः कमठाकृतेर्भगवतः श्वासानिलाः पान्तु वः ॥
यत्संस्कारकलानुवर्तनवशाद्वेलाछलेनाम्भसां यातायात-
मतंद्रितं जलनिधेर्नाद्यापि विश्राम्यति ॥२॥ दृग्भ्यां य-
स्य विलोकनाय जगतो द्रागीषदुत्तोलितग्रीवाग्रोपरि वि-
स्फुरद्ग्रहगणे छत्रायितायां भुवि । हा धिग्भूः किमभूद-
भूत्तदितरात्किं चेति पर्याकुलो हन्यादेव हाठदघानि कम-
ठाधीशः कठोराणि वः ॥ ३ ॥ यो धत्ते शेषनागं तदनु
वसुमतीं स्वर्गपातालयुक्तां युक्तां सर्वैः समुद्रैर्हिमगिरिक-
नकप्रस्थमुख्यैर्नगेन्द्रैः । एतद्ब्रह्माण्डमव्याकृतघटसदृशं
भाति वंशे सुरारेः पायाद्वः कूर्मदेहः प्रकटितमहिमा मा-
धवः कामरूपी ॥४॥

२०६–वराहस्तोत्रम् (१)

नमस्तस्मै वराहाय हेलयोद्धरते महीम् ॥ खुरम-
ध्यगतो यस्य मेरुः खुरखुरायते ॥ १ ॥ पातु वो मेदिनी
दोलाबालेन्दुद्युतितस्करी । दंष्ट्रामहावराहस्य पाताल-
गृहदीपिका ॥२॥ हरेर्लीलावराहस्य दंष्ट्रादण्डः स पातु
वः ॥ हेमाद्रिकलशा यत्र धात्री छत्रश्रियं दधौ ॥३॥ स
जयति महावराहो जलनिधिजठरे चिरं निमग्नोऽपि ॥
येनान्त्रैरिव सह फणिगणैर्बलादुद्धृता धरणी ॥ ४ ॥

पातु वः कपटकोलकेशवो यस्य निःश्वसितमारुतोद्धूता ।
उच्छ्रितप्रपतनैरचोक्लृप्तकेलिकन्दुकतुलामिला मुहुः ।५।

२०७-वाराहस्तोत्रम् (२) ।

श्रीगणेशाय नमः ।। ऋषय ऊचुः ।। जितं जितं तेऽजित यज्ञभावन त्रयीं तनुं स्वां परिधुन्वते नमः ।। यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरास्तस्मै नमः कारणसूकराय ते ।।१।। रूपं तवैतन्ननु दुष्कृतात्मनां दुर्दर्शनं देव यदध्वरात्मकम् ।। छन्दांसि यस्य त्वचि बर्हिरोमस्वाज्यं दृशि त्वङ्घ्रिषु चातुर्होत्रम् ।।२।। स्रुक् तुण्ड आसीत्स्रुव ईश नासयोरिडोदरे चमसाः कर्णरन्ध्रे ।। प्राशित्रमास्ये ग्रसने ग्रहास्तु ते यच्चर्वणं ते भगवन्नग्निहोत्रम् ।।३।। दीक्षानुजन्मोपसदः शिरोधरं त्वं प्रायणीयोदयनीयदंष्ट्रः । जिह्वा प्रवर्ग्यस्तव शीर्षकं क्रतोः सभ्यावसथ्यं चितयोऽसवो हि ते ।।४।। सोमस्तु रेतः शवनान्यवस्थितिः संस्थाविभेदास्तव देव धातवः ।। सत्राणि सर्वाणि शरीरसंधिस्त्वं सर्वयज्ञक्रतुरिष्टि न्धनः ।।५।। नमो नमस्तेऽखिलयज्ञदेवताद्रव्याय सर्वक्रतवे क्रियात्मने ।। वैराग्यभक्त्यात्मजयाऽनुभावितज्ञानाय विद्यागुरवे नमो नमः ।। ६ ।। दंष्ट्राग्रकोटया भगवंस्त्वया धृता विराजते भूधर भूः सभूधरा ।। यथा वनान्निःसरतो दता मतङ्गजेन्द्रस्य सपत्रपद्मिनी ।। ७ ।। त्रयीमयं रूपमिदं च सौकरं

भूमण्डले नाथ दता धृतेन ते ॥ चकास्ति शृङ्गोढघनेन भूयसा कुलाचलेन्द्रस्य यथैव विभ्रमः ॥८॥ संस्थापयैनां जगतीं सतस्थुषां लोकाय पत्नीमसि मातरं पिता । विधेम चास्यै नमसा सह त्वया यस्यां स्वतेजोऽग्निमिवारणावधा ॥९॥ कः श्रद्धधीतान्यतमस्तव प्रभो रसां गताया भुव उद्विवर्हणम् ॥ न विस्मयोऽसौ त्वयि विश्वविस्मये यो माययेदं ससृजेऽतिविस्मयम् ॥१०॥ विधुन्वता वेदमयं निजं वपुर्जनस्तपःसत्यनिवासिनो जनः ॥ सटाशिखोद्धूतशिवाम्बुबिन्दुभिर्विमृज्यमाना भृशमीश पाविताः ॥११॥ स वै बत भ्रष्टमतिस्तवैष ते यः कर्मणां पारमपारकर्मणः ॥ यद्योगमायागुणयोगमोसितं विश्वं समस्तं भगवन्विधेहि शम् ॥१२॥

इति श्रीमद्भागवतान्तर्गतं वाराहस्तोत्रं समाप्तम् ।

२०८–श्रीवराहस्तुतिः ।

न पंकैरोलेपं कलयति धरित्री व्ययभयान्न मुस्तामादत्तेऽप्युरगनगरभ्रंशभयतः ॥ न धत्ते ब्रह्माण्डस्फुटनभयतो घर्घररवं महाक्रोडः पायादिति च संकोचितमुखः ॥१॥ न मृद्नीयान्मुद्री कथमिव मही पोत्रनिकषैर्मुखाग्निज्वालाभिः कनकगिरिरीयान्न विलयम् ॥ न शुष्येयुः श्वासैः सलिलनिधयः सप्त च कथं वराहो वः पायादिति विपुलचिन्तापरिकरः ॥२॥ पातु श्रीस्तनपत्रभ-

ङ्गिमकरीमुद्राङ्कितोरःस्थलो देवो वः स जगत्पतिर्मधु-
वधूवक्त्राब्जचन्द्रोदयः ॥ क्रीडाक्रोडतनोर्नवेन्दुविशदे द-
ष्ट्रांकुरे यस्य भूर्भातिस्म प्रलयाब्धिपल्वलतलोत्खातैक-
मुस्ताकृतिः ॥ ३ ॥ अष्टौ यस्य दिशो दलानि विपुलः
कोशः सुवर्णाचलः कान्तं केसरलालमर्ककिरणा भृङ्गाः
पयोदावली ॥ नालं शेषमहोरगः प्रवितत वारांनिधेर्लो-
लया तद्वः पातु ससुद्धरन्कुवलयं क्रोडाकृतिः केशवः
॥४॥ भूयादेष सतां हिताय भगवान्कोलावतारो हरिः
सिन्धोः क्लेशमपास्य दशनप्रान्ते नटन्त्या भुवः ॥ तारा
हारति वारिदस्तिलकति स्वर्वाहिनी माल्यति क्रीडा द-
दर्पणति क्षपापतिरहर्देवश्च ताटङ्कति ॥५॥

२०६-श्रीनृसिंहसरस्वत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्राग्ब्रह्मत्वमजोऽक्रियोऽपि बहु-
लः स्यामित्यभूद्धीस्तया सृष्टवैवांडभुवं ततो जगदिदं सृष्टं
सधर्म गुणैः ॥ स्वैः स्वं भो रमयन्विहंसि सदरीमत्राव-
तीर्यादिशं वन्दे श्रीनृसरे सरस्वति वरं ते श्रीपदाब्जद्व-
यम् ॥ १ ॥ कल्याकृष्टहृदुज्झितक्रतुनरत्रस्ताध्वराशामुं दे
प्रातः सूर्य इवोदितोऽस्यज महामोहान्धकारं ग्रसन् ॥
सद्धर्माश्रमसेतुमत्र शिथिलप्रायं सुदाढर्य् नयन् वन्दे श्री-
नृहरे० ॥२॥ सर्वानन्दनिधानरूपममलं सत्वं सुखं मूर्ति-
मत्प्रादुष्कृत्य जनत्रयान्तरमृगक्रीडावनं पावनम् ॥ संसा-

रावटमग्नमुद्धरसि भोः स्वीकृत्य तुर्याश्रमं वन्दे श्रीनृहरे० ॥३॥ मूके गां दृशमन्धके सुतनयं वन्ध्यासु चासूःमृते सौभाग्यं विधवासु पल्लवमहो दत्तं सुशुष्केन्धने ॥ एवम्भूत इयान् तवैष महिमा त्रैलोक्यसंस्थाक्षमो वन्दे० ॥४॥ मुक्तावास मुमुक्षुकल्पविटपिन् भोः कामिनां कामधुग्दारिद्र्यानलमेघदुष्कृतदवाग्नौ तापितारामते ॥ श्रुत्यन्विष्टरेजःपदं श्रुतविवादातीततत्त्वं महद्वन्दे श्रीनृ० ॥५॥ भो योगीश्वरभावितं तव पदं तीर्थाश्रयं सज्जनाजीवं कामिषु दैवतं च कमलालीस्थलं निर्मलम् ॥ विद्वद्वादकरंडकं सुकृतसंस्थानं महत्पावनं वन्दे० ॥६॥ वेदागोचर ते चरित्रममलं भक्तोऽत्र कः कृत्स्नशो वक्तुं वन्द्य विनेन्दुभूतपवनात्मेतीह मूर्त्यष्टकम् ॥ एतद्विश्वमयं न चान्यदिह वा ॐकाररूपेशितुर्वन्दे० ॥ ७ ॥ कुण्डीदण्डकरे प्रशांतममलं संन्यासिरूपं तव श्रीभीमामरजायुतिस्थिमजध्येय शरण्यं मयि ॥ ज्ञानं तारकमीशं ब्रह्मन् स्थिरीकुर्वंदो वन्दे श्रीनृहरे सरस्वदि वरं ते श्रीपदाब्जद्वयम् ॥८॥

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं नृसिंहसरस्वतीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२१०-श्रीनृसिंहसरस्वतीस्तोत्रम् । (१)

श्रीः ॥ कोटयर्भकं कोटिसुचन्द्रशांतं विश्वाश्रयं दे-

त्वगणार्चितांघ्रिम् ।। भक्तप्रियं त्वाऽत्रिसुतं वरेण्यं वन्दे नृसिंहेश्वर पाहि मां त्वम् ।१। मायातमोर्कं विगुणं गुणाढ्यं श्रीवल्लभं स्वीकृतभिक्षुवेषम् ।। सद्भक्तसेव्यं वरदं वरिष्ठं वन्दे० ।२। कामादिषण्मत्तगजांकुशं त्वामानदंकंदं परतत्वरूपम् ।। सद्धर्मगुप्त्यै विधृतावतारं वन्दे नृ० ।। ३ ।। सूर्येन्दुगुं सज्जनकाम धेनुं मृषोद्यपंचात्मकविश्वमस्मात् ।। उदेति यस्मिन्नमतेऽस्तमेति वन्दे० ।।४।। रक्ताब्जपत्रायतकांतनेत्रं सद्दण्कुण्डीपरिहापिताघम् ।। श्रितस्मितज्योत्स्नमुखेन्दुशोभं वन्दे० ।।५।। नित्यं त्रयीमृग्यपदाब्जधूलिं निनादसद्विन्दुकलास्वरूपम् ।। त्रितापतप्ताश्रितकल्पवृक्षं वन्दे० ।। ६ ।। दैन्याधिभीकष्टदवाग्दिमीडयं योगाष्टकज्ञानसकर्पणोक्तम् ।। कृष्णानदीपंचसरिद्युतिस्थं वन्दे० ।।७।। अनादिमध्यान्तमनन्तशक्तिमतर्क्यभावं परमात्मसंज्ञम् ।। व्यतीतवाग्हृत्पथमद्वितीयं वन्दे नृसिंहश्वर पाहि मां त्वम् ।।८।।

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं नृसिंहसरस्वतीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२११-नृसिंहसरस्वतीस्तोत्रम् (२)

श्रीगणेशाय नमः ।। विजयते जयते जयते च यतेरिह तमोहतमोतमो नमः ।। हृदि कदाय पदाय सदा यदा तदुदयो न दयोनवियोनयः ।।१।। तदयते न-यतेर्यदा

मनसि कामनिकामगतिस्तदा ॥ यदुदयो हृदयौकसितेऽसिते भवति योऽवति योगिवरावरान् ॥२॥ भवति माक्भवो विभवो यदा भवति कामनिकाममतिस्तदा ॥ भवति मानवगानवदुत्तमे भवतिरोधिरतो विरतोत्तमे ॥३॥ तव सतां वसतां मनसानसाप्रपदयोः पदयोरजसांजसा ॥ सुसहितः सहितस्तव तावता यदवतारवताजनतावित ॥४॥ कृतफलं तु निहाय विहायसा सयमजं भजतामज तामसात् ॥ मिलति तारकमत्र कमत्रसत्पदरजो भ्रमहारि महारिसत् ॥५॥ तदजरामरकोशविलक्षणं सहजधीगुणवेत्तृकलक्षणम् ॥ भुवनहेत्वघहृत्त्रिपुराधिकं तव न जातु पदं कुपुराधिकम् ॥६॥ त्रिविधभेदपरं समदृश्यते ॥ पदमिदं यदुद्धिचनमुद्धिया सऽनिदं प्रजहात्यधनुद्धिया ॥७॥ अज नमो जनमोहनमोहनः प्रियनियोजयते नयते नते ॥ य इह वेदनिवेदनिवेदयेत्यज पदं जपदं तपदं पदम् ॥८॥

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं नृसिंहसरस्वती स्तोत्रम् ।

२१२–नृसिंहस्तोत्रम् (१) ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच । नतोऽस्म्यनताय दुरन्तशक्तये बिचित्रवीर्याय पवित्रकर्मणे । विश्वस्य सर्गस्थितिसंयमान्गुणैः स्वलीलया संदधतेऽव्ययात्मने

॥१॥ श्रीरुद्र उवाच । कोपकालो युगान्तस्ते हतोऽयमसुरोऽल्पकः तत्सुतं पाह्युपसृतं भक्तं ते भक्तवत्सल ॥२॥ इन्द्र उवाच । प्रत्यानीताः परम भवता त्रायता नः स्वभागा दैत्याक्रान्तं हृदयकमलं त्वद्‌गृहं प्रत्यबोधि । कालग्रस्तं कियदिद महो नाथ शुश्रूषतां ते मुक्तिस्तेषां नहि बहुमता नारसिंहापरैः किम् ॥३॥ ऋषय ऊचुः । त्वं नस्तपः हरममात्थ यदात्मतेजो येनेदमादिपुरुषात्मगतं ससर्ज । तद्विप्रलुप्तममुनाऽद्य शरण्यपाल रक्षागृहीतवपुषा पुनरन्वमंस्थाः ॥४॥ पितर ऊचुः । श्राद्धानि नोऽधिबुभुजे प्रसभं तनूजैर्दत्तानि तीर्थसमयेऽप्यपिबत्तिलाम्बु । तस्योदरान्नखविदीर्णवपाऽद्य आर्च्छत्तस्मै नमो नृहरयेऽखिलधर्मगोप्त्रे ॥५॥ सिद्धा ऊचुः । यो नो गतिं योगसिद्धामसाधुरहारषीद्योगतपोबलेन । नाना दर्पं तं नखैर्निर्ददार तस्मै तुभ्यं प्रणताः स्मो नृसिंह ॥६॥ विद्याधरा ऊचुः । विद्यां पृथग्धारणयाऽनुराद्धां न्यषेधदज्ञो बलवीर्यदृप्तः ॥ स येन संख्ये पशुवद्धतस्तं मायानृसिंह प्रणताः स्मस्मि नित्यम् ॥७॥ नागा ऊचुः । येन पापेन रत्नानि स्त्रीरत्नानि हृतानि नः । तद्वक्षः पाटनेनासां दत्तानन्द नमोऽस्तु ते ॥८॥ मनव ऊचुः । मनवो वयं तव निदेशकारिणो दितिजेन देव परिभूतसेतवः । भवता खलः स उपसंहृतः प्रभो करवाम ते किमनुशाधि किंक-

रान् ॥९॥ प्रजापतय ऊचुः । प्रजेशा वयं ते परेशाभि-
सृष्टा न येन प्रजा वै सृजामो निषिद्धाः । स एव त्वया
भिन्नवक्षाऽनुशेते जगन्मङ्गलं सत्वमूर्तेऽवतारः ॥१०॥
गन्धर्वा ऊचुः । वयं विभो ते नटनाटय्गायका येनात्म-
साद्वीर्यबलौजसा कृताः । स एव नीतो भवता दशामि-
मां किमुत्पथस्थः कुशलाय कल्पते ॥११॥ चारणा ऊ-
चुः । हरे तवांघ्रिपङ्कजं भवापवर्गमाश्रिताः । यदेष
साधु हृच्छयस्त्वयाऽसुरः समापितः ॥१२॥ यक्षा ऊचुः ।
वयमनुचरमुख्याः कर्मभिस्ते । मनोज्ञैस्त इह दितिसुतेन
प्रापिता वाहकत्वम् । स तु जनपरितापं तत्कृतं जनता
ते नरहर उपनीतः पञ्चतां गर्ञ्वविशः ॥१३॥ किंपुरुषा
ऊचुः । वयं किंपुरुषास्त्वं तु महापुरुषं ईश्वरः । अयं
कुपुरुषो नष्टो धिक्कृतः साधुभिर्यदा ॥१४॥ वैतालिका
ऊचुः । सभासु सत्रेषु भवामलं यशो गीत्वा सपर्यां मह-
तीं लभामहे । यस्तां व्यनैषीद्भृशमेष दुर्जनो दृष्टया हत-
स्ते भगवन्यथाऽऽमय ॥१५॥ किन्नरा ऊचुः । वयमीश
किन्नरगणास्तवानुगा दितिजेन विष्टिममुनाऽनुकारि-
ताः । भवता हरे स वृजिनोऽवसादितो नरसिंह नाथ
विभवाय नो भव ॥१६॥ विष्णुपार्षदा ऊचुः । अद्यै-
तद्धरिनररूपमद्भुतं ते दृष्टं नः शरणद सर्वलोकशर्म ।
सोऽयं ते विधिकर विप्रशप्तस्तस्येदं निधनमनुग्रहाय

विघ्नः ॥१७॥

इति श्रीमद्भागवतान्तर्गतं नृसिंहस्तोत्रं संपूर्णम् ।

२१३-नृसिंहस्तोत्रम् (२) ।

सुरासुरशिरोरत्नकान्तिविच्छुरिताङ्घ्रये । नमस्त्रिभुवनेशाय हरये सिंहरूपिणे ॥१॥ शत्रोः प्राणानिलास्तत्र वयं दश जयोऽत्र कः । इति कोपादिवाताम्राः पान्तु वो नृहरेर्नखाः ॥२॥ प्रौज्ज्वलज्वलनज्वालाविकटोरुसटाच्छटः । श्वासक्षिप्तकुलक्ष्माभृत्पातु वो नरकेशरी ॥३॥ व्याधूतकेसरसटाविकरालवक्त्रं हस्ताग्रविस्फुरितशंखगदासिचक्रम् । आविष्कृतं सपदि येन नृसिंहरूपं नारायणं तमपि विश्वसृजं नमामि ॥४॥ दैत्यास्थिपंजरविदारणलब्धरंध्ररक्ताम्बुनिर्जरसरिद्धनजातपङ्काः । बालेन्दुकोटिकुटिलाः शुकचञ्चभासो रक्षन्तु सिंहवपुषो नखरा हरेर्वः ॥५॥ दिश्यात्सुखं नरहविर्भुवनैकवीरो यस्याहवे दितिसुतोद्दलनोद्यतस्य । क्रोधोद्यतं मुखमवेक्षितुमक्षमत्वं जानेऽभवन्निजनखेष्वपि यन्नतास्ते ॥६॥

२१४-नृसिंहस्तवः ।

सोमार्धायितनिष्पिधानदशनः सन्ध्यायितान्तर्मुखो बालार्कायितलोचनः सुरधनुर्लेखायितभ्रूलतः । अन्तर्नादनिरोधपीवरगलत्वक्कूपनिर्यत्तडित्तारस्फारसरावरुद्धगगनः पायान्नृसिंहः स वः ॥१॥ विद्युच्चक्रकरालकेस-

रसटाभारस्य दैत्यद्रुहः शोणन्नेत्रहुताशडम्बरभृतः सिंहाकृतेः शार्ङ्गिणः । विस्फूर्जद्गलगर्जितककुम्भमातङ्गदर्पोदयाः संरम्भाः सुखयन्तु व खरनखक्षुण्णद्विषद्वक्षसः ॥२॥ दैत्यानामधिपे नखांकुरकुटीकोणप्रविष्टात्मनि स्फाराभूतकरालकेसरसटासंघातघोराकृतेः सक्रोधं च सविस्मयं च सगुरुव्रीडं च सान्तःस्मितं क्रीडाकेसरिणो हरेर्विजयते तत्कालमालोकितम् ॥३॥ पायान्मामृगेन्द्री जगदखिलमसौ यत्तनूदर्षिरर्चिर्ज्वालाजालावलीढं बत भुवि सकलं व्याकुलं किं न भूयात् । न स्याच्चेदाशु तस्याधिकविकटसटाकोटिभिः पाठ्यमानादिन्दोरानन्दकंदात्तदुपरि तुहिनासारसंदोहवृष्टि ॥४॥

२१५-लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे भोगीन्द्रभोगमणिरञ्जितपुण्यमूर्ते ॥ योगीश शाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ।-१॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रदर्ककिरीटकोटिसंघट्टितांघ्रिकमलामलकान्तिकान्त । लक्ष्मीलसत्कुचसरोरुहराजहंस लक्ष्मीनृसिंह० ॥२॥ संसारघोरगहने चरतो मुरारे मारोग्रभीकरमृगप्रवरार्दितस्य । आर्तस्थ मत्सरनिदाघनिपीडितस्य लक्ष्मीनृ० ॥३॥ संसारकूपमतिघोरमगाधमूलं संप्राप्य दुःखशतसर्पसमाकुलस्य । दीनस्य देव कृपणाप-

दमागतस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥४॥ संसारसागरविशालक-
रालकालनक्रग्रसननिग्रहविग्रहस्य । व्यग्रस्य रागरसनो-
र्मिनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥५॥ संसारवृक्षभवबीज-
मनन्तकर्मशाखाशतं करणपत्रमनङ्गपुष्पम् । आरुह्य दुः-
खफलितं पततो दयालो लक्ष्मीनृसिंह० ॥६॥ संसारसर्प-
घनवक्त्रभयोग्रतीव्रदंष्ट्राकरालविषदग्धविनष्टमूर्ते । ना-
गारिवाहनसुधाब्धिनिवास शौरे लक्ष्मीनृसिंह० ॥७॥
संसारदावदहनातुरभीकरोरुज्वालावलीभिरतिदग्धतनूरु-
हस्य । त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य लक्ष्मीनृसिंह०
॥८॥ संसारजालपतितस्य जगन्निवास सर्वेन्द्रियार्थबडि-
शार्थझषोपमस्य । प्रोत्खण्डितप्रचुरतालुकमस्तकस्य ल-
क्ष्मीनृसिंह० ॥९॥ संसारभीकरकरीन्द्रकलाभिघातनि-
ष्पिष्टमर्मवपुषः सकलार्तिनाश । प्राणप्रयाणभवभीतिस-
माकुलस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥१०॥ अन्धस्य मे हृतविवेक
महाधनस्य चौरैः प्रभो बलिभिरिन्द्रियनामधेयैः । मोहा-
न्धकूपकुहरे विनिपातितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥११॥ ल-
क्ष्मीपते कमलनाभ सुरेश विष्णो वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन
पुष्कराक्ष । ब्रह्मण्य केशव जनार्दन वासुदेव देवेश देहि
कृपणस्य करावलम्बम् ॥११॥ यन्माययोर्जितवपुः प्र-
चुरप्रवाहमग्नार्थमत्र निबहोरुकरावलम्बम् । लक्ष्मीनृ-
सिंहचरणाब्जमधुव्रतेन स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शङ्क-

रेण ॥१३॥

इति श्रीमच्छंकराचार्यकृतं लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रं संपूर्णम् ।

२१८-वामनस्तोत्रम् (१) ।

अव्याद्वो वामनो यस्य कौस्तुभप्रतिबिम्बता । कौतुकालोकिनी जाता जठरीव जगत्त्रयी ॥१॥ अङ्घ्रिदण्डौ हरेरुर्ध्वमुत्क्षिप्तो बलिनिग्रहे । विधिविष्टरपद्मस्य नालदण्डो मुदेऽस्तु वः ॥२॥ सर्वग्रन्थिविमुक्तसंधिबिलसद्वक्षः स्फुरत्कौस्तुभं निर्यन्नाभिसरोजकुड्मलपुटीगम्भीरसामध्वनि । पात्रावाप्तिसमुत्सुकेन बलिना सानन्दमालोकितं पायाद्वः क्रमवर्धमानमहिमाश्चर्यं मुरारेर्वपुः ॥३॥ स्वामी सम्भुवनत्रयस्य विकृतिं नीतोऽसि किं याञ्चया यद्वा विश्वसृजा त्वयैव न कृतं तद्दीयतां ते कुतः । दानं श्रेष्ठतमाय तुभ्यमतुलं बंधाय नो मुक्तये विज्ञतो बलिना निरुत्तरतया ह्रीतो हरिः पातु वः ॥४॥ ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः क्षोणीनौकूपदण्डः क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः । ज्योतिश्चक्राक्षिदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽघ्रिदण्डः श्रेयस्त्रेविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः ॥५॥

२१९-वामनस्तोत्रम् (२) ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अदितिरुवाच । नमस्ते देवदेवेश सर्वव्यापिन् जनार्दन । सत्वादिगुणभेतेन लोकव्या-

पारकारिणे ॥१॥ नमस्ते बहुरूपाय अरूपाय नमो नमः
सर्वैकाद्भुतरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने ॥२॥ नमस्ते
लोकनाथाय परमज्ञानरूपिणे । सद्भक्तजनवात्सल्यशी-
लिने मङ्गलात्मने ॥३॥ यस्यावताररूपिणि ह्यर्चयन्ति
मुनीश्वराः । तमादिपुरुषं देवं नमामीष्टार्थसिद्धये ॥४॥
यं न जानन्ति श्रुतयो यं न जानन्ति सूरयः । तं नमा-
मि जगद्धेतुं मायिनं तममायिनम् ॥५॥ यस्यावलोकनं
चित्रं मायोपद्रववारणम् । जगद्रूपं जगत्पालं तं बन्दे
पद्मजाधवम् ॥६॥ यो देवस्त्यक्तसङ्गानां शान्तानां करु-
णार्णवः । करोति ह्यात्मना सङ्गं तं वन्दे सङ्गवर्जितम्
॥७॥ यत्पादाब्जलक्लिन्नसेवारञ्जितमस्तकाः । अवा-
पुः परमां सिद्धिं तं वन्दे सर्ववन्दितम् ॥८॥ यज्ञेश्वरं
यज्ञभुजं यज्ञकर्मसु निष्ठितम् । नमामि यज्ञफलदं यज्ञ-
कर्मप्रवोधकम् ॥९॥ अजामिलोऽपि पापात्मा यन्नामो-
च्चारणादनु । प्राप्तवान्परमं धाम तं वन्दे लोकसाक्षि-
णम् ॥१०॥ ब्रह्माद्या अपि ये देवा यन्मायापाशयन्त्रि-
ताः । न जनान्ति परं भाव तं वन्दे सर्वनायकम् ॥११॥
हृत्पद्मनिलयोऽज्ञानां दूरस्थ इव भाति यः । प्रमाणाती-
तद्भावं तं वन्दे ज्ञानसाक्षिणम् ॥१२॥ यन्मुखाद् ब्राह्म-
णो जातो बाहुभ्यां क्षत्रियोऽजनि ॥ तथैव उरुतो वैश्यः
पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥१३॥ मनसश्चन्द्रमा जातो

जातः सूर्यश्च चक्षुषः ।। मुखादिन्द्रस्तथाऽग्निश्च प्राणा-
द्वायुरजायत ।।१४।। त्वमिन्द्रः पवनः सोमस्त्वमीशान-
स्त्वमन्तकः ।। त्वमग्निर्निर्ऋतिश्चैव वरुणस्त्वं दिवाकरः
।।१५।। देवाश्च स्थावराश्चैव पिशाचाश्चैव राक्षसाः ।
गिरयः सिद्धगन्धर्वा नद्यो भूमिश्च सागराः ।।१६।। त्व-
मेव जगतामीशो यन्नामास्ति परात्परः ।। त्वद्रूपमखिलं
तस्मात्पुत्रान्मे पाहि श्रीहरे ।।१७।। इति स्तुत्वा देव-
धात्री देवं नत्वा पुनः पुनः ।। उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा
हर्षाश्रुक्षालितस्तनी ।।१८।। अनुग्राह्याऽस्मि देवेश हरे
सर्वादिकारण ।। अकण्ठकश्रियं देहि मत्सुतानां दिवौक-
साम् ।।१९।। अन्तर्यामिञ्जगद्रूप सर्वभूतपरेश्वर ।। तवा-
ज्ञातं किमस्तीह किं मां मोहयसि प्रभो ।।२०।। तथापि
तव वक्ष्यामि यन्मे मनसि वर्तते ।। वृथापुत्रास्मि देवेश
रक्षोभिः परिपीडिता ।।२१।। एतान्न हन्तुमिच्छामि य-
त्सुता दितिजातयः तानहत्वा श्रियं देहि मत्सुतानामुवाच
सा ।।२२।। इत्युक्तो देवदेवस्तु पुनः प्रीतिमुपागतः ।।
उवाच हर्षयन्साध्वीं कृपयाऽभिपरिप्लुतः ।।२३।। श्रीभ-
गवानुवाच ।। प्रीतोऽस्मि देव भद्रं ते भविष्यामि सुत-
स्तव ।। यतः सपत्नीतनयेष्वपि वात्सल्यशालिनी ।।२४।।
त्वया च मे कृतं स्तोत्रं पठन्ति भुवि मानवाः ।। तेषां
पुत्रा धनं सम्पन्न हीयन्ते कदाचन ।।२५। अन्ते मत्पद-

माप्नोति यद्विष्णोः परमं शुभम् ॥२६॥

इति श्रीपद्मपुराणे वामनस्तोत्रम् ।

२१८-वामनस्तोत्रम् (३) ।

श्री गणेशाय नमः ॥ अदितिरुवाच ॥ यज्ञेश यज्ञपुरुषाच्युत तीर्थपाद तीर्थश्रवः श्रवणमगंलनामधेय ॥ आपन्नलोकवृजिनोपशमोदयाऽऽद्य शं नः कृधीश भगवन्नसि दीननाथः ॥१॥ विश्वाय विश्वभवनस्थितिसंयमाय स्वैरं गृहीतपुरुशक्तिगुणाय भूम्ने ॥ स्वस्थाय शश्वदुपबृंहितपूर्णबोधव्यापादितात्मतमसे हरये नमस्ते ॥ २ ॥ आयुः परं वपुरभीष्टमतुल्यलक्ष्मीद्यौभूरसाः सकलयोगगुणास्त्रिवर्गः ॥ ज्ञातं च केवलमनन्त भवन्ति दुष्टात्वत्तो नृणां किमु सपत्नजयादिराशीः ॥३॥

इति श्रीमद्भागवतान्तर्गतं वामनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२१९-परशुरामाष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ यमाहुर्वासुदेवांशं हैहयानां कुलान्तकम् ॥ त्रिःसप्तकृत्वो य इमां चक्रे निःक्षत्रियां महीम् ॥१॥ दुष्टं क्षत्रं भुवो भारमब्रह्मण्यमनीनशत् ॥ तस्य नामानि पुण्यानि वच्मि ते पुरुषर्षभ ॥२॥ भूभारहरणार्थाय मायामानुषविग्रहः ॥ जनार्दनांशसम्भूतः स्थित्युत्पत्यप्ययेश्वरः ॥३॥ भार्गवो जामदग्न्यश्च पित्राज्ञापरिपालकः । मातृप्राणप्रदो धीमा-

न् क्षत्रियान्तकरः प्रभुः ।४। रामः परशुहस्तश्च कार्तवीर्यमदापहः रेणुकादुःखशोकघ्नो विशोकः शोकनाशनः ।।५।। नवीननीरदश्यामो रक्तोत्पलविलोचनः घोरो दण्डधरो धीरो ब्रह्मण्यो ब्राह्मणप्रियः ।।६।। तपोधनो महेन्द्राद्रौ न्यस्तदण्डः प्रशान्तधीः ।। उपगीयमानचरितः सिद्धगन्धर्वचारणैः ।।७।। जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखशोकभयातिगः ।। इत्यष्टाविंशतिर्नाम्नामुक्ता स्तोत्रात्मिका शुभा ।।८।। अनया प्रीयतीं देवो जामदग्न्यो महेश्वरः ।। नेदं स्तोत्रमशान्ताय नादान्तायातपस्विने ।।९।। नावेदविदुषे वाच्यमशिष्याय खलाय च ।। नासूयकायानृजवे न चानिर्दिष्टकारिणे ।।१०।। इदं प्रियाय पुत्राय शिष्यायानुगताय च ।। रहस्यधर्मं वक्तव्यं नान्यस्मै तु कदाचन ।।११।।

२२०-परशुरामस्तुतिः ।

कुलाचला यस्य महीं द्विजेभ्य, प्रयच्छतः सीमदृशत्वमापुः । बभूवुरुत्सर्गजलं समुद्राः स रैणुकेयः श्रियमातनोतु ।।१।। नाशिष्यः किमभूद्भवः किमभवन्नापुत्रिणी रेणुका नाभूद्विश्वमकार्मुकं किमिति यः प्रीणातु रामत्रपा ।। विप्राणां प्रतिमन्दिरं मणिगणोन्मिश्राणि दण्डाहतेर्नाब्धीनां स मया तमोऽपि महिषेणाम्भांसि नोगाहितः ।।२।। पायाद्वो यमदग्निवंशतिलको वीरव्रतालंकृतो रामो राम

मुनीश्वरो नृपवधे भास्वत्कुण्ठारायुधः । येनाशेषहिताङ्ग-
रुधिरैः सन्तर्पिताः पूर्वजा भक्त्या चाश्वमखे समुद्रवसना
भूर्हन्तकारीकृता ॥३॥ द्वारे कल्पतरुं गृहे सुरगवीं चि-
न्तामणीनङ्गदे पीयूषं सरसीयु विप्रवदने विद्याश्चततस्रो-
दश ॥ एवं कर्तुमयं तपस्यति भृगोर्वंशावतंसो मुनिः पा-
याद्वोऽखिलराजकक्षयकरो भूदेवभूषामणिः ॥४॥

२२१-कल्किस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सुशान्तोवाच ॥ जय हरेऽम-
राधीशसेवितं तव पदाम्बुजं भूरिभूषणम् ॥ कुरु ममा-
ग्रतः साधुसत्कृतं त्यज महामते मोहमात्मनः ॥१॥ तव
वपुर्जगद्रूपसंपदा विरचितं सतां मानसे स्थितम् ॥ रति-
पतेर्मनोमोहदायकं कुरु विकेष्टितं कामलम्पटम् ॥२॥
तव यशो जगच्छोकनाशनं मृदुकथामृतं प्रीतिदायकम् ॥
स्मितसुधोक्षितं चन्द्रवन्मुखं तव करोत्यलं लोकमङ्गल-
म् ॥३॥ मम पतिस्त्वयं सर्वदुर्जयो यदि त्वाप्रियं कर्म-
णाऽऽचरेत् ॥ जहि तदात्मनः शत्रुमुद्यतं कुरु कृपां न चे-
दीदृगाश्त्रर ॥४॥ महदहंयुतं पञ्चमात्रया प्रकृतिजाय-
या निर्मितं वपुः ॥ तव निरीक्षणाल्लीलया जगत्स्थिति-
लयोदयं ब्रह्मकल्पितम् ॥५॥ भूवियन्मरुद्वारिरेतसां रा-
शिभिः शरीरेन्द्रियाश्रितैः ॥ त्रिगुणया स्वया मायया
विभो कुरु कृपां भवत्सेवनार्थिनाम् ॥६॥ तव गुणालयं

नाम पावनं कलिमलापहं कीर्तयन्ति ये । भवभयक्षयं तापतापिता मुहुरहो जनाः संसरन्ति नो ॥७॥ तव जनुः सतां मानवर्धनं जिनकुलक्षयं देवपालकम् । कृतयुगार्पकं धर्मपूरकं कलिकुलान्तकं शं तनोतु मे ॥८॥ मम गृहं पतिपुत्रनप्तृकं गजरथैर्ध्वजैश्चामरैर्धनैः ॥ मणिवरासनं सत्कृतिं विना तव पदाब्जयोः शोभयन्ति किम् ।९। तव जगद्वपुः सुन्दरस्मितं मुखमनिन्दितं सुन्दरारवम् ॥ यदि न मे प्रियं वल्गु चेष्टितं परिकरोत्यहो मृत्युरस्त्विह ॥१०॥ हयचरभयहरकरहरशरणखरतरवरशर दशबलदलन । जय हतपरभर भवभरनाशन शशधरशससमरसभरदमन ॥११॥

इति श्रीकल्किपुराणे सुशान्तकृतं कल्किस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२२२–कल्किस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ राजान ऊचुः गद्यानि ॥ जय जय निजमायया कल्पिताशेषविशेषकल्पनापरिणामजलाप्लुतलोकत्रयोपकरणमाकलय्यमनुमनिशम्य पूरितमविजनाविजनाविभूतमहामीनशरीर त्वं निजकृतधर्मसेतुसंरक्षण कृतावतारः ॥१॥ पुनरिह जलधिमथनादृतदेवदानवगणानां मन्दराचलानयव्याकुलितानां साहाय्येनादृतचित्तः पर्वतोद्धारणामृतप्राशरचनावतारः कूर्माकारः प्रसीद परेश त्वं दीननृपाणाम् ॥२॥ पुनरिह दितिजबलपरिलंघितवासवसूदनादृत जितभुवनपराक्रमहिरण्याक्षनिधपृथिव्युद्धरणसंकल्पाभिनिवेशेन धृतकोलावतार पा-

हि नः ॥३॥ पुनरिह त्रिभुवनजयिनो महाबलपराक्रमस्य हिरण्यकशिपोर्रर्दितानां देववराणां भयभीतानां कल्याणाय दितिसुतवधप्रेप्सुर्ब्रह्मणो वरदानादवध्यस्य न शस्त्रास्त्ररात्रिदिवास्वर्गमर्त्यपातालतले देवगन्धर्वकिन्नरनागैरिति निश्चित्य नरहरिरूपेण नखाग्रभिन्नोरुं दष्टदंतच्छदत्यत्तासुं कृतवानसि ॥४॥ पुनरिह त्रिजगज्जयिनो बलेः सत्रे शक्रानुजो बटुवामनो दैत्यसंमोहनाय त्रिपदभूमियाञ्चाच्छलेन विश्वकायस्तदुत्सृष्टजलसंस्पर्शविवृद्धमनोभिलाषस्त्वं भूतले बलेर्दौवारिकत्वमङ्गीकृतमुचितं दानफलम् ॥५॥ पुनरिह हैहयादिनृपाणाममितबलपराक्रमाणां नानामदोल्लंघितमर्यादावर्त्मनाँ निधनाय भृगुवंशजो जामदग्नय्ः पितृहोमधेनुहरणप्रवृद्धमन्युवशात् त्रिःसप्तकृत्वो निःक्षत्रियां पृथिवीं कृतवानसि परशुरामावतारः ॥६॥ पुनरिह पुलस्त्यवंशावतंसस्य विश्रवसः पुत्रस्य निशाचरस्य रावणस्य लोकत्रयतापनस्य निधनमुररीकृत्य रविकुलजातदशरथात्मजो विश्वामित्रादस्त्राण्युपलभ्य वने सीताहरणवशात्प्रवृद्धमन्युनाऽम्बुधिं वानरैर्निबध्य सगणं दशकन्धरं हतवानसि रामावतारः ॥७॥ पुनरिह यदुकुलजलधिकलानिधिः सकलसुरगणसेवितपादारविंदद्वन्द्वो विविधदानवदैत्यदलनकोत्रयदुरिततापनो वसुदेवात्मजो रामावतारो बलभद्रस्त्वमसि ॥८॥ पुनरिह विधिकृतदेवधर्मानुष्ठानविहितनानादर्शनसघृणः संसारक-

र्मत्यागविधिना ब्रह्माभासविलासचातुरीं प्रकृतिविमान-नामसंपादयत् बुद्धावतारस्त्वमसि ॥९॥ अधुना कलि-कुलनाशावतारो बौद्धपाषण्डम्लेच्छादीनां च वेदधर्मसेतु-परिपालनाय कृतावतारः कल्किरूपेणास्मान् स्त्रोत्वनिर-यादुद्धृतवानसि तवानुकम्पां किमिह कथयामः ॥१०॥ क्व ते ब्रह्मादीनामविजितविलासांतरणं क्व नः कामा-वामाकुलितमृगतृष्णार्तमनसम् ॥ सुदुष्प्राप्यं युष्मच्चरण-जलजालोकनमिदं कृपापारावारः प्रमुदितदृशाऽऽश्वासय निजान् ॥११॥

इति श्रीकल्किपुराणेऽनुभागवते भविष्ये द्वितीयांशे नृपकृतकल्किस्तवः सम्पूर्णम् ।

इति अवतार स्तोत्राणि ।

श्री रामावतारस्तोत्राणि ।

२२३–रामगीता ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ ततो जगन्मंगलमंगलात्मना विधाय रामायणकीर्तिमुत्तमाम् । चचार पूर्वाचरितं रघूत्तमो राजर्षिवर्यैरभिसेवितं यथा ॥१॥ सौमित्रिणा पृष्ठ उदारबुद्धिना रामः कथाः प्राह पुरातनीः शुभाः ॥ राज्ञः प्रमत्तस्य नृगस्य शापतो द्विजस्य तिर्यक्त्वमथाह राघवः ॥२॥ कदाचिदेकांत उपस्थित प्रभु राम रमालालितपादपंकजम् ॥ सौमित्रि-

रासादितशुद्धभावनः प्रणम्य भक्त्या विनयान्वितोऽब्रवीत्
॥३॥ सौमित्रिरुवाच ॥ त्वं शुद्धबोधोऽसि हि सर्वदेहि-
नामात्माऽस्यधीशोऽसि निराकृतिः स्वयम् ॥ प्रतीयसे
ज्ञानदृशाँ महामते पादाब्जभृङ्गासहितसंगिनाम् ॥४॥
अहं प्रपन्नोऽस्मि पदांबुजं प्रभो भवापवर्गं तव योगभा-
वितम् । यथाऽञ्जसाऽज्ञानमपारवारिधिं सुख तरि-
ष्यामि तथाऽनुशाधि माम् ॥५॥ श्रुत्वाऽथ सौमित्रिव-
चोऽखिलं तदा प्राह प्रपन्नार्तिहरः प्रसन्नधीः ॥ विज्ञान-
मज्ञानतमोपशांतये श्रुतिप्रपन्नं क्षितिपालभूषण. ॥६॥
श्रीराम उवाच ॥ आदौ स्ववर्णाश्रमवर्णिताः क्रियाः
कृत्वा समासादितशुद्धमानसः ॥ समाप्य तत्पूर्वमुपात्त-
साधनः समाश्रयेत्सद्गुरुमात्मलब्धये ॥७॥ क्रिया शरी-
रोद्भवहेतुरादृता प्रिया प्रियौ तौ भवतः सुरागिणः ॥
धर्मेतरौ तत्र पुनः शरीरकं पुनः क्रिया चक्रवदीर्यते भवः
॥८॥ अज्ञानमेवास्य हि मूलकारणं तद्धानमेवात्र विधौ
विधीयते ॥ विद्यैव तन्नाशविधौ पटीयसी न कर्म तज्जं
सविरोधमीरितम् ॥ ९ ॥ नाज्ञानहानिर्न च रागसंक्षयो
भवेत्ततः कर्म सदोषमुद्भवेत् ॥ ततः पुनः संसृतिरप्य-
वारिता तस्माद्बुधो ज्ञानविचारवान् भवेत् ॥१०॥ ननु
क्रिया वेदमुखेन चोदिता यथैव विद्या पुरुषार्थसाधनम् ।
कर्तव्यता प्राणभृतः प्रचोदिता विद्या सहायत्वमुपैति सा

पुनः ॥ ११ ॥ कर्माकृतौ दोषमपि श्रुतिर्जगौ तस्मात्सदा कार्यमिदं मुमुक्षुणा ॥ ननु स्वतंत्रा ध्रुवकार्यकारिणी विद्या न किञ्चिन्मनसाऽप्यपेक्षते ॥१२॥ न सत्यकार्येऽपि हि यद्वदध्वरः प्रकांक्षतेऽन्यानपि कारकादिकान् ॥ तथैव विद्या विधितः प्रकाशितैर्विशिष्यते कर्मभिरेव मुक्तये ॥१३॥ केचिद्वदन्तीति वितर्कवादिनस्तदप्यसंदृष्टविरोधकारणात् । देहाभिमानादभिवर्धते क्रिया विद्या गताहंकृतितः प्रसिद्ध्यति ॥ १४ ॥ विशुद्धविज्ञानविरोचनाञ्चिता विद्यात्मवृत्तिश्चरमेति भण्यते ॥ वदेति कर्माखिलकारकादिभिर्निहन्ति विद्याऽखिलकारकादिकम् ॥ १५ ॥ तस्मात्त्यजेत्कार्यमशेषतः सुधीर्विद्याविरोधान्न समुच्चयो भवेत् ॥ आत्मानुसन्धानपरायणः सदा निवृत्तसर्वेन्द्रियवृत्तिगोचरः ॥ १६ ॥ यावच्छरीरादिषु माययाऽऽत्मधीस्तावद्विधेयो विधिवादकर्मणाम् ॥ नेतीति वाक्यैरखिलं निषिध्य तज्ज्ञात्वा परात्मानमथ त्यजेत्क्रियाः ॥१७॥ यदा परात्मात्मविभेदभेदकं विज्ञानमात्मन्यवभाति भास्वरम् ॥ तदैव माया प्रविलीयतेऽञ्जसा सकारका कारणमात्मसंसृतेः ॥१८॥ श्रुतिप्रमाणाभिविनाशिता च सा कथं भविष्यत्यपि कार्यकारिणी ॥ विज्ञानमात्रादमलाद्द्वितीयस्तस्मादविद्या न पुनर्भविष्यति ॥१९॥ यदि स्म नष्टा न पुनः प्रसूयते कर्ताऽहमस्येति

मतिः कथं भवेत् ।। तस्मात्स्वतंत्रा न किमप्यपेक्षते विद्या
विमोक्षाय दिभाति केवला ।।२०।। सा तैत्तिरीयश्रुति-
राह सादरं न्यास प्रशास्ताखिलकर्मणां स्फुटम् ।। एता-
वदित्याह च याजिनां श्रुतिर्ज्ञानं विमोक्षाय न कर्म-
साधनम् ।। २१ ।। विद्यासमत्वेन तु दर्शितस्त्वया क्रतुर्न
दृष्टांत उदाहृतः समः ।। फलैः पृथक्त्वाद्वहुकारकैः क्रतुः
संसाध्यते ज्ञानमतो विपर्ययम् ।।२२।। स प्रत्यवाहो ह्यह-
मित्यनात्मधीरज्ञप्रसिद्धा न तु तत्वदर्शिनः ।। तस्माद्बु-
धैस्त्याज्यमपि क्रियात्मभिर्विधानतः कर्मविधिप्रकाशित-
म् ।।२३।। श्रद्धान्वितस्तत्वतसीति वाक्यतो गुरोः प्रसा-
दादपि शुद्धदानसः ।। विज्ञाय चैकात्म्यमथात्मजीवयोः
सुखी भवेन्मेरुरिवाप्रकम्पनः ।।२४।। आदौ पदार्थावग-
तिर्हि कारणं वाक्यार्थविज्ञानविधौ विधानतः ।। तत्वं-
पदार्थौ परमात्मजीवकावसीति चैकात्म्यमथानयोर्भवेत्
।।२५।। प्रत्यक्परोक्षादिविरोधमात्मनोर्विहाय संगृह्य त-
योश्चिदात्मताम् ।। संशोधितां लक्षणया च लक्षितां ज्ञा-
त्वा स्वमात्मानमथाद्वयो भवेत् ।२६। एकात्मकत्वाज्ज-
हती न सम्भवेत्तथाऽजहल्लक्षणता विरोधतः ।। सोऽयं
पदार्थाविव भागलक्षणा युज्येत तत्वं पदयोरदोषतः
।।२७।। रसादिपञ्चीकृतभूतसम्भवं भोगालयं दुःखसु-
खादिकर्मणाम् ।। शरीरमाद्यन्तवदादिकर्मजं मायामयं

स्थूलमुपाधिमात्मनः ॥२८॥ सूक्ष्मं मनोबुद्धिदशेन्द्रियै-र्युतं प्राणैरपंचीकृतभूतसम्भवम् ॥ भोक्तुः सुखादेरनु-साधनं भवेच्छरीरमन्यद्विदुरात्मनो बुधाः ॥२९॥ अना-द्यनिर्वाच्यमपीह कारणं मायाप्रधानं तु परं शरीरकम् । उपाधिभेदात्तु यतः पृथक्स्थितं स्वात्मानमात्मन्यवधार-येत्क्रमात् ॥३०॥ कोशेषु पञ्चस्वपि तत्तदाकृतिर्विभाति संगात्स्फटिकोपलो यथा ॥ असंगरूपोऽयमजो यतोऽद्व-यो विज्ञायतेऽस्मिन्परितो विचारिते ॥३१॥ बुद्धेस्त्रिधा वृत्तिरपीह दृश्यते स्वप्नादिभेदेन गुणत्रयात्मनः ॥ अन्यो-न्यतोऽस्मिन् व्यभिचारितो मृषा नित्ये परे ब्रह्मणि के-वले शिवे ॥३२॥ देहेन्द्रियप्राणमनश्चिदात्मनां संघाद-जस्रं परिवर्तते धियः ॥ वृत्तिस्तमोमूलतयाऽज्ञलक्षणा यावद्भवेत्तावदसौ भवेद्भवः ॥३३॥ नेतिप्रमाणेन नि-राकृताखिलो हृदा समास्वादितचिद्घनामृतः ॥ त्यजे-दशेषं जगदात्तसद्रसं पीत्वा यथाऽम्भः प्रजहाति तत्फ-लम् ॥३४॥ कदाचिदात्मा न मृतो न जायते न क्षीयते नापि विवर्धतेऽनवः ॥ निरस्तसर्वातिशयः सुखात्मकः स्वयम्प्रभः सर्वगतोऽयमद्वयः ॥ ३५ ॥ एवंविधे ज्ञानमये सुखात्मके कथं भवो दुःखमयः प्रतीयते ॥ अज्ञानतोऽ-ध्यासवशात्प्रकाशते ज्ञानं विलीयेत विरोधतः क्षणात् ॥३६॥ यदन्यदन्यत्र विभाव्यते भ्रमादध्यासमित्याहुरमुं

विपश्चितः ।। असर्पभूतेऽहिविभावनं यथा रज्ज्वादिके तद्वदपीश्वरे जगत् ।।३७।। विकल्पमायारहिते चिदात्मकेऽहङ्कार एष प्रथमः प्रकल्पितः ।। अध्यास एवात्मनि सर्वकारणे निरामये ब्रह्मणि केवले परे ।।३८।। इच्छादिरागादिसुखादिधर्मिकाः सदा धियः संसृतिहेतवः परे । यस्मात्प्रसुप्तौ तदभावतः परः सुखस्वरूपेण विभाव्यते हि नः ।।३९।। अनाद्यविद्योद्भवबुद्धिबिम्बतो जीवः प्रकाशोऽयमितीर्यते चितः ।। आत्मा धियः साक्षितया पृथक् स्थितो बुद्ध्या परिच्छिन्नपरः स एव हि ।।४०।। चिद्बिम्बाक्ष्यात्मधियां प्रसन्नस्त्वेकत्र वासादनलाक्तलोहवत् । अन्योन्यमध्यमध्यासवशात्प्रतीयते जडाजडत्वं च चिदात्मचेतसोः ।।४१।। गुरोः सकाशादपि वेदवाक्यतः सञ्जातविद्यानुभवो निरीक्ष्य तम् ।। स्वात्मानमात्मस्थमुपाधिवर्जितं त्यजेदशेषं जडमात्मगोचरम् ।। ४२ ।। प्रकाश रूपोऽहमजोऽहमद्वयोऽसकृद्विभातोऽहमतीव निर्मलः विशुद्धविज्ञानघनो निरामयः सम्पूर्ण आनन्दमयोऽहमक्रियः ।।४३।। सदैव मुक्तोऽहमचिंत्यशक्तिमानतींद्रियज्ञानमविक्रियात्मकः ।। अनंतपारोऽहमहर्निशं बुधैर्विभावितोऽहं हृदि वेदवादिभिः ।।४४।। एवं सदाऽऽत्मानमखंडितात्मना विचार्यमाणस्य विशुद्धभावना ।। हन्यादविद्यामचिरेण कारकै रसायनं यद्वदुपासितं रुजः ।। ।४५। वि-

विक्त आसीन उपारतेंद्रियो विनिर्जितात्मा विरलांतराशयः ॥ विभावयेदेकमनन्यसाधनो विज्ञानदृक्केवल आत्मसंस्थितः ॥४६॥ विश्वं यदेतत्परमात्मदर्शनं विलापयेदात्मनि सर्वकारणे ॥ पूर्णश्चिदानंदमयोऽवतिष्ठते न वेदबाह्यं न च किंचिदन्तरम् ॥४७॥ पूर्वं समाधेरखिलं विचिन्तयेदोङ्कारमात्रं सचराचरं जगत् ॥ तदेव वाच्यं प्रणवो हि वाचको विभाव्यते ज्ञानवशान्न बोधतः ॥४८॥ अकारसंज्ञः पुरुषो हि विश्वतो ह्युकारकस्तैजस ईर्यते क्रमात् ॥ प्राज्ञो मकारः परिपठ्यतेऽखिलैः समाधिपूर्वं न तु तत्वतो भवेत् ॥४९॥ विश्वं त्वकारं पुरुषं विलापयेदुकारमध्ये बहुधा व्यवस्थितम् ॥ ततो मकारे प्रविलाप्य तैजसं द्वितीयवर्णं प्रणवस्य चांतिमम् ॥५०॥ मकारमप्यात्मनि चिद्घने परे विलापयेत्प्राज्ञमपीह कारणम् ॥ सोऽहं परं ब्रह्म सदा विमुक्तिमद्विज्ञानदृङ्मुक्त उपाधितोऽमलः ॥ ५१ ॥ एवं सदा जातपरात्मभावनः स्वानंदतुष्टः परिविस्मृताखिलः ॥ आस्ते स नित्यात्मसुखप्रकाशकः साक्षाद्विमुक्तोऽचलवारिसिंधुवत् ।५२। एवं सदाऽभ्यस्तसमाधियोगिनो निवृत्तसर्वेन्द्रियगोचरस्य हि । विनिर्जिताशेषरिपोरहं सदा दृश्यो भवेयं जितषड्गुणात्मनः ॥५३॥ ध्यात्वैवमात्मानमहर्निशं मुनिस्तिष्ठेत्सदा मुक्तसमस्तबन्धनः । प्रारब्धमश्नन्नभिमानवर्जितो मय्येव

साक्षात्प्रविलीयते ततः ॥५४॥ आदौ च मध्ये च तथैव चांततो भवं विदित्वा भयशोककारणम् । हित्वा समस्तं विधिवादचोदितं भजेत्स्वमात्मानमथाखिलात्मनाम् ॥५५॥ आत्मन्यभेदेन विभावयन्निदं भवत्यभेदेन मयाऽऽत्मना तदा ॥ यथा जलं वारिनिधौ यथा पयः क्षीरे वियद्व्योम्न्यनिले यथाऽनिलः ॥५६॥ इत्थं यदीक्षेत हि लोकसंस्थितो जगन्मृषैवेति विभावयन्मुनिः ॥ निराकृतत्वाच्छ्रुतियुक्तिमानतो यथेंदुभेदो दिशि दिग्भ्रमादयः ॥५७॥ यावन्न पश्येदखिलं मदात्मकं तावन्मदाराधनतत्परो भवेत् ॥ श्रद्धालुरत्यूर्जितभक्तिलक्षणो यस्तस्य दृश्योऽहमहर्निशं हृदि ॥५८॥ रहस्यमेतच्छ्रुतिसारसंग्रहं मया विनिश्चित्य तवोदितं प्रिय ॥ यस्त्वेतदालोचयतीह बुद्धिमान् स मुच्यते पातकराशिभिः क्षणात् ॥५९॥ भ्रातर्यदीदं परिदृश्यते जगन्मायैव सर्वं परिहृत्य चेतसा ॥ मद्भावनाभावितशुद्धमानसः सुखी भवानन्दमयो निरामयः ॥६०॥ यः सेवते मामगुणं गुणात्परं हृदा कदा वा यदि वा गुणात्मकम् ॥ सोऽहं स्वपादांचितरेणुभिः स्पृशन्पुनाति लोकत्रितयं यथा रविः ॥६१॥ विज्ञानमेतदखिलं श्रुतिसारमेकं वेदान्तवेद्यचरणेन मयैव गीतम् ॥ यः श्रद्धया परिपठेद्गुरुभक्तियुक्तो मद्रूपमेति यदि मद्वचनेषु भक्ति ॥६२॥

इति श्रीमदध्यात्म रामायणे उत्तरकांडे रामगीतासम्पूर्णा ।

२२४–रामाष्टोत्तरशताभिधानस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। अस्य श्रीरामाष्टोत्तरशतमाला मन्त्रस्तोत्रस्य वेदव्यास ऋषिः ।। श्रीरामः परमात्मा देवता ।। अनुष्टुप् छन्दः ।। श्रीरामप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।। श्रीरामो रामभद्रश्च रामचन्द्रश्च शाश्वतः ।। विश्वामित्रप्रियो दान्तः शरणत्राणतत्परः ।।१।। बलिप्रमथनो वाग्मी सत्यवाक्सत्यविक्रमः ।। सत्यव्रतो व्रतफलः सदा हनुमदाश्रयः ।।२।। कौसल्येयः खरध्वंसी विराधवधपण्डितः । विभीषणपरित्राता दशग्रीवशिरोहरः ।।३।। सप्ततालप्रभेत्ता च हरकोदण्डखण्डनः ।। जामदग्न्यमहादर्पदलनस्ताटकान्तकृत् ।।४।। वेदान्तसारो वेदात्मा भववैद्यश्च भेषजम् ।। खरदूषणत्रिशिरहा त्रिमूर्तिस्त्रिगुणात्मवान् ।।५।। त्रिविक्रमस्त्रिलोकात्मा पुण्यचारित्रकीर्तनः ।। त्रिलोकीरक्षको धन्वी दण्डकारण्यपावनः ।।६।। अहल्यापवनश्चैव विप्रभक्तो वरप्रदः ।। जितेन्द्रियो जितक्रोधो जितामित्रो जगद्गुरुः ।।७।। ऋक्षवानरसंघाती चित्रकूटसमाश्रितः जयन्तत्राणवरदः सुमित्रापुत्रसेवितः ।।८।। सर्वदेवाधिदेवश्च मृतवानरजीवनः ।। मायामारीचहन्ता च महाभागो महाधनुः ।।९।। सर्वदेवस्तुतः सौम्यो ब्रह्मण्यो मुनिसंस्तुतः ।। महायोगी महोदारः सुग्रीवेप्सितराज्यदः ।।१०।। सर्वपुण्याधिकफलः स्मृतः सर्वा-

घनाशनः ॥ आदिदेवो महादेवः परमः पुरुषस्तथा ॥११॥ पुण्योदयो दयाचारः पुराणः पुरुषोत्तमः ॥ स्मितवक्त्रः स्मितहासो मितभाषी च राजसः ॥१२॥ अनन्तगुणगम्भीरो धीरो दान्तगुणोत्तरः मायामानुषचारित्रो महादेवाभिपूजितः ॥१३॥ सेतुकृज्जितवारीशः सर्वतीर्थमयो हरिः ॥ श्यामाङ्गः सुन्दरः पीतवासा शार्ङ्गधनुर्धरः ॥१४॥ सर्वयज्ञाधिपो यज्ञो जरामरणवर्जितः ॥ शिवलिंगप्रतिष्ठाता सर्वावगुणवर्जितः ॥१५॥ परमात्मा परं ब्रह्म सच्चिदानन्दविग्रहः ॥ परं ज्योतिः परं धाम पराकाशः परात्परः ॥१६॥ परेशः पारगः पारः सर्वदेवात्मकः शिवः इतीदं रामचन्द्रस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ॥१७॥ गुह्याद्गुह्यतरं देवि तव प्रीत्या प्रकीर्तितम् ॥ यः पठेच्छृणुयाद्वापि भक्तियुक्तेन चेतसा ॥१८॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यः कल्पकोटिशतैरपि ॥ कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च ॥ वैकुण्ठे वासमाप्नोति दशपूर्वैर्दशापरैः ॥१९॥

इति श्रीपद्मपुराणे उमामहेश्वरसंवादे रामाष्टोत्तरशतनामाभिधानं स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२२५—रामरक्षास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य बुधकौशिक ऋषिः ॥ श्रीसीतारामचन्द्रो देवता ॥ अनु-

ष्टुप् छन्दः सीता शक्तिः ।। श्रीमद्धनुमान् कीलकम् ।। श्रीसीतारामचन्द्रप्रीत्यर्थे रामरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः । अथ ध्यानम् ।। ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् ।। वामाङ्कारूढसीतामुखकमलमिलल्लोचनं नीरनाभं नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम् ।।१।। इति ध्यानम् ।। चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ।।२।। ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् ।। जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम् ।।२।। सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तंचरान्तकम् ।। स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम् ।।३।। रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम् ।। शिरोमे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ।।४।। कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती ।। घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः ।।५।। जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरतवन्दितः ।। स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ।।६।। करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित् ।। मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रयः ।।७।। सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः ।। ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत् ।।८।। जानुनी सेतुकृत्पातु जंघे दशमुखान्तकः ।। पादौ

विभिषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ॥९॥ एतां राम-
बलोपतां रक्षां यः सुकृती पठेत् । स चिरायुः सुखी पुत्री
विजयी विनयी भवेत् ॥१०॥ पातालभूतलव्योमचारि-
णश्छद्मचारिणः ॥ न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं राम-
नामभिः ॥११॥ रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा
स्मरन् ॥ नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति
॥१२॥ जगज्जैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाऽभिरक्षितम् ॥ यः
कण्ठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥१३॥ वज्रपञ्ज-
रनामेदं यो रामकवचं स्मरेत् ॥ अव्याहताज्ञः सर्वत्र
लभते जयमंगलम् ॥१४॥ आदिष्टवान् यथा स्वप्ने राम-
रक्षामिमां हरः तथा लिखितवान् प्रातः प्रबुद्धो बुद्धकौ-
शिकः ॥१५॥ आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलाप-
दाम् ॥ अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः
॥१६॥ तरुणौ रूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ ॥ पुण्ड-
रीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ॥१७॥ फलमू-
लाशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ ॥ पुत्रौ दशरथ-
स्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥१८॥ शरण्यौ सर्वसत्वानां
श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् ॥ रक्षःकुलनिहन्तारौ त्रायेतां नो
रघूत्तमौ ॥१९॥ आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुग-
निषंगसंगिनौ ॥ रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रतः पथि
सदैव गच्छताम् ॥२०॥ सन्नद्धः कवची खंगी चापबा-

णधरो युवा ।। गच्छन् मनोरथोऽस्माकं रामः पातु सलक्ष्मणः ।। २१ ।। रामो दशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बलो । काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कोसल्येयो रघूत्तमः ।।२२।। वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ।।२३।। इत्येतानि जपन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयाऽन्वितः ।। अश्वमेधायुतं पुण्यं सम्प्राप्नोति न संशयः ।।२४।। रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् ।। स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः ।।२५।। रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् ।। राजेन्द्रं सत्यसंधं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्ति वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ।।२६।। रामायरामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे । रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ।।२७।। श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम श्रीराम राम भरताग्रज राम राम ।। श्रीराम राम रणकर्कश राम राम श्रीराम राम शरणं भव राम राम ।।२८।। श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि ।। श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ।। २९ ।। माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः सर्वस्वं मे रामचन्द्रो

दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥३०॥ दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे तु जनकात्मजा ॥ पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम् ॥३१॥ लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् ॥ कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ॥३२॥ मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ॥ वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥३३॥ कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥ ३४ ॥ आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ॥ लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥३५॥ भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम् ॥ तर्जनं यमदूतानां राम रामेति गर्जनम् ॥३६॥ रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः ॥ रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भो राम मामुद्धर ॥३७॥ राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥३८॥

इति श्रीबुधकौशिकविरचितं श्रीरामरक्षास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२२६-श्रीरामहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ ततो रामः स्वयं प्राह हनुमन्तमुपस्थितम् ॥ शृणु तत्वं प्रवक्ष्यामि ह्यात्मानात्मपरात्मनाम् ॥१॥ आकाशस्य यथा भेदस्त्रिविधो दृश्यते महान् ॥ जलाशये महाकाशस्तदवच्छिन्न एव हि ॥ प्रतिबिम्बाख्यमपरं दृश्यते त्रिविधं नभः ॥२॥ बुद्ध्यवच्छिन्नचैतन्यमेकं पूर्णमथापरम् ॥ आभासस्त्वपरं बिम्बभूतमेवं त्रिधा चितिः ॥ ३ ॥ साभासबुद्धेः कर्तृत्वमविच्छिन्नेऽविकारिणि ॥ साक्षिण्यारोप्यते भ्रान्त्या जीवत्वं च तथाऽबुधैः ॥४॥ आभासस्तु मृषाबुद्धिरविद्याकार्यमुच्यते ॥ अविच्छिन्नं तु तद् ब्रह्म विच्छेदस्तु विकल्पितः ॥५॥ अविच्छिन्नस्य पूर्णेन एकत्वं प्रतिपाद्यते ॥ तत्वमस्यादिवाक्यैश्च साभासस्याहमस्तथा ॥ ६ ॥ ऐक्यज्ञानं यदोत्पन्नं महावाक्येन चात्मनोः ॥ तदाऽविद्या स्वकार्यैश्च नश्यत्येव न संशयः ॥७॥ एवद्विज्ञाय मद्भक्तो मद्भावायोपपद्यते ॥ मद्भक्तिविमुखानां हि शास्त्रगर्तेषु मुह्यताम् ॥ न ज्ञानं न च मोक्षः स्यात्तेषां जन्मशतैरपि ॥ ८ ॥ इदं रहस्यं हृदयं ममात्मनो मयैव साक्षात्कथितं तवानघ ॥ मद्भक्तिही-

नाय शठाय न त्वया दातव्यमैंद्रादपि राज्यतोऽधिकम् ॥६॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणे श्रीरामहृदयं सम्पूर्णम् ।

२२७-श्रीरामचन्द्राष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ चिदाकारो धाता परमसुखदः पावनतनुर्मुनींद्रैर्योगीन्द्रैर्यतिसुरेन्द्रैर्हनुमता ॥ सदा सेव्यः पूर्णो जनकतनयाङ्गः सुरगुरू रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥१॥ मुकुन्दो गोविन्दो जनकतयालालितपदः पदं प्राप्ता यस्याधमकुलभवा चापि शबरी ॥ गिरातीतोऽगम्यो विमलधिषणैर्वेदवचसा रमानथो रामो रमतु चित्ते तु सततम् ॥२॥ धराधीशोऽधीशः सुरनरवराणां रघुपतिः किरोटी केयूरी कनककपिशः शोभितवपुः ॥ समासीनः पीठे रविशतनिभे शांतमनसो रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥३॥ वरेण्यः शारण्यः कपिपतिसखा चांतविधुरो ललाटे काश्मीरो रुचिरगतिभगं शशिमुखः ॥ नराकारो रामो यतिपतिनुदः संसृतिहरो रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ४ ॥ विरूपाक्षः काश्यामुपदिशति यन्नाम शिवदं सहस्रं यन्नाम्नां पठति गिरिजा प्रत्युषसि वै ॥ कलौ के गायन्तीश्वरविधिमुखा यस्य चरितं रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ५ ॥ परो

धीरोऽधीरोऽसुरकुलभवश्चासुरहरः परात्मा सर्वज्ञो नरसुरगणैर्गीवसुयशाः ॥ अहल्याशापघ्न. शरकर अजः कौशिकसखा रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ।६। हृषीकेशः शौरिर्धरणिधरशायी मधुरिपुरुपेन्द्रो वैकुण्ठो गजरिपुहरस्तुष्टमनसः॥ बलिध्वंसी वीरो दशरथसुतो नीतिनिगुणो रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥७॥ कविः सौमित्रीड्यः कपटमृगघाती वनचरो रणश्लाघी दांतो धरणिभरहर्ता सुरनुतः ॥ अमानी मानज्ञो निखिलजनपूज्यो हृदिशयो रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥८॥ इद रामस्तोत्रं वरममरदासेन रचितमुषःकाले भक्त्या हृदि पठति यो भावसहितम् ॥ मनुष्यः स क्षिप्रं जनिमृतिभयं तापजनकं परित्यज्य श्रेष्ठं रघुपतिपदं याति शिवदम् ॥९॥

इति श्रीमदमरदामविरचितं श्रीमद्रासचद्राष्टकं सम्पूर्णम् ।

२२८–श्रीरामाष्टकम् (१)

श्रीगणेशाय नमः ॥ कृतार्तदेववन्दनं दिनेशवंशनन्दनम् ॥ सुशोभिभालचन्दनं नमामि रामनीश्वरम् ।१। मुनीन्द्रयज्ञकारकं शिलाविपत्तिहारकम् ॥ महाधनुर्विदारकं नमामि० ॥२॥ स्वतातवाक्यकारिणं तपोवने विहारिणम् ॥ करेषुचापधारिणं नमामि० ॥३॥ कुरंगमुक्तसायकं जटायुमोक्षदायकम् ॥ प्रविद्धकोशनायकं न-

मामि० ।।४।। प्लवगसंघसंमतिं निबद्धनिम्नगापतिम् ।। दशास्यवंशसंक्षयं नमामि० ।।५।। विदीनदेवहर्षणं कपीप्सितार्थवर्षणम् ।। स्वबन्धुशोककर्षणं नमामि० ।। ६ ।। गतारिराज्यरक्षणं प्रजाजनार्तिभक्षणम् ।। कृतास्तमोहलक्ष्मणं नमामि० ।। हृदाखिलाचलाधरं स्वधामगीतनागरम् ।। जगत्तमोदिवाकरं नमामि राममीश्वरम् ।। ८ ।। इदं समाहितात्मना नरो रघूत्तमाष्टकम् ।। पठन्निरन्तरं भयं भवोद्भवं न विन्दते ।।९।।

इति श्रीब्रह्मानन्दविरचितं श्रीरामाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२२९-श्रीरामाष्टकम् (२)

श्रीगणेशाय नमः ।। भजे विशेषसुन्दरं समस्तपापखंडनम् ।। स्वभक्तचित्तरञ्जनं सदैव राममद्वयम् ।१। जटाकलापशोभितं समस्तपापनाशकम् ।। स्वभक्तभीतिभंजनं भजे ह राममद्वयम् ।।२।। निजस्वरूपबोधकं कृपाकरं भवापहम् ।। समं शिवं निरञ्जनं भजे ह राममद्वयम् ।। ३ ।। सप्रपञ्चकल्पितं ह्यनामरूपवास्तवम् ।। निराकृतिं निरामयं भजे ह राममद्वयम् ।।४।। निष्प्रपञ्चनिर्विकल्पनिर्मलं निरामयम् ।। चिदेकरूपसन्ततं भजे ह राममद्वयम् ।। ५ ।। भवाब्धिपोतरूपकं ह्यशेषदेहकल्पितम् ।। गुणाकरं कृपाकरं भजे ह राममद्वयम् ।।६।। महासुवाक्यबोधकैर्विराजमानवाक्पदैः ।। परब्रह्म व्यापकं भजे ह राममद्वयम् ।। ७ ।। शिवप्रदं सुखप्रदं भवच्छिदं

श्रमापहम् ।। विराजमानदैशिकं भजे ह राममद्वयम् ।। ८ ।। रामाष्टकं पठति यः सुकरं सुपुण्यं व्यासेन भाषितमिदं शृणुते मनुष्यः ।। विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्ति सम्प्राप्य देहविलये लभते च मोक्षम् ।।९।।

इति श्रीमद्व्यासविरचितं श्रीरामाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२३०-श्रीरघुनाथाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। शुनासीराधीशैरवनितलज्ञप्तीडितगुणं प्रकृत्याऽजं जातं तपनकुलचण्डांशुमपरम् ।। सिते वृद्धिं ताराधिपतिमिव यन्तं निजगृहे ससीतं सानन्दं प्रणत रघुनाथं सुरनुतम् ।।१।। निहन्तारं शैवं धनुरिभ इवेक्षुं नृपगणे पथि ज्याकृष्टेन प्रबलभृगुवर्यस्य शमनम् ।। विहारं गार्हस्थ्यं तदनु भजमानं सुविमलं ससीतं० ।।२।। गुरोराज्ञां नीत्वा वनमनुगतं दारसहितम् । ससौमित्रिं त्यक्त्वेप्सितमपि सुराणां नृपसुखम् ।। विरूपाद्राक्षस्याः प्रियविरहसन्तप्तमनसं ससीतं० ।।३।। विराधं स्वर्नीत्वा तदनु च कबन्धं सुररिपुं गतं पम्पातीरे पवनसुतसंमेलनसुखम् ।। गतं किष्किन्धायां विदितगुणसुग्रीवसचिवं ससीतं० ।।४।। प्रियाप्रेक्षोत्कण्ठं जलनिधिगतं वानरयुतं जले सेतुं बद्ध्वाऽसुरकुलनिहन्तारमनघम् ।। विशुद्धामर्धांगीं हुतभुजि समीक्षन्तमचलं ससीतं० ।।५।। विमानं चारुह्यानुजजनकजासेवितपदमयोध्यायां

गत्वा नृपपदमवाप्तारमजरम् ।। सुयज्ञैस्तुप्तारं निजसुख-
सुरात् शान्तमनसं ससीतं० ।।६।। प्रजां संस्थातारं वि-
हितनिजधर्मे श्रुतिपथं सदाचारं वेदोदितमपि च कर्तार-
मखिलम् ।। नृषु प्रेमोद्रेकं निखिलमनुजानां हितकरं
ससीतं० ।।७।। तमः कीर्त्यांशेषाः श्रवणगदनाभ्यां द्विज-
मुखास्तरिण्यंति ज्ञात्वा जगति खलु गन्तारमजनम् ।।
अतस्तां संस्थाप्य स्वपुरमनुतारमखिलं ससीतं० ।।८।।
रघुनाथाष्टकं हृद्यं रघुनाथेन निर्मितम् ।। पठतां पाप-
राशिघ्नं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।।९।।

२३१-श्रीसीतारामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । ब्रह्ममहेन्द्रसुरेन्द्रमरुद्गणरुद्रमुनींद्रगणै-
रतिरम्यं क्षीरसरित्पतितीरमुपेत्य नुतं हि सतामवितार-
मुदारम् ।। भूमिभरप्रशमार्थमथ प्रथितप्रकटीकृतचिद्-
घनमूर्ति त्वां भजतो रघुनन्दन देहि दयाघन मे स्वपदां-
बुजदास्यम् ।।१।। पद्मदलायतलोचन हे रघुवंशविभूषण
देव दयालो निर्मलनीरदनीलतनोऽखिललोकहृदम्बुज-
भासकभानो ।। कोमलगात्रपवित्रपदाब्जरजःकणपावित-
गौतमकांतं त्वां भजतो० ।। २ ।। पूर्ण परात्पर पालय
मामतिदीनमनाथमनंतसुखाब्धे प्रावृडभ्रतडित्सुमनोहर-
पीतवरांबर राम नमस्ते ।। कामविभञ्जन कांततरानन
कांचनभूषण रत्नकिरीट त्वां भजतो० ।।३।। दिव्यशर-

च्छशिकांतिहरोज्ज्वलमौक्तिकमाल विशालसुमौले को-
टिरविप्रभ चारुचरित्र पवित्रविचित्रधनुःशरपाणे ।। चं
डमहाभुजण्डविखण्डितराक्षसराजमहागजदण्डं त्वां भ-
जतो० ।।४।। दोषविहिंस्त्रभुजंगसहस्रसुरोषमहानलकाल-
कलाते जन्मजरामरामरणोर्मिमनोमदमन्मथनक्रविचक्र-
भवाब्धौ ।। दुःखनिधौ च चिरं पतितं कृपयाऽद्य समुद्धर
राम ततो मां त्वां भजतो० ।।५।। संसृतिघोरमदोत्कट-
कुञ्जरतृट्क्षुन्नीरदपिंडिततुंडं दण्डकरोन्मथितं च रज-
स्तमउन्मदमोहमदोज्झितमार्तम् ।। दीनमनन्यगति कृपणं
शरणागतमाशु विमोचय मूढं त्वां भजतो० ।।६।। जन्म-
शतार्जितपापसमन्वितहृत्कमले पतिते पशुकल्पे हे रघु-
वीर महारणधीर दयां कुरु मय्यतिमन्दमनीषे ।। त्वं
जननी भगिनी च पिता मम मावदसि त्वद्विताऽपि कृ-
पालो त्वां भजतो० ।।७।। त्वा तु दयालुमकिंचनवत्स-
लमुत्पलहारमपारमुदारं राम विहाय कमन्यमनामयमीश
जनं शरणं ननु यायाम् ।। त्वत्पदद्मतः श्रितमेव मु-
दा खलु देव सदाऽव ससीतं त्वां भजतो० ।।८।। यः क-
रुणामृतसिंधुरनाथजनोत्तमबन्धुरजोत्तमकारी भक्तभयो-
र्भिभवाब्धितरीसरयूतटिनीतटचारुविहारी ।। तस्य रघु-
प्रवरस्य निरन्तरमष्टकमेतदनिष्टहरं वै यस्तु पठेदमरः स

नरो लभतेऽच्युतरामपदांबुजदास्यम् ॥६॥

इति अच्युतयतिविरचितं श्रीसीतारामाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२३२—श्रीरामप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

प्रातः स्मरामि रघुनाथमुखारविन्दं मन्दस्मितं मधुरभाषि विशालभालम् ॥ कर्णावलम्बि चलकुण्डलशोभि गण्डं कर्णान्तदीर्घनयनं नयनाभिरामम् ॥१॥ प्रातर्भजामि रघुनाथकरारविन्दं रक्षोगणाय भयदं वरदं निजेभ्यः ॥ यद्राजसंसदि विभज्य महेशचापं सीताकरग्रहणमङ्गलमाप सद्यः ॥२॥ प्रातर्भजामि रघुनाथपदारविन्दं पद्माङ्कुशादिशुभरेखि सुखावहं मे ॥ योगीन्द्र-मानस मधुव्रत-सेव्यमानं शापापहं सपदि गौतमधर्मपत्न्याः ॥३॥ प्रातर्वदामि वचसा रघुनाथनाम वाग्दोषहारि सकल शमलं निहन्ति ॥ यत्पार्वती स्वपतिना सह भोक्तुकामा प्रीत्या सहस्रहरिनामसमं जजाप ॥४॥ प्रातः श्रये श्रुतिनुतां रघुनाथ मूर्तिं नीलाम्बुदोत्पलसितेतररत्ननीलाम् ॥ आमुक्त-मौक्तिकविशेष-विभूषणाढ्यां ध्येयां समस्त मुनिभिर्जनमुक्तिहेतुम् ॥५॥ यः श्लोकपञ्चकमिदं प्रयतः पठेद्धि नित्यं प्रभातसमये पुरुषः प्रबुद्धः ॥ श्रीरामकिङ्करजनेषु स एव मुख्यो भूत्वा प्रयाति हरिलोकमनन्यलभ्यम् ॥६॥

२३३-श्रीरामस्तोत्रम् ।

वन्दामहे महेशानचण्डकोदण्डखण्डनम् ॥ जानकीहृदयानन्दचंदनं रघुनन्दनम् ॥१॥ नुमो रामपदाम्भोजं रेणवो यत्र सन्ततम् ॥ कुर्वन्ति कुमुदप्रीतिमरण्यगृहमेधिनः ॥२॥ स्वर्णाजिनशयनो योजितनयनो दशास्यदिग्भागे । मुहुरवलोकिदचापः कोऽपि दुरापः स नीलिमा शरणम् ॥३॥ कनकरिकषभासा सीतयाऽऽलिंगिताङ्गो नवकुवलयदामश्यामवर्णाभिरामः ॥ अभिनव इव विद्युन्मण्डितो मेघखण्डः शमयतुमम तापं सर्वतो रामचन्द्रः ॥४॥ उत्फुल्लामलकोमलोत्पलदलश्यामाम रामामनःकामाय प्रथमाननिर्मलगुणग्रामाय रामात्मने ॥ योगारूढमुनीन्द्रमानससरोहंसाय संसारविध्वंसाय स्फुरदोजसे रघुकुलोत्तंसाय पुन्से नमः ॥५॥

२३४-श्रीरामस्तुतिः ।

यो रामो न जघान वक्षसि रणे तं रावणं सायकैर्हृद्यस्य प्रतिवासरं वसति सा तस्या ह्यहं राघवः । मय्यास्ते भुवनावली परिवृता द्वीपैः समं सप्तभिः स श्रेयो विदधातु नस्त्रिभुवनत्राणैकचिन्तापुरः ॥१॥ राज्यं येन पटान्तलग्नतृणवत्यक्तं गुरोराज्ञया पाथेयं परिगृह्य कार्मुकवरं घोरं वनं प्रस्थितः । स्वाधीनः शशिमौलिचापविजये प्राप्तो न वै विक्रियां पायाद्वः सः विभीषणा-

ग्रजनिहा रामाभिधानो हरिः ॥२॥ कल्याणानां निधा-
नं कलिमलमथनं पावनं पावनानां पाथेयं यन्मुमुक्षोः
सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य । विश्रामस्थानमेकं क-
विवरवचसां जीवनं सज्जनानां बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु
भवतां भूतये रामनाम ॥३॥ कल्याणोल्लाससीमा कल-
यतु कुशलं कालमेघाभिरामा काचित्साकेतधामा भवग-
हनगतिक्लान्तिहारिप्रणामा । सौन्दर्यह्रीणकामा धृतजन-
कसुतासादरापाङ्गधामा दिक्षु प्रख्यातभूमा दिविषदभि-
नुता देवता रामनामा ॥४॥

२३५–रामचन्द्रस्तुतिः ।

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं
पीतं वासो वसानं नव-कमलदल-स्पर्द्धिनेत्रं प्रसन्नम् ।
वामाङ्कारूढसीता-मुखकमल-मिलल्लोचनं नीरदाभं नाना-
लङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम् ॥ १ ॥
कल्याणानां निदानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्यः ।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां बीजं
धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥२॥ राज्यं
येन पटान्त-लग्न-तृणवत्यक्तं गुरोराज्ञया पाथेयं परिगृ-
ह्य कार्मुकवरं घोरं वनं प्रस्थितः । स्वाधीनः शशिमौ-
लिचापविजये प्राप्तो न वै विक्रियां पायाद् वः स वि-

भीषणाग्रजनिहा रामाभिधानो हरिः ।।३।।

२३६-ब्रह्मदेवकृता रामस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ।। ब्रह्मोवाच ।। वन्दे देवं विष्णुमशेषस्थितिहेतुं त्वामध्यात्मज्ञानिभिरन्तर्हृदि भाव्यम् । हेयाहेयद्वन्द्व विहीनं परमेकं सत्तामात्रं सर्वहृदिस्थं दृशिरूपम् ।१। प्राणापानौ निश्चयबुद्ध्या हृदि रुद्ध्वा छित्त्वा सर्वं संशयबन्धं विषयौघान् । पश्यन्तीशं तं गत मोहा यतयस्तं वन्दे रामं रत्नकिरीटम् रविभासम् ।२। मायातीतं माधवमाद्यं जगदादिं मायातीतं मोहविनाशं मुनिवन्द्यम् ।। योगिध्येयं योगविधानं परिपूर्णं वन्दे रामं रञ्जितलोकं रमणीयम् ।। ३ ।। भावाभावप्रत्ययहीनं भवमुख्यैर्भोगासक्तैरर्चितपादाम्बुजयुग्मम् ।। नित्यं शुद्धं बुद्धमनन्तं प्रणवाख्यं वन्दे रामं वीरमशेषासुरदावम् ।।४।। त्वं मे नाथो नाथितकार्याखिलकारी मायातीतो माधवरूपोऽखिलधारी ।। भक्त्या गम्यो भावितरूपो भवहारी योगाभ्यासैर्भावितचेतःसहचारी ।।५।। त्वामाद्यन्तं लोकततीनां परमीशं लोकानां नो लौकिकमानैरधिगम्यम् ।। भक्तिश्रद्धाभावसमेतैर्भजनीय वन्दे रामं सुन्दरमिन्दीवरनीलम् ।।६।। को वा ज्ञातुं त्वामतिमानं गतमानं मानासक्तो माधवसक्तो मुनिमान्यम् ।। वृन्दारण्ये वन्दितवृन्दारकवृन्दे वन्दे रामं भवमुखवन्द्यं सुखकन्दम् ।।७।।

नानाशस्त्रैर्वेदकदम्बैः प्रतिपाद्यं नित्यानन्दं निर्विषयज्ञानमनादिम् ॥ मत्सेवार्थं मानुषभावं प्रतिपन्नं वन्दे रामं मरकतवर्णं मधुरेशम् ॥८॥ श्रद्धायुक्तो यः पठतीमं स्तवमाद्यं ब्राह्मं ब्रह्मज्ञानविधानं भुवि मर्त्यः ॥ रामं श्यामं कामितमाप्रदमीशं ध्यात्वा ध्याता पातकजालैर्विगतः स्यात् ॥९॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणान्तर्गतं ब्रह्मदेवकृतं रामस्तोत्रम् ।

२३७–इन्द्रकृतं रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इन्द्र उवाच ॥ भजेऽहं सदा राममिन्दीवराभं भवारण्यदावानलाभाभिधानम् ॥ भवानीहृदा भावितानन्दरूपं भवाभावहेतुं भवादिप्रपन्नम् ॥१॥ सुरानीकदुःखौघनाशैकहेतुं नराकारदेहं निराकारमीड्यम् ॥ परेशं परानन्दरूपं वरेण्यं हरिं राममीशं भजे भारनाशम् ॥२॥ प्रपन्नाखिलानन्ददोहं प्रपन्नं प्रपन्नार्तिनिःशेषनाशाभिधानम् ॥ तपोयोगयोगीशभावानुभाव्यं कपीशादिमित्रं भजे राममित्रम् ॥३॥ सदा भोगभाजां सुदूरे विभातं सदा योगभाजामदूरे विभातम् ॥ चिदानन्दकन्दं सदा राघवेशं विदेहात्मजानन्दरूपं प्रपद्ये ॥४॥ महायोगमायाविशेषानुयुक्तो विभासीश लीलानराकारवृत्तिः ॥ त्वदानन्दलीलाकथापूर्णकर्णाः सदानन्दरूपा भवन्तीह लोके ॥५॥ अहं मानपानाभिमत्त-

प्रमत्तो न वेदाखिलेशाभिमानाभिमानः ॥ इदानीं भवत्पादपद्मप्रसादात्त्रिलोकाधिपत्याभिमानो विनष्टः ॥६॥ स्फुरद्रत्नकेयूरहाराभिरामं धराभारभूतासुरानीकदावम् । शरच्चन्द्रवक्त्रं लसत्पद्मनेत्रं दुरावारपारं भजे राघवेशम् ॥७॥ सुराधीशनीलाभ्रनीलाङ्गकान्तिं विराधादिरक्षोबधाल्लोकशान्तिम् ॥ किरीटादिशोभं पुरारातिलोभं भजे रामचन्द्रं रघूणामधीशम् ॥८॥ लसच्चन्द्रकोटिप्रकाशादिपीठे समासीनमेकं समाधाय सीताम् ॥ स्फुरद्धेमवर्णां तडित्पुञ्जभासां भजे रामचन्द्रं निवृत्तार्तितन्द्रम् ॥९॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणे इन्द्रकृतं रामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२३८-श्रीमहादेवकृतं रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ नमोऽस्तु रामाय सशक्तिकाय नीलोत्पलश्यामलकोमलाय ॥ किरीटहाराङ्गदभूषणाय सिंहासनस्थाय महाप्रभाय ॥१॥ त्वमादिमध्यान्तविहीन एकः सृजस्यवस्यत्सि च लोकजातम् ॥ स्वमायया तेन न लिप्यसे त्वं यत्स्वे सुखेऽजस्त्ररतोऽनवद्यः ॥२॥ लीलां विधत्से गुणसंवृतस्त्वं प्रपन्नभक्तानुविधानहेतोः ॥ नानावतारैः सुरमानुषाद्यैः प्रतीयसे ज्ञानिभिरेव नित्यम् ॥३॥ स्वांशेन लोकं सकलं विधाय तं बिभर्षि च त्वं त्वदधः फणीश्वरः ॥ उपर्यधो

भान्वनिलोडुपौषधीप्रवर्षरूपोऽवसि नैकधा जगत् ॥४॥
त्वमिह देहभृतां शिखिरूपः पचसि भक्तमशेषमजस्रम् ॥
पवनपञ्चकरूपसहायो जगदखण्डमनेन बिभर्षि ॥५॥ चन्द्रसूर्यशिखिमध्यगतं यत्तेज ईश चिदशेषतनूनाम् ॥ प्राभवत्तनुभृतामिह धैर्यं शौर्यमायुरखिलं तव सत्वम् ॥६॥
त्वं विरिञ्चिशिववविष्णुविभेदात्कालकर्मशशिसूर्यविभागात् ॥ वादिनां पृथगिवेश विभासि ब्रह्म निश्चितमनन्यदिहैकम् ॥७॥ कल्क्यादिरूपेण यथा त्वमेकः श्रुतौ पुराणेषु च लोकसिद्धः ॥ तथैव सर्वं सदसद्विभागस्त्वमेव नान्यद्भवतो विभाति ॥८॥ यत्तत्समुत्पन्नमनन्तसृष्टावुत्पत्स्यते यद्यभवच्च यच्च ॥ न दृश्यते स्थावरजङ्गमादौ त्वया विनाऽतः परतः परस्त्वम् ॥९॥ तत्वं न जानन्ति परात्मनस्ते जनाः समस्तास्तव माययाऽतः ॥ त्वद्भक्तसेवामलमानसानां विभाति तत्वं परमेकमैशम् ॥१०॥ ब्रह्मादयस्ते न विन्दुः स्वरूपं चिदात्मतत्वं बहिरर्थ भावः ततो बुधस्त्वामिदमेव रूपं भक्त्या भजन्मुक्तिमुपैत्यदुःख ॥ ११ ॥ अहं भवन्नासगुणैः कृतार्थो वसामि काश्यामनिशं भवान्या ॥ मुमूर्षमाणस्य विमुक्तयेऽहं दिशामि मन्त्रं तव रामनाम ॥१२॥ इमं स्तवं नित्यमनन्यभक्त्या शृण्वन्ति गायन्ति लिखन्ति ये वै ॥ ते सर्वसौख्यं परम च लब्ध्वा भवत्पदं यान्तु भवत्प्रसा-

दात् ॥१३॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणे श्रीमहादेवकृतं रामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२३९-जटायुकृतं रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जटायुरुवाच ॥ अगणितगुणमप्रमेयमाद्यं सकलजगत्स्थितिसंयमादिहेतुम् ॥ उपरमपरमं परात्मभूतं सततमहं प्रणतोऽस्मि रामचन्द्रम् ॥१॥ निरवधिसुखमिन्दिराकटाक्षं क्षपितसुरेन्द्रचतुर्मुखादिदुःखम् ॥ नरवरमनिशं नतोऽस्मि रामं वरदमहं वरचापबाणहस्तम् ॥२॥ त्रिभुवनकमनीयरूपमीड्यं रतिशतभासुरमोहितप्रदानम् ॥ शरणदमनिशं सुरागमूले कृतनिलयं रघुनन्दनं प्रपद्ये ।३। भवविपिनदवाग्निनामधेयं भवमुखदैवतदैवतं दयालुम् । दनुजपतिसहस्रकोटिनाशं रवितनया सदृशं हरिं प्रपद्ये ।४। अविरतभवभावनातिदूरं भवविमुखैर्मुनिभिः सदैव दृश्यम् । भवजलधिसुतारणांघ्रिपोतं शरणमहं रघुनन्दनं प्रपद्ये ॥५॥ गिरिशगिरिसुतामनोनिवासं गिरिवरधारिणमीहिताभिरामम् ॥ सुरवरदनुजेन्द्रसेवितांघ्रिं सुरवरदं रघुनायकं प्रपद्ये ॥६॥ परधनपरदारवर्जितानां परगुणभूतिषु पुष्टमानसानाम् । परहितनिरतात्मनां सुसेव्यं रघुवरमम्बुजलोचनं प्रपद्ये ॥७॥ स्मितरुचिरविकासिताननाब्जमतिसुलभं सुरराजनीलनीलम् ॥ सितजलरुहचारुनेत्रशोभं रघुपतिमीशगुरो-

गुरुं प्रपद्ये ॥८॥ हरिकमलजशम्भुरूपभेदात्त्वमिह वि-
भासि गुणत्रयानुवृत्तः । रविरिव जलपूरितोदपात्रेष्वम-
रपतिस्तुतिपात्रमीशमीडे ॥९॥ रतिपति शतकोटिसुन्द-
राङ्गं शतपथगोचरभावनाविदूरम् ॥ यतिपतिहृदये स-
दा विभातं रघुपतिमार्तिहरं प्रभुं प्रपद्ये ॥१०॥ इत्ये-
वं स्तुवतस्तस्य प्रसन्नोऽभूद्रघूत्तमः ॥ उवाच गच्छ भद्रं
ते मम विष्णोः परं पदम् ॥११॥ शृणोति य इदं स्तो-
त्रं लिखेद्वा नियतः पठेत् ॥ स याति मम सारूप्यं मरणे
मत्स्मृतिं लभेत् ॥ १२ ॥ इति राघवभाषितं तदा श्रुत-
वान् हर्षसमाकुलो द्विजः ॥ रघुनन्दनसाम्यमास्थितः
प्रययौ ब्रह्मसुपूजितं पदम् ॥१३॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणान्तर्गतं जटायुकृतं रामस्तोत्रम् ।

२४०-अहल्याकृतं रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अहल्योवाच ॥ अहो कृतार्थाऽस्मि जगन्निवास ते पादाब्जसंलग्नरजःकणादहम् ॥ स्पृशामि यत्पद्मजशंकरादिभिर्विमृग्यते रन्धितमानसैः सदा ॥१॥ अहो विचित्रं तव राम चेष्टितं मनुष्यभावेन विमोहितं जगत् ॥ चलस्यजस्रं चरणादिवर्जितः सम्पूर्ण आनंदमयोऽतिमायिकः ॥२॥ यत्पादपङ्कजपरागपवित्रगात्रा भागीरथी भवविरिञ्चमुखां पुनाति ॥ साक्षात्स एव मम दृग्विषयो यदास्ते किं वर्ण्यते मम पुराकृतभा-

गधेयम् ॥३॥ मर्त्यावतारे मनुजाकृतिं हरिं रामाभिधेयं रमणीयदेहिनम् ॥ धनुर्धरं पद्मविशाललोचनं भजामि नित्यं न परान् भजिष्ये ॥४॥ यत्पादपङ्कजरजः श्रुतिभिर्विमृग्यं यन्नाभिपंकजभवः कमलासनश्च ॥ यन्नामसाररसिको भगवान्पुरारिस्तं रामचन्द्रमनिशं हृदि भावयामि ॥५॥ यस्यावतारचरितानि विरिञ्चलोके गायन्ति नारदमुखा भवपद्मजाद्याः ॥ आनन्दजाश्रुपरिषिक्तकुचाग्रसीमा वागीश्वरी च तमहं शरणं प्रपद्ये ॥६॥ सोऽयं परात्मा पुरुषः पुराण एषः स्वयंज्योतिरनन्त आद्यः ॥ मायातनुं लोकविमोहनीयां धत्ते परानुग्रह एष रामः ॥७॥ अयं हि विश्वोद्भवसंयमानामेकः स्वमायागुणबिम्बितो यः ॥ विरिञ्चविष्ण्वीश्वरनामभेदान् धत्ते स्वतन्त्रः परिपूर्ण आत्मा ॥८॥ नमोऽस्तु ते राम तवांघ्रिपंकजं श्रिया धृतं वक्षसि लालितं प्रियात् ॥ आक्रान्तमेकेन जगत्त्रयं पुरा ध्येयं मुनीन्द्रैरभिमानवर्जितैः ॥ ९ ॥ जगतामादिभूतस्त्वं जगत्त्वं जगदाश्रयः ॥ सर्वभूतेष्वसम्बद्ध एको भाति भवान्परः ॥१०॥ ॐकारवाच्यस्त्वं राम वाचामविषयः पुमान् ॥ वाच्यवाचकभेदेन भवानेव जगन्मयः ॥११॥ कार्यकारणकर्तृत्वफलसाधनभेदतः ॥ एको विभासि राम त्वं मायया बहुरूपया ॥१२॥ त्वन्मायामोहितधियस्त्वां न जानन्ति तत्त्वतः ॥

मानुषं त्वाऽभिमन्यन्ते मायिनं परमेश्वरम् ॥१३॥ आ-
काशवत्त्वं सर्वत्र बहिरन्तर्गतोऽमलः ॥ असङ्गो ह्यचलो
नित्यः शुद्धो बुद्धः सदव्ययः ॥१४॥ योषिन्मूढ़ाऽहमज्ञा
ते तत्वं जाने कथं विभो ॥ तस्मात्ते शतशो राम नम-
स्कुर्यामनन्यधोः ॥१५॥ देव मे यत्र कुत्रापि स्थिताया
अपि सर्वदा ॥ त्वत्पादकमले सक्ता भक्तिरेव सदाऽस्तु
मे ॥१६॥ नमस्ते पुरुषाध्यक्ष नमस्ते भक्तवत्सल ॥ न-
मस्तेऽस्तु हृषीकेश नारायण नमोऽस्तु ते ॥१७॥ भव-
भयहरमेकं भानुकोटिप्रकाशं करधृतशरचापं कालमेधा-
वभासम् ॥ कनकरुचिरवस्त्रं रत्नवत्कुण्डलाढ्यं कमल-
विशदनेत्रं सानुजं राममीडे ॥१८॥ स्तुत्वैवं पुरुषं सा-
क्षाद्राघवं पुरतः स्थितम् ॥ परिक्रम्य प्रणम्याशु सानुज्ञा-
ता ययौ पतिम् ॥१९॥ अहल्यया कृतं स्तोत्रं यः पठेद्-
भक्तिसंयुतः ॥ स मुच्यतेऽखिलैः पापैः परं ब्रह्माधिगच्छ-
ति ॥२०॥ पुत्रार्थं यः पठेद्भक्त्या रामं हृदि निधाय
च ॥ संवत्सरेण लभते वन्ध्या अपि सुपुत्रकम् ॥२१॥
सर्वान्कामानवाप्नोति रामचंद्रप्रसादतः ॥२२॥ ब्रह्मघ्नो
गुरुतल्पगोऽपि पुरुषः स्तेयी सुरापोऽपि वा मातृभ्रातृवि-
हिंसकोऽपि सयतं भोगैकबद्धातुरः ॥ नित्यं स्तोत्रमिदं
जपन् रघुपतिं भक्त्या हृदिस्थं स्मरन् ध्यायन्मुक्तिमुपैति

किं पुनरसो स्वाचारयुक्तो नरः ॥२३॥

इति श्रीमदध्यात्मरामायणे अहल्याकृतं रामचन्द्रस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२४१–त्वमेव ब्रूहि स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आसीद्धराधामललामरूपो नासीदहो कस्य गुरुर्गरीयान् ॥ देशः स एवाद्य त्वदीयप्रेयान् हेयानधस्तिष्ठति सर्वदेशात् ॥१॥ अभूदयोध्या भवदीयमेध्या पुरी पुरा देवपुरादपीह ॥ म्लेच्छैरुपेतामवलोक्यं ते तां नो दूयते किं वद चारुचेतः ॥२॥ पुरा सुराक्रान्तवसुन्धराया व्यथा त्वया किं न निराकृता सा ॥ तत्ते बलं कास्ति खरः शरो वा गोघातिनो हन्त कथं न हंहि ॥३॥ मन्ये महापापकलापकारी त्रेद्रावणो हन्त हतस्त्वयैव ॥ किं तद्विधानद्य न पश्यसीह यद्वा त्वमस्मात्कमिवासि भीतः ॥४॥ सीताति भीता दशकंधरेण नीता त्वया शान्तिमितो न भेदः ॥ नानाऽबला हाऽद्य खला हरन्ति नायासि कारुण्यमतोऽस्ति खेदः ॥५॥ नोचेद्दयाघन दयामधुना करोषि सन् दीनबंधुरपि निष्ठुरतां तनोषि । कस्यान्तिकं व्रजतु भारतमेतदद्य लोकाभिराम घनश्याम त्वमेव ब्रूहि ॥ ६ ॥

इति श्रीराजमणिशर्मकृतं त्वमेवब्रूहिस्तोत्रं संपूर्णम् ।

२४२–रामषट्पदी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ तरणिकुलजलतरणे तरुणत-

रणितेजसा विभातरणे ॥ कृतविदशसुखतिमिरगणेऽन्त-स्तमो नुद मे ॥१॥ शमविधृतशरशरासन निखिलख-लोज्जासनप्रथितसुयशाः ॥ मथितहृदयान्तरालं दुष्कृति-जालं ममापनय ॥ २ ॥ सुरुचिरमरीचिनिचयांश्चरणन-खेन्दूनुदाय मम हृदये ॥ हृदयेश विकलतापं स्वसकल-तापं किलापहर ॥३॥ इन्दीवरदलसुन्दर वरदलसद्वाम-जानकीजाने ॥ जाने त्वामखिलेश लेशलसल्लोकलोके-शम् ॥४॥ शं कुरु शंकरवल्लभ यल्लभतामाश्वयं त्व-दंघ्रियुगे ॥ अनुरक्तिदृढां भक्तिं चिरस्य चिन्ताब्धिभव-भक्तिम् ॥५॥ वैराजराजराजोऽप्यभूत्सुसाकेतराजनररा-जः ॥ वानरराजसहायो लीलाकैवल्यमेतद्धि ॥६॥ ज-गदमुसुतासुपरवसुमुदे यदेषा स्तुतिः कृता स्फीता ॥ सा रामषट्पदीयं विलसतु तत्पादजलजाते ॥७॥

इति श्रीमन्मालवीयशुक्ल श्रीमन्मथुरानाथप्रणीता रामषट्पदी समाप्त।

इति श्रीरामावतारस्तोत्राणि।

श्री कृष्णावतारस्तोत्राणि।

२३४-श्रीगोपालकवचम्।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ अथ वक्ष्यामि कवचं गोपालस्य जगद्गुरोः ॥ यस्य स्मरण-मात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥१॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि

सावधानाऽवधारय ।। नारदोऽस्य ऋषिर्देवि छन्दोऽनुष्टबुदाहृतम् ।।२।। देवता बालकृष्णश्च चतुर्वर्गप्रदायकः ।। ॐ अस्य श्रीगोपालकवचस्य नारदऋषिः ।। अनुष्टुप् छन्दः ।। श्रीबालकृष्णो देवता ।। धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः । शिरो मे बालकृष्णश्च पातु नित्यं मम श्रुती ।।३।। नारायणः पातु कण्ठं गोपीवन्द्यः कपोलकम् ।। नासिके मधुहा पातु चक्षुषी नन्दनन्दनः ।। ४ ।। जनार्दनः पातु दन्तानधरं माधवस्तथा ।। ऊर्ध्वोष्ठं पातु वाराहश्चिबुकं केशिसूदनः ।। ५ ।। हृदयं गोपिकानाथो नाभिं सेतुप्रदः सदा ।। हस्तौ गोवर्द्धनधरः पादौ पीताम्बरोऽवतु ।। ६ ।। कराङ्गुलीः श्रीधरो मे पादाङ्गुल्यः कृपामयः ।। लिगं पातु गदापाणिर्बालक्रीडामनोरमः ।।७।। जगन्नाथः पातु पूर्वं श्रीरामोऽवतु पश्चिमम् ।। उत्तरं कैटभारिश्च दक्षिणं हनुमत्प्रभुः ।।८।। आग्नेय्यां पातु गोविन्दो नैर्ऋत्यां पातु केशवः ।। वायव्यां पातु दैत्यारिरैशान्यां गोपनन्दनः ।।९।। ऊर्ध्वं पातु प्रलम्बारिरधः कैटभमर्दनः ।। शयानं पातु पूतात्मा गतौ पातु श्रियः पतिः ।। १० ।। शेषः पातु निरालम्बे जाग्रद्भावे ह्यपाम्पतिः ।। भोजने केशिहा पातु कृष्णः सर्वांगसन्धिषु ।।११।। गणनासु निशानाथो दिवानाथो दिनक्षये । इति ते कथितं दिव्यं कवचं परमाद्भुतम् ।।१२।। यः पठेन्नि-

त्यमेवेदं कवचं प्रयतो नरः ॥ तस्याशु विपदो देवि न-श्यन्ति रिपुसङ्घतः ॥१३॥ अन्ते गोपालचरणं प्राप्नो-ति परमेश्वरि ॥ त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा यः पठेच्छृणु-यादपि ॥ १४ ॥ तत्सर्वतो रमानाथः परिपाति चतुर्भु-जः ॥ अज्ञात्वा कवचं देवि गोपालं पूजयेद्यदि ॥१५॥ सर्वं तस्य वृथा देवि जपहोमार्चनादिकम् ॥ स शस्त्रघातं सम्प्राप्य मृत्युमेति न संशयः ॥१६॥

इति श्रीनारदपञ्चरात्रे श्रीगोपालकवचं सम्पूर्णम् ।

२४४-श्रीगोपालाक्षयकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनारद उवाच ॥ इन्द्राद्य-मरवर्गेषु ब्रह्मन् यत्परमाद्भुतम् ॥ अक्षयं कवचं नाम कथयस्व मम प्रभो ॥ १ ॥ यद्धृत्वाऽऽकर्ण्य वीरस्तु त्रै-लोक्यविजयी भवेत् ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु पुत्र मुनिश्रेष्ठ कवचं परमाद्भुतम् ॥२॥ इन्द्रादिदेववृन्दैश्च नारायण-मुखाच्छ्रुतम् ॥ त्रैलोक्यविजयस्यास्य कवचस्य प्रजा-पतिः ॥३॥ ऋषिश्छन्दो देवता च सदा नारायणः प्रभुः । अस्य श्रीत्रैलोक्यविजयाक्षयकवचस्य प्रजापतिर्ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः ॥ श्रीनारायणः परमात्मा देवता ॥ धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः ॥ पादौ रक्षतु गो-विन्दो जङ्घे पातु जगत्प्रभुः ॥४॥ ऊरू द्वौ केशवः पातु कटी दामोदरस्ततः ॥ वदनं श्रीहरिः पातु नाडीदेशं च

मेऽच्युतः ॥५॥ वामपार्श्वं तथा विष्णुर्दक्षिणं च सुदर्शनः ॥ बाहुमूले वासुदेवो हृदयं च जनार्दनः ॥६॥ कण्ठं पातु वराहश्च कृष्णश्च मुखमण्डलम् ॥ कर्णौ मे माधवः पातु हृषीकेशश्च नासिके ॥ ७ ॥ नेत्रे नारायणः पातु ललाटं गरुडध्वजः ॥ कपोलं केशवः पातु चक्रपाणिः शिरस्तथा ॥८॥ प्रभाते माधवः पातु मध्याह्ने मधुसूदनः ॥ दिनान्ते दैत्यनाशश्च रात्रौ रक्षतु चन्द्रमा ॥९॥ पूर्वस्यां पुण्डरीकाक्षो वायव्यां च जनार्दनः ॥ इति ते कथितं वत्स सर्वमन्त्रौघविग्रहम् ॥१०॥ तव स्नेहान्मयाऽऽख्यातं न वक्तव्य तु कस्यचित् ॥ कवचं धारयेद्यस्तु साधको दक्षिणे भुजे ॥११॥ देवा मनुष्या गन्धर्वा यज्ञास्तस्य न संशयः । योषिद्वामभुजे चैव पुरुषो दक्षिणे भुजे ॥१२॥ बिभृयात्कवचं पुण्यं सर्वसिद्धियुतो भवेत् ॥ कण्ठे यो धारयेदेतत्कवचं मत्स्वरूपिणम् ॥१३॥ युद्धे जयमवाप्नोति द्यूते वादे च साधकः ॥ सर्वथा जयमाप्नोति निश्चितं जन्मजन्मनि ॥१४॥ अपुत्रो लभते पुत्रं रोगनाशस्तथा भवेत् ॥ सर्वतापप्रमुक्तश्च विष्णुलोकं स गच्छति ॥१५॥

इति श्रीब्रह्मसंहितायां श्रीगोपालाक्षयकवचं सम्पूर्णम् ।

२४५ श्रीकृष्णाष्टकम् (१)

श्रीगणेशाय नमः ॥ भजे व्रजैकमण्डनं समस्तपाप-

खण्डनं स्वभक्तचित्तरञ्जनं सदैव नन्दनन्दनम् ॥ सुपिच्छ-
गुच्छमस्तकं सुनादवेणुहस्तकं ह्यनङ्गरङ्गसागरं नमामि
कृष्णनागरम् ॥१॥ मनोजगर्वमोचनं विशाललोललोचनं
विधूतगोपशोचनं नमामि पद्मलोचनम् ॥ करारविन्द-
भूधरं स्मितावलोकसुन्दरं महेन्द्रमानदारणं नमामि कृ-
ष्णवारणम् ॥ २ ॥ कदम्बसूनकुण्डलं सुचारुगण्डमण्डलं
व्रजाङ्गनैकवल्लभं नमामि कृष्णदुर्लभम् ॥ यशोदया स-
मोदया सगोपया सनन्दया युतं सुखैकदायकं नमामि गो-
पनायकम् ।३। सदैव पादपंकजं मदीयमानसे निजं दधान-
मुत्तदालकं नमामि नन्दबालकम् । समस्तदोषशोषणं सम-
स्तलोकपोषणं समस्तगोपमानसं नमामि कृष्णलालसम्।४।
भुवो भरावतारकं भवाब्धिकर्णधारकं यशोमतोकिशोरकंन-
मामि दुग्धचोरकम् ॥ दृगन्तकान्तभङ्गिनं सदासुबाल-
सङ्गिनं दिने दिने नवं नवं नमामि नन्दसंभवम् ॥५॥
गुणाकरं सुखाकरं कृपाकरं कृपावरं सुरद्विषन्निकन्दनं
नमामि गोपनन्दनम् ॥ नवीनगोपनागरं नवीनकेलिल-
म्पटं नमामि मेघसुन्दरं तडित्प्रभालसत्पटम् ।.६॥ स-
मस्तगोपनन्दनं हृदम्बुजैकमोहनं नमामि कुञ्जमध्यगं प्र-
सन्नभानुशोभनम् ॥ निकामकामदायकं दृगन्तचारुसा-
यकं रसालवेणुगायकं नमामि कुञ्जनायकम् ॥ ७ ॥
विदग्धगोपिकामनोमनोज्ञतल्पशायिनं नमामि कुञ्ज-

कानने प्रवृद्धवह्निपायिनम् ।। यदा तदा यथा तथा त-
थैव कृष्णसत्कथा मया सदैव गीयतां तथा कृपा विधी-
यताम ।। प्रमाणिकाष्टकद्वयं जपत्यधीत्य यः पुमान्भवे-
त्स नन्द नन्दने भवे भवे सुभक्तिमान् ।।८।।

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं श्रीकृष्णाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२४६–श्रीकृष्णाष्टकम् (२) ।

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम् ।। वन्दारु-
जमन्दारं वन्देऽहं यदुनन्दनम् ।।१।। देवः पायादपाया-
न्नः स्मेरेन्दीवरलोचनः ।। संसारध्वान्तविध्वंसहंसकंस-
निषूदनः ।।२।। पान्तु वो जलदश्यामाः शार्ङ्गज्याघात-
कर्कशाः ।। त्रैलोक्यमण्डपस्तम्भाश्चत्वारो हरिबाहवः
।। ३ ।। दर्पणार्पितमालोक्य मायास्त्रीरूपमात्मनः । आ-
त्मन्येवानुरक्तो वः शिवं दिशतु केशवः ।। ४ ।। हृदयं
कौस्तुभोद्भासि हरेः पुष्णातु वः श्रियम् ।। राधाप्रवेश-
रोधाय दत्तमुद्रमिव श्रिया ।। ५ ।। देहि मत्कंदुकं राधे
परिधाननिगूहितम् ।। इति विस्रंसयन्नीवीं तस्या. कृ-
ष्णो मुदेऽस्तु वः ।।६।। चण्डचाणूरदोर्दण्डमण्डलीखण्ड-
मण्डितम् ।। अव्याद्वो बालवेषस्य विष्णोर्गोपतनोर्वपुः
।।७।। मीमांसार्णवसोमं लसदर्कं तर्कपद्मस्य ।। वेदां-
तविपिनसिंहं वंदे गोविन्दसाभिधं ब्रह्म ।।८।।

२४७–श्रीकृष्णाष्टकम् (३) ।

श्रीगणेशाय नमः ।। चतुर्मुखादिसंस्तुतं समस्तसा-

त्वतानुतम् ॥ हलायुद्धादिसंयुतं नमामि राधिकाधिपम् ॥१॥ बकादिदैत्यकालकं सगोपगोपिपालकम् मनोहरासितालकं नमामि० ॥२॥ सुरेन्द्रगर्वगञ्जनं विरिञ्चिमोपभञ्जनम् ॥ व्रजांगनानुरञ्जनं नमा० ॥३॥ मयूरपिच्छमण्डनं गजेन्द्रदन्तखण्डनम् ॥ नृशंसकंसदण्डनं नमा० ॥४॥ प्रदत्तविप्रदारकं सुदामधामकारकम् ॥ सुरद्रुपहारकं नमा० ॥५॥ धनंजयजयावहं महाचमूक्षयावहम् ॥ पितामहव्यथापहं नमा० ॥६॥ मुनीन्द्रशापकारणं यदुप्रजापहारणम् ॥ धराभरावतारणं नमा० ॥७॥ सुवृक्षमूलशायिनं मृगारिमोक्षदायिनम् ॥ स्वकीमधाममायिनं नमा० ॥८॥ इदं समाहितो हितं ग्ठराष्टकं सदा मुदा ॥ जपञ्जनो जनुर्जरादितो द्रुतं प्रमुच्यते ॥९॥

इति श्रीपरमहंसब्रह्मानन्दविरचितं श्रीकृष्णाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२४८–श्रीकृष्णाष्टकम् (२) ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रियाश्लिष्टो विष्णुः स्थिरचरपुरुर्वेदविषयो धियां साक्षी शुद्धो हरिरसुरहन्ताऽब्जनयनः ॥ गदी शंखी चक्री विमलवनमाली स्थिररुचिः शरण्यो लोकेशो मम भवतु कृष्णोऽक्षिविषयः ॥१॥ यतः सर्वं जातं वियदनिलमुख्यं जगदिदं स्थितौ निःशेषं योऽवति निजसुखांशेन मधुहा ॥ लये सर्वं स्वस्मिन् हरति कलया यस्तु स विभुः शरण्यो लोकेशो मम भवतु

कृष्णोऽक्षिविषयः । २ । असूनायम्यादौ यमनियममुख्यैः सुकरणैर्निरुध्येदं चित्तं हृदि विलयमानीय सकलम् । यमड्यं पश्यन्ति प्रवरमतयो यायिनमसौ शरण्यो लोकेशो मम० ।३। पृथिव्यां तिष्ठन् यो यमयति महीं वेद न धरा यमित्यादौ वेदो वदति जगतामीशममलम् । नियन्तारं ध्येयं मुनिसुरनृणां मोक्षकमसौ शरण्यो लोकेशो मम० । ४ । महेन्द्रादिर्देवो जयति दितिजान् यस्य बलतो न कस्य स्वातंत्र्यं कचिदपि कृतौ यत्कृतिमृते । कवित्वादेर्गर्वं परिहरति योऽसौ विजयिनः शरण्यो लोकेशो मम० ।५। विना यस्य ध्यानं व्रजति पशुतां सूकरमुखां विना यस्य ज्ञानं जनिमृतिभयं याति जनता । विना यस्य स्मृत्या कृमिशतजनिं याति स विभुः शरण्यो लोकेशो मम० ।६। निरातङ्कोत्तङ्कः शरणशरणो भ्रान्तिहरणो घनश्यामो वामो व्रजशिशुवयस्योऽर्जुनसखः । स्वयम्भूर्भूतानां जनक उचिताचारसुखदः शरण्यो लोकेशो मम० ।७। यदा धर्मंग्लानिर्भवति जगतां क्षोभकरणी तदा लोकस्वामी प्रकटितवपुः सेतुधृगजः । सतां धाता स्वच्छो निगमगुणगीतो व्रजपतिः शरण्यो लोकेशो मम० । ८ । इति हरिरखिलात्माऽऽराधितः शंकरेण श्रुतिबिरदगुणोऽसौ मातृमोक्षार्थमाद्यः । इति वरनिकटे श्रीयुक्त आविर्बभूव स्वगुणवृत उदारः शंखचक्रा-

ब्जहस्तः ।८।

इति मच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीकृष्णाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२४६–गोविन्दाष्टकम् (१) ।

श्रीगणेशाय नमः । चिदानन्दाकारं श्रुतिसरससारं समरसं निराधाराधारं भवजलधिपारं परगुणम् । रमाग्रीवाहारं व्रजवनविहारं हरनुतं सदा तं गोविन्दं परमसुखकन्दं भजत रे ।१। महाम्भोधिस्थानं स्थिरचरनिदानं दिविजपं सुधाधारापानं विहगपतियानं यमरतम् । मनोज्ञं सुज्ञानं मुनिजननिधानं ध्रुवपदं सदा० । २ । धिया धीरैर्ध्येयं श्रवणपुटपेयं यतिवरैर्महावाक्यैर्ज्ञेयं त्रिभुवनविधेयं निधिपरम् । मनोमानामेयं सदपि हृदि नेयं नवतनुं सदा० ।३। महामायाजालं विमलवनमालं मलहरं सुभालं गोपालं निहतशिशुपालं शिशुमुखम् । कलातीतं कालं गतिहतमरालं मुररिपुं सदा० ।४। नभोबिम्बस्फीतं निगमगणगीतं समगतिं सुरौघैः सम्प्रीतं दितिजविपरीतं पुरिशयम् । गिरां पन्थातीतं स्वदितनवनीतं नयकरं सदा० ।५। परेशं पद्मेशं शिवकमलजेशं शिवकरं द्विजेशं देवेशं तनुकुटिलकेशं कलिहरम् । खगेशं नागेशं निखिलभुवनेशं नगधरं सदा० । ६ । रमाकान्तं कान्तं भवभवभयान्तं भवसुखं दुराशान्तं शान्तं निखिलहृदि भान्तं भुवनपम् । विवादान्तं दान्तं दनुज-

निच्चयान्तं सुचरितं सदा० ॥७॥ जगज्ज्येष्ठं श्रेष्ठं सुरपतिकनिष्ठं क्रतुपतिं बलिष्ठं भूयिष्ठं त्रिभुवनवरिष्ठं वरवहम् ॥ स्वनिष्ठं धर्मिष्ठं गुरुगुणगरिष्ठं गुरुवरं सदा० ॥८॥ गदापाणेरेतद्दुरितदलनं दुःखशमनं विशुद्धात्मा स्तोत्रं पठति मनुजो यस्तु सततम् । स भुक्त्वा भोगौघं चिरमिव ततोऽपास्तवृजिनो वरं विष्णोः स्थानं व्रजति खलु वैकुण्ठभुवनम् ॥९॥

इति श्रीमत्परमहंसब्रह्मानन्दविरचितं गोविन्दाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२५०-श्रीगोविन्दाष्टकम् (२) ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सत्यं ज्ञानमनन्तं नित्यमनाकाशं परमाकाशं गोष्ठप्राङ्गणरिङ्गणलोलमनायासं परमायासम् ॥ मायाकल्पितनानाकारमनाकारं भुवनाकारं क्ष्मामानाथमनाथं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥१॥ मृत्स्नामत्सीहेति यशोदाताडनशैशवसन्त्रासं व्यादितवक्त्रालोकितलोकालोकचतुर्दशलोकालम् ॥ लोकत्रयपुरमूलस्तम्भं लोकालोकमनालोकं लोकेशं परमेशं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ।२। त्रैविष्टपरिपुवीरघ्नं क्षितिभारघ्नं भवरोघ्नं कैवल्यं नवनीताहारमनाहारं भुवनाहारम् । वैमल्यस्फुटचेतोवृत्तिविशेषाभासमनाभासं शैवं केवलशान्तं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥३॥ गोपालं भूलीलाविग्रहगोपालं कुलगोपालं गोपीखेलनगोवर्धनधृति-

लीलालालितगोपालम् ॥ गोभिर्निगदितगोविन्दस्फुटनामानं बहुनामानं गोपीगोचरदूरं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥४॥ गोपीमण्डलगोष्ठीभेदं भेदावस्थमभेदाभं शश्वद्गोखुरनिर्धूतोत्कृतधूलिधूसरसौभाग्यम् ॥ श्रद्धाभक्तिगृहीतानन्दमचिन्त्यं चिन्तितसद्भावं चिन्तामणिमहिमानं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥५॥ स्नानव्याकुलयोषिद्वस्त्रमुपादायागमुपारूढं व्यादित्सन्तीरथ दिग्वस्त्राद्युपदातुमुपाकर्षन्तम् ॥ निर्धूतद्वयशोकविमोहं बुद्धं बुद्धेरप्यन्तस्थं सत्तामात्रशरीरं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥६॥ कान्तं कारणकारणमादिमनादिं कालमनाभासं कालिन्दीगतकालियशिरसि मुहुर्नृत्यन्तं सुनृत्यन्तम् ॥ कालं कालंकलातीतं कलिताशेषं कलिदोषघ्नं कालत्रयगतिहेतुं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥७॥ वृन्दावनभुवि वृन्दारकगणवृन्दाराधित वन्देऽहं कुन्दाभामलमन्दस्मेरसुधानन्दं सुहृदानन्दम् ॥ वन्द्याशेषमह मुनिमानसवन्द्यं नन्दपदद्वन्द्वं वन्द्याशेषगुणाब्धि प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥८॥ गोविन्दाष्टकमेतदधीते गोविन्दार्पितचेता यो गोविन्दाच्युत माधव विष्णो गोकुलनायक कृष्णेति ॥ गोविन्दांघ्रिसरोजध्यानसुधाजलधौतसमस्ताघो गोविन्दं परमानन्दामृतमन्तस्थं स समभ्येति ॥९॥

इति श्रीमत्परमहंस श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित गोविन्दाष्टकम् ।

२५१-श्रीगोपालाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । यस्माद्विश्वं जातमिदं चित्रमतर्क्यं यस्मिन्नानन्दात्मनि नित्यं रमते वै । यत्रान्ते सं याति लयं चैतदशेषं तं गोपालं सन्ततकालं प्रति वन्दे ॥१॥ यस्य ज्ञानाज्जन्मजरारोगकदम्बं ज्ञाते यस्मिन्नश्यति तत्सर्वमिहाशु । गत्वा यत्रायाति पुनर्नो भवभूमिं तं गो० ।२। तिष्ठन्नन्तर्यो यमयत्येतदजस्रं य कश्चिन्नो वेद जनोऽप्यात्मनि सन्तम् । सर्वं यस्येदं च वशे तिष्ठति विश्वं तं गो० ॥३॥ धर्मोऽधर्मेणेह तिरस्कृतामुपैति काले यस्मिन्मत्स्यमुखैश्चारुचरित्रैः ॥ नानारूपैः पाति तदा योऽवनिबिम्बं तं गो० ॥४॥ प्राणायामैर्ध्वस्तसमस्तेन्द्रियदोषा रुद्ध्वा चित्तं यं हृदि पश्यंति समाधौ ॥ ज्योतिरूपं योगिजनामोदनिमग्नास्तं गो० ॥५॥ भानुश्चन्द्रश्चोडुगणश्चैव हुताशो यस्मिन्नेवाभाति तडिच्चापि कदापि ॥ यद्भासा चाभाति समस्तं जगदेतत्तं गो० ॥६॥ सत्यानन्दं मोदमवोचुर्निगमा यं यो ब्रह्मेन्द्रादित्यगिरीशार्चितपादः ॥ शेतेऽनन्तोऽनन्तनावम्बुनिधौ यस्तं गो० ॥७॥ शैवाः प्रहुर्यं शिवमन्ये गणनाथं शक्तिं चैकेऽर्कं च तथान्ये मतिभेदात् ॥ नानाकारैर्भाति य एकोऽखिलशक्तिस्तं गो० ॥८॥ श्रीमद्गोपालाष्टकमेतत्समधीते भक्त्या नित्यं यो मनुजो वै स्थिरचेताः ॥ हित्वा

पूर्णं पापकलापं स समेति पुण्यं विष्णोर्धाम यतो नैव निपातः ॥८॥

इति श्रीमत्परमहंसब्रह्मानन्दविरचितं श्रीगोपालाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२५२-श्रीद्वारकेशाष्टकम् ।

नृणामनादिनिजकर्मनियन्त्रितानामुत्तारणाय भववारिनिधेरपारात् ॥ वारांनिधौ वसति यस्तमहं सदारं द्वारावतीपतिमुदारमतिं नमामि ॥१॥ यो द्वारमस्त्यपिहितं वरमुक्तिधाम्नस्तां द्वारिकां निजपुरीमिह योऽधिशेते ॥ मोक्षाधिकं च निजधाम परं ददाति तं द्वारकेश्वरमहं प्रणमाम्युदारम् ॥२॥ या भीष्मजाप्रभृतयोऽष्टवरा महिष्यस्ताभिः सरागमभितः परिषेव्यमानम् ॥ आराधयन्तमनिशं हृदयेन राधां द्वारावतीपरिवृढं दृढमाश्रयामि ॥३॥ शंख प्रसारितसुख स्वपदाश्रितानां चक्रं सदा दमितदानवदैत्यचक्रम् ॥ कौमोदकीं भुवनमोदकरीं गदाग्र्यां पद्मालयाप्रियकरं प्रथितं च पद्मम् ॥४॥ सधारयन्तमतिचारुचतुर्भुजेषु श्रीवत्सकौस्तुभधरं वनमालयाऽऽढ्यम् ॥ सिन्धोस्तटे मुकुटकुण्डलमण्डितास्यं श्रीद्वारकेशमनिशं शरणं प्रपद्ये ॥ ५ ॥ श्रीद्वारकानगरसीमनि यत्र कुत्र हित्वा वपुः सपदि यस्य कृपाविशेषात् ॥ कोटोऽपि कैटभरिपोरुपयाति धाम तं द्वारकेश्वरमहं मनसाऽऽश्रयामि ॥६॥ पाहीति पार्षदसुतार्तरवं निशम्य यो

द्रागुपेत्य नवलाम्बरराशिरासीत् ।। कृष्णामपाङ्गयुगमय-
च्च मदं कुरूणां तं द्वारकाधिपतिमाधिहर स्मरामि ।७।
मोहादपार्थपुरुषार्थमवेक्ष्य पार्थं यः सञ्जगौ त्रिजगदुद्धर-
णाय गीताम् ।। ज्ञानं सुदुर्लभमदात् समरांगणेऽपि तं
द्वारकेशमिह सद्गुरुमाश्रयामि ।।८।।

२५७-जगन्नाथाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। कदाचित्कालिन्दीतटविपिनस-
ङ्गीतकरवो मुदाभीरीनारीवदनकमलास्वादमधुपः । र-
माशम्भुब्रह्मामरपतिगणेशार्चितपदो जगन्नाथः स्वामी
नयनपथगामी भवतु मे ।।१।। भुजे सव्ये वेणुं शिरसि
शिखिपिच्छं कटितटे दुकूलं नेत्रांते शहचरकटाक्षं विद-
धते ।। सदा श्रीमद्वृन्दावनसतिलीलापरिचयो जगन्ना-
थः स्वामी० ।।२।। महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशि-
खरे वसन्प्रासादान्तः सहजबलभद्रेण बलिना ।। सुभद्रा-
मध्यस्थः सकलसुरसेवावसरदो जगन्नाथः स्वामी० ।३।
कथापारावारः सजलजलदश्रेणिरुचिरो रमावाणीरामस्फु-
रदमलपद्मेक्षणमुखैः सुरेन्द्रैराराध्यः श्रुतिगणशिखागीत-
चरितो जगन्नाथः स्वामी० ।।४।। रथारूढो गच्छन्पथि
मिलितभूदेवपटलैः स्तुतिप्रादुर्भावं प्रतिपदमुपाकर्ण्य स-
दयः ।। दयासिन्धुर्बन्धुः सकलजगतां सिन्धुसुतया जग-
न्नाथः स्वामी० ।।५।। परब्रह्मापीडः कुवलयदलोत्फुल्ल-

नयनो निवासी नीलाद्रौ निहितचरणोऽनन्तशिरसि ॥ रसानन्दो राधासरवपुरालिङ्गनसुखो जगन्नाथः स्वामी० ॥६॥ न वै प्रार्थ्यं राज्यं न च कनकतां भोगविभवं न याचेऽहं रम्यां निखिलजनकाम्यां वरवधूम् ॥ सदा काले काले प्रमथपतिना गीतचरितो जगन्नाथः स्वामी० ॥७॥ हर त्वं संसारं द्रुततरमसारं सुरपते हर त्वं पापानां विततिमपरां यादवपते ॥ अहो दीनानाथं निहितमचलं निश्चितपदं जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥८॥

२५४–पाण्डुरङ्गाष्टकम् ।

महायोगपीठे तटे भीमरथ्या वरं पुण्डरीकाय दातुं मुनीन्द्रैः ॥ समागत्य तिष्ठन्तमानन्दकन्दं परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरङ्गम् ॥ १ ॥ तडिद्वाससं नीलमेघावभासं रमामन्दिरं सुन्दरं चित्प्रकाशम् ॥ वरं त्विष्टिकायां समन्यस्तपादं परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरगंम् ॥२॥ प्रमाणं भवाब्धेरिदं मामकानां नितम्बः कराभ्यां धृतो येन तस्मात् ॥ विधातुर्वसत्यै धृतो नाभिकोशः परब्रह्मलिगं भजे पाण्डुरङ्गम् ॥ ३ ॥ स्फुरत्कौस्तुभालंकृतं कण्ठदेशे श्रिया जुष्टकेयूरकं श्रीनिवासम् ॥ शिवं शान्तमीड्यं वरं लोकपालं परब्रह्मलिङ्ग भजे पाण्डुरङ्गम् ॥४॥ शरच्चन्द्र बिम्बाननं चारुहासं लसत्कुण्डलाक्रान्त गण्डस्थला-

ङ्गम् ।। जपारामबिम्बाधरं कञ्जनेत्रं परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरङ्गम् ।।५।। किरीटोज्ज्वलत्-सर्वदिक्प्रान्त-भागं सुरैरर्चितं दिव्यरत्नैरनर्घ्यैं ।। त्रिभङ्गाकृति बर्हमाल्यावतंसं परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरङ्गम् ।। ६ ।। विभुं वेणुनादं चरन्तं दुरन्तं स्वयं लीलया गोपवेषं दधानम् ।। गवां वृन्दकानन्दनं चारुहासं परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरङ्गम् ।।७।। अजं रुक्मिणीप्राणसञ्जीवनं तं परं धाम कैवल्यमेकं तुरीयम् ।। प्रसन्नं प्रपन्नार्तिहं देवदेवं परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरङ्गम् ।।८।। स्तवं पाण्डुरङ्गस्य वै पुण्यदं ये पठन्त्येकचित्तेन भक्त्या च नित्यम् ।। भवाम्भोनिधिं तेऽपि तीर्त्वाऽन्तकाले हरेरालयं शाश्वतं प्राप्नुवन्ति ।।९।।

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं पाण्डुरङ्गाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२५५-बिन्दुमाधवाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। कलिन्दजातटाटवीलतानिकेतनान्तरप्रगल्भवल्लिविस्फुरद्रतिप्रसङ्गसङ्गतम् ।। सुधारसार्द्रवेणुनादमोदमाधुरीमदप्रमत्तगोपगोव्रजं भजामि बिन्दुमाधवम् ।। १ ।। गदारिशङ्खचक्रशाङ्गंभृच्चतुष्करं कृपाकटाक्षवीक्षणामृतौक्षितामरेंद्रनन्दनम् ।। सनन्दनादिमौनिमानसारविंदमन्दिरं जगत्पवित्रकीर्तिदं भजा० ।।२।। दिगीशमौलिनूत्नरत्ननिःसरत्प्रभावलीविराजितां-

ध्रिपङ्कजं नवेन्दुशेखराब्जजन्म ॥ दयामरन्दतुन्दिलारवि-
न्दपत्रलोचनं विरोधियूथभेददं भजा० ॥३॥ पयःपयोधि-
वीचिकालवलीपयः पृषन्मिलद्भुजङ्गपुङ्गवाङ्गकल्प-
पुष्पतल्पशायिनम् ॥ कटीतटिस्फुटीभवत्प्रतप्तहाटका-
म्बरं निशाटकोटिपाटनं भजा० ॥ ४ ॥ अनुश्रवापहार-
कावलेपनपुणोपयश्चरावतारतोषितारविंदसंभवम् ।
महाभवाब्धिमध्यमग्नदीयलोकतारकं विहङ्गराट्तुर-
ङ्गमं भजा० ॥ ५ ॥ समुद्रतोयमध्यदेवदानवोत्क्षिपद्ध-
राधरेद्रमूलधारणक्षमादिकूर्मविग्रहं । दुराग्रहात्कलिमहा-
टकाक्षनाशसूकरं हिरण्यदानवान्तकं भजा० ॥ ६ ॥ वि-
रोचनात्मसंभवोत्तमाङ्गकृत्पदक्रमं परश्वधोपसंहृताखि-
लावनीशमण्डलम् ॥ कठोरनीलकण्ठकार्मुकप्रदर्शिता-
द्दिदोर्बलान्वितक्षितीसुत भजा० ॥७॥ यमानुजोदकप्रवा-
हसत्वराभिजित्वरं पुरासुराङ्गनाभिमानुपयूथनायकम् ।
स्वमंडलाग्रखण्डनीययावनारिमण्डलं बलानुजं गदाग्रज
भजामि बिन्दुमाधवम् ॥ ८ ॥ प्रशस्तपञ्चचामराख्यवृ-
त्तभेदभासितं दशावतारवर्णतं नृसिंहभक्तवर्णितम् ॥ प्र-
सिद्धबिन्दुमाधवाष्टकं पठन्ति ये भृशं नराः सुदुर्लभं
भजन्ति ते मनोरथं निरन्तरम् ॥९॥

इति श्रीबिन्दुमाधवाष्टकं सम्पूर्णम् ।

२५६-श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रमंत्रस्य ॥ श्रीशेष ऋषिः ॥ अनुष्टुप् छन्दः । श्रीकृष्णो देवता ॥ श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामजपे विनियोगः शेष उवाच श्रीकृष्णः कमलानाथो वासुदेवः सनातनः ॥ वासुदेवात्मजः पुण्यो लीलामानुषविग्रहः ॥१॥ श्रीवत्सकौस्तुभधरो यशोदावत्सलो हरिः ॥ चतुर्भुजात्तचक्रासिगदाशंखांबुजायुधः ॥२॥ देवकीनन्दनः श्रीशो नन्दगोपप्रियात्मजः ॥ यमुनावेगसंहारी बलभद्रप्रियानुजः ॥३॥ पूतनाजीवितहरः शकटासुरभंजनः ॥ नंदव्रजजनानंदी सच्चिदानंदविग्रहः ॥४॥ नवनीतनवाहारी मुचुकुंदप्रसादकः ॥ षोडशस्त्रीसहस्रेशस्त्रिभंगी मधुराकृतिः ॥५॥ शुकवागमृताब्धीन्दुर्गोविंदो गोविदां पतिः ॥ वत्सपालनसंचारी धेनुकासुरभंजनः ॥६॥ तृणीकृततृणावर्तो यमलार्जुनभंजनः ॥ उत्तालतालभेत्ता च तमालश्यामलाकृतिः ॥७॥ गोपीगोपीश्वरो योगी सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ इलापतिः परं ज्योतिर्यादवेन्द्रो यदूद्वहः ॥८॥ वनमाली पीतवासाः पारिजातापहारकः ॥ गोवर्धनाचलोद्धर्ता गोपालः सर्वपालकः ॥ ९ ॥ अजो निरन्जनः कामजनकः कंजलोचनः ॥ मधुहा मथुरानाथो द्वारकानायको बली ॥१०॥ वृन्दावनान्तसं-

चारी तुलसीदामभूषणः ।। स्यमंतकणेर्हर्ता नरनाराय-
णात्मकः ।।११।। कुब्जाकृष्णांबरधरो मायी परमपुरुष ।
मुष्टिकासुरचाणूरमहायुद्धविशारदः ।। १२ ।। संसारवैरी
कंसारिर्मुरारिर्नरकान्तकः ।। अनादिर्ब्रह्मचारी च कृ-
ष्णाव्यसनकर्षकः ।।१३।। शिशुपालशिरश्छेत्ता दुर्योधन-
कुलांतकृत् ।। विदुराक्रूरवरदो विश्वरूपप्रदर्शकः ।१४।
सत्यवाक् सत्यसंकल्पः सत्यभामारतो जयी ।। सुभद्रा-
पूर्वजो विष्णुर्भीष्ममुक्तिप्रादायकः ।।१५।। जगद्गुरुर्ज-
गन्नाथो वेणुवाद्यविशारदः ।। वृषभासुरविध्वंसी बाणा
सुरबलांतकृत् ।।१६।। युधिष्ठिरप्रतिष्ठाता बर्हिबर्हावतंस-
कः ।। पार्थसारथिसव्यक्तो गीतामृतमहोदधिः ।। १७ ।।
कालीयफणिमाणिक्यरंजितश्रीपदांबुजः ।। दामोदरो य-
ज्ञभोक्ता दानवेंद्रविनाशनः ।। १८ ।। नारायण. परं ब्रह्म
पन्नगाशनवाहनः । जलक्रीडासमासक्तगोपीवस्त्रापहारकः
।।१९।। पुण्यश्लोकस्तीर्थकरो देववैद्यो दयानिधिः ।। स-
र्वतीर्थात्मकः सर्वग्रहरूपी परात्परः ।।२०।। इत्येवं कृ-
ष्णदेवस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।। कृष्णेन कृष्णभक्तेन
श्रुत्वा गीतामृतं पुरा ।।२१।। स्तोत्रं कृष्णप्रियकर कृतं
तस्मान्मया पुरा ।। कृष्णनामामृतं नाम परमानन्ददाय-
कम् ।।२२।। अनुपद्रवदुःखघ्नं परमायुष्यवर्धनम् ।। दानं
श्रुतं तपस्तीर्थं यत्कृतं त्विह जन्मनि ।।२३।। पठतां शृ-

ण्वतां चैव कोटिकोटिगुणं भवेत् ।। पुत्रप्रदमपुत्राणामगतीनां गतिप्रदम् ।।२४।। धनावहं दरिद्राणां जयेच्छूनां जयावहम् ।। शिशूनां गोकुलानां च पुष्टिदं पुष्टिवर्धनम् ।। २४ ।। वातग्रहज्वरादीनां शमनं शांतिमुक्तिदम् ।। समस्तकामदं सद्यः कोटिजन्माघनाशनम् ।। २६ ।। अन्ते कृष्णस्मरणदं भवतापभयापहम् ।। कृष्णाय यादवेंद्राय ज्ञानमुद्राय योगिने ।। नाथाय रुक्मिणीशाय नमो वेदांतवेदिने ।।२७।। इमं मत्रं महादेवि जपन्नवदिवानिशम् । सर्वग्रहानुग्रहभाक्सर्वप्रियतमो भवेत् ।। २८ ।। पुत्रपौत्रैः परिवृतः सर्वसिद्धिसमृद्धिमान् ।। निर्विश्य भोगानन्तेऽपि कृष्णसायुज्यमाप्नुयात् ।।२९।।

इति श्रीनारदपंचरात्रे श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

२५७-श्रीगोपालशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। उमोवाच ।। देवदेव महादेव सर्ववाञ्छाप्रपूरक ।। पुरा प्रियं देवदेव कृष्णस्य परमाद्भुतम् ।।१।। नाम्नां शतं समासेन कथयामीति सूचितम् ।। शिव उवाच ।। शृणु प्राणप्रिये देवि गोपनादतिगोपितम् ।२। मम प्राणस्वरूपं च तव स्नेहात्प्रकाश्यते ।। यस्यैकवारं पठनात्सर्वयज्ञफलं लभेत् ।।३।। मोहनस्तम्भनाकर्षपठनाज्जायते नृणाम् । स मुक्तः सर्वपापेभ्यो यस्य स्मरणमात्रतः ।४। स्वयमायान्ति तस्यैव निश्चलाः

सर्वसम्पदः ।। राजानो दासतां यान्ति शीततास् ।।५।।
जलस्तम्भं रिपुस्तम्भं शत्रूणां बन्धनं तथा ।। ॐ अस्य
श्रीगोपालशतनामस्तोत्रस्य नारदऋषिः ।। अनुष्टुप्
छन्दः ।। श्रीगोपालः परमात्मा देवता ।। श्रीगोपालप्री-
त्यर्थे शतनामपाठे विनियोगः ।। ॐ गोपालो गोपतिर्गो-
प्ता गोविन्दा गोकुलप्रियः ।। गम्भीरो गगनो गोपीप्राण-
भृत् प्राणधारकः ।। ६ ।। पतितानन्दनो नन्दी नन्दीशः
कंससूदनः ।। नारायणो नरत्राता नरकार्णवतारकः
।।७।। नवनीतप्रियो नेता नवीनघनसुन्दरः ।। नवबालक-
वात्सल्यो ललितानन्दतत्परः ।। ८ ।। पुरुषार्थप्रदः प्रेम-
प्रवीणः परमाकृतिः ।। करुणः करुणानाथः कैवल्यसुख-
दायकः ।। ९ ।। कदम्बकुसुमावेशी कदम्बवनमन्दिरः ।।
कादम्बीविमदामोदघूर्णलोचनपंकजः ।।१०।। कामी का-
न्तकलानन्दी कान्तः कामनिधिः कविः ।। कौमोदकीग-
दापाणिः कवीन्द्रो गतिमान्हरः ।।११।। कमलेशः कला-
नाथः कैवल्यः सुखसागरः ।। केशवः केशिहा केशः कलि-
कल्मषनाशनः ।।१२।। कृपालुः करुणासेवी कृपोन्मीलि-
तलोचनः ।। स्वच्छन्दः सुन्दरः सुन्दः सुरवृंदनिषेवितः
।।१३।। सर्वज्ञः सर्वदो दाता सर्वपापदिनाशनः ।। सर्वा-
ह्लादकरः सर्वः सर्ववेदविदा प्रभुः ।। १४ ।। वेदान्तवेद्यो
वेदात्मा वेदप्राणधरो विभुः ।। विश्वात्मा विश्वविद्वि-

श्वप्राणदो विश्ववन्दितः ॥ १५ ॥ विश्वेशः शमनस्त्राता विश्वेश्वरसुखप्रदः ॥ विश्वदो विश्वहारी च पूरकः करुणानिधिः ॥१६॥ धनेशो धनदो धन्वी धीरो धीरजनप्रियः ॥ धरासुखप्रदो धाता दुर्द्धरांतकरो धरः ॥१७॥ रमानाथो रमानन्दो रसज्ञो हृदयास्पदः । रसिको रासको रासी रामानंद करो रसः ॥१८॥ राधिकाराधितो राधाप्राणेशः प्रेमसारः ॥ नाम्नां शतं समासेन तव स्नेहात्प्रकाशितम् ॥१९॥ अप्रकाश्यमिमं मंत्रं गोपनीयं प्रयत्नतः ॥ यस्य तस्यैकपठनात्सर्वविद्यानिधिर्भवेत् ॥२०॥ पूजयित्वा दयानाथं ततः स्तोत्रमुदीरयेत् । पटनाद्देवदेवेशि भोगमुक्तफलं लभेत् ॥२१॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वदेवाधिपो भवेत् ॥ जपलक्षेण सिद्धं स्यात्सयं सत्यं न संशयः ॥ किमुक्तेनैवं वहुना विष्णुतुल्यो भवेन्नरः ।२२।

इति श्रीहरगौरीसंवादे श्रीगोपालशतनामस्तोत्रम् ।

२५८—गोपालविंशतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमान्वेंकटनाथार्यः कवितार्किककेसरी ॥ वेदांताचार्यवर्यो मे संनिधत्तां सदा हृदि ॥१॥ वन्दे वृन्दावनचरं वल्लवीजनवल्लभम् ॥ जयंतीसंभवं धाम वैजयन्तीविभूषणम् ॥२॥ वाचं निजांकरसिकां प्रसमीक्षमाणो वक्त्रारविंदविनिवेशितपांचजन्यः ॥ वर्णः त्रिकोणरुचिरे वरपुण्डरीके नद्धासनो जयति वल्लवचक्रवर्ती ॥३॥ आम्नायगंधरुचिरस्फुरिताधरोष्ठमस्रा-

विलेक्षणमनुक्षणमंदहासम् ॥ गोपालडिंभवपुषं कुहुना जनन्याः प्राणस्तनंधयमवैमि परं पुमांसम् ॥४॥ आविर्भवत्यनिभृताभरणं पुरस्तादाकुञ्चितैकचरणं निहितान्यपादम् ॥ राधानिबद्धमुकुरेण निबद्धतालं नाथस्य नदभवने नवनीतनाट्यम् ॥५॥ कुन्दप्रसूनविशदैर्दशनैश्चतुर्भिः संदश्य मातुरनिजं कुचचूचुकाग्रम् ॥ नंदस्य वक्त्रमवलोकयतो मुरारेर्मन्दस्मितं मम मनीषितमातनोतु ॥६॥ हर्तुं कुम्भे विनिहितकरः स्वादु हैयङ्गवीनं दृष्ट्वा दामग्रहणचटुलां मातरं जातरोषाम् ॥ पायादीषत्प्रचलितपदो नापगच्छन्न तिष्ठन्मिथ्यागोपः सपदि नयनेऽमीलयद्विश्वगोप्ता ॥७॥ व्रजयोषिदपाङ्गवेदनीयं मथुराभाग्यमानन्यभोग्यमीडे ॥ वसुदेववधूस्तनन्धयं तत्किमपि ब्रह्म किशोरभावदृश्यम् ॥८॥ परिवर्तितकन्धरं भयेन स्मितफुल्लाधरपल्लवं स्मरामि । विटपित्वनिरासकं कयोश्चिद्विपुलोलूखलकर्षकं कुमारम् ॥९॥ निकटेषु निशामयामि नित्यं निगमान्तैरधुनाऽपि मृग्यमाणम् ॥ यमलार्जुनदृष्टबालकेलिं यमुनासाक्षिकयौवनं युवानम् ॥१०॥ पदवीमदवीयसीं विमुक्तेरटवीं सम्पदमम्बु वाहयन्तीम् ॥ अरुणाधरसाभिलाषवंशां करुणां कारणमानुषं भजामि ॥ ११ ॥ अनिमेषनिषेवणीयमक्ष्णोरजहद्यौवनमाविरस्तु चित्ते ॥ कलहायितकुन्तलं कलापैः करुणोन्मादकविभ्रमं

मनो मे ॥१२॥ अनुयायिमनोज्ञवंशनालैरवतु स्पर्शितबल्लवीविमोघैः ॥ अनघस्मितशीतलैरसौ मामनुकम्पासरिदम्बुजैरपाङ्गैः ॥१३॥ अधराहितचारुवंशनाला मुकुटालम्बिमयूरपिच्छमालाः ॥ हरिनीलशिलाविहङ्गलीलाः प्रतिभास्वन्तु ममांतिमप्रयाणे ।।१४॥ अखिलानवलोकयामि कालान्महिलादीनभुजान्तरस्य यूनः ॥ अभिलाषपदं व्रजाङ्गनानामभिलाषक्रमदूरमाभिरूप्यम् ॥ १५ ॥ महसे महिताय मौलिना विनतेनाञ्जलिमञ्जनत्विषे ॥ कलयामि विदग्धबल्लवीवलयाभाषितमञ्जुवेणवे ।१६। जयतु ललितकृत्यं शिक्षको बल्लवीनां शिथिलवलयशिञ्जाशीतलैर्हस्ततालैः ॥ अखिलभुवनरक्षागोपवेषस्य विष्णोरधरमणिसुधाया वंशवांवंशनालः ॥ १७ ॥ चित्राकल्पश्रवसि कलयँल्लाङ्गलीकर्णपूरं बर्होत्तंसस्फुरितचिकुरो बन्धुजीवं दधानः ॥ गुञ्जाबद्धामुरसि ललितां धारयन् हारयष्टिं गोपस्त्रीणां जयति कितवः कोऽपि कौमरहारी ॥१८॥ लीलायष्टिं करकिसलये दक्षिणे न्याय धन्यामंसे देव्याः पुलकनिबिडे सन्निविष्टान्यबाहुः ॥ मेघश्यामो जयति ललितं मेखलादत्तवेणुर्गुञ्जापीडस्फुरितचिकुरो गोपकन्याभुजङ्गः ॥१९॥ प्रत्यालीढस्मृतिमधिगतां प्राप्तगाढाङ्कपालीं पश्चादीषन्मिलितनयनां प्रेयसीं प्रेक्षमाणः । भस्त्रायन्त्रप्रणिहितकरो भक्तजीवातुरव्याद्वारिक्री-

डानिबिडवसनो बल्लवीवल्लभो नः ॥२०॥ वासो हृत्वा दिनकरसुतासंनिधौ बल्लवीनां लीलास्मेरो जयति ललितामास्थितः कुन्दशाखाम् ॥ सव्रीडाभिस्तदनु वसनं ताभिरभ्यर्थ्यमानः कामी कश्चित्करकमलयोरञ्जलिं याचमानः ॥ २१ ॥ इत्यनन्यमनसा विनिर्मितां वेंकटेशकविकृतां स्तुतिं पठन् ॥ दिव्यवेणुरसिकैः समीक्ष्यते दैवतं किमपि यौवतप्रियम् ॥२२॥

२६१–श्रीकृष्णद्वादशनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ किं ते नामसहस्रेण विज्ञातेन तवार्जुन ॥ तानि नामानि विज्ञाय नरः पापैः प्रमुच्यते ॥१॥ प्रथमं तु हरिं विन्द्याद्द्वितीयं केशवं तथा ॥ तृतीयं पद्मनाभं च चतुर्थं वामनं स्मरेत् ॥ २ ॥ पञ्चमं देवगर्भं तु षष्ठं च मधुसूदनम् ॥ सप्तमं वासुदेवं च वाराहं चाष्टमं तथा ।३। नवमं पुण्डरीकाक्षं दशमं तु जनार्दनम् ॥ कृष्णमेकादशं विन्द्याद् द्वादशं श्रीधरं तथा ॥४॥ एतानि द्वादश नामानि विष्णुप्रोक्ते विधीयते ॥ सायंप्रातः पठेन्नित्यं तस्य पुण्यफलं शृणु ॥५॥ चान्द्रायणसहस्राणि कन्यादानशतानि च ॥ अश्वमेधसहस्राणि फलं प्राप्नोत्यसंशयः ॥६॥ अमायां पौर्णमास्यां च द्वादश्यां तु विशेषतः ॥ प्रातःकाले पठेन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥७॥

इति श्रीमन्महाभारते अरण्यपर्वणि श्रीकृष्णद्वादशनामस्तोत्रम् ।

२६०-श्रीकृष्णस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि स्तोत्रं परमदुर्लभम् ॥ यज्ज्ञात्वा न पुनर्गच्छेन्नरो निरययातनाम् ॥१॥ नारदाय च यत्प्रोक्तं ब्रह्मपुत्रेण धीमता ॥ सनत्कुमारेण पुरा योगीन्द्रगुरुवर्त्मना ॥२॥ श्रीनारद उवाच ॥ प्रसीद भगवन्मह्यमज्ञानात्कुण्ठितात्मने ॥ तवांघ्रिपङ्कजरजोरागिणीं भक्तिमुत्तमाम् ॥३॥ अज प्रसीद भगवन्नमितद्युतिपञ्जर ॥ अप्रमेय प्रसीदास्मद्दुःखहन्पुरुषोत्तम ॥४॥ स्वसंवेद्य प्रसीदास्मदानंदात्मन्ननामय । अचिन्त्यसार विश्वात्मंप्रसीद परमेश्वर ॥५॥ प्रसीद तुंगतुंगानां प्रसीद शिव शोभन । प्रसीद गुणगम्भीर गम्भीराणां महाद्युते ॥६॥ प्रसीद व्यक्त विस्तीर्ण विस्तीर्णानामगोचर ॥ प्रसीदार्द्रार्द्रजातीनां प्रसीदान्तान्तदायिनाम् ॥७॥ गुरोर्गरीयः सर्वेश प्रसीदानन्त देहिनाम् ॥ जय माधव मायात्मन् जय शाश्वत शंखभृत् ॥८॥ जय शंखधर श्रीमान् जय नन्दकनन्दन ॥ जय चक्रगदापाणे जय देव जनार्दन ॥ ९ ॥ जय रत्नवराबद्धकिरीटाक्रांतमस्तक ॥ जय पक्षिपतिच्छायानिरुद्धार्कजरारुण ॥१०॥ नमस्ते नरकाराते नमस्ते मधुसूदन ॥ नमस्ते ललितापांग नमस्ते नरकांतक ॥११॥ नमः पापहरेशान नमः सर्पभवापह ॥ नमः सं-

भूतसर्वात्मन्नमः संभृतकौस्तुभ ॥१२॥ नमस्ते नयनातीत नमस्ते भयहारक ॥ नमो विभिन्नवेषाय नमः श्रुतिपथातिग ॥१३॥ नमश्चिन्मूर्तिभेदेन सर्गस्थित्यंतहेतवे ॥ विष्णवे त्रिदशारातिजिष्णवे परमात्मने ॥१४॥ चक्रभिन्नारिचक्राय चक्रिणे चक्रवल्लभ ॥ विश्वाय विश्ववंद्याय विश्वभूतानुवर्तिने ॥१५॥ नमोऽस्तु योगिध्येयात्मन्नमोऽस्त्वध्यात्मरूपिणे ॥ भक्तिप्रदाय भक्तानां नमस्ते मुक्तिदायिने ॥१६॥ पूजनं हवनं चेज्या ध्यानं पश्चान्नमस्क्रिया ॥ देवेश कर्म सर्वं मे भवेदाराधनं तव ॥१७॥ इति हवनजपार्चाभेदतो विष्णुपूजा नियतहृदयकर्मा यस्तु मंत्री चिराय ॥ स खलु सकलकामान् प्राप्य कृष्णांतरात्मा जननमृतिविमुक्तोऽत्युत्तमां भक्तिमेति ॥ १८ ॥ गोगोपगोपिकावीतं गोपालं गोषु गोप्रदम् ॥ गोपैरीड्यं गोसहस्रैर्नौमि गोकुलनायकम् ॥१९॥ प्रीणयेदनया स्तुत्या जगन्नाथं जगन्मयम् ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणामाप्तये पुरुषोत्तमम् ॥२०॥

इति श्रीनारदपञ्चरात्रे श्रीकृष्णस्तवराजः संपूर्णम् ।

२६१–गोपालहृदयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । ॐ अस्य श्रीगोपालहृदयस्तोत्रमन्त्रस्य । श्रीभगवान्सङ्कर्षण ऋषिः । गायत्री छन्दः । ॐ बीजम् । लक्ष्मीः शक्तिः । गोपालः परमात्मा देव-

ता ॥ प्रद्युम्नः कीलकम् ॥ मनोवाक्कायार्जितसर्वपापक्ष-
यार्थे श्रीगोपालप्रीत्यर्थे गोपालहृदयस्तोत्रजपे विनियोगः ।
श्रीसङ्कर्षण उवाच ॥ ॐ ममाग्रतः सदा विष्णुः पृष्ठत-
श्चापि केशवः ॥ गोविन्दो दक्षिणे पार्श्वे वामे च मधु-
सूदनः ॥१॥ उपरिष्टात्तु वैकुण्ठो वाराहः पृथिवीतले ॥
आवान्तरदिशः पातु तासु सर्वासु माधवः ॥२॥ गच्छत-
स्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा ॥ नरसिंहकृताद्-
गुप्तिर्वासुदेवमयो ह्ययम् ॥ ३ ॥ अव्यक्तं चैवास्य योनिं
वदन्ति व्यक्तं देहं दीर्घमायुर्गतिश्च ॥ वह्निर्वक्त्रं चन्द्र-
सूर्यौ च नेत्रे दिशः श्रोत्रे घ्राणमायुश्च वायुम् ॥ ४ ॥
वाचं वेदा हृदयं वै नभश्च पृथ्वी पादौ तारका रोमकू-
पाः ॥ अङ्गान्युपागांन्यधिदेवता च विद्यादुपस्थं हि
तथा समुद्रम् ॥५॥ तं देवदेवं शरणं प्रजानां यज्ञात्मकं
सर्वलोकप्रतिष्ठम् ॥ अज वरेण्यं वरदं वरिष्ठं ब्रह्माणमी-
शं पुरुषं नमस्ते ॥६॥ आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहूतं पुर-
स्कृतम् ॥ ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनम्
॥७॥ महाभारतमाख्यानं कुरुक्षेत्रं सरस्वतीम् ॥ केशवं
गां च गंगां च कीतयन्मां प्रसीदति ॥८॥ ॐ भूः पुरु-
षाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमोनमः ॥ ॐ भुवः
पु० ॥ ॐ स्वः पु० ॥ ॐ महः पु० ॥ ॐ जनः पु० ॥
ॐ तपः पु० ॥ ॐ सत्यं पु० ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः पु० ॥

ॐ वासुदेवाय पु० ॥ ॐ सङ्कर्षणाय पु० ॥ ॐ प्रद्यु-
म्नाय पु० ॥ ॐ अनिरुद्धाय पु० ॥ ॐ हयग्रीवाय
पु० ॥ ॐ भवोद्भवाय पु० ॥ ॐ केशवाय पु० ॥
ॐ नारायणाय पु० ॥ ॐ माधवाय पु० ॐ ॥ गोविं-
दाय पु० ॥ ॐ विष्णवे पु० ॥ ॐ मधुसूदनाय पु० ॥
ॐ वैकुण्ठाय पु० ॥ ॐ अच्युताय पु० ॥ ॐ त्रिविक्र-
माय पु० ॥ ॐ वामनाय पु० ॥ ॐ श्रीधराय पु० ॥ ॐ
हृषीकेषाय पु० ॥ ॐ पद्नाभाय पु० ॥ ॐ मुकुन्दाय
पु० ॥ ॐ दामोदराय पु० ॐ सत्याय पु० ॥ ॐ ई-
शानाय पु० ॥ ॐ तत्पुरुषाय पु० ॥ ॐ पुरुषोत्तमाय
पु० । ॐ श्रीरामचन्द्राय पु० । ॐ श्रीनृसिंहाय पु० ॥
ॐ अनंताय पु० । ॐ विश्वरूपाय पु० ॥ ॐ प्रणवेन्दु-
वह्निरविसहस्रनेत्राय पु० । य इदं गोपालहृदयमधीते
स ब्रह्महत्यायाः पूतो भवति । सुरापानात् स्वर्णस्तेयात्
वृषलीगमनात् पतिसंभाषणात् असत्यात् अगम्यागमनात्
अपेयपानात् अभक्ष्यभक्षणाच्च पूतो भवति । अब्रह्म-
चारी ब्रह्मचारी भवति । भगवान्महाविष्णुरित्याह ।

२६२-श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । वन्दे नवघनश्यामं पीतकौशे-
यवाससम् । सानंदं सुन्दरं शुद्ध श्रीकृष्ण प्रकृतेः परम्
॥१॥ राधेशं राधिकाप्राणवल्लभं बल्लवीयुतम् । राधा-

सेवितपादाब्जं राधावक्षःस्थलस्थितम् ॥२॥ राधानुगं राधिकेष्टं राधापहृतमानसम् ॥ राधाधारं भवाधारं सर्वाधारं नमामि तम् ।३। राधाहृत्पद्ममध्ये च वसन्तं संततं शुभम् । राधासहचरं शश्वद्राधाज्ञापरिपालकम् ।४। ध्यायंते योगिनो योगात् सिद्धाः सिद्धेश्वराश्च यम् । तं ध्यायेत्सततं शुद्धं भगवंतं सनातनम् । ५ । सेवंते सततं संतो ब्रह्मेशशेषसंज्ञकाः । सेवंते निर्गुणं ब्रह्म भगवंतं सनातनम् । ६ । निर्लिप्तं च निरीहं च परमात्मानमीश्वरम् । नित्यं सत्यं च परमं भगवंतं सनातनम् ।७। यं सृष्टेरादिभूतं सर्वबीजं परात्परम् । योगिनस्तं प्रपद्यन्ते भगवन्तं सनातनम् ।८। बीजं नानावताराणां सर्वकारणकारणम् । वेदावेद्यं वेदबीजं वेदकारणकारणम् ।९। योगिनस्त प्रपद्यन्ते भगवंतं सनातनम् । इत्येवमुक्त्वा गंधर्वः पपात धरणीतले ।१०। ननाम दंडवद्भूमौ देवदेवं परात्परम् । इति तेन कृतं स्तोत्रं यः पठेत्प्रयतः शुचिः ।११। इहैव जीवन्मुक्तश्च परं याति परां गतिम् । हरिभक्तिं हरेर्दास्यं गोलोके च निरामयः । १२। पार्षदप्रवरत्वं च लभते नात्र संशयः ।१३।

इति नारदपंचरात्रे श्रीकृष्णस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२६३--श्रीकृष्णलहरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कदा वृन्दारण्ये विपुलयमुनातीरपुलिने चरन्तं गोबिन्दं हलधरसुदामादिसहितम् । अहो कृष्ण स्वामिन् मधुरमुरलीमोहन विभो प्रसीदेति क्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान् ।१। कदा कालिन्दीयैर्हरिचरणमुद्राङ्कितटैः स्मरन्गोपीथं कमलनयनं सस्मितमुखम् । अहो पूर्णानन्दाम्बुजवदनभक्तैकललन प्रसीदेति क्रो० ।२। कदाचित्खेलन्तं व्रजपरिसरे गोपतनयैः कुतश्चित्संप्राप्तं किमपि भयितं गोपललनम् । अये राधे किवा हरसि रसिके कञ्चुकयुगं प्रसीदेति क्रो० ।३। कदाचिद्गोपीनां हसितचकितस्निग्धनयनं स्थितं गोपीवृन्दे नटमिव नटन्तं सुललितम् । सुराधीशैः सर्वैः स्तुतपदमिमं श्रीहरिमिति प्रसीदेति क्रो० ।४। कदाचित्सच्छायाश्रितमभिमहान्तं यदुपतिं समाधिस्थच्छायां चल इव विलोलैकमकरम् । अये भक्तोदाराम्बुजवदन नन्दस्य तनय प्रसीदेति क्रो० ।५। कदाचित्कालिन्द्यास्तटतरुकदम्बे स्थितममुं स्मयन्तं साकूतं हृतवसनमगोपीसुतपदम् । अहो शक्रानन्दाम्बुज्वदन गोवर्धनधर प्रसीदेति क्रो० । ६ । कदाचित्कान्तारे विजयसुखमिष्टं नृपसुतं वदन्तं पार्थेति नृपसुतसखे बन्धुरिति च । भ्रमन्तं विश्रान्तं श्रितमुरलिमास्यं हरिमहं प्रसी-

देति क्रो० ।७। कदा द्रक्ष्ये पूर्णं पुरुषममलं पङ्कजदृश-महो विष्णो नाथ रसिकमुरलीमोहन विभो ॥ दयां कर्तुं दीने परमकरुणाब्धे समुचितं प्रसीदेति क्रोशन्निमिष-मिव नेष्यामि दिवसान् ।८।

२६४-गोपालस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनारद उवाच ॥ नवीननी-रदश्यामं नीलेंदीवरलोचनम् ॥ बल्लवीनंदनं वन्दे कृष्णं गोपालरूपिणम् ॥ १ ॥ स्फुरद्बर्हिदलोद्बद्धनीलकुंचितम्-र्धजम् ॥ कदंबकुसुमोद्बद्धवनमालाविभूषितम् ॥ २ ॥ गं-डमंडलसंसर्गिचलत्कुंचितकुंतलम् ॥ स्थूलं मुक्ताफलो-दारहारोद्योतितवक्षसम् ॥३॥ हेमांगदतुलाकोटिकिरीटो-ज्ज्वलविग्रहम् ॥ मंदमारुतसंक्षोभचलितांबरसंचयम् ।४। रुचिरोष्ठपुटन्यस्तवंशीमधुरनिःस्वनैः ॥ लसद्गोपालिकाचे-तो मोहयंतं पुनः पुनः ॥५॥ बल्लवीवदनांभोजमधुपान-मधुव्रतम् ॥ क्षोभयंतं मनस्तासां सस्मेरापांगवीक्षणैः ॥६॥ यौवनोद्भिन्नदेहाभिः संसक्ताभिः परस्परम् ॥ विचित्रांबरभूषाभिर्गोपनारीभिरावृतम् ॥७॥ प्रभिन्नां-जनकालिंदीजलकेलिकलोत्सुकम् ॥ योधयंतं क्वचिद्गोपान् व्याहरंतं गवां गणम् ॥८॥ कालिन्दीजलसंसर्गिशीत-लानिलसेविते ॥ कदंबपादपच्छाये स्थितं वृन्दावने क्वचित् ॥ ९ ॥ रत्नभूधरसंलग्नरत्नासनपरिग्रहम् ॥

कल्पपादपमध्यस्थहेममंडपिकागतम् ॥१०॥ वसंतकुसु-
मामोदसुरभीकृतदिङ् मुखे । गोवर्धनगिरौ रम्ये स्थितं
रासरसोत्सुकम् ॥११॥ सव्यहस्ततलन्यस्तगिरिवर्यातप-
त्रकम् ॥ खंडिताखंडलोन्मुक्तमुक्तासारघनाघनम् ॥१२॥
वेणुवाद्यमहोल्लासकृतहुंकारनिःस्वनैः ॥ सवत्सैरुन्मुखैः
शश्वद्गोकुलैरभिवीक्षितम् ॥१३॥ कृष्णमेवानुगायद्भिस्त-
च्चेष्टावशवर्तिभिः । दंडपाशोद्यतकरैर्गोपालरुपशोभितम्
॥१४॥ नारदाद्यैर्मुनिश्रेष्ठैर्वेदवेदांगपारगैः ॥ प्रीतिसु-
स्निग्धया वाचा स्तूयमानं परात्परम् ॥ १५ ॥ य एवं
चिंतयेद्देवं भक्त्या संस्तौति मानवः ॥ त्रिसंध्यं तस्य
तुष्टोऽसौ ददाति वरमीप्सितम् ॥१६॥ राजवल्लभता-
मेति भवेत्सर्वजनप्रियः ॥ अचलां श्रियमाप्नोति स वाग्मी
जायते ध्रुवम् ॥१७॥

इति श्रीनारदपंचरात्रे गोपालस्तोत्रं ।

२६५–इन्द्रकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इन्द्र उवाच ॥ अक्षरं परम
ब्रह्म ज्योतीरूपं सनातनम् ॥ गुणातीतं निराकारं स्वे-
च्छामयमनन्तकम् ॥१॥ भक्तध्यानाय सेवायै नानारूप-
धरं वरम् ॥ शुक्लरक्तपीतश्यामं युगानुक्रमणेन च ॥२॥
शुक्लतेजः स्वरूपं च सत्ये सत्यस्वरूपिणम् ॥ त्रेतायां
कुकुंमाकारं ज्वलतं ब्रह्मतेजसा ॥ ३ ॥ द्वापरे पीतवर्णं

च शोभितं पीतवाससा । कृष्णवर्णं कलौ कृष्णं परिपूर्णतमं प्रभुम् ।४। नवधाराधरोत्कृष्टश्यामसुन्दरविग्रहम् । नन्दैकनंदनं वन्दे यशोदानंदनं प्रभुम् ।५। गोपिकाचेतनहरं राधाप्राणाधिकं परम् । विनोदमुरलीशब्दं कुर्वन्तं कौतुकेन च । ६ । रूपेणाप्रतिमेनैव रत्नभूषणभूषितम् । कंदर्पकोटिसौंदर्यं बिभ्रतं शांतमीश्वरम् ।७। क्रीडंतं राधया सार्धं वृंदारण्ये च कुत्रचित । कुत्रचिन्निर्जनेऽरण्येराधावक्षःस्थलस्थितम् ।८। जलक्रीडां प्रकुर्वंतं राधया सह कुत्रचित् । राधिकाकबरीभारं कुर्वन्तं कुत्रचिद्वने ।९। कुत्रचिद्राधिकापादे दद्यवंतमलक्तकम् । राधाचर्बिततांबूल गृह्णन्तं कुत्रचिन्मुदा ।१०। पश्यंतं कुत्रचिद्राधां पश्यंतीं वक्रचक्षुषा । दत्तवंतं च राधायै कृत्वा मालां च कुत्रचित् ।११। कुत्रचिद्राधया सार्धं गच्छंतं रासमंडलम् । राधादत्तां गले मालां धृतवंतं च कुत्रचित् ।१२। सार्धं गोपालिकाभिश्च विहरं तं च कुत्रचित् । राधां गृहीत्वा गच्छंतं तां विहाय च कुत्रचित । १३ । विप्रपत्नीदत्तस नं भुक्तवंत च कुत्रचित । भुक्तवंतं तालफलं बालकैः सह कुत्रचित् ।१४। वस्त्रं गोपालिकानां च हरन्तं कुत्रचिन्मुदा । गवां गणं व्याहरंतं कुत्रचिद्बालकैः सह । १५ । कालीयमूर्ध्नि पादाब्ज दत्तवंतं च कुत्रचित । विनोदमुरलीशब्दं कुर्वंतं कुत्रचिन्मुदा

।१६। गायंतं रम्यसंगीतं कुत्रचिद्बालकैः सह । स्तुत्वा शक्रः स्तवेंद्रेण प्रणनाम हरिं भिया ।१७। पुरा दत्तेन गुरुणा रणे वृत्तासुरेण च । कृष्णेन दत्तं कृपया ब्रह्मणे च तपस्यते ।१८। एकादशाक्षरो मंत्रः कवचं सर्वलक्षणम् । दत्तमेतत्कुमाराय पुष्करे ब्रह्मणा पुरा ।१९। तेन चांगिरसे दत्तं गुरवेऽगिरसा मुने । इदमिन्द्रकृतं स्तोत्रं नित्यं भक्त्या च यः पठेत् ।२०। इह प्राप्य दृढां भक्तिमन्ते दास्यं लभेद्ध्रुवम् । जन्ममृत्युजराव्याधिशोकेभ्यो मुच्यते नरः ।२१। न हि पश्यति स्वप्नेऽपियमदूतं यमालयम् ।२२।

इति श्री ब्रह्मवैवर्ते इन्द्रकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२६६–वसुदेवकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । वसुदेव उवाच । त्वामतीन्द्रियमव्यक्तमक्षरं निर्गुणं विभुम् । ध्यानासाध्यं च सर्वेषां परमात्मानमीश्वरम् । १ । स्वेच्छामयं सर्वरूपं स्वेच्छारूपधरं परम् । निर्लिप्तं परमं ब्रह्म बीजरूपं सनातनम् ।२। स्थूलात्स्थूलतरं प्राप्तमतिसूक्ष्ममदर्शनम् । स्थितं सर्वशरीरेषु साक्षिरूपमदृश्यकम् ।३। शरीरवन्तं सगुणमशरीरं गुणाकरम् । प्रकृतिं प्रकृतीशं च प्राकृतं प्रकृतेः परम् । ४ । सर्वेशं सर्वरूपं च सर्वान्तकरमव्ययम् । सर्वाधारं निराधारं निर्व्यूहं स्तौमि किं

विभुम् ॥५॥ अनन्तः स्तवनेऽशक्तोऽशक्ता देवी सरस्वती ॥ यं वा स्तोतुमशक्तश्च पञ्चवक्त्रः षडाननः ॥६॥ चतुर्मुखो वेदकर्त्ता यं स्तोतुमक्षमः सदा ॥ गणेशो न समर्थश्च योगीन्द्राणां गुरोर्गुरुः ॥७॥ ऋषयो देवताश्चैव मुनीन्द्रा मनुमानवाः ॥ स्वप्ने तेषामदृश्यं च त्वामेवं किं स्तुवन्ति ते ॥८॥ श्रुतयः स्तवनेऽशक्ताः किं स्तुवन्ति विपश्चितः ॥ विहायैवं शरीरं च बालो भवितुमर्हसि ॥९॥ वसुदेवकृतं स्तोत्रं त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः भक्तिदास्यमवाप्नोति श्रीकृष्णचरणाम्बुजे ॥१०॥ पुत्रं विशिष्टं लभते हरिदासं गुणान्वितम् । संकटं निस्तरेत्तूर्णं शत्रुभीतः प्रमुच्यते ॥११॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते वसुदेवकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

२६७-ब्रह्मदेवकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ रक्ष रक्ष हरे मां च निमग्नं कामसागरे ॥ दुष्कीर्तिजलपूर्णे च दुष्पारे बहुसंकटे ॥१॥ भक्तिविस्मृतिबीजे च विपत्सोपानदुस्तरे ॥ अतीव निर्मलज्ञानचक्षुःप्रच्छन्नकारणे ।२। जन्मोर्मिसंगसहिते योषिन्नक्रौघसंकुले ॥ रतिस्रोतः समायुक्ते गम्भीरे घोर एव च ॥३॥ प्रथमामृतरूपे च परिणामविषालये ॥ यमालयप्रवेशाय मुक्तिद्वारातिविस्तृतौ ।४। बुद्ध्या तरण्या विज्ञानैरुद्धरास्मानतः स्वयम् ॥ स्वयं

च त्वं कर्णधारः प्रसीद मधुसूदन ॥५॥ मद्विधाः कतिचिन्नाथ नियोज्या भवकर्मणि ॥ संति विश्वेश विधयो हे विश्वेश्वर माधव ॥६॥ न कर्मक्षेत्रवेदं ब्रह्मलोकोऽयमीप्सितः । तथा हि न स्पृहा कामे त्वद्भक्तिव्यवधायके ।७। हे नाथ करुणासिन्धो दीनबन्धो कृपां कुरु । त्वं महेश महाज्ञाया दुःस्वप्नं मां न दर्शत । ८ । इत्युक्त्वा जगतां धाता विरराम सनातनः । ध्यायं ध्यायं मत्पदाब्ज शश्वत्सस्मार मामिति । ९ । ब्रह्मणा च कृतं स्तोत्रं भक्तियुक्तश्च यः पठेत् । स चैवाकर्मविषये न निमग्नो भवेद्ध्रुवम् ।१०। मम मायां विनिर्जित्य स ज्ञानं लभते ध्रुवम् । इह लोके भक्तियुक्तो मद्भक्तप्रवरो भवेत् ।११।

२६८–विप्रपत्नीकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । विप्रपत्न्य ऊचुः । त्वं ब्रह्म परमं धाम निरीहो निरहंकृति निर्गुणश्च निराकारः साकारः सगुणः स्वम् ।१। साक्षिरूपश्च निर्लिप्तः परमात्मा निराकृतिः । प्रकृतिः पुरुषस्त्वं च कारण च तयोः परम् ।२। सृष्टिस्थित्यन्तविषये ये च देवास्त्रयः स्मृताः । ते त्वदंशाः सर्वबीजा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।३। यस्य लोम्नां च विवरे चाखिलं विश्वमीश्वर । महाविराण्महाविष्णुस्तं तस्य जनको विभो ।४। तेजस्त्व

चापि तेजस्वी ज्ञानं ज्ञानी च तत्परः । वेदेऽनिर्वचनीय-
स्त्वं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः । ५ । महदादिसृष्टिसूत्र
पञ्चतन्मात्रमेव च । बीजं त्वं सर्वशक्तिनां सर्वशक्तिस्व-
रूपकः ।६। सर्वशक्तिश्वरः सर्वः सर्वशक्त्याश्रयः सदा ।
त्वमनीहः स्वयंज्योतिः सर्वानन्दः सनातनः ।७। अहो
आकारहीनस्त्वं सर्वविग्रहवानपि । सर्वेन्द्रियाणां विषय
जानासि नेन्द्रियो भवान् ।८। सरस्वती जडीभूता य-
त्स्तोत्रे यन्निरूपिणे । जडीभूतो महेशश्च शेषो धर्मो
विधिः स्वयम् ।९। पार्वती कमला राधा सावित्री वेद-
सूरपि । वेदश्च जडतां याति के वा शक्ता विपश्चितः
।१०। वय किं स्तवनं कुर्मः स्त्रियः प्राणेश्वरेश्वर ।
प्रसन्नो भव नो देव दीनबन्धो कृपां कुरु । ११ । इति
तेतुश्च ता विप्रपत्न्यस्तच्चरणांबुजे । अभयं प्रददौ ता-
भ्यः प्रसन्नवदनेक्षणः । १२ । विप्रपत्नीकृत स्तोत्रं पू-
जाकाले च यः पठेत् । स गतिं विप्रपत्नीनां लभते ना-
त्र संशयः ।१३।

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते विप्रपत्नीकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

२६६-ज्वरकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । ज्वर उवाच । नमामि त्वाऽ-
नंतशक्ति परेशं सर्वात्मानं केवलं ज्ञप्तिमात्रम् । विश्वो-
त्पत्तिस्थानसंरोधहेतुं यत्तद्ब्रह्म ब्रह्म लिंग प्रशान्तम् ।१।

कालो दैवं कर्म जीवः स्वभावो द्रव्यं क्षेत्रं प्राण आत्मा
विकारः । तत्संघातो बीजरोहप्रवाहस्त्वन्मायैषा तन्नि-
षेधं प्रपद्ये । २ । नानाभावैर्लीलयैवोपपन्नैर्देवान्साधून्
लोकसेतून्बिभर्षि । हंस्युन्मार्गान् हिंसाया वर्तमानान् ज-
न्मैतत्ते भारहाराय भूमेः ।३। तप्तोऽहं ते तेजसा दुः-
सहेन शान्तोग्रेणात्युल्वणेन ज्वरेण । तावत्तापो देहिनां
तेऽङ्घ्रिमूलं नो सेवेरन्यावदाशानुबद्धाः ।४। श्रीभगवानु-
वाच । त्रिशिरस्ते प्रसन्नोऽस्मि व्येतु ते मज्ज्वराद्भयः
म् । यो नो स्मरति सम्वादं तस्य त्वन्न भवेद्भयम्
।५। इत्युक्तोऽच्युतमानम्य गतो माहेश्वरो ज्वरः । बा-
णस्तु रथमारूढः प्रागाद्योत्स्यन् जनार्दनम् ।६।

इति श्रीद्भागवतान्तर्गतं ज्वरकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२५५–सत्यव्रतोक्तं दामोदरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । सिंधुदेशोद्भवो विप्रो नाम्ना
सत्यव्रतः सुधीः । विरक्त इन्द्रियार्थेभ्यस्त्यक्त्वा पुत्रगृहा-
दिकम् ।१। वृन्दावने स्थितः कृष्णमाराध दिवानिश-
म् । निःस्वः सत्यव्रतो विप्रो निर्जनेऽव्यग्रमानसः । २ ।
कार्तिके पूजयामास प्रीत्या दामोदरं नृप । तृतीयेऽह्निस-
कृद्भुङ्क्ते पत्रं मूलं फलं तथा ।३। पूजयित्वा हरिं स्तौति
प्रीत्या दामोदराभिधम् ।४। सत्यव्रत उवाच । नमामी-
श्वरं सच्चिदानन्दरूपं लसत्कुण्डलं गोकुले भ्राजमानम् ।

यशोदाभियोलूखले धावमानं परामृष्टमत्यंततो द्रुतगोप्या ।५। रुदंतं मुहुर्नेत्रयुग्मं मृजतं कराम्भोजयुग्मेन सतङ्कनेत्रम् । मुहुःश्वासकंपत्रिरेखाङ्ककण्ठं स्थितं नौमि दामोदरं भक्तबंद्यम् ।६। वरं देव देहीश मोक्षावधिं वा न चान्यं वृणेऽहं वरदेशादपीह । इदं ते वपुर्नाथ गोपालबालं सदा मे मनस्याविरास्तां किमन्यैः ।७। इदं ते मुखांभोजमत्यंतनीलैर्वृतं कुंतलैः स्निग्धवक्त्रैश्च गोप्या । मुहुश्चुंबितं बिंबरक्ताधरं मे मनस्याविरास्तामलं लक्षलाभैः ।८। नमो देव दामोदरानंत विष्णो प्रसीद प्रभो दुःखजालाब्धिमग्नम् । कृपादृष्टिवृष्ट्याऽतिदीनं च रक्ष गृहाणेश मामज्ञमेवाक्षिदृश्यम् ।९। कुबेरात्मजो वृक्षमूर्ती च यद्वत्त्वया मोचितौ भक्तिभाजौ कृतौ च । तथा प्रेमभक्तिं स्वकां मे प्रयच्छ न मोक्षे ग्रहो मेऽस्ति दामोदरेह ।१०। नमस्ते सुदाम्ने स्फुरद्दीप्तिधाम्ने तथोरःस्थविश्वस्य धाम्ने नमस्ते ॥ नमो राधिकायै त्वदीयप्रियायै नमोऽनंतलीलाय देवाय तुभ्यम् ॥११॥ नारद उवाच ॥ सत्यव्रतद्विजस्तोत्रं श्रुत्वा दामोदरो हरिः । विद्युल्लीलाचमत्कारो हृदये शनकैरभूद् ।१२।

२७१-बालकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । बाला ऊचुः । यथा संरक्षितं ब्रह्मन्सर्वापत्स्वेव नः कुलम् । तथा रक्षां कुरु पुनर्दावा-

र्वेषां मधुसूदन । १ । त्वमिष्टदेवताऽस्माकं त्वमेव कुलदेवता । स्रष्टा पाता च संहर्ता जगतां च जगत्पते । २ । वह्निर्वा वरुणो वापि चंद्रो वा सूर्य एव च । नमः कुबेरः पवनईशानाद्याश्च देवताः । ३ । ब्रह्मेशशेषधर्मेन्द्रा मुनीन्द्रा मनवः स्मृताः । मानवाश्च तथा दैत्या यक्षराक्षसकिन्नराः ।४। ये ये चराचराश्चैव सर्वे तव विभूतयः । आविर्भावस्तिरोभावः सर्वेषां च तवेच्छया ।५।अभयं देहि गोविन्द वह्निसहरणं कुरु । वयं त्वां शरणं यामो रक्ष नः शरणागतान् ।६। इत्येवमुक्त्वा ते सर्वे तस्थुर्ध्यात्वा पदांबुजम् । दूरीभूतस्तु दावाग्निः श्रीकृष्णामृतदृष्टित. ।७। दूरीभूते च दावाग्नौ ननृतुस्ते मुदान्विताः ॥ सर्वापदः प्रणश्यंति हरिस्मरणमात्रतः । ८ । इदं स्तोत्रं महापुण्यं प्रातरुत्थाय यः पठेत् । वह्नितो न भवेत्तस्य भयं जन्मनि जन्मनि । ९ । शत्रुग्रस्ते च दावाग्नौ विपत्तौ प्राणसंकटे । स्तोत्रमेतत्पठित्वा तु मुच्यते नात्र संशयः ।१०।

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते बालकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२७७-मोहिनीकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । मोहिन्युवाच । सर्वेन्द्रियाणां प्रवरं विष्णोरंशं च मानसम् । तदेव कर्मणां बीजं तदुद्भव नमोऽस्तु ते ।१। स्वयमात्मा हि भगवान् ज्ञानरूपो महेश्वरः । नमो ब्रह्मन् जगत्स्रष्टस्तदुद्भव नमो-

ऽस्तु ते । २ । सर्वाजित जगज्जेतर्जीवजीव मनोहर ।
रतिबीज रतिस्वामिन् रतिप्रिय नमोऽस्तु ते । ३ । श-
श्वद्योषिदधिष्ठान योषित्प्राणाधिकप्रिय । योषिद्वाहन यो-
षाश्च योषिद्बन्धो नमोऽस्तु ते । ४ । पतिसाध्यकराशेष-
रूपाधार गुणाश्रय । सुगंधिवातसचिव मधुमित्र नमो-
ऽस्तु ते । ५ । शश्वद्योनिकृताधार स्त्रीसंदर्शनवर्धन ।
विदग्धानां विरहिणां प्राणांतक नमोऽस्तु ते । ६ । अ-
कृपा येषु तेऽनर्थं तेषां ज्ञानविनाशनम् । अनूहरूपभ-
क्तेषु कृपासिंधो नमोऽस्तु ते । ७ । तपस्विनां च तपसां
विघ्नबीजाय लीलया । मनः सकामं मुक्तानां कर्तुं श-
क्त नमोऽस्तु ते । ८ । तपःसाध्यस्तथाऽऽराध्यः सदैव
पाञ्चभौतिकः । पंचेन्द्रियकृताधार पञ्चबाण नमोऽस्तु
ते । ९ । मोहनीत्येवमुक्त्वा तु मनसा सा विधेः पुरः ।
विरराम नम्रवक्त्रा बभूव ध्यानतत्परा ।१०। उक्तं
माध्यन्दिने कान्ते स्तोत्रमेतन्मनोहरम् । पुरा दुर्वाससा
दत्तं मोहिन्यै गन्धमादने । ११ । स्तोत्रमेतन्महापुण्यं
कामी भक्त्या यदा पठेत् । अभीष्टं लभते नूनं निष्क-
लंको भवेद्ध्रुवम् । १२ । चेष्टां न कुरुते कामः कदा-
चिदपि तं प्रियम । भवेदरोगी श्रीयुक्तः कामदेवसम-
प्रभः । वनितां लभते साध्वीं पत्नीं त्रैलोक्यमोहिनीम्
१३ ।

२७३—श्रीवृन्दावनस्तोत्रम् ।

वृन्दाटवी सहजवीतसमस्तदोषा दोषाकरानपि गुणाकरतां नयन्ती । पोषाय मे सकलधर्मबहिष्कृतस्य शोषाय दुस्तरमहाघचयस्य भूयात् । १ । वृन्दाटवी बहुभवीयसुपुण्यपुञ्जा क्षेत्रातिथिर्भवति यस्य महामहिम्नः । तस्येश्वरः सकलकर्म मृषा करोति ब्रह्मादयस्तमतिभक्तियुता नमन्ति । २ । वृन्दावने सकलपावनपावनेऽस्मिन् सर्वोत्तमोत्तमचरस्थिरसत्त्वजातौ । श्रीराधिकारमणभक्तिरसैककोशे योषेण नित्यपरमेण कदा वसामि ।३। वृन्दावने स्थिरचराखिलसत्ववृन्दानन्दाम्बुधिस्नपनदिव्यमहाप्रभावे । भावेन केनचिदिहामूति ये वसन्ति ते सन्ति सर्वपरवैष्णवलोकभूम्नि । ४ ।

२७४—गोपालस्तुतिः (१) ।

श्रीगणेशाय नमः । ॐ नमो विश्वस्वरूपाय विश्वस्थित्यन्तहेतवे । विश्वेश्वराय विश्वाय गोविन्दाय नमो नमः । १ । नमो विज्ञानरूपाय परमानन्दरूपिणे । कृष्णाय गोपीनाथ गोविन्दाथाय नमो नमः ।२। नमः कमलनेत्राय नम कमलमालिने । नमः कमलनाभाय कमलापतये नमः । ३ । बर्हापीडाभिरामाय रामायाकुण्ठमेधसे । रमामनसहंसाय गोविंदाय नमो नमः । ४ । कंसवंशविनाशाय केशिचाणूरघातिने । कालिन्दीकूल-

लीलाय लोलकुण्डलधारिणे । ५ । वृषभध्वजवन्द्याय पार्थसारथये नमः । वेणुवादनशीलाय गोपालायाहिमर्दिने । ६ । बल्लवीवदनाम्भोजमालिने नृत्यशालिने । नमः प्रणतपालाय श्रीकृष्णाय नमो नमः । ७ । नमः पापप्रणाशाय गोवर्धनधराय च । पूतनाजीवितान्ताय तृणावर्तासुहारिणे । ८ । निष्कलाय विमोहाय शुद्धायाशुद्धवैरिणे । अद्वितीयाय महते श्रीकृष्णाय नमो नमः । ९ । प्रसीद परमानन्द प्रसीद परमेश्वर । आधिव्याधिभुजङ्गेन दष्टं मामुद्धर प्रभो ।१०। श्रीकृष्ण रुक्मिणीकान्त गोपीजनमनोहर । संसारसागरे मग्नं मामुद्धर जगद्गुरो । ११ । केशव क्लेशहरण नारायण जनार्दन । गोविन्द परमानन्द मां मामुद्धर माधव ।१२।

इत्याथर्वणे गोपालतापन्युपनिषदन्तर्गतं गोपालस्तोत्रम् ।

२७५-गोपालस्तुतिः (२) ।

श्रीगणेशाय नमः । गोधूलिधूसरतनो करुणैकपात्र नारायणाभयद गोपजनाभिराम । गोगोपिकानयनरञ्जन वंशपाणे वेदान्तवेद्य मम देहि करावलम्बम् । १ । आभीरदारमुखपंकजसौरभोत्थमाध्वीसुधादनपटो नवनीतचोर । गोपांगनांगपरिरंभणजातहास वे० ॥२॥ गोवर्द्धनोद्धरणखेदभवोदबिंदुसंसिक्तसुन्दरमुखाब्जदयार्द्रदृष्टे । लावण्यधाम सुरवन्दितपादपद्म वेदांत० ।३। सूर्यात्म-

जातटसमुद्भवनीपवृक्षशाखाधिरोहजनितद्विगुणांगकान्ते ।
वंशीरवेण धवलीतिकृताभिशब्द वेदांत० । ४ । सव्येत
पाणिकमलेन विधाय भक्ष्यमास्वादयन्तमपरेण विलो-
लनेत्र । त्वां देवताश्च मुनयः प्रविलोकयन्ति वे० । ५ ।
लक्ष्मीपते तरुणवारिजपत्रनेत्र पीताम्बरार्जुनसख स्म-
रसुन्दराङ्ग । नारायणाच्युत जनार्दन चक्रपाणे वे०
। ६ । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमदविश्वसहस्त्ररश्मिनाराधिपतिककुबे-
रविशालदक्ष । मारीचकश्यपसनातनवदितांघ्रे वे०
। ७ । नमः पद्मनाभारविंदाक्ष विष्णो नमस्ते हृषीकेश
जिष्णो नमस्ते । नमो वासुदेवाखिलाधार भूमन्अमस्ते
सुराधीश ते विश्वरूप । ८ । नमः कैटभारे मुरारे ख-
रारे नमो दानवारे नमो रावणारे । नमः कंसविध्वंस-
नारिष्टशत्रो नमौ धेनुकारे नमः पूतनारे । ९ । नमः
शंखपाणे नमश्चक्रपाणे नमः शार्ङ्गपाणे नमः पद्मपाणे ।
नमो वेदरूपाण पुभ्यं पराय नमो यज्ञभोक्त्रे नमस्तेऽगु-
णाय ।१०। अजा रुद्रधात्रादिदेवाः स्वरूपं परं नाभि-
जानन्ति मायामयेशम् । यजंतीह नित्यं ततः स्थूलरूपं
प्रसीदाशु मे दीनबंधो रमेश ।११। संसारपाशदृढबन्ध-
निपीडितस्य मोहांधकारभयकूपनिपातितस्य । कामाभि-
लापविविधोरगदंशितस्य दीनस्य मे कुरु दयां करुणै-
कपात्र ।१२। आर्तो मत्सदृशो नान्यस्त्वत्तो मान्यः कृपा-

करः । अनन्यगतिकं नाथ कथं मां समुपेक्षसे । १३ ।
आकर्णयाशु कृपणस्य कृपावचांसि लब्धोऽसि नाथ बहु-
भिः किल जन्मसंघैः । अद्य प्रभो यदि दयां कुरुषे न मे
त्वं त्वत्तः परं कथय कं शरणं श्रयामि ।१४। श्रीयाद-
वेन्द्र करुणार्णव विश्वरूप लक्ष्मीनिवास सुरविन्दतपाद-
पद्म । त्वामागतोऽस्मि शरणं सकलत्रपुत्रो यद्रोचते
भगवते कुरु तन्नमस्ते ।१५।

२७६—गोपालस्तुतिः (३) ।

अतसीकुसुमोपमेयकान्तिर्यमुनाकूलकदम्बमध्यवर्ती ।
नवगोपवधूविनोदशाली वनमाली वितनोतु मङ्गलं वः
। १ । गायन्तीनां गोपसीमन्तिनीनां स्फीताकांक्षामक्षि-
रोलम्बमालाम् । निश्चाञ्चल्यांदात्मवक्त्रारविन्दे कुर्व-
न्नव्याद्देवकीनन्दनो वः ।। २ ।। पुंजीभूतं प्रेम गोपाङ्ग-
कानां मूर्तीभूतं भागधेयं यदूनाम् । एकीभूतं गुप्तवित्तं
श्रुतीनां श्यामीभूतं ब्रह्म मे संनिधत्ताम् । ३ । त्वां
पातु नीलनलिनीदलकान्तिकान्तेः कृष्णस्य पाणिसरसी-
रुहकोशबन्धः । राधाकपोलमकरीलिखनेषु योऽयं कर्णा-
वतंसकमलं विपुलीचकार ।४। उत्फुल्लमानसरसीरुह-
चारुमध्यमियन्मधुव्रतभरद्युतिहारिणीभिः । राधावि-
लोचनकटाक्षपरम्पराभिर्दृष्टो हरिस्तव सुखानि तनोतु
कामम् ।५।

२७७-श्रीकृष्णवंशीस्तुतिः ।

क्रेङ्कारः स्मरकार्मुकस्य सुरतक्रीडापिकानां रवो झङ्कारो रतिमञ्जरीमधुलिहां लीलाचकोरीध्वनिः ॥ तन्व्याः कञ्चुलिकापसारणभुजाक्षेपस्खलत्कङ्कणक्काणः प्रेम तनोतु वो नववयोलास्याय वेणुस्वनः ।१।

२७८-श्रीकृष्णनन्दकमणिस्तुतिः ।

सांद्रां मुदं यच्छतु नन्दको शः सोल्लासक्षक्ष्मोप्रतिबिम्बगर्भः ॥ कुर्वन्नजस्रं यमुनाप्रवाहसलीलराधास्मरणं मुरारेः ।१।

२७९-भगवन्मानसपूजा ।

श्रीगणेशाय नमः । हृदम्भोजे कृष्णः सजलजलदश्यामलतनुः सरोजाक्षः स्रग्वी मुकुटकटकाद्याभरणवान् । शरद्राकानाथप्रतिमवदनः श्रीमुरलिकां वहन्ध्येयो गोपीगणपरिवृत्तः कुंकुमचित. ।१। पयोम्भोधेर्द्वीपान्मम हृदयमायाहि भगवन्मणिव्रातभ्राजत्कनकवरपीठं भज हरे । सुचिह्नौ ते पादौ यदुकुलज नेनेज्मि सुजलैर्गृहाणेदं दूर्वाफलजलवदर्घ्यं मुररिपो ।२। त्वमाचामोपेन्द्र त्रिदशसरिदम्भोऽतिशिशिरं भजस्वेमं पञ्चामृतरचितमाप्लावमघहन् । द्युनद्याः कालिन्द्या अपि कनककुम्भस्थितमिदं जलं तेन स्नानं कुरु कुरु कुरुष्वाचमनकम् ।३। तडिद्वर्णे वस्त्रे भयविजयकान्ताधिहरण प्रलम्बारि-

भ्रातर्मृदुलमुपवीतं कुरु गले । ललाटे पाटीरं मृगमद-युतं धारय हरे गृहाणेदं माल्यं शतदलतुलस्यादिरचितम् । ४ । दशागं धूपं सद्वरचरणाग्रेऽर्पितमये मुखं दीपेनेन्दुप्रभवरजसा देव कलये ॥ इमौ पाणी वतिनुत सकर्पूररजसा विशोध्याग्रे दत्तं सलिलमिदमाचाम नृहरे ॥५॥ सदा तृप्तान्नं षड्रसवदखिलव्यञ्जनयुतं सुवर्णामित्रे गोघृतचषकयुक्ते स्थितमिदम् ॥ यशोदासूनो तत्परमदययाऽशान सखिभिः प्रसादं वांछद्भिः सह तदनु नीरं पिब विभो । ६ । सचन्द्रं ताम्बूलं मुखरुचिकरं भक्षय हरे फलं स्वादु प्रीत्या परिमलवदास्वादय चिरम् । सपर्यापर्याप्त्यै कनकमणिजातं स्थितमिदं प्रदीपैरारार्तिं जलधिततयाश्लिष्ट रचये ।७। निजातीयैः पुष्पैरभिसुरभिभि बिल्वतुलसीयुतैश्चेमं पुष्पाञ्जलिमजिय ते मूर्ध्नि निदधे । तव प्रादक्षिण्यक्रमणमघविध्वंसि रचितं चतुर्वारं विष्णो जनिपथगतिश्रान्तविदुषा ।८। नमस्कारोऽष्टांगं सकलदुरितध्वंसनपटुः कृतं नृत्यं गीतं स्तुतिरपि रमाकान्त त इमम् । तव प्रीत्यै भूयामहमपि च दासस्तव विभो कृतं छिद्रं पूर्णं कुरु कुरु नमस्तेऽस्तु भगवन् ।९। सदा सेव्यः कृष्णः सजलघननीलः करतले दधानो दध्यन्नं तदनु दवनीतं मुरलिकाम् ॥ कदाचित्कान्तानां कुचकलशपत्रालिरचनासमाक्तं स्विग्धैः सह शिशुविहारं

विरचयन् ।१०। मणिकर्णीच्छया जातमिदं मानसपूजनम् । यः कुर्वीतोषसि प्राज्ञस्तस्य कृष्णः प्रसीदति ।११।

इति श्रीशङ्कराचार्यविरचितं भगवन्मानसपूजनम् ।

२८०–गर्भस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ।। देवा ऊचुः । जगद्योनिरयोनिस्त्वमनन्तोऽव्यय एव च । ज्योतिः स्वरूपो ह्यनिशं सगुणो निर्गुणो महान् ।१। भक्तानुरोधात्साकारो निराकारो निरंकुशः । निर्व्यूहो निखिलाधारो निःशङ्को निरुपद्रवः ।२। निरुपाधिश्च निर्लिप्तो निरीहो निधनान्तकः । स्वात्मारामः पूर्णकामोऽनिमिषो नित्य एव च ।३। स्वेच्छामयः सर्वहेतुः सर्वगुणाश्रयः । सर्वदो दुःखदो दुर्गो दुर्गनान्तक एव च ।४। सुभगो दुर्भगो वाग्मी दुराराध्यो दुरत्ययः । वेदहेतुश्च वेदश्च वेदाङ्गो वेदविद्विभुः ।५। इत्येवमुक्त्वा देवाश्च प्रणेमुस्तं मुहुर्मुहुः । हर्षाश्रुलोचनाः सर्वे ववृषुः कुसुमानि च ।६। द्विचत्वारिंशन्नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । दृढां भक्तिं हरेर्दास्यं लभते वाञ्छितं फलम् ।७। इत्येवं स्तवनं कृत्वा देवास्ते स्वालयं ययुः । बभूव जलवृष्टिश्च निश्चेष्टा मथुरापुरी ।८।

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते देवकृता गर्भस्तुतिः सम्पूर्णा ।

२८१-सुदर्शनचक्रस्तुतिः ।

दृष्टस्य यस्य हरिणा रणमूर्ध्नि व्यूतिरुद्भूतदुःसहमहः प्रसराः समन्तात् । तल्लोचनस्थितरविप्रतिबिम्बगर्भेवाभाति चक्रमरिचक्रनुदेऽस्तु तद्वः ।१। उद्वृत्तदैत्यपृतनापतिकण्ठछेदोच्छलद्वहच्छोणितशोणधारम् । चक्रं क्रियादभिमतानि हरेरुदारदिग्दाहदारुणनभःश्रियमुद्वहद्वः ।२।

२८२-बालरक्षा ।

श्रीगणेशाय नमः । अव्यादजोऽङ्घ्रि मणिमांस्तव जान्वथोरू यज्ञोऽच्युतः कटितटं जठरं हयास्यः हृत्केशवस्त्वदुर ईश इनस्तु कण्ठं विष्णुर्भुजं मुखमुरुक्रम ईश्वरः कम् ।१। चक्र्यग्रतः सहगदो हरिरस्तु पश्चात्त्वत्पार्श्वयोर्धनुरसी मधुहा जनश्च । कोणेषु शंख उरुगाय उपर्युपेन्द्रस्तार्क्ष्यः क्षितौ हलधरः पुरुषः समन्तात् । २ । इन्द्रियाणि हृषीकेशः प्राणान्नारायणोऽवतु । श्वेतद्वीपपतिश्चित्तं मनो योगेश्वरोऽवतु ।३। पृश्निगर्भश्च ते बुद्धिमात्मानं भगवान्परः । क्रीडन्तं पातु गोविन्दः शयानं पातु माधवः ।४। व्रजन्तमव्याद्वैकुण्ठ आसीनं त्वां श्रियः पतिः । भुञ्जानं यज्ञभुक्पातु सर्वग्रहभयङ्करः ।५। डाकिन्यो यातुधान्यश्च कूष्माण्डा येऽर्भकग्रहाः भूतप्रेतपिशाचाश्च यक्षरक्षोविनायकाः । ६ । कोटरारेवतीज्ये-

ष्ठापूतनामातृकादयः । उन्मादा ये ह्यपस्मारा देहप्राणेन्द्रियद्रुहः ।७। स्वप्नदृष्टा महोत्पाता वृद्धबालग्रहाश्च ये । सर्वे नश्यन्तु ते विष्णोर्नामग्रहणभीरवः ।८।

इति श्रीमद्भागवतान्तर्गता बालरक्षा समाप्ता ।

२८३-श्रीगोविन्दमङ्गलम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। मुकुन्दमन्वहं वन्दे भक्तिभारनतानन: ।। औषधं भवरोगस्य यत्पादस्मरणं परम् ।१। श्रीकृष्णदेवः सरसीरुहाक्षः स्तनोत्पलापीडनतत्परो माम् ।। पायात्प्रसूनेषुमनोज्ञरूपो दिवौकसामीडितपादपद्मः ।।२।।

इति श्रीकृष्णावतारस्तोत्राणि ।

हनुमत्स्तोत्राणि ।

२८४-श्रीहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। अस्य श्रीहनुमत्कवचस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः ।। अनुष्टुप् छन्दः ।। श्रीहनुमान्देवता ।। मारुतात्मजेति बीजम् ।। अञ्जनीसूनुरिति शक्तिः ।। आत्मनः सकलकार्यसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।। ॐहनुमते अंगुष्ठाभ्यां नमः ।। ॐपवनात्मजाय तर्जनीभ्यां नमः ।। ॐ अक्षपद्माय मध्यमाभ्यां० ॐविष्णुभक्ताय अनामि-

काभ्यां नमः। ॐलङ्काविदाहकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ श्रीरामकिंकराय करतलकरपृष्ठाभ्यां०। अथ ध्यानम्। ध्यायेद्बालदिवाकरद्युतिनिभं देवारिदर्पापहं देवेन्द्रप्रमुखैः प्रशंसियशसं देदीप्यमानं रुचा। सुग्रीवादिसमस्तवानरयुतं सुव्यक्ततत्वप्रियं संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालंकृतम् ।१। वज्रांगं पिंगलेशाढ्यं स्वर्णकुण्डलमण्डितम्। नियुद्धमुपसंक्रम्य पारावारपराक्रमम् ।२। वामहस्ते गदायुक्तं पाशहस्तं कमण्डलुम्। ऊर्ध्वदक्षिणदोर्दण्डं हनुमन्तं विचिन्तयेत् ।३। स्फटिकाभं स्वर्णकांति द्विभुजं च कृताञ्जलिम्। कुण्डलद्वयसंशोभिमुखाम्बुजहरिं भजेत् ।४। हनुमान्पूर्वतः पातु दक्षिणे पवनात्मजः। पातु प्रतीच्यायक्षघ्नः पातु सागरपारगः ।५। उदीच्यामूर्ध्वगः पातु केसरीप्रियनन्दनः। अधस्ताद्विष्णुभक्तश्च पातु मध्ये च पावनिः ।६। अवांतरदिशः पातु सीताशोकविनाशनः। लंकाविदाहकः पातु सर्वापद्भ्यो निरन्तरम् ।७। सुग्रीवसचिवः पातु मस्तकं वायुनन्दनः। भालं पातु महावीरो भ्रुवोर्मध्ये निरन्तरम् ।८। नेत्रे छायापहारी च पातु नः प्लवगेश्वरः। कपोलौ कर्णमूले च पातु श्रीरामकिंकरः। ९। नासाग्रमञ्जनीसूनुः पातु वक्त्रं कपीश्वरः। पातु कण्ठे च दैत्यारिः स्कन्धौ पातु सुरार्चितः ।१०। भुजौ पातु महा-

तेजाः करौ तु चरणायुधः । नखान्नखायुधः पातु कुक्षो कपीश्वरः ।११। वक्षो मुद्रापहारी च पार्श्वे पातु भुजायुधः । लंकाविभंञ्जकः पातु पृष्ठदेशे निरन्तरम् । १२ । नाभिं च रामदूतश्च कटिं पात्वनिलात्मजः । गुह्यं पातु कपीशस्तु गुल्फौ पातु महाबलः । १३ । अचलोद्धारकः पातु पादौ भास्करसन्निभः । अंगान्यमितसत्वाढ्वः पातु पादांगुलो सदा ।१४। सर्वांगांनि महाशूरः पातु रोमाणि चात्मवान् ।।१५।। हनुमत्कवचं यस्तु पठेविद्वान् विचक्षणः ।। स एव पुरुषश्रेष्ठो भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ।।१६।। त्रिकालमेककालं वा पठेन्मासत्रयं पुनः । सर्वांरिष्ट क्षणे जित्वा स पुमान् श्रियमाप्नुयात् ।।१७।। अर्धरात्रौ जले स्थित्वा सप्तवारं पठेद्यदि ।। क्षयापस्मारकुष्ठादितापज्वरनिवारणम् ।। १८ ।। अश्वत्थमूलेऽर्कवारे स्थित्वा पठति यः पूमान् ।। स एव जयमाप्नोति संग्रामेष्वभयं तथा ।।१९।। यः करे धारयेन्नित्यं सर्वान्कामानवाप्नुयात् ।। लिखित्वा पूजयेद्यस्तु तस्य ग्रहभयं हरेत् ।।२०।। कारागृहे प्रयाणे च संग्रामे देशविप्लवे ।। यः पठेद्धनुमत्कवचं तस्य नास्ति भयं तथा ।।२१।। यो वारां निधिमल्पपल्वलमिवोल्लंघ्य प्रतापान्वितो वैदेहीधनतल्पशोकहरणो वैकुण्ठभक्तप्रियः ।। अक्षाद्यूर्जितराक्षसेश्वरमहादर्पापहारो रणे सोऽयं वानरपुङ्गवोऽवतु सदा

चास्मान्समीरात्मजः ॥२२॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे अगस्त्यनारसव दे श्रीरामचन्द्र-
प्रोक्तं हनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ।

२८५-एक मुखिहनुमत्कवचं ।

श्रीगणेशाय नमः । ॐ श्री हनुमते नमः । एकदा सुखमासीन शङ्करं लोकशंकरम् । पप्रच्छ गिरजा कान्त कर्पूरधवलं शिवम् ॥१॥ पार्वत्युवाच । भगवन्देवदेवेश लोकनाथ जगद्गुरो । शोकाकुलानां लोकानाम् केनरक्षा भवद् ध्रुवम् ॥२॥ संग्रामे संकटे घोरे भूतप्रेतादिके भये ॥ दुःख दावाग्निसन्प्तचेतसां दुःखभागिनाम् ॥३॥ ईश्वर उवाच । शृणु देवि प्रनक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया ॥४॥ विभीषमाय रामेण प्रेम्णा दत्तं च यत्पुरा ॥ लवचं कपिनाथस्य वायुपुत्रस्य धीमतः ॥ गुह्य ते संप्रदक्ष्यामि विशेषाच्छ्रुणु सुन्दरि ॥५॥ ॐ अस्य श्रीहनुमत्कवचस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः ॥ अनुष्टुप् छंदः ॥ श्रीमहावीरो हनुमान् देवता ॥ मरुतात्मज इति बीजम् ॥ ॐ अञ्जनीसूनुरिति शक्तिः । ॐ ह्रैं ह्रां ह्रौं इति कवचम् ॐ स्वाहा इति कीलकम् ॥ लक्ष्मणप्राणदाता इति बीजम् । सकलकार्यसिद्धयर्थे जपे विनियोगः । अथ न्यासः । ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ह्रैं अना-

भिकाभ्यां नमः । ॐ सौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ह्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ अञ्जनीसूनवे हृदयाय नमः । ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा । ॐ वायुसुताय शिखायै वषट् । ॐ वज्रदेहाय कवचाय हुम् । ॐ रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट । ॐ ब्रह्मास्त्रनिवारणाय अस्त्राय फट् । रामदूताय विद्महे कपिराजायधीमहि । तन्नो हनुमान प्रचोदयात्तः । ॐ हुं फट् इति दिग्बन्धः ।

ओं ध्यायेद् बाल दिवाकरद्युतिनिभं देवारिदर्पापहं देवेन्द्रप्रमुखप्रशस्तयशसं देदोप्यमानं रुचा । सुग्रीवादिसमस्तवानरयुतं सुव्यक्ततत्वप्रियं सरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालंकृतम् ॥१॥ उद्यन्मार्तण्ठकोटिप्रकटरुचियूलं चारुवीरासनस्थं मौञ्जीयज्ञोपवीताऽरुणरुचिरशिखाशोभितं कुण्डलाङ्गम् ॥ भक्तानामिष्टदं तं प्रणतमुनिजनं वेदनादप्रमोदं ध्यायेद्देवं विधेवं प्लवगकुलपतिं गोष्पदीभूतवार्धिम ॥२॥ वज्रांगं पिगंकेशाढ्यं स्वर्णकुण्डलमण्डितम् ॥ नियुद्धकर्मकुशलं पारावारपराक्रमम् ॥ ३ ॥ वामहस्ते महावृक्षं दशास्यकरखण्डनम् ॥ उद्यद्दक्षिणदोर्दण्डं हनूमन्तं विचिन्तयेत् ॥४॥ स्फटिकाभं स्वर्णकान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम् । कुण्डलद्वयसंशोभिमुखाम्भोजं हरिं भजेत् ॥५॥ उद्यदादित्यसङ्काशमुदारभुजविक्रमम् । कन्दर्पकोटिलावण्यं सर्वविद्याविशारदम् ॥६॥ श्रीराम-

हृयानन्दं भक्तकल्पमहीरुम् । अभयं वरदं दोर्भ्यां कलये मारुतात्मजम् ।७। अन्याजित नमस्तेऽस्तु नमस्ते रामपूजित ।। प्रस्थानं च करिष्यामि सिद्धर्भवतु मे सदा ।८। यो वारांनिधिमल्पपल्वलमिवोल्लङ्घ्य प्रतापान्वितो वैदेहीघनशोकतापहरणो वैकुण्ठतत्त्वप्रियः । अक्षाद्र्जितराक्षसेश्वरमहादर्पारहारी रणे सोऽयं वानरपुङ्गवोऽवतु सदा युष्मान्समीरात्मजः ।।९।। वज्राङ्गं पिंगकेशं कनकमयलसत्कुण्डलाक्रान्तगण्डं नानाविद्याधिनाथं करतलविधृतं पूर्णकुम्भं दृढं च ।। भक्ताभीष्टाधिकारं निहतनरभुजं सर्वदामुप्रसन्नं त्रैलोक्यत्रणहेतु सकलभुवनगं रामदूतं नमामि ।।१०।। उद्यल्लाङ्गूलकेशप्रचजलधरं भीममूर्ति कपीन्द्रं वन्दे रामाङ्घ्रिप्रहाभ्रमरणरिव्रतं तत्वसारं प्रसन्नं ।। वज्राङ्गं वज्ररूपं कनकमयलसत्कुण्डलाक्रान्तगण्डं दम्भोलिस्तम्भसारप्रहरणत्रिकट भूतरक्षोधिनाथम् ।११। वामे करे वीरगदां वहन्तं शैलं च दक्षे निजकण्ठलग्नम् । दधानमासाद्य सुवर्णवर्णं भजे ज्वलत्कुण्डलरामदूतम् ।१२। पद्मरागमणिकुण्डलत्विषापाटलीकृतकपोलमण्डलम् ।। दिव्यदेहकदलीवनान्तरे भावयामि पवमाननन्दनम् ।।१३।। ईश्वर उवाच ।। इति वदति विशेषाद्राघवो राक्षसेन्द्रं प्रमुदितवरचित्तो रावणस्यानुजो हि ।। रघुवरवरदूतं पूजयामास भूयः स्तुति-

भिरतिकृतार्थं स्वं परं मन्यमानः ।।१४।। वन्दे विद्युद्वलयसुभगं स्वर्णयज्ञोपवीतं कर्णद्वन्द्वे कनकरुचिरे कुण्डले धारयन्तम् ।। उच्चैर्हृष्यद्द्युमणिकिरणश्रोणिसम्भावितांगं सत्कौपीनं कपिवरवृतं नामरूपं कपिन्द्रम् ।।१५।। मनोजवं मारुततुल्यवे जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।। वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूत सततं स्मरामि ।।१६।। ओं नमो भगवते हृदयाय नमः ।। ओं आञ्जनेयाय शिरसे स्वाहा ।। ओं रुद्रमूर्तये शिखायै वषट् ।। ओं रामदूताय कवचाय हुम् ।। ओं हनुमते नेत्रत्रयाय वौष्ट ।। ओं अग्निगर्भाय अस्त्राय फट् ।। ओं नमो भगवते अंगुष्ठाभ्यां नमः ।। ओं अञ्जनेयाय तर्जनीभ्यां नमः ।। ओं रुद्रमूर्तये मध्यमाभ्यां नमः ।। ओं रामदूताय अनामिकाभ्यां नमः । ओं हनुमते कनिष्ठिकाभ्यां नमः । अग्निगर्भाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।। अथ मन्त्र उच्यते ।। ॐ ऐं ह्रों ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रै ह्रों ह्रः ।। श्री नमो भगवत महाबलपराक्रमाय भूत-प्रेत-पिशाच-शाकिनी-डाकिनी-यक्षिणी-पूतना-मारी-महामारी-यक्ष-राक्षस भैरव वेतालग्रहराक्षसादिकं क्षणेन हव हन भञ्जय २ मारय २ शिक्षय २ महामाहेश्वररुद्रावतार हुं फट् स्वाहा ।। ॐ नमो भगवते हनुमदाख्यरुद्राय सर्वदुष्टजन मुखस्तम्भनं कुरु कुरु ह्रां ह्रीं ह्रूं ठं ठं ठं फट् स्वा-

हा ॥ ॐ नमो भगवते अञ्जनीगर्भसम्भूताय रामलक्ष्मणानन्दकाय कपिसैन्यप्रकाशनायपर्वतोत्पाटनाय सुग्रीवसाधकाय रणोच्चाटनाय कुमारब्रह्मचारिणे गम्भीरशब्दोदयाय । ॐ सां ह्रीं ह्रूं सर्वदुष्टनिकारणाय स्वाहा । ॐ नमो हनुमते सर्वग्रहान्भूतभविष्यद्वर्तमानान्दूरस्थान् समीपस्थान् सर्वकालदुष्टदुर्बुद्धीनुच्चाटयोच्चाटय परबलानि क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्यं साधय हनुमते ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं फट् देहि ॐ शिवं ॐ सिद्धं ह्रां ह्रां ह्रौं ॐ स्वाहा ॥ ॐ नमो हनुमते परकृतयन्त्रमन्त्रपराऽहङ्कारभूतप्रेतपिशाचपरदृष्टिसर्वविघ्नदुर्जनचेटकविद्यासर्वग्रहभयान्निवारय निवारय वध २ पच २ दल २ चिलु २ किल किल सर्वकुयन्त्राणि दुष्टवाचं फट् स्वाहा ॥ ॐ नमो हनुमते पाहि २ एहि एहि सर्वग्रहभूतानां शाकिनीडाकिनीनां ज्वलप्रज्वल भूतमण्डलं प्रेतमण्डलं पिशाचमण्डलं निराशय २ भूतज्वर प्रेतज्वरचातुर्थिकज्वरविषमज्वरमाहेश्वरान् छिन्धि २ भिन्धि २ अक्षिशूलवक्षः शूलशिरोऽभ्यन्तरशूलगुल्मशूलपित्तशूलब्रह्मराक्षसकुलपरकुलनागकुलविषं नाशय नाशय निर्विषं कुरु कुरु फट् ॥ ॐ ह्रीं सर्वदुष्टग्रहान्निवारय स्वाहा ॥ ॐ नमो हनुमते पवनपुत्राय वैश्वानरमुखाय हनहनान्या दृष्टया पापदृष्टिं षण्ढदृष्टिं हन हन हनुमदाज्ञया स्फुर स्फुर

स्वाहा ॥ श्री रामचन्द्र उवाच । हनुमान्पूर्वतः पातु द-
क्षिणे पवनात्मजः ॥ पातु प्रतीच्यां रक्षोघ्नः पातु सा०-
रपारगः ॥१॥ उदीच्यामूर्ध्वगः पातु केसरिप्रियनन्दनः ।
अधश्च विष्णुभक्तस्तु पातु मध्यं च पावनिः ॥२॥ अवा-
न्तरदिशः पातु सीताशोकविनाशनः ॥ लङ्काविदाहकः
पातु सर्वापद्भ्यो निरन्तरम् ॥३॥ सुग्रीवसचीवः पातु
मस्तकं वायुनन्दनः ॥ भालं पातु महावीरो भ्रुवोर्मध्ये
निरन्तरम् ॥४॥ नेत्रे छायापहारी च पातु नः प्लवगे-
श्वर ॥ कपोलौ कर्णमूले तु पातु श्रीरामकिङ्करः ॥५॥
नासाग्रमञ्जनीसूनुर्वक्त्रं पातु हरीश्वरः ॥ वाचं रुद्रप्रियः
पातु जिह्वां पिंगललोचनः ॥६॥ पातु दन्तान् फाल्गुने-
ष्टश्चिबुकं दैत्याप्राणहृत् । पातु कण्ठं च दैत्यारिः स्कन्धौ
पातु सुरार्चितः ॥७॥ भुजौ पातु महातेजाः करो च चर-
णायुधः ॥ नखान्नखायुधः पातु कुक्षिं पातु कपीश्वरः
॥८॥ वक्षौ मुद्रापहारी च पातु पार्श्वे भुजायुधः ॥ ल-
ङ्काविभञ्जनः पातु पृष्ठदेशं निरन्तरम् ॥९॥ नाभिं च
रामदूतस्तु कटिं पात्वनिलात्मजः गुह्यं पातु महाप्राज्ञः
सक्थिनी च शिवप्रियः ॥१०॥ ऊरू च जानुनी पातु ल-
ङ्काप्रासादभञ्जनः ॥ जंघे पातु महाबाहुर्गुल्फौ पातु
महाबलः ॥११॥ अचलोद्धारकः पातु पादौ भास्करस-
न्निभः । पादान्ते सर्वसत्वाढ्यः पातु पादांगुलीस्तथा ।१२।

सर्वांगानि महाशूरः पातु रोमाणि चात्मवान् ॥ हनुमत्कवचं यस्तु पठेद्विद्वान्विचक्षणः ॥१३॥ स एव पुरुषः श्रेष्ठो भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥ त्रिकालमेककालं वा पठेन्मासत्रयं सदा ॥१४॥ सर्वान् रिपुन्क्षणाद् जित्वा स पुमाञ्छ्रियमाप्नुयात् ॥ मध्यरात्रे जले स्थित्वा सप्तवारं पठेद्यदि ॥ १५ ॥ क्षयापस्मारकुष्ठादितापत्रयनिवारणम् ॥ आर्किवारेऽश्वत्थमूले स्थित्वा पठति यः पुमान् ॥१६॥ अचलां श्रियमाप्नोति सङ्ग्रामे विजयी भवेत् ॥१७॥ यः करे धारयेन्नित्यं स पुमान् श्रियमाप्नुयात् । विवाहे दिव्यकाले च द्यूते राजकुले रणे ॥१८॥ भूतप्रेतमहादुर्गे रणे सागरसम्प्लवे । दशवारं पठेद्रात्रौ मिताहारो जितेन्द्रियः ॥१९॥ विजयं लभते लोके मानवेषु नराधिपः ॥ सिंहव्याघ्रभये चौग्रशरशस्त्रास्त्रपातने ॥२०॥ शृखङ्लाबन्धने चैव काराग्रहणकारणे ॥ कार्यस्तम्भे वह्निदाहे गात्ररोगे च दारुणे ॥२१॥ शोके महारणे चैव ब्रह्मग्रहविनाशने ॥ सर्वदा तु पठेन्नित्यं जयमाप्नोत्यसंशयम् ॥ २२ ॥ भूर्जे वा वसने रक्ते क्षौमे वा तालपत्रके ॥ त्रिगन्धेनाथवा मष्या लिखित्वा धारयेन्नरः ॥२३॥ पञ्चसप्तत्रिलोहैर्वा गोपितं कवचं शुभम् ॥ गले वा बाहुमूले वा कण्ठे शिरसि धारितम् ॥२४॥ सर्वान्कामानवाप्नोति सत्यं श्रीरामभाषितम् ॥२५॥ उल्ल-

ङ्घ्य सिन्धोः सलिलं सलिलं य शोकवह्निं जनकात्मजायाः ॥ आदाय तेनैव ददाह लंकां नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ॥ २६ ॥ ॐ हनुमाञ्जनीसुनुर्वायुपुत्रो महाबलः ॥ रामेष्टः फाल्गुनसखः पिङ्गाक्षोऽमितिविक्रमः ॥२७॥ उदधिक्रमणश्चैव सीताशोकविनाशनः ॥ लक्ष्मणप्राणदाता च दशग्रीवस्य दर्पहा ॥२८॥ द्वादशैतानि नामानि कपिन्द्रस्य महात्मनः स्वापकाले ॥ प्रबोधे च यात्राकाले च यः पठेत् ॥ २९ ॥ तस्य सर्वभयं नास्ति रणे च विजयी भवेद् ॥३०॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे नारदागस्त्यसंवादे श्रीरामचन्द्र प्रोक्तमेकमुखिहनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ॥

२८६—पञ्चमुखहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीपञ्चवदनायाञ्जनेनाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमत्कवचमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री, छन्दः, पञ्चमुखविराट् हनुमान् देवता, ह्रीं बीज, श्रीं शक्तिः, क्रौं, कीलकं, क्रूं कवचं, क्रैं अस्त्राय फट् । इति दिग्बंधः ॥ श्रीगरुड उवाच ॥ अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्गसुंदर ॥ यत्कृतं देवदेवेन ध्यानं हनुमतः प्रियम् ॥ १ ॥ पञ्चवक्त्रं महाभीमं त्रिपञ्चनयनैर्युतम् ॥ बाहुभिर्दशभिर्युक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥२॥ पूर्वं तु वानरं वक्त्रं कोटिसूर्यसमप्रभम् ॥ दं-

ष्ट्राकरालवदनं भृकुटीकुटिलेक्षणम् ॥३॥ अस्यैव दक्षिणं वक्त्रं नारसिंह महाद्भुतम् ॥ अत्युग्रतेजोवपुषं भीषणं भयनाशनम् ॥४॥ पश्चिमं गारुडं वक्त्रं वक्रतुण्डं महाबलम् ॥ सर्वनागप्रशमनं विषभूतादिकृन्तनम् ॥ ५ ॥ उत्तरं सौकरं वक्त्रं कृष्णं दीप्तं नभोपमम् ॥ पातालसिंहवेतालज्वररोगादिकृन्तनम् ॥ ६ ॥ ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवांतकरं परम् ॥ येन वक्त्रेण विप्रेंद्र तारकाख्यं महासुरम् ॥ ७ ॥ जघान शरणं तत्स्यात्सर्वशत्रुहरं परम् ॥ ध्यात्वा पञ्चमुखं रुद्रं हनुमन्तं दयानिधिम् ॥८॥ खंग त्रिशूलं खट्वांगं पाशमंकुशपर्वतम् ॥ मुष्टिं कौमोदकीं वृक्षं धारयन्तं कमण्डलुम् ॥९॥ भिन्दिपालं ज्ञानमुद्रां दशभिर्मुनिपुंगवम् ॥ एतान्यायुधजालानि धारयन्तं भजाम्यहम् ॥१०॥ प्रेतासनोपविष्टं तं सर्वाभरणभूषितम् ॥ दिव्यमालाम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥११॥ सर्वाश्चर्यमयं देवं हनुमद्विश्वतोमुखम् ॥ पञ्चास्यमच्युतमनेकविचित्रवर्णं वक्त्रं शशाङ्कशिखरं कपिराजवर्यम् ॥ पीताम्बरादिमुकुटैरुपशोभितांगं पिंगाक्षमाद्यमनिशं मनसा स्मरामि ॥१२॥ मर्कटेशं महोत्साहं सर्वशत्रुहरं परम् ॥ शत्रुं संहर मां रक्ष श्रीमन्नारदमुद्धर ॥१३॥ हरिमर्कटमर्कटमंत्रमिदं परिलिख्यति लिख्यति वामतले ॥ यदि नश्यति नश्यति शत्रुकुलं यदि

मुञ्चति मुञ्चति वामलता । १४ । ॐ हरिमर्कटाय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चबदनाय पूर्वकपिमुखाय सकलशत्रुसंहारणाय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय दक्षिणमुखाय करालवदनाय नरसिंहाय सकलभूतप्रमथनाय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पाश्चमसुखाय गरुडाननाय सकलविषहराय स्वाहा ॥ नमो भगवते पञ्चवदनायोत्तरमुखायादिवराहाय सकलसम्पत्कराय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनायोर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय सकलजनवशंकराय स्वाहा । ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमन्मंत्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, पञ्चमुखवीरहनुमान् देवता, हनुमानिति बीजम्, वायुपुत्र इति शक्तिः: अंजनीसुत इति कीलकम्, श्रीरामदूतहनुमत्प्रसादसिद्धयर्थे जये विनियोगः ॥ इति ऋष्यादिकं विन्यस्य ॥ ॐ अञ्जनीसुताय अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ रुद्रमूर्तये तर्जवीभ्यां नमः । ॐ वायुपुत्राय मध्यमाभ्यां नमः । अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां नमः । ॐ रामदूताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । पञ्चमुखहनुमते करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः । अञ्जनीसुताय हृदयाय नमः । ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा । ॐ वायुपुत्राय शिखायै वषट् । ॐ अग्निगर्भ कवचाय हुँ । ॐ रामदूताय नेत्रत्रयाय बौषट् । ॐ पञ्चमुखहनुमते

अस्त्राय फट् ।। पञ्चमुखहनुमते स्वाहा ।। इति दिग्बन्धः । अथ ध्यानम् । वन्दे वानननारसिंहखगराट्क्रोडाश्ववक्त्रान्वितं दिव्यालङ्करणं त्रिपञ्चनयनं देदीप्यमानं रुचा ।। हस्ताब्जैरसिखेटपुस्तकसुधाकुम्भाकुशाद्रिं हलं खट्वाङ्गं फणिभूरुहं दशभुजं सर्वारिवीरापहम् ।१। इति । अथ मंत्रः । ॐ श्रीरामदूतायाञ्जनेयाय वायुपुत्राश महाबलपराक्रमाय सीतादुःखनिवारणाय लङ्कादहनकारणाय महाबलप्रचण्डाय फाल्गुनसखाय कोलाहलाय सकलब्रह्मांडविश्वरूपाय सप्तसमुद्रनिर्लंघनाय पिंगलनयनायामितविक्रमाय सूर्यबिंबफलसेवनाय दुष्टनिवारणाय दृष्टिनिरालंकृताय सञ्जीवनीसञ्जीविताङ्गदलक्ष्मणमहाकपिसैन्यप्राणदाय दशकण्ठविध्वंसनाय रामेष्टाय महाफाल्गुनसखाय सीतासहितरामवरप्रदाय षठ्प्रयोगागमपञ्चमुखवीरहनुमन्मंत्रजपे विनियोगः ।। ॐ हरिमर्कटमर्कटाय बंबंबंबंबं बौषट् स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय फंफंफंफंफं फट् स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय खेंखेंखेंखेंखें मारणाय स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय लुंलुंलुंलुंलुं आकर्षितसकलसम्पत्कराय स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्काटय धंधंधंधंधं शत्रुस्तम्भनाय स्वाहा । ॐ टंटंटंटंटं कूर्ममूर्तये पञ्चमुखवीरहनुमते परयन्त्रारतन्त्रोद्घाटनाय स्वाहा । ॐ कंख-

गंघंङं चंछंजंझंणं टंठंडंढंणं तंथंदंधंनं पंफंबंभंमं यंरंलंवं शंषंसंहंलंक्षं स्वाहा। इति दिग्बंधः। ॐ पूर्वकपिमुखाय पञ्चमुखहनुमते टंटंटंटंटं सकलशत्रुसंहरणाय स्वाहा। ॐ दक्षिणमुखाय पञ्चमुखहनुमते करालवदनाय नरसिंहाय ॐ ह्रांह्रींह्रूं ह्रैंह्रौंह्रः सकलभूतप्रेतदमनाय स्वाहा। ॐ पश्चिममुखाय गरुडाननाय पञ्चमुखहनुमते मंमंमंमंमं सकलविषहराय स्वाहा। ॐ उत्तरमुखायादिवराहाय लंलंलंलंलं नृसिंहाय नीलकण्ठमूर्तये पञ्चमुखहनुमते स्वाहा। ॐ ऊर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय रुंरुंरुंरुंरुं रुद्रमूर्तये सकलप्रयोजननिर्वाहकाय स्वाहा। ॐ अञ्जनीसुताय वायुताय महाबलाय सीताशोकनिवारणाय श्रीरामचन्द्रकृपापादुकाय महावीर्यप्रमथनाय ब्रह्माण्डनाथाय कामदाय पञ्चमुखवीरहनुमते स्वाहा। भूतप्रेतपिशाचब्रह्मराक्षसशाकिनीडाकिन्यन्तरिक्षग्रहपरयंत्रपरतंत्रोच्चाटनाय स्वाहा। सकलप्रयोजननिर्वाहकाय पञ्चमुखवीरहनुमते श्रीरामचन्द्रवरप्रसादाय जंजंजंजंजं स्वाहा। इदं कवचं पठित्वा महाकवचं पठेन्नरः। एकवारं जपेत्स्तोत्रं सर्वशत्रुनिवारणम् ।१५। द्विवारं तु पठेन्नित्यं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम्। त्रिवारं च पठेन्नित्यं सर्वसम्पत्करं शुभम् ।१६। चतुर्वारं पठेन्नित्यं सर्वरोगनिवारणम्। पञ्चवारं पठेन्नित्यं सर्व-

लोकवशङ्करम् । १७ । षड्वारं च पठेन्नित्यं सर्वदेव-
वशङ्करम् । सप्तवारं पठेन्नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम्
। १८ । अष्टवारं पठेन्नित्यमिष्टकामार्थसिद्धिदम् । नव-
वारं पठेन्नित्यं राजभोगवाप्नुयात् । १९ । दशवारं
पठेन्नित्यं त्रैलोक्यज्ञानदर्शनम् । रुद्रावृत्तिं पठेन्नित्यं
सर्वसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम् । २० । कवचस्मरणेनैव महाबल-
मवाप्नुयात् । २१ ।

इति सुदर्शनसंहितायां श्रीरामचन्द्रसीताप्रोक्तं श्रीपञ्चमुखहनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ।

२८७-सप्तमुखी हनुमत्कवचम् ।

उक्तं चाथर्वणरहस्ये-ॐ अस्य श्री सप्तमुखीवीरह-
नुमत्कवचस्तोत्रमन्त्रस्य नारदऋषिः । अनुष्टुपुछंदः
श्री सप्तमुखीकपिः परमात्मा देवता । ह्रांबीजम् । ह्रीं-
शक्तिः ह्रूं कीलकम् । मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे जये
विनियोगः । ॐ ह्रां अंगु० ॐ ह्रीं तर्ज० ॐ ह्रूं म-
ध्य० ॐ ह्रैं अना० ॐ ह्रौंकनि० ॐ ह्रः कर० । एवं
हृदयादिन्यासः ॥ अथ ध्यानम्-वन्दे वानरसिंहसर्परिपु
वाराहाश्वगोमानुषैर्युक्तं सप्तमुखैः करैर्द्रुमगिरिं चक्रं
गदां खेटकम् । खट्वांगं हलमंकुशं फणिसुधाकुम्भौ श-
राब्जाभयाञ्छूलं सप्तशिखं दधानममरैः सेव्यं कपिं
कामदम् । ब्रह्मोवाच । सप्त शीर्ष्णः प्रवक्ष्यामि कवचं

सर्वसिद्धिदम् । जप्त्वा हनुमतो नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।१। सप्तस्वर्ग पतिः पायाच्छिखां मे मारुतात्मजः । सप्तमूर्धा शिरोऽव्यान्मे सप्तार्चिर्भालदेशकम् ॥२॥ त्रिः सप्तने-त्रो नेत्रोऽव्यात्सप्तस्वरगतिःश्रु ती ॥ नासां सप्त-पदार्थोऽव्यान्मुखं सप्तमुखोऽवतु ॥ ३ ॥ सप्तजिह्वस्तु रसनां रदान्सप्तहयोऽवतु । सप्तचच्छदो हरिः पातु कण्ठं बाहू गिरिस्थितः ॥४॥ करौ चतुर्दशकरो भूधरोऽव्या-न्ममांगुलीः ॥ सप्तर्षिध्यातौ हृदयमुदरं कुक्षिसागरः ॥५॥ सप्तद्वीपपतिश्चित्तं सप्तव्याहृतिरूपवान् ॥ कटिं मे सप्तसंस्थार्थद्रायकः सक्थिनी मम ॥६॥ सप्तग्रहस्वरूपी मे जानुनी जंघयोस्तथा ॥ सप्तधन्यप्रियः पादौ सप्तपा-तालधारकः ॥७॥ पशून्धनं च धान्यं च लक्ष्मी लक्ष्मो-प्रदोऽवतु ॥ दाराम् पुत्रांश्च कन्याश्च कटुंबं विश्वपा-लकः ॥८॥ अनुक्तस्थानमपि मे पाया द्वायुसुतः सदा ॥ चौरेभ्यो व्यालदंष्ट्रिभ्यः शृंगिभ्यो भूतराक्षसात् ॥९॥ दैत्येभ्योऽप्यथ यक्षेभ्यो ब्रह्म रासक्षजाद्भयात् ॥ दंष्ट्रा-करालवदनो हनुमन्मां सदाऽवतु ॥१०॥ परशस्त्रमन्त्र-तन्त्रयन्त्राग्निजलविद्यु तः ॥ रुद्रांशः शत्रुसंग्रामात्सर्वाव-स्थासु सर्वभृत् ॥ ११ ॥ ॐ नमो भगवते सप्तबदनाय, आद्यकपिमुखाय, वीरहनुमते सर्वशत्रुसंहारणाय, ठंठंठं-ठंठंठंठं ॐ नमः स्वाहा ॥१२॥ ॐ नमो भगवते सप्त-

वदनाय, द्वितीयनार सिंहास्याय अत्युग्रतेजोवपुषे, भोद-
णाय भयनाशनाय, हंहंहंहंहंहंहं ॐ नमः स्वाहा ।१३।
ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय तृतीयगरुडवक्राय वज्रदं-
ष्ट्राय महाबलाय सर्वरोविनाशना मंमंमंमंमंमंमं ॐ
नमः स्वाहा ।१४। ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय चतुर्थ
क्रोडतुण्डाय सौमित्रिरक्षकाय पुत्राद्यभिवृद्धिकराय लं-
लंलंलंलंलंलं ॐ नमः स्वाहा ।१५। ॐ नमो भगवते
सप्तवदनाय पंचमाश्ववदनाय रुद्रमूर्त्तये सर्ववशीकर-
णाय सर्वागगमस्वरूपाय रुंरुंरुंरुंरुंरुंरुं ॐ नमः स्वाहा
।१६। ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय षष्ठगोमुखाय सू-
र्यस्वरूपाय सर्वरोगहराय मुक्तिदात्रे ॐॐॐॐॐॐॐॐ
नमः स्वाहा । १७ । ॐ नमो भगवते सप्तवदना शप्त-
ममानुषमुखाय रुद्रावताराय अंजनीसुताय सकलदिग्य-
शोविस्तारकाय वज्रदेहाय सुग्रीवसाह्यकराय उदधिलं-
घनायसीता शुद्धिकराय लंकादहनाय अनेकराक्षसांत-
काय रामानन्ददायकाय अनेक पर्वतोत्पाटकाय सेतुबंध-
काय लपिसैन्यनायकाय रावणांतकाय ब्रह्मचर्या श्रमिणे
कोपीनब्रह्मसूत्रधारकाय रामहृदयाय सर्वदुष्टग्रहनिवार-
णाय शाकिनीडाकिनीवेतालब्रह्मराक्षसभैरवग्रह यक्षग्रह-
पिशाचग्रहब्रह्मग्रहक्षत्रियग्रह वैश्य ग्रह शूद्रग्रहान्यजग्रहम्ले-
क्छग्रहसर्पहोच्चाटकाय मम सर्वकार्यसाधकाय सर्व-

शत्रुसंहारकाय सिंहव्याघ्रादिदुष्टसत्वाकर्षकायैकाहिकादि-
विविधज्वरच्छेदकाय परयन्त्रनाशकाय सर्वव्याधि-
निकृन्तकाय सर्पादिसर्वस्थावरजंगमविषस्तंभनकराय स-
र्वराजभय चोरभयाग्निभयप्रशमनायाध्यात्मिकाधिदैवि-
काधि भौतिकत्तापत्रयनिवारणाय सर्वविद्यासर्वसंपत्सर्व-
पुरुषार्थदायकासाध्यकार्यसाधकाय सर्ववरप्रदाय सर्वा-
भीष्टकराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ नमः स्वा-
हा ।१८। य इदं कवचं नित्यंसप्तास्यस्य हनुमतः । त्रि-
संध्यं जपते नित्यं सर्वशत्रुविनाशनम् ।१९। पुत्रपौत्रप्रदं
सर्वसंपद्राज्यप्रदं परम् । सर्वहरं चायुः कीर्तिदं पुण्यवर्ध-
नम् ।२०। राजनं सवंशं नीत्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।
इदं हि परमगोप्य देयं भक्तियुताय च ।२१। न देयं
भक्तिहीनाय दत्वा स निरयं व्रजेत् ।२२। नामानि
सर्वाण्यपवर्गदानि रूपाणि विश्वानि च यस्य सन्ति क-
कर्माणि देवैरपि दुर्घटानि तं मारुतिं सप्तमुखं प्रपद्ये
।२३।

२८८–एकादशमुखहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः । लोपामुद्रोवाच । कुम्भोद्भव
दयासिन्धो श्रुतं हनुमतः परम् । यत्रमन्त्रादिकम् सर्वं
त्वन्मुखोदीरितं मया । १ । दयां कुरु मयि प्राणनाथ
वेदितुमुत्सहे । कवचं वायुपुत्रस्य एकादशमुखात्मनः

॥ २ ॥ इत्येवं वचनं श्रुत्वा प्रियायाः प्रश्रयान्वितम् ॥ वक्तुं प्रचक्रमे तत्र लोपामुद्रां प्रति प्रभुः ॥३॥ अगस्त्य उवाच ॥ नमस्कृत्वा रामदूतं हनुमन्तं महामतिम् ॥ ब्रह्मप्रोक्तं तु कवचं शृणु सुन्दरि सादरम् ॥४॥ सनन्दनाय सुमहच्चतुराननभाषितम् ॥ कवचं कामदं दिव्यं सर्वरक्षोनिबर्हणम् ॥५॥ सर्वसंपत्प्रदं पुण्यं मर्त्यानां मधुरस्वरे ॥ ॐ अस्य श्रीकवचस्यैकादशचक्रस्य धीमतः ॥६॥ हनुमत्कवचमन्त्रस्य सनन्दनऋषिः स्मृतः ॥ प्रसन्नात्मा हनूमांश्च देवताऽत्र प्रकीर्तिता ॥७॥ छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं बीजं वायुसुतास्तथा ॥ मुख्यः प्राणः शक्तिरिति विनियोगः प्रकीर्तितः ॥८॥ सर्वकामार्थसिद्ध्यर्थंजप एवमुदीरयेत् ॥ ॐ स्फ् बीजं शक्तिधृक पातु शिरो मे पवनात्मजः ॥९॥ क्रौं बीजात्मा नयनयोः पातु मां वानरेश्वरः ॥ क्षं बीजरूपी कर्णौ मे सीताशोकविनाशनः ॥१०॥ ग्लौं बीजवाच्यो नासां मे लक्ष्मणप्राणदायकः ॥ वं-बीजार्थश्च कण्ठं मे पातु चाक्षयकारकः ॥११॥ ऐं-बीजवाच्यो हृदयं पातु मे कपिनायकः ॥ वं-बीजकीर्तितः पातु बाहू मे चाञ्जनीसुतः ॥१२॥ ह्रां-बीजं राक्षसेन्द्रस्य दर्पहा पातु चोदरम् ॥ ह्सौं-बीजमयो मध्यं पातु लङ्काविदारकः ॥१३॥ ॐ ह्रीं-बीजधरः पातु गुह्यं देवेन्द्रवन्दितः ॥ रं-बीजात्मा सदा पातु चोरू वा-

रिधिलंघनः ।१४। सुग्रीवसचिवः पातु जानुनी मे मनो-
जवः । पादौ पादतले पातु द्रोणाचलधरो हरिः । १५ ।
आपादमस्तकं पातु रामदूतो महाबलः । पूर्वे वानरव-
क्त्रो मामाग्नेय्यां क्षत्रियान्तकृत ।१६। दक्षिणे नारसिं-
हस्तु नैर्ऋत्यां गणनायकः । वारुण्यां दिशि मामव्यात्ख-
गवक्त्रो हरीश्वरः ।१७। वायव्यां भैरवमुखः कौबेर्यां
पातु मां सदा । क्रोडास्यः पातु मां नित्यमीशान्यां रुद्र-
रूपधृक् । १८ । ऊर्ध्वं हयाननः पातु त्वधः शेषमुखस्त-
था । रोमास्यः पातु सर्वत्र सौम्यरूपी महाभुजः । १९ ।
इत्येवं रामदूतस्य कवचं प्रपठेत्सदा । एकादशमुखस्यै-
तद्गोप्यं वै कीर्तितं मया । २० । रक्षोघ्नं कामदं सौ-
म्यं सर्वसम्पद्विधायकम् । पुत्रदं धनदं चोग्रशत्रुसङ्घविम-
र्दनम् ।२१। स्वर्गापवर्गदं दिव्यं चिन्तितार्थप्रदं शुभम् ।
एतत्कवचमज्ञात्वा मंत्रसिद्धिर्न जायते ।२२। चत्वारिं-
शत्सहस्राणि पठेच्छुद्धात्मना नरः । एकवारं पठेन्नित्यं
कवचं सिद्धिदं पुमान् ।२३। द्विवारं वा त्रिवारं या
पठन्नायुष्यमाप्नुयात् । क्रमादेकादशादेवमावर्तनजपात्सु-
धीः ।२४। वर्षान्ते दर्शनं साक्षाल्लभते नात्र संशयः । यं
यं चिन्तयते चार्थं तंतं प्राप्नोति पुरुषः ।२५। ब्रह्मोदी-
रितमेतत्तद्धि तवाग्रे कथितं महत् ।२६। इत्येवमुक्त्वा
वचनं महर्षिस्तूष्णींबभूवेन्दुमुखीं निरीक्ष्य । संहृष्टचेता-

ऽपि तदा तदीयपादौ ननामातिमुदा स्वभर्तुः ।२७।

इत्यगस्त्यसंहितायामेकादशमुखहनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ।

२८६-हनुमद्रक्षा ।

वामेकरे वैरिभिदं वहन्तं शैलं परिश्रृंखल-हारटङ्कम् । दधानमच्छं तु सुवर्णवर्णं भजे ज्वलत्कुण्डलमाञ्जनेयम् । १ । पद्मरागमणि-कुण्डलत्विषा पाटलीकृत-कपोल-मस्तकम् । दिव्य-हेम-कदलीवनान्तरे भावयामि पवमाननन्दनम् । २ । उद्यदादित्य-सङ्काशमुदार-भुजविक्रमम् । कन्दर्प-कोटि-लावण्यं सर्वविद्या-विशारदम् ।३। श्रीरामहृदयानन्दं भक्तकल्पमहीरुहम् । अभयं वरदं दोर्भ्यां कलये मारुतात्मजम् । ४ । वामहस्त-महाकृच्छ्-दशास्यकर-मर्दनम् । उद्यद्वीक्षणकोदण्डं हनूमन्तं विचिन्तयेत् ।५। हनूमानञ्जनीसूनुर्वायुपुत्रो महाबलः । रामेष्टः फाल्गुनसखः पिङ्गाक्षोऽमितविक्रमः । ६ । उदधिक्रमणश्चैव सीताशोकविनाशनः । लक्ष्मणप्राणदाता च दशग्रीवस्य दर्पहा । ७ । एवं द्वादशनामानि कपीन्द्रस्य महात्मनः । स्वापकाले प्रबोधे च यात्राकालेच यः पठेत् ।८। तस्य सर्वभयं नास्ति रणे च विजयो भवेत् । उल्लङ्घ्य् सिन्धो सलिलं सलीलं यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः । आदाय तेनैव ददाह लङ्कां नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ।९। स्फटिकाभं स्वर्णकान्ति द्विभुजं च कृताञ्ज-

लिम् । कुण्डलद्वय-संशोभि मुखाम्भोजं हरिं भजे ।१०।
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि
।११।

२६०-श्रीसङ्कटमोचनस्तोत्रम् ।

सिन्दूर पूर-रुचिरो बलवीर्यसिन्धु-र्बुद्धिप्रभावनिधि-रद्भुत-वैभवश्रीः । दीनार्तिदाव-दहनो वरदो वरेण्यः सङ्कष्टमोचनविभुस्तनुतां शुभं नः ।१। सोत्साह-लंघित-महार्णव-पौरुषश्री-र्लंकापुरी-प्रदहन-प्रथितप्रभावः । घोराहव-प्रमथितारि-चमूप्रवीरः प्राभञ्जनिर्जयति मर्कट-सार्वभौमः । २ । द्रोणाचलानयन-वर्णित-भव्यभूतिः श्रीराम लक्ष्मण-सहायक-चक्रवर्त्ती । काशीस्थ-दक्षिण-विराजित-सौधमल्लः श्रीमारुतिर्विजयते भगवान् महेशः । ३ । नूनं स्मृतोऽपि दयते भजतां कपीन्द्रः सम्पूजितो दिशति वाञ्छित-सिद्धिवृद्धिम् । सम्मोदकप्रिय उपैति परं प्रहर्षं रामायण-श्रवणतः पठतां शरण्यः ।४। श्रीभारत-प्रवर-युद्धरथोद्धत-श्रीः पार्थैक-केतन-कराल-विशालमूर्त्तिः । उच्चैर्घनाघन-घटा-विकटाऽट्टहासः श्रीकृष्ण-पक्षभरणः शरणं ममाऽस्तु ।५। जंजालजङ्घ उपमाति-विदूरवेगो मुष्टि-प्रहार-परिमूर्च्छि-राक्षसेन्द्रः । श्रीरामकीर्तित-पराक्रमणोद्भवश्रीः प्राकम्पनिर्विभुरुदञ्चतु भूतये

नः ।६। सीतार्त्ति दारणपटुः प्रबलः प्रतापी श्रीराघवे-न्द्र-परिरम्भवर-सुसादः । वर्णीश्वरः सविधि-शिक्षित-कालनेमिः पञ्चाननोऽपनयतां विपदोऽधिदेशम् ।७। उ-द्यद्-भानुसहस्र-सन्निभतनुः पीताम्बरालङ्कृतः प्रोज्ज्वा-लानल-दीप्यमान-नयनो निष्पष्ट-रक्षोगणः । संवर्तोद्यत-वारिदोद्धतरवः प्रोच्चैर्गदाविभ्रमः श्रीमान् मारुतनन्दनः प्रतिदिनं ध्येयो विपद्-भञ्जनः ।८। रक्षः पिशाचभय-ना-शनमामयाधिप्रोच्चैर्ज्वरापहरणं दमनं रिपूणाम् । सम्पत्ति-पुत्रकरणं विजयप्रदानं संकष्टमोचनविभोः स्तवनं नराणाम् ।९। दारिद्र्य-दुःख-दहनं विजयं विवादे कल्याण साध-नममङ्गलव ार व । दाम्पत्य-दीर्घसुख सर्वमनोरथाप्ति श्रीमारुतेः स्तवशतावृतिरातनोति ।१०। स्तोत्रं य एत-दनुवासरमशतकामः श्रीमारुतिं समनुचिन्त्य पठेत् सुधी-रः । तस्मै प्रसादसुमुखो वरवादरेन्द्रः साक्षात्कृतो भवति शाश्वतिकः सहायः ।११। सङ्कष्टमोचनस्तोत्रं शङ्करा-चार्यभिक्षुणा । महेश्वरेण रचितं मारुतेश्चरणेऽर्पितम् ।१२।

इति काशीपीठाधीश्वर-जगद्गुरु-शङ्कराचार्य-स्वामिश्रीमहेश्वरानन्दसरस्वतीविरचितं सङ्कष्टमोचनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२९१-शत्रुञ्जयहनुमत्स्तोत्रम् ।

श्रीमन्तं हनुमन्तमार्तरिपुभिद्-भूभृत्तरुभ्राजितं चा-

ल्पद् बालधिबन्धवैरिनिचयं चामीकराद्रिप्रभम् । अष्टौ रक्त-पिशगं-नेत्र-नलिनं भ्रूभगंमगं-स्फुरत् प्रोद्यच्चण्ड-मयूख-मण्डल-मुखं दुःखापहं दुःखिनाम् । १ । कौपीनं कटिसूत्र-मौञ्ज्यजिनयुग्देहं विदेहात्मजा प्राणाधीशप-दारविन्दनिरतं स्वान्तं कृतान्नं द्विषाम् । ध्यात्वैवं सम-रागंगस्थितमथानीय स्व हृत्पङ्कजे सम्पूज्याऽखिल-पूज-नोक्त-विधिना सम्प्रार्थयेत् प्रार्थितम् ।२। हनुमन्नञ्जनी-सूनो ! महाबलपराक्रम ! लोलल्लांगूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।३। मर्कटाधिप ! मार्तण्ड-मण्डल-ग्रास-कारक ! लोलल्लागूंलपातेन ममाऽरीन् निपाताय ।४। अक्षय-न्नपि पिगांक्ष ! क्षितिशोकक्षयङ्कर ! लोलल्लागूंल-पातेन ममाऽरातीन् निपातय । ५ । रुद्रावतार ! ससा-रदुःख-भारापहारक ! लोलल्लांगूलपामेन ममाऽरातीन् निपातय । ६ । श्रीराम–चरणाम्भोज–मधुपायत–मान-स ! लोलल्लागूंलपातेन ममाऽरातीन् निंपातय । ७ । बलिकोदरद–क्लान्त सुग्रीवोन्मोचनप्रभो ! लोलल्लांगू-लपातेन ममाऽरातीन् निपातय । ८ । सीता-विरह-वारीश-मग्न-सीतेशतारक ! लोलल्लागूंलपाते ममा-ऽरातीन् निपातय । ९ । रक्षोराज-तापाग्नि-दह्यमान-जगद्धन ! लोलल्लागूंलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । १० । ग्रस्ताऽशेप-जगत्-स्वास्थ्य-राक्षसाम्भोधिमन्दर ।

लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । ११ । पुच्छ-गुच्छ-स्फुरत्-भूमि-जगद्-दग्धारिपत्तन ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । १२ । जगन्मनोदुरूल्लंघ्य पारावार-विलङ्घन । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।१३। स्मृतमात्र समस्तेष्टपूरक ! प्रणतप्रिय! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।१४। रात्रिञ्च चमूराशि कर्तनैक विकर्तन ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।१५। जानकी जानकीज्यानि प्रेमपात्र ! परन्तप ! लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । १६ । भीमादिक महावीर वीरावेशावतारक ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।१७। वैदेही विरहक्लान्त रामरोषैक विग्रह ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन्-निपातय ।१८। वज्रा गंनख दंष्टेश ! वज्रिवज्रावगुण्ठन ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।१९। अखर्व गर्व गन्धर्व पर्वतोद्भवेन स्वर ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । २० । लक्ष्मणप्राण सन्त्राणत्राता तीक्ष्णकरान्वय ! लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । २१ । रामाधिविप्रयोगार्त ! भरताद्यार्तिनाशन ! लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय । २२ । द्रोणाचल समुत्क्षेप समुत्क्षिप्तारि

वैभव ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।२३। सीताशीर्वाद सम्पन्न ! समस्तावयवाक्षत ! । लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ।२४। इत्येवमश्वत्थ तलोपविष्टः शत्रुञ्जयं नामपटेत् स्वयं यः । स शीघ्रमेवास्त समस्तशत्रुः प्रमोदते मारुतजप्रसादत् ।२५।

२६२–श्रीहनुमदष्टकम् ।

श्रीहनुमते नमः । श्रीरघुराजपदाब्जनिकेतन पंकजलोचन मङ्गलराशे, चण्डमहाभुजदण्डसुरारिविखण्डनपण्डित पाहि दयालो । पातकिनं च समुद्धर मां महतां हि सतामपि मानमुदारं, त्वां भजतो मम देहि दयाघन हे हनुमत्स्वपदाम्बुजदास्यम् । १ । संसृतितापमहानलदग्धतनूरुहममतनोरतिबेलं, पुत्रधनस्वजनात्मगृहादिषु सक्तमतेरतिकिल्बिषमूर्तेः । केनचिदप्यमलेन पुराकृतपुण्यसुपुञ्जलवेन विभो वै, त्वां भजतो० ।२। संसृतिकूपमनल्पमघोनिनिदाघनिदानमस्त्रपशेषं, प्राप्य सुदुःखसहस्त्रभुजङ्गविषैकसमाकुलसर्वतनोर्मे । घोरमहाकृपणापदमेव गतस्य हरे पतितस्य भवाब्धौ, त्वां भजतो० । ३ । संसृतिसिन्धुविशालकरालमहाबलकालझषग्रसनार्तं, व्यग्रसमग्रधिय कृपणं च महामदनक्रसुचक्र-

हतासुम् । कालमहारसनोर्मिनिपीडितमुद्धर दीनमनन्यगतिं मां, त्वां भजतो० । ४ । संसृतिघोरमहागहने चरतो मणिरञ्जितपुण्यसुमूर्तेः, मन्मथभीकरघोरमहोग्रमृगप्रवरार्दितगात्रसुसन्धेः । मत्सरतापविशेषनिपीडितबाह्यमतेश्च कथञ्चिदमेयं, त्वां भजतो० ।५। संसृतिवृक्षमनेकशताघनिदानमनन्तविकर्मसुशाखं, दुःखफलं करणादिपलाशमनङ्गसुपुष्पमचिन्त्यसुमूलम् । तं ह्यधिरुह्य हरे पतितं शरणागतमेव विमोचय मूढं, त्वां भजतो० । ६ । संसृतिपन्नगवक्त्रभयंकरदंष्ट्रमहाविषदग्धशरीरं, प्राणविनिर्गमभीमिसमाकुलमन्धमनाथमतीव विषण्णम् । मोहमहाकुहरे पतितं दययोद्धर मामजितेन्द्रियकामं, त्वां भजतो० । ७ । इन्द्रियनामकचौरगणैर्हृततत्त्वविवेकमहाधनराशिं, संसृतिजालनिपातितमेव महाबलिभिश्च विखण्डितकायम् । त्वत्पदपद्ममनुत्तममाश्रितमाशु कपीश्वर पाहि कृपालो, त्वां भजतो० । ८ । ब्रह्ममरुद्गणरुद्रमहेन्द्रकिरीटसुकोटिलसत्पदपीठं, दाशरथिं जयति क्षितिमण्डल एष निधाय सदैव हृदब्जे । तस्य हनूमत एव शिवङ्करमष्टकमेतदनिष्टहरं वै, यः सततं हि पठेत्स नरो लभतेऽच्युतरामपदाब्जनिवासम् ।९।

इति श्रीमधुसूदनाश्रमशिष्याच्युतविरचितं श्रीमद्धनुमदष्टकं सम्पूर्णम् ।

२९३-हनुमपत्ञ्वरत्नस्तोत्रम् ।

शंशंशंसिद्धनाथं प्रणमति चरणं वायुपुत्रं च रौद्रं वंवंवंविश्वरूपं हहहहहहसितं गर्जितं मेघक्षत्रम् ॥ तंतंत्रैलोक्यनाथं तपति दिनकरं तं त्रिनेत्रस्वरूपं कंकंकन्दर्पवश्यं कमलमनहरं शाकिनीकालरूपं ॥ १ ॥ रंरंरंराम दूतं रणगजदमितं रावणच्छेददक्षं बंबंबंबालरूपं नतगिरिचरणं कम्पितं सूर्यबिम्बम् । मंमंमंमन्त्रसिद्धिं कपिकुलतिलकं मर्दनं शाकिनीनां हुंहुंहुंकारबीजं हनति हनुमतं हन्यते शत्रुसैन्यम् । २ । दंदंदंदीर्घरूपं धरकरशिखरं पतितं मेघनादं ऊँऊँउच्चाटितं वै सकलभुवतल योगिनीवृन्दरूपम् । क्षांक्षांक्षांक्षिप्रवेगं क्रमति च जलधि ज्वलितं रक्षदुर्गं क्षोंक्षोंक्षोंक्षोमतत्वं दनुरूहकुलकं मुचयते बिम्बकारम् ।३। कंकंकंकालदुष्टं जलनिधितरणं राक्षसानां विनाशे दक्षं श्रेष्ठं कबीनां त्रिभुवनचरतां प्राणिनां प्राणरूपं । हांहांहांहासतत्वं त्रिभुवनरचितं दैवतं सर्वभूते वेवानां च त्रयाणां फणिभुवनघरं व्यापकं वायुरूपम् ।४। त्वंत्वंत्वंवेदतत्वं बहुऋचयजुषां सामचाऽथर्वरूपं कंकंकंकन्दने त्वं ननु कमलतजे राक्षसान् रौद्ररूपान् । खंखंखंषड्गहस्तं झटिति भुवतले त्रोटितं नागपाशम् ॐऊँऊँकाररूपं त्रिभुवनपठित वेदमन्त्राधिमन्त्रम् ॥ ५ ॥ संग्रामे शत्रुमध्ये झलनिधितरणे व्याघ्रसिंहे च सर्पे राज-

द्वारे च मार्गे गिरिगुहविवरे चोषरे कन्दरे वा । भूत-प्रेतादि-युक्ते ग्रहगणविषये शाकिनी-डाकिनीनां देशे विस्फोटकानां ज्वर-वमन-शिरः पीडने नाशकस्त्वम् ।६।

२६४–हनुमत्स्तोत्रम् ।

अशेषलङ्कापतिसैन्यहन्ता श्रीरामसेवाचरणैककर्ता । अशेषदुःखाहतलोकगोप्ता त्वसौ हनूमांस्तव सौख्यकर्ता ।१। कृतक्रोधे यस्मिन्नमरनगरी मङ्गलरवा नवातङ्का लङ्का समजनि वने वृश्चति सति । सदा सीताकांतप्रणतिमतिविख्यातमहिमा हनूमानव्याद्वः कपिकुलशिरोमण्डनमणिः ।२।

२६५–हनुमत्स्तुतिः (१) ।

आञ्जनेयमतिपाटलाननं काञ्चनाद्रि-कमनीय-विग्रहम् । पारिजात-तरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम् । १ । गोष्पदीकृतवारीशः मशकीकृतराक्षसम् । रामायण-महामाला-रत्नं वन्देऽनिलात्मजम् ।२। यत्र-यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम् । वाष्पवारि परिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत-राक्षसान्तकम् ॥३॥ अञ्जनीनन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम् कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्काभयङ्करम् ॥ ४ ॥ अतुलित-बलधाम स्वर्ण-शैलाभदेहं दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामगग्रण्यम् । सकल गुण-निधानं वानराणामधीशं रघुपतिवर-

दूतं वातजातं नमामि ।५।

२९६–हनुमत्स्तुतिः (२) ।

मनोजवं मारुत-तुल्य-वेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् । वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शिरसा नमामि । १ । उल्लङ्घ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः । आदाय तेनैव ददाह लङ्कां नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ।२।

श्री दत्तात्रेयस्तोत्राणि

२९७–दत्तापराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

दत्तात्रेयं त्वां नमामि प्रसीद त्वं सर्वात्मा सर्वकर्ता न वेद । कोऽप्यन्तं ते सर्वदेवाधिदेव ज्ञाताऽज्ञातान्मेऽपराधान् क्षमस्व ।१। त्वदुद्भवत्वात्त्वदधीनधीत्वात्त्वमेव मे वन्द्य उपास्य आत्मन् । अथापि मौढ्यात् स्मरणं न ते मे कृतं क्षमस्व प्रियकृन्महात्मन् ।२। श्रीभोगापवर्गप्रदमार्तबन्धुं कारुण्यसिन्धुं परिहाय बन्धुम् । हिताय चाऽन्यं परिमार्गयन्ति हा मादृशो नष्टदृशो विमूढाः । ३ । न मत्समो यद्यपि पापकर्त्ता न त्वत्समोऽथापि हि पापहर्ता । न मत्समोऽन्यो दयनीय आर्य न त्वत्समः क्वापि दयालुवर्यः ।४। अनाथनाथोऽसि सुदीनबन्धो श्रीशाऽनुकम्पामृतपूर्णसिन्धो त्वत्पादभक्तिं तव दासदास्यं त्वदीय-

मन्त्रार्थदृढैकनिष्ठाम् ॥५॥ गुरुस्मृति निर्मलबुद्धिमाधि-व्याधिक्षयं मे विजयं च देहि । इष्टार्थसिद्धि वरलोकवश्यं धनान्नवृद्धि वरगोसमृद्धिम् ।६। पुत्रादिलब्धिं म उदारतां च देहीश मे चास्त्वभयं हि सर्वतः । ब्रह्मा-ऽग्नि-भूम्यो नम औषधीभ्यो वाचे नमो वाक्पतये च विष्णवे । ७ । शान्ताऽस्तु भूर्नः शिवमन्तरिक्षं द्यौश्चाऽभयं नोऽस्तु दिशः शिवाश्च । आपश्च विद्युत्परिपान्तु देवाः शं सर्वतो मेऽभयमस्तु शान्तिः ।८।

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं दत्तापराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२९८-गुरुवरप्रार्थनापञ्चरत्नस्तोत्रम् ।

यं विज्ञातुं भृगुः स्वं पितरमुपगतः पञ्चवारं यथावज्ज्ञानादेवामृताप्तेः सततमनुपमं चिद्विवेकादि लब्ध्वा । तस्मै तुभ्यं नमः श्रीहरिहरगुरवे सच्चिदानन्दमुक्ताऽनन्ताद्वैतप्रतीतं न कुरु कितवतां पाहि मां दीनबन्धो ॥१॥ यस्मान्नश्यस्य जन्म स्थिति विलयमिमे तैत्तिरीयाः पठन्ति स्वाविद्यामात्रयोगात् सुखशयनतले मुख्यतः स्वप्नवच्च । तस्मै तुभ्यं नमः श्रीहरिहरगुरवे सच्चिदानन्दमुक्ताऽनन्ताद्वैतप्रतीत न कुरु कितवतां पाहि मां दीनबन्धो ।२। या वेदान्तैकलभ्यश्रुतिषु नियमिनस्तैत्तिरीयैश्च काण्वैरन्यैरप्यानिषेकादुदयपरिमितं चारुसंस्कारभाजाम् ।

तस्मै तुभ्यं नमःश्रीहरिहरगुरवे सच्चिदानन्दमुक्ताऽनन्ता-द्वैतप्रतीत न कुरु कितवतां पाहि मां दीनबन्धो ।.३।। यस्मिन्नेवावसन्नाः सकलनिगमवांङ्मौलयः सुप्तपुंसि प्रोक्तं तन्नाम यद्वै निजमहिमगतध्वान्ततत्कार्यरूपे । तस्मै तुभ्यं नमः श्रीहरिहरगुवे सच्चिदानन्दमुक्ताऽनन्ताद्वैत-प्रतीत न कुरु कितवतां पाहि मां दीनबन्धो । ४ । चित्त्वात्सङ्कल्पपूर्वं सृजति जगदिदं योगिवन्माययां यः। स्वात्मन्येवाद्वितीये परम सुखदृशि स्वप्नवद्भूम्नि नित्ये । तस्मै तुभ्यं नमः श्रीहरिहरगुरवे सच्चिदान्दमुक्तानन्ताद्वैतप्रतीतं न कुरु कितवनां पाहि मां दीनबन्धो ।५।

इत्यच्युतयतिविरचितं गुरुवरप्रार्थनापञ्चरत्नस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२९९-गुर्वष्टकम् ।

श्रीसद्गुरूवे नमः । शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं धनं मेरुतुल्यम् । गुरोरंघ्रिपद्मे मनश्चेन लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ।१। कलत्रं धनं पुत्रपौत्रादि सर्वं गृहं बान्धवाः सर्वमेतद्धि जातम् । गुरोरंघ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं० ।२। षडगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति । गुरोर्यघ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्न ततः किं० ।।३।। विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषु धन्यः सदाचारवृतेषु भक्तो न चान्य । गुरोरंघ्रि०।४। क्षमामण्डले भूपभूपालवृन्दैः सदा

सेवितं यस्य पादारविन्दम् । गुरोरंघ्रि० । ५ । यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापाज्जगद्वस्तु सर्वं करे मत्प्रसादात् । गुरोरंघ्रि० ।६। न भोगे न योगे न वा वाजिराजौ न कांता मुखे नैव वित्तेषु चित्तम् । गुरोरंघ्रि । ७ । अरण्ये न वा स्वस्य गेहे न कार्ये व देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये । गुरोरंघ्रि० । ८ । अनर्घ्याणि रत्नानि भुक्तानि सम्यक् समालिङ्गिता कामिनी यामिनीषु । गुरोरंघ्रि० ।९। गुरोरष्टकं यः पठेत्पुण्यदेही यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही । लभेद्वाञ्छितार्थं पदं ब्रह्मसंज्ञं गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ।१०।

इति श्रीमत्प० श्रीमच्छंक० गुरोरष्टकं सम्पूर्णम् ।

इति श्री दत्तात्रेयस्तोत्राणि ।

नवग्रहस्तोत्राणि

३००–ग्रहस्तुतिः ।

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च । गुरुश्च शुक्र शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वं मम सुप्रभातम् ।१।

३०१–नवग्रहपीडाहरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । ग्रहाणामादिरादित्यो लोकरक्षणकारकः । विषमस्थानसंभूतां पीडां हरतु मे रविः ।१। रोहिणीशः सुधामूर्तिः सुधागात्रः सुधाशनः ॥ विषमस्थानसंभूतां पीडां हरतु मे विधुः । २ । भूमिपुत्रो

महातेजा जगतां भयकृत्सदा । वृष्टिकृद्दृष्टिहर्ता च पीडां हरतु मे कुजः । ३ । उत्पातरूपो जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युतिः । सूर्यप्रियकरो विद्वान्पीडां हरतु मे बुधः । ४ । देवमन्त्री विशालाक्षः सदा लोकहिते रतः । अनेकशिष्यसंपूर्णः पीडां हरतु मे गुरुः । ५ । दैत्यमन्त्री गुरुस्तेषां प्राणदश्च महामतिः । प्रभुस्ताराग्रहाणां च पीडां हरतु मे भृगुः ।६। सूर्यपुत्रो दीर्घदेहो विशालाक्षः शिवप्रियः । दीर्घचारः प्रसन्नात्मा पीडां हरतु मे शनिः ।७।महा शिरा महावक्त्रो दीर्घदंष्ट्रो महाबलः । अतनुश्चोर्ध्वकेशश्च पीडां हरतु मे शिखी । ८ । अनेकरूपवर्णैश्च शतशोऽथ सहस्रशः । उत्पातरूपो जगतां पीडां हरतु मे तमः ।९।

३०२-श्रीसूर्यप्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

प्रातःस्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि । सामानि यस्य किरणाः प्रभवादिहेतुं ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यहेतुम् ।१। प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाङ्मनोभिर्ब्रह्मेन्द्रपूर्वकसुरैर्नुतमर्चितं च ।। वृष्टिप्रमोचनविनिग्रहहेतुभूतं त्रैलोक्यपालनपरं त्रिगुणात्मकं च ।२। प्रातर्भजामि सवितारमनन्तशक्तिं पापौघशत्रुभयरोगहरं परं च । तं सर्वलोककलनात्मककालमूर्तिं गोकण्ठबन्धनविमोचनमादिदेवम् । ३ । श्लोकत्रयमिदं भानोः प्रातः प्रातः पठेत्तु यः । सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः परं सुखमवाप्नुयात् ।४।

३०३–सूर्यकवचस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । याज्ञवल्क्य उवाच । शृणुष्व मुनिशार्दूल सूर्यस्य कवचं शुभम् । शरीरारोग्यदं दिव्य सर्वसौभाग्यदायकम् ।१। देदीप्यमानमुकुटं स्फुरन्मकर-कुण्डलम् । ध्यात्वा सहस्रकिरणं स्तोत्रमेतदुदीरयेत् ।२। शिरो मे भास्करः पातु ललाटं मेऽमितद्युतिः ।। नेत्रे दिनमणिः पातु श्रवणे वासरेश्वरः ।३। घ्राणं धर्मघृणिः पातु वदनं देववाहनः । जिह्वां मे मानदः पातु कण्ठं मे सुरवन्दितः ।४। स्कन्धौ प्रभाकरः पातु वक्षः पातु जनप्रियः । पातु पादौ द्वादशात्मा सर्वाङ्गं सकलेश्वरः ।५। सूर्यरक्षात्मकं स्तोत्रं लिखित्वा भूर्जपत्रके ।। द-धाति यः करे तस्य वशगाः सर्वसिद्धयः । ६ । सुस्नातो यो जपेत्सम्यग्योऽधीते स्वस्थमानसः ।। स रोगमुक्तो दी-र्घायुः सुखं पुष्टिं च विन्दति ।७।

इति श्रीमद्याज्ञवल्क्यविरचितं सूर्यकवचस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३०४–आदित्यस्तोत्रम् (२) ।

आदित्यः प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः । तृती-यं भास्करः प्रोक्तश्चतुर्थं तु प्रभाकरः । १ । पञ्चमं तु सहस्रांशुः षष्ठं त्रैलोक्यलोचनः । सप्तमं हरिदश्वश्च अ-ष्टमं तु विभाकरः ।२। नवमं दिनकरः प्रोक्तो दशमं द्वा-दशात्मकः । एकादशं त्रयीमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एव तु ।३। द्वादशादित्यनामानि प्रातःकाले पठेन्नरः । दुःस्वप्नो नश-

यते तस्य सर्वदुःखं च नश्यति ।४। दद्रुकुष्ठहरं चैव दारिद्र्यं हरते ध्रुवम् । यः पठेत्प्रातरुत्थाय भक्त्या नित्यमिदं नरः ।५। सौख्यमायुस्तथाऽऽरोग्यं लभते मोक्षमेव च । अग्निमीजे नमस्तुभ्यं इषेत्वोर्जेस्वरूपिणे । ६ । अग्न आयाहिवीतये नमस्ते ज्योतिषां पते । शन्नो देवी नमस्तुभ्यं जगच्चक्षुर्हि ते नमः ।७। पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमद्युतिः । सप्ताश्वरथसंयुक्तो द्विभुजः स्यात्सदा रविः ।८। आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिने दिने । जन्मान्तरसहस्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते ।९।

३०५-श्रीसूर्यस्तोत्रम् (१)

खण्डिता नेत्रकंजालिमञ्जुरञ्जनपण्डिताः । मण्डिताखिलदिप्रांताश्चण्डांशोः पांतु भानवः ।१। शुकतुण्डच्छविसवितुश्चण्डरुचः पुण्डरीकवनबन्धोः । मण्डलमुदितं वन्दे कुण्डलमाखण्डलाशायाः ।२। अतिविततगगनसरणिप्रसरणपरिमुक्तविश्रमानन्दः । मरुदुल्लासितसौरभकमलाकरहासकृद्रविर्जयति । ३ । प्राचीकुंकुमतिलकं पूर्वाञ्चलरोहणैकमाणिक्यम् । त्रिभुवनगृहैकदीपं वन्दे लोकैकलोचनं देवम् । ४ । कटुभिरपि कठोरचक्रवाकोत्करविरहज्वरशांतिशीतवीर्यैः । तिमिरहतमयं महोभिरञ्जञ्जति जगन्नयनौघमुष्णभानुः । ५ । यद्बिम्बमम्बरमणिर्यदपां प्रसूतिर्नक्तं निषिञ्चति यदाग्निशिखासु भासः ।

ज्योत्स्ना निशासु हिमधाम्नि च मन्मयूखाः पूषा पुराणपुरुषः स नमोऽस्तु तस्मै । ६ । यो रक्ततामतितरामतुलां दधानो दिक्प्रौढदारनृपमोहमवाप्तवासः । योषिद्द्वयी पतिविडम्बनभृत्स शश्वत्पायादपायसमुदायहरो रविर्नः । ७ । ब्रह्माण्डसम्पुटकलेवरमध्यवर्ति चैतन्यपिण्डमिव मण्डलमस्ति यस्य । आलोकितोऽपि दुरितानि निहन्ति यस्तं मार्तण्डमादिपुरुषं प्रणमामि नित्यम् ।८।

३०६-सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्योदयास्तसमये शिवाद्या अपि चाञ्जलिम् ॥ बध्नन्ति विश्वसाक्षी स प्रत्यक्षः श्रूयते रविः ॥१॥ यदधीना कालगतिर्यदधीनाः क्रिया समाः ॥ यन्मन्त्रेण द्विजत्वाप्तिर्यन्मत्रेण कृतार्थता ॥२॥ लौकिक्यपि व्यवहृतिर्यत्प्रसादात्प्रवर्तते ॥ स्मर्यतेऽस्माद्विश्वसृष्टिः सवितुः श्रूयतेऽपि च ।३। जगतस्तस्थुषश्चात्मा सूर्यस्तं बहुधा जगुः । मूर्तामूर्तं जगत्सर्वं प्राणापानात्मकं श्रुतम् ॥ ४ ॥ प्राणः सूर्योऽपरश्चन्द्रस्तयोः सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥ श्रीसूर्यकिरणावेशाच्चन्द्रस्यापि च चन्द्रता ॥५॥ अतश्चन्द्रो न भिन्नोऽस्मात् स सूर्यः सकलात्मकः ॥ यं विना जगदान्ध्यं हि स देवः केन पूज्यते ॥६॥ तमोऽमुं ग्रसतीत्येष दृष्टवादो न तात्विकः ॥ तस्मादभ-

वतेष्टदो देवो वरोऽर्कश्चापराजितः ॥७॥

इति श्रीवासुदेवसरस्वतीविरचितं सूर्यस्तोत्रम् ।

३०७–सूर्याश्वस्तुतिः ।

अवतु नः सवितुस्तुरगावली समतिलंघिततुङ्गपयोधरा । स्फुरितमध्यगतारुणनायका मरकतैकलतेव नभश्रियः ॥१॥

३०८–श्रीसूर्यकिरणस्तोत्रम् ।

करजालपूर्वचेष्टितं वस्तदभीष्टप्रदमस्तु तिग्मभासः। क्रियते भवबन्धनाद्विमुक्तिः प्रणतानामुपसेवितेन येन ॥१॥ युष्माकमम्बरमणेः प्रथमे मयूखास्ते मंगलं विदधतूदयरागभाजः । कुर्वन्ति ये दिवसजन्ममहोत्सवेषु सिन्दूरपाटलमुखीरिव दिक्पुरन्ध्रीः ॥२॥ सिन्दूराणीव सीदत्कृपणकुलवधूमूर्ध्नि ये संचरन्तः प्रेक्ष्यन्ते दिक्षु शैलाः शिखरभुवि लसत्पद्मरागांकुरा यैः । धुन्वन्ते ध्वान्तधाराः सं दुरितचयैर्दूरदृश्याः सुदृश्याः पान्तु त्वा पद्मबन्धोरकरथकिरणाः पूरणाः पद्मबन्धोः ॥३॥

३०९–सूर्याष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ साम्ब उवाच ॥ आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर ॥ दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तु ते ॥१॥ सप्ताश्वरथमरूढं प्रचण्डं कश्यपात्मजम् ॥ श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥२॥

लोहितं रथमारूढं सर्वलोकपितामहम् । महापापहरं देवं तं० । ३ । त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरम् । महापापहरं देवं तं० ।४। बृंहितं तेजः पुंजं च वायुराकाशमेव च । प्रभुस्त्वं सर्वलोकानां तं० ।५। बन्धूकपुष्पसंकाशं हारकुण्डलभूषितम् । एकचक्रधरं देवं तं० ।६। तं सूर्यं भवकर्तारं महातेजः प्रदीपनम् । महापापहरं देवं तं० ।७। तं सूर्यं जगतां नाथं ज्ञानविज्ञानमोक्षदम् । महापापहरं देवं तं० ।८। सूर्याष्टकं पठेन्नित्यं ग्रहपीडाप्रणाशनम् । अपुत्रो लभते पुत्रं दरिद्रो धनवान्भवेत् । ९ । आमिषं मधुपानं च यः करोति रवेर्दिने । सप्तजन्म भवेद्रोगी जन्मजन्म दरिद्रता । १० । स्त्रीतैलमधुमांसानि यस्त्यजेत्तु रवेर्दिने । न व्याधिशोकदारिद्र्यं सूर्यलोकं स गच्छति ।११।

३१०–चन्द्रस्तुतिः ।

लालयन्तमरविन्दवनानि क्षालयन्तमभितो भुवनानि । पालयन्तमथ कोककुलानि ज्योतिषां पतिमहं महयामि । १ । रविमावसते सतां क्रियायै सुधया तर्पयते सुरान् पितॄंश्च । तमसां निशि मूर्छतां विहन्त्रे हरचूडानिहितात्मने नमस्ते । २ । स्वर्भानुप्रतिमानपारणमिलद्दन्तौघयंत्रोद्भवश्वभ्रालीपतयालुदीधितिसुधारस्तुषारद्युति । पुष्पेष्वासनतप्रियापरिणयामन्दाभिषेकोत्सवे

देवः प्राप्तसहस्रचोरकलशश्रीरस्तु नस्तुष्टये ।३।

३११-चन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । चन्द्रस्य शृणु नामानि शुभदानि महीपते । यानि श्रुत्वा नरो दुःखान्मुच्यते नात्र संशयः ।१। सुधाकरश्च सोमश्च ग्लौरब्जः कुमुदप्रियः । लोकप्रियः शुभ्रभानुश्चन्द्रमा रोहिणीपतिः । २ । शशी हिमकरो राजा द्विजराजो निशाकरः । आत्रेय इन्दुः शीतांशुरोषधीशः कलानिधिः । ३ । जैवातृको रमाभ्राता क्षीरोदार्णवसम्भवः । नक्षत्रनायकः शम्भुः शिरश्चूडामणिर्विभुः । ४ । तापहर्ता नभोदीपो नामान्येतानि यः पठेत् । प्रत्यहं भक्तिसंयुक्तस्तस्य पीडा विनश्यति । ५ । ग्रहादीनां च सर्वेषां भवेच्चन्द्रबलं सदा ।६।

३१२-ऋणमोचकमङ्गलस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । मंगलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः । स्थिरासनो महाकायः सर्वकर्मविरोधकः । १ । लोहितो लोहिताक्षश्च सामगानां कृपाकरः । धरात्मजः कुजो भौमो भूतिदो भूमिनन्दनः । २ । अगांरको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः । वृष्टेः कर्ताऽपहर्ता च सर्वकामफलप्रदः । ३ । एतानि कुजनामानि नित्यं यः श्रद्धया पठेत् । ऋणं न जायते तस्य धनं शीघ्रमवाप्नुयात् ।४। धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कांतिसमप्रभम् । कुमारं शक्तिह-

स्तं च मंगल प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रमंगारकस्यैत-
त्पठनीयं सदा नृभिः । न तेषां भौमजा पीडा स्वल्पाऽपि
भवति क्वचित् ॥६॥ अङ्गारक महाभाग भगवन्भक्त-
वत्सल ॥ त्वां नमामि ममाशेषमृणमाशु विनाशय ॥७॥
ऋणरोगादिदारिद्र्यं ये चान्ये ह्यपमृत्यवः ॥ भयक्लेश-
मनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥८॥ अतिवक्र दुराराध्य
भोगभुक्तजितात्मनः ॥ तुष्टो ददासि साम्राज्यं रुष्टो ह-
रसि तत्क्षणात् ॥ ९ ॥ विरञ्चिशक्रविष्णूनां मनुष्याणां
तु का कथा ॥ तेन त्वं सर्वसत्वेन ग्रहराजो महाबलः
॥१०॥ पुत्रान् देहि धनं देहि त्वामस्मि शरण गतः । ऋण-
दारिद्र्य-दुःखेन शत्रूणां च भयात्ततः ॥११॥ एभिर्द्वादशभिः
श्लोकैर्यः स्तौति च धरासुतम् । महतीं श्रियमाप्नोति
ह्यपरो धनदो युवा ॥१२॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे भार्गवप्रोक्तं ऋणमोचनमङ्गलस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३१३-अङ्गारकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अङ्गारकः शक्तिधरो लोहि-
तांगो धरासुतः ॥ कुमारो मंगलो भौमो महाकायो ध-
नप्रदः ॥१॥ ऋणहर्ता दृष्टिकर्ता रोगकृद्रोगनाशनः । वि-
द्युत्प्रभो व्रणकरः कामदो धनहृत्कुजः ॥२॥ सामगान-
प्रियो रक्तवस्त्रो रक्तामलेक्षणः ॥ लोहितो रक्तवर्णश्च

सर्वकर्मविबोधकः ॥३॥ रक्तमाल्यधरो हैमकुण्डलो ग्रहनायकः । नामान्येतानि भौमस्य यः पठेत्सततं नरः ।४। ऋणं तस्य च दौर्भाग्यं दारिद्र्यं च विनश्यति ॥ धनं प्राप्नोति विपुलं स्त्रियं चैव मनोरमाम् ॥५॥ वंशोद्योतकरं पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥ योऽर्चयेदह्नि भौमस्य मङ्गलं बहुपुष्पकैः ॥६॥ सर्वा नश्यंति पीडाश्च तस्य ग्रहकृता ध्रुवम् ॥७॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे अङ्गारकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३१४—बुद्धस्तुतिः ।

रेतोरक्तमयान्यमूनि भविनां विण्मूत्रपूर्णोदकान्यलोक्यैव कलेवराणि विगलत्तोयार्द्ररंध्राणि यः । मायाजालनियन्त्रितानि घृणया नोन्मीलयत्यक्षिणी निर्व्याजप्रणिधाननिश्चलमतिर्बुद्ध्यै स बुद्धोऽस्तु वः ॥१॥ ध्यानव्याजमुपेत्य चिंतयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं पश्यानङ्गशरातुरं जनमिमं त्राताऽपि नो रक्षसि । मिथ्याकारुणिकोऽसि निर्घृणतरस्त्वत्तः कुतोऽन्यः पुमाञ्छश्वन्मारवधूभिरित्यभिरत्यभिहितो बुद्धो जिनः पातु वः ॥ २ ॥ आबाहूदतमण्डलाग्ररुचयः संनद्धवक्षःस्थलाः सोष्माणो व्रणिनो विपक्षहृदयप्रोन्माथिनः कर्कशाः । उत्सृष्टाम्बरदृष्टिविभ्रमभरा तस्य स्मराग्रेसरा योधा वारवधूस्तनाश्च न दधुः क्षोभं स वोऽव्याज्जिनः ॥३॥

३१५-बुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । बुधो बुद्धिमतां श्रेष्ठो बुद्धिदाता धनप्रदः । प्रियंगुकलिकाश्यामः कञ्जनेत्रो मनोहरः ।१। ग्रहोपमो रौहिणेयो नक्षत्रेशो दयाकरः । विरुद्धकार्यहन्ता च सौम्यो बुद्धिविवर्धनः ।२। चन्द्रात्मजो विष्णुरूपी ज्ञानी ज्ञो ज्ञानिनायकः । ग्रहपीडाहारो दारपुत्रधान्यपशुप्रदः ।३। लोकप्रियः सौम्यमूर्तिर्गुणदो गुणिवत्सलः । पञ्चविंशति नामानि बुधस्यैतानि यः पठेत् ।४। स्मृत्वा बुधं सदा तस्य पीडा सर्वा विनश्यति । तद्दिने वा पठेद्यस्तु लभते स मनोगतम् ।५।

इति श्रीपद्मपुराणे बुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३१६-बृहस्पतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । गुरुर्बृहस्पतिर्जीवः सुराचार्यो विदांवरः । वागीशोधिषणो दीर्घश्मश्रुः पीताम्बरो युवा ।१। सुधादृष्टिर्ग्रहाधीशो ग्रहपीडापहारकः । दयाकरः सौम्यमूर्तिः सुरार्च्यः कुंकुमद्युतिः ।२। लोकपूज्यो लोकगुरुर्नीतिज्ञो नीतिकारकः । तारापतिश्चाङ्गिरसो वेदवैद्यपितामहः । ३ । भक्त्या बृहस्पतिं स्मृत्वा नामान्येतानि यः पठेत् । अरोगी बलवान् श्रीमान्पुत्रवान्स भवेन्नरः ।४। जीवेद्वर्षशतं मर्त्यः पापं नश्यति नश्यति । यः पूजयेद्गुरुदिने पीतगन्धाक्षताम्बरैः । ५ । पुष्पदी-

पोपहारैश्च पूजयित्वा बृहस्पतिम् ।। ब्राह्मणान्भोजयित्वा च पीडाशान्तिर्भवेद्गुरोः ।६।

इति श्रीस्कन्दपुराणे बृहस्पतिस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३१७-शुक्रकवचम् ।

मृणाल-कुन्देन्दु-पयोज-सुप्रभं पीताम्बरं प्रसृतमक्ष-मालिनम् । समस्तशास्त्रार्थविधिं महान्तं ध्यायेत् कविं वाञ्छितमर्थसिद्धये ।। १ ।। शिरो मे भार्गवः पातु भालं पातु ग्रहाधिपः । नेत्रे दैत्यगुरुः पातु श्रोत्रे मे चन्दनद्यु-तिः । २ । पातु मे नासिकां काव्यो वदनं दैत्यवन्दितः । वचनं चोशनाः पातु कण्ठं श्रीकण्ठभक्तिमान ।।३।। भुजौ तेजोनिधिः पातु कुक्षिं पातु मनोव्रजः । नाभिं भृगुसुतः पातु मध्यं पातु महीप्रियः ।।४।। कटिं मे विश्वात्मा ऊरू मे सुरपूजितः । जानुं जाड्यहरः पातु जङ्घे ज्ञानवतां वरः ।।५।। गुल्फौ गुणनिधिः पातु पातु पादौ वराम्बरः । सर्वाण्यङ्गानि मे पातु स्वर्णमालापरिष्कृतः ।। ६ ।। य इदं कवचं दिव्यं पठति श्रद्धयान्वितः । न तस्य जायते पीडा भार्गवस्य प्रसादतः ।७।

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे शुक्रकवचं सम्पूर्णम् ।

३१८-शुक्रस्तवराजः ।

अस्य श्रीशुक्रस्तवराजस्य प्रजापतिर्ऋषिः, अनुष्टुप्-छन्दः, शुक्रो देवता, शुक्रप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । नमस्ते

भार्गवश्रेष्ठ दैत्य-दानव-पूजित । वृष्टिरोधप्रकर्त्रे च वृष्टिकर्त्रे नमो नमः । १ । देवयानिपितस्तुभ्यं वेदवेदाङ्गपारग । परेण तपसा शुद्धः शङ्करो लोकसुन्दरः । २ । प्राप्तो विद्यां जीवनाख्यां तस्मै शुक्रात्मने नमः । नमस्तस्मै भगवते भृगुपुत्राय वेधसे । ३ । तारामण्डलमध्यस्थ स्वभासाभासिताम्बर । यस्योदये जगत्सर्वं मङ्गलार्हं भवेदिह । ४ । अस्तं याते ह्यरिष्टं स्यात्तस्मै मङ्गलरूपिणे । त्रिपुरावासिनो दैत्यान् शिवबाणप्रपीडितान् । ५ । विद्ययाऽजीवयच्छुक्रो नमस्ते भृगुनन्दन । ययातिगुरवे तुभ्यं नमस्ते कविनन्दन । ६ । बलिराज्यप्रदो जीवस्तस्मै जीवात्मने नमः । भार्गवाय नमस्तुभ्यं पूर्वगीर्वाणवन्दित । ७ । जीवपुत्राय यो विद्यां प्रादात्तस्मै नमो नमः । नमः शुक्राय काव्याय भृगुपुत्राय धीमहि ।८। नमः कारणरूपाय नमस्ते कारणात्मने । स्तवराजमिमं पुण्यं भार्गवस्य महात्मनः । ९ । यः पठेच्छृणुयाद्वाऽपि लभते वाञ्छितं फलम् पुत्रान् श्रीकामो लभते श्रियम् । १० । राज्यकामो लभेद्राज्य स्त्रीकामः स्त्रियमुत्तमाम् । भृगुवारे प्रयत्नेन पठितव्यं समाहितैः । ११ । अन्यवारे तु होरायां पूजयेद् भृगुमन्दनम् । रोगार्तो मुच्यते रोगाद् भयार्तो मुच्यते भयात् ।१२।

३१९-शनैश्चरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । अस्य श्रीशनैश्चरस्तोत्रस्य दशरथ ऋषिः । श्रीशनैश्चरो देवता । त्रिष्टुप् छन्दः। शनैश्चरप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । दशरथ उवाच । कोणोऽन्तको रौद्रयमोऽथ बभ्रुः कृष्णः शनिः पिंगलमन्दसौरि । नित्यं स्मृतो यो हरते च पीडां तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय । १ । सुरासुराः किंपुरुषोरगेन्द्रा गन्धर्वविद्याधरपन्नगाश्च । पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै० ॥ २ ॥ नरा नरेन्द्राः पशवो मृगेन्द्रा वन्याश्च ये कीटपतङ्गभृङ्गाः । पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै० ॥ ३ ॥ देशाश्च दुर्गाणि वनानि यत्र सेनानिवेशाः पुरपत्तनानि । पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै० । ४ । तिलैर्यवैर्माषगुडान्नदानैर्लोहेन नीलाम्बरदानतो वा । प्रीणाति मन्त्रैर्निजवासरे च तस्मै० । ५ । प्रयोगकूले यमुनातटे च सरस्वतीपुण्यजले गुहायाम् । यो योगिनां ध्यानगतोऽपि सूक्ष्मस्तस्मै० । ६ । अन्यप्रदेशात्स्वगृहं प्रविष्टस्तदीयवारे स नरः सुखी स्यात् । गृहाद्गतो यो न पुनः प्रयाति तस्मै० ।७। स्रष्टा स्वयंभूर्भुवनत्रयस्य त्राता हरीशो हरते पिनाकी । एकस्त्रिधा ऋग्यजुः साममूर्तिस्तस्मै० ।८। शन्यष्टकं यः प्रयतः प्रभाते नित्यं सुपुत्रैः पशुबान्धवैश्च । पठेत्तु सौख्यं भुवि भोगयुक्तः प्राप्नोति निर्वाण-

पदं तदन्ते ।९। कोणस्थः पिंगलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः। सौरिः शनैश्चरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः ।१०। एतानि दश नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥ शनैश्चरकृता पीडा न कदाचिद्भविष्यति ।११।

३२०-राहुस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः। राहुर्दानवमन्त्री च सिंहिकाचित्तनन्दनः। अर्धकायः सदा क्रोधी चन्द्रादित्यविमर्दनः ।१। रौद्रो रुद्रप्रियो दैत्यः स्वर्भानुर्भानुभीतिदः । ग्रहराजः सुधापायी राकातिथ्यभिलाषुकः। २ । कालदृष्टिः कालरूपः श्रीकण्ठहृदयाश्रमः । बिधुंतुदः सैंहिकेयो घोररूपो महाबलः। ३ । ग्रहपीडाकारो दंष्ट्री रक्तनेत्रो महोदरः। पञ्चविंशति नामानि स्मृत्वा राहुँ सदा नरः ।४। यः पठेन्महती पीडा तस्य नश्यति केवलम् ॥ आरोग्यं पुत्रमतुलां श्रियं धान्यं पशुंस्तथा। ५ । ददाति राहुस्तस्मै यः पठते स्तोत्रमुत्तमम् ॥ सततं पठते यस्तु जीवेद्वर्षशतं नरः ॥६॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे राहुस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

३२१-केतुपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः॥ केतुः कालः कलयिता धूम्रकेतुर्विवर्णकः। लोककेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुर्भयप्रदः ।१। रौद्रो रुद्रप्रियो रुद्रः क्रूरकर्मा सुगन्धधृक्। पलालधूमसं-

काशश्चित्रयज्ञोपवीतधृक् । २ । तारागणविमर्दी च जैमिनेयो ग्रहाधिपः । पञ्चविंशतिनामानि केतोर्यः सततं पठेत् ।३। तस्य नश्यन्ति बाधाश्च सर्वाः केतुप्रसादतः । धनधान्यपशूनां च भवेद्वृद्धिर्न संशयः ।४।

इति श्रीस्कन्दपुराणे केतो पञ्चविंशतिनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

इति नवग्रहस्तोत्राणि ।

देवस्तोत्राणि ।

३२२–द्वादश-देवदिशेष स्तुतिः ।

सौराष्टे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम् । उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारे ममलेश्वरम् ।।१।। केदारं हिमवत्पृष्ठे डाकिन्यां भीमशङ्करम् । वाराणस्यां च विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे ।२। वैद्यनाथं चिताभूमौ नागेशं दारुकावने । सेतुबन्धे च रामेशं घुश्मेशं च शिवालये । ३ । द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वसिद्धिः फलं लभेत् ।४।

३२२–हकारादि पञ्चदेव स्तुतिः ।

हरं हरिं हरिश्चन्द्रं हनुमन्तं हलायुधम् । पञ्चकं हं स्मरेन्नित्यं घोरसङ्कटनाशनम् ।

३२४–हरिहरस्तुतिः ।

जाह्नवी मूर्ध्नि पादे वा कालः कण्ठे वपुष्यथ ।। कामारिं कामतातं वा कंचिद्देवं भजामहे ।१। गाङ्ग-

यामुनतोयेन तुल्यं हरिहरं वपुः । पातु नाभिगतं पद्मं यस्य तन्मध्यमं गतः ।२। अबलाढ्यविग्रहश्रीरमर्त्यनतिरक्षमालयोपेतः । पङ्कक्रमोदितमुखः पायात्परो मुहुरनादिः । ३ । गवीशपत्रो नगजार्तिहारी कुमारतातः शशिखण्डमौलिः । लंकेशसंपूजितपादपद्म पायादनादिः परमेश्वरो वः ।४। पन्नगाधारिकराग्रो गङ्गोमालक्षितोऽङ्कदोऽग्रभुजः । शशिखण्डशेखर उमापरिग्रहो मुहुरनादिरवतु माम् ।५।

३२५–राधा–कृष्णध्यानम् ।

नव-ललित वयस्कौ नव-लावण्य-पुञ्जौ नवरस-चलच्चित्तौ नूतन-प्रेमवृत्तौ । नव-निधुवन-लीला कौतुकेनातिलोलौ स्मर निभृत-निकुञ्जे राधिका-कृष्णचन्द्रौ । १ । द्रुत कनक सुगौर स्निग्ध मेघौघ नीलच्छविभिरखिल-वृन्दारण्यमुद्भासयन्तौ । मृदुल नव दुकूले नीलपीते दधानौ स्मर निभृत निकुञ्जे राधिका कृष्णचन्द्रौ ।२। कान्तिः सितामृशति निन्दित शारदेन्दुर्यत्रैकतो विलसितामसिताङ्गशोभम् । वृन्दावनेऽपि कृत यामुना गाङ्गसङ्गं राधा कुमुन्द युगलं तदहं नमामि ।३।

३२६–श्रीरामकृष्णस्तुतिः ।

त्रातः काकोदरो येन द्रोग्ध्रापि करुणात्मना । पूतनामरणख्यातः समेऽस्तु शरणं प्रभुः । १ । मर्दितरावण-

कंसौ सरयूयमुनाविहारिणौ देवौ । अर्पितविप्रकुमारौ हरिपतिहरिकेनप्रियौ वन्दे ।२। यः पूतनामारणलब्धकीर्तिः काकोदरो येन विनीतदर्पः । यशोदयाऽलंकृतमूर्तिरव्यात्पतिर्यदूनामथवा रघूणाम् ।३।

३२७–सत्यनारायण-स्तुतिः ।

ध्यायेत् सत्यं गुणातीतं गुणत्रयसमन्वितम् । लोकनाथं त्रिलोकेशं कौस्तुभाभरणं हरिम् । १ । नीलवर्ण पीतवस्त्रं श्रीवत्सपदभूषितम् । गोविन्दं गोकुलानन्दं ब्रह्माद्यैरपि पूजितम् । २ । सत्यनारायणं देवं वन्देऽहं कामदं प्रभुम् । लीलया विततं विश्वं येन तस्मै नमो नमः ॥३॥

३२८–षडाननस्तुतिः ।

शैलराजतनयास्तनयुग्मव्यापृतास्ययुगलस्य गुहस्य । शेषवक्त्रकमलानि मलं वो दुग्धपानविधुराणि हरंतु ।१। विकसदमरनारीनेत्रनीलाब्जखण्डान्यधिवसति सदा यः संयमाधःकृतानि । न तु रुचिरकलापे वर्तते यो मयूरे वितरतु स कुमारो ब्रह्मचर्यश्रियं वः ।२। अर्चिष्यंति विदार्य वक्त्रकुहाराण्यासृक्किततो वासुचेरङ्गुल्या विषकबुरान्गणयतः संस्पृश्य दंताङ्कुरान् । एकं त्रीणि च सप्त पंच षडिति प्रध्वस्तसंख्याक्रमा वाचः क्रौंचरिपोः षिशुत्वविकलाः श्रेयांसि पुष्णंतु वः ।३।

३२९-भैरवस्तुतिः ।

करकलित कपालः कुण्डली दण्डपाणिस्तरुण तिमिर-नीलाव्याल-यज्ञोपवीती । क्रतुसमय-सपर्या-विघ्न-विच्छेद-हेतुर्जयति वटुकनाथः सिद्धिद साधकानाम् ।

३३०-इन्द्र-स्तुतिः ।

ऐरावतसमारूढो वज्रहस्तो महाबलः । शतयज्ञा-भिधो देवस्तस्मादिन्द्राय ते नमः ।

३३१-कुबेर०स्तुतिः ।

धनाध्यक्षाय देवाय नरयानोपवेशिने । नमस्ते राज-राजाय कुबेराय महात्मने ।

३३२-पृथिवीस्तोत्रम् ।

स्वर्गौकोभिरदोनिवासिपुरुषारब्धातिशुद्धाध्वरस्वा-हाकारवषट्क्रियोत्थममृतं स्वादीय आदीयते । आम्नाय-प्रवणैरलंकृतिजुषेऽमुष्मै मनुष्यैः शुभैर्दिव्यक्षेत्रसरित्पवि-त्रवपुषे देव्यै पृथिव्यै नमः ।१।

३३३-अनिरुद्धादिदेवस्तुतिः ।

अनिरुद्धं गजं ग्राहं वासुदेवं महाद्युतिम् । सङ्कर्षणं महात्मानं प्रद्युम्न च तथैव च ।१।

३३४-वेङ्कटेशद्वादशनाम-स्तत्रोम् ।

श्रीवेङ्कटेशमतिसुन्दरमोहनाङ्गं श्रीभूमिकान्ममर-विन्ददलायताक्षम् । प्राणप्रियं परमकारुण-कम्बुराशि

ब्रह्मेशवन्द्यममृतं वरदं नमामि । १ । अखिल-विबुध-
वन्द्य विश्वरूपं सुरेशमभय वरदहस्तं कञ्जजाक्षं रमेशम् ।
जलधरनिभकान्ति श्रीमहिभ्यां समेतं परमपुरुषमाद्यं
वेङ्कटेशं नमामि । २ । वेङ्कटेशो वारिजासनवन्दितः ।
स्वामि-पुष्करिणीवासः शङ्ख-चक्र-गदाधरः । ३ । पीता-
म्बरधरो देवो गरुडारूढशोभित । विश्वात्मा विश्वलोके-
श विजयो वेङ्कटेश्वरः । ४ । एतानि द्वादशनामानि त्रि-
सन्ध्यं यः पठेन्नरः । सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णोः सायुज्म-
याप्नुयात् ।५।

इति देवस्तोत्राणि ।

तीर्थस्तोत्राणि ।

३३५–तीर्थ–स्तुतिः ।

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्मदे
सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु । १ । कुरुक्षेत्र
गया-गङ्गा-प्रभास-पुष्कराणि च । एतानि पुण्यतीर्थानि
स्नानकाले भवन्त्विह ।२। त्वं राजा सर्वतीर्थानां त्वमेव
जगतः पिता । याचितं देहि मे तीर्थ तीर्थराज ! नमोऽस्तु ते
।३। पुष्कराद्यानि तीर्थानि गं गाद्याः सरितस्तथा ।
आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम ।४। विष्णु-
पादाब्ज-सम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि । धर्मद्रवेति विख्या-

ते पापं मे हर जाह्नवि ।५। गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि । मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ।६।

३३६–कुत्र तीर्थानि निवसन्ति ?

विप्राणां चरणौ तीर्थं गवां पृष्ठं तथा मतम् । एते यत्रैव तिष्ठन्ति तच्च तीर्थमुदाहृतम् ।१। बालानां च शिरस्तीर्थं स्व तीर्थं चक्षुरुच्यते । तथैव दक्षिणः कर्ण-स्तीर्थं स्वं परिगण्यते ।२। सत्यवाक्यं तु वात्तीर्थं पुरा-णपठनं तथा । देवलिंगधरं चित्तं तीर्थमित्युच्यते बुधैः ।३। असच्चिन्ताविरहितं मानसं तीर्थमुच्युते । दातृणां च करौ तीर्थं देवपूजाकरौ तथा ।४। अन्तस्तीर्थं भूतशु-द्धया प्राणायामाच्च नातिके । मंत्रितं चामनं तीर्थं पैतृ-की वसतिस्तथा ।५। तत्रापाढः कार्तिकश्च माघो वै-शाख एव च । तीर्थान्युक्तानि मासा वै चत्वारोऽभीष्ट-दायकाः । ६ । पुराणपठनं यत्र यत्र पद्मवनानि च । तत्र तीर्थं समाख्यातं गुरुदेवगृहं तथा । शालग्रामशिला यत्र तीर्थं तत्क्रोशयुग्मकम् ।७।

इति श्रीवृहद्धर्मपुराणे कुत्र तीर्थानि निवसन्ति एतरयोत्तरं सम्पूर्णम् ।

३३७–समुद्रस्तुतिः ।

वत्से मा गा विषादं श्वसनमुरुजवं सन्त्यजोर्ध्वप्रवृत्तं कम्पः को वा गुरुस्ते किमिह बलभिदा जृम्भितेनात्र

पाहि । प्रत्याख्यानं सुराणामिति भयशमनच्छद्मना कार-यित्वा यस्मै लक्ष्मीमदाद्वः स दहतु दुरितं मन्थमुग्धः प-योधिः ।१।

३३८–गङ्गास्तोत्रम् ।

पर्वतभेदि पवित्रं जैत्रं नरकस्य बहुमतं गहनम् । हरिमिव हरिमिव हरिमिव सुरसरिदम्भः पतन्नमत ।१। इयं चिद्रूपापि प्रकटजडरूपा भगवतो यदीयाम्भोविन्दुर्वितरति च शंभोरपि पदम् । पुनाना धुन्वाना निखिलमपि नानाविधमघं जगत्कृत्स्नं पायादनुदिनमपायात्सुरधुनी ।२। वाते वापि यदंगसंगमवशाच्छ्रीशंभुरूपप्रदे गौरी रुष्यति तुष्यति त्वहिपतिर्विन्ध्याटवी शोचति । चन्द्रस्त्रस्यति कुप्यते हरिरपि ब्रह्मा परं शंकते सा गंगा निखिलं कलंकनिचयं भगं तरंगैर्नयेत् । ३ । मुक्ताभा नृकपालशुक्तिषु जटावल्लीषु मल्लीनिभा वह्नौ लाजनिभा दृशौ मणिनिभा भोगोत्करे भोगिनाम् ।। नृत्यावर्तविवर्तनैरितपयः संमूर्छनोच्छालिताः खेलंतो हरमूर्ध्नि पान्तु भवतो गंगापयोबिन्दवः ।४। एषा धर्मपताकिनी तटसुधासेवावसन्नाकिनी शुष्यत्पातकिनी भगीरतथतपः साफल्यहेवाकिनी । प्रेमारूढपिनाकिनी गिरिसुतासाकेकरालोकिनी पापाडम्बरडाकिनी त्रिभुवनानन्दाय मन्दाकिनी ।५।

३३९-गङ्गा-स्तुतिः ।

शैलेन्द्रादवतारिणी निजजले मज्जज्जनोत्तारिणी पारावारविहारिणी भव-भय श्रेणी-समुत्सारिणी । शेषाहेरनुकारिणी हरशिरोवल्लीदलाकारिणी काशीप्रान्तविहारिणी विजयते गङ्गामनोहारिणी ।

३४०-यमुना-स्तुतिः ।

अयि मधुरे मधुमोद-विलासिनि शैलविहारिणि वेगभरे परिजनपालिनि दुष्टनिषूदिनि वाञ्छितकाम विलासधरे । व्रजपुरवासि-जनार्दितपातक-हारिणि विश्वजनोद्धरिके जय यमुने जय भीतिनिवारिणि सङ्कटनाशिनि पावय माम् ।

इति तीर्थस्तोत्राणि ।

शास्त्र स्तोत्राणि ।

३४१-वेदोपवेदाः ।

त्वमेव ह्यस्य सर्वस्य विधानस्य स्वयम्भुवः । अचिन्त्यस्याप्रमेयस्य कार्यतत्त्वार्थवित्प्रभो । १ । चरणव्यूहे यदुक्तं चातुर्वेद्यं चत्वारो वेदा विज्ञाता भवन्ति । ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वणवेदश्चेति । तत्र ऋग्वेदस्यायुर्वेदः उपवेदः । अत्रिगोत्रम् । अस्य स्वरूपं तु पद्मपत्रायताक्षः सुविभक्तग्रीवः कुंचितकेशश्मश्रुः श्वेतवर्णः

पञ्चबित स्तमितः । अस्य मधुच्छन्दा ऋषिः सोमो देवता गायत्री छन्दः । यजुर्वेदस्य धनुर्वेद उपवेदः । काश्यपगोत्रम् । स्वरूपं तु पिङ्गाक्षः कृशमध्यः स्थूलगलकपोलस्ताम्रवर्णः षट् प्रादेशदीर्घः । अस्य परमेष्ठी ऋषिः इन्द्रो देवता त्रिष्टुप् छन्दः । सामवेदस्य गन्धर्ववेद उपवेदः । भारद्वाजगोत्रम् । स्वरूपं तु स्त्रग्वी शुचिः बृहच्छरीरः काञ्चननयनः आदित्यवर्णः षडरत्निमात्रः । अस्य गौतमऋषिरग्निर्देवता जगती छन्दः । अथर्वणवेदस्य शिल्पशास्त्राद्युपवेदः । वैखानससोत्रम् । स्वरूपं तु तीक्ष्णश्चण्डः कामरूपी विश्वात्मा नीलोत्पलवर्णः दशारत्निमात्रः । अस्य दध्यङ्गाथर्वणऋषिः आपो देवता अनुष्टुप् छन्द ।

३४२-वेदयोषितः ।

ईतिर्धृतिः शिवा शक्तिश्चतस्रो वेदयोषितः । भवन्ति यज्ञकालेऽस्मिन्नीशानादौ व्यवस्थिताः ।१।

३४३–अष्टादश पुराणानिः ।

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं भागवतं तथा । तथाऽन्यन्नारदीयं व मार्कण्डेयं च सप्तमम् ।१। आग्नेयष्टमं प्रोक्तं भविष्यं नवमं तथा । दशमं ब्रह्मवैवर्तं लिङ्गमेकादशं तथा । २ । वाराह द्वादशं प्रोक्तं स्कान्दं चात्र त्रमोदशम् । चतुर्दशं वामनं च कौर्मं पञ्चदशं तथा ।

मात्स्यं च गारुडं चैव ब्रह्माण्डमष्टादशं तथा ।३।

३४४–एकश्लोकी महाभारतम् ।

आदौ पाण्डव-धार्तराष्ट्रजननं लाक्षागृहे दाहनं द्यूते श्रीहरणं वने विचरणं मत्स्यालये वर्तनम् । लीला-गोग्रहणं रणे विहरणं सन्धिक्रियाजृम्भणं पश्चाद् भीष्म-सुयोधनादि-हननं चैतन्महाभारतम् ।

३४५–सप्तश्लोकी गीता ।

श्रीगणेशाय नमः । ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् । यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ।१। स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च । रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः ।२। सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् । सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ।३। कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः । सर्वस्त धातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् । ४ । ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् । छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित । ५ । सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च । वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ।६। मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु । मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ।७।

३४६—एकश्लोकी रामायणम् ।

आदौ राम-तपोवनादि-गमनं हत्वा मृगं काञ्चनं वै-
देही-हरणं जटायुमरणं सुग्रीव-सम्भाषणम् । वालीनि-
र्दलन समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनं पश्चात् रावण-कुम्भ-
कर्ण हननं चैतद्धि रामायणम् ।

३४७—चतुःश्लोकि भागवतम् ।

श्रीभगवानुवाच । ज्ञानं परमगुह्यं ते यद्विज्ञानस-
मन्विमम् । सरहस्यं तदङ्गं च गृहाण गदितं मया ।१।
यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः । तथैव तत्वविज्ञा-
नमस्तु ते मदनुग्रहात् ।२। अहमेवासमेवाग्रे नान्यद्य-
त्सदसत्परम् । पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्य-
हम् ।३। ऋतेऽर्थं यत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि । त-
द्विद्यादात्मनो मायां यथाभासो यथा तमः । ४ । यथा
महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु । प्रविष्टान्यप्रविष्टानि
तथा तेषु न तेष्वहम् ।५। एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजि-
ज्ञासुनात्मनः । अन्वयव्यतिरेकाभ्यां गत्स्यात्सर्वत्र सर्वदा
।६। एतन्मतं समातिष्ठ परमेण समाधिना । भवान्कल्प-
विकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित् ।७।

३४८—एकश्लोकी भागवतम् ।

आदौ देव कि देवगर्भ जननं गेपीगृहे दर्धनं माया-
पूतानि जीवितापहरणं गोवर्द्धनोद्धारणम् । कंसच्छेदन

कौरवादिहननं कुन्तीसुतापालन एतद्भागवतं पुराणकथितं श्रीकृष्णलीलामृतम् ।

३४९-अर्द्धश्लोकी भागवतम् ।

श्लोकार्द्धेन तया प्रोक्तं भगवत्याऽखिलार्थदम् ।
'सर्वं खल्विदमेवाऽहं नाऽन्यदस्ति सनातनम् ।'

३५०-सार्द्धश्लोकी दुर्गा ।

मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् । शक्रादि-स्तुमिकं चैव दूतसंवाद एव च ।१। शुम्भराजवधश्चैव नारायणकृत-स्तुतिः । सार्द्धपाठमिदं प्रोक्तं नव-पाठफलप्रदम् ।२।

इति शास्त्रस्तोत्राणि ।

ऋषि स्तोत्राणि ।

३५१-ऋषिस्तुतिः ।

भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरंगिराश्च मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः । रैभ्यो मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः कुर्वन्तु सर्वे मम-सुप्रभातम् । १ । सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिङ्गलौ च । सप्त स्वराः सप्त रसातलानि कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् । २ । सप्तार्णवाः सप्त कुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त । भूरादि कृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् । ३ । पृथ्वी

सगन्धा सरसस्तथापः स्पर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः ॥ नभः सशब्दं महता सहैव कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥४॥ इत्थं प्रभाते परमं पवित्रं पठेत्स्मरेद्वा शृणुयाच्च तद्वत् ॥ दुःखप्रनाशस्त्विह सुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात् ॥५॥

३५२–सप्तर्षिस्मरणम् ।

कश्यपोऽत्रिर्भरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ गौतमः । जमदग्निर्वसिष्ठश्च सप्तैते ऋषयः स्मृताः ॥१॥ तेषां वंशानुवंशानां वेदमन्त्रस्य द्रष्टृणाम् । संस्मरामि सदा भक्त्या धर्ममार्गप्रदर्शकान् ॥२॥

३५३–राजर्षिस्तुतिः ।

कर्कोटस्य नागस्य दमयन्त्या नलस्य च । ऋतुपर्णस्य राजर्षेः कीर्तनं कलिनाशनम् ।

३४५–व्यास स्तुतिः ।

व्यासं वसिष्ठ-नप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् । पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम् ॥१॥ अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः । अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः ।२। नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र । येन त्वया भारततैलपूर्ण प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः ॥ ३ ॥ नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे । चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम्

। ४ । वदन-कमल निर्यद्यस्य पीयूषमाद्यं पिबति जनव-
रोऽयं पातु सोऽयं गिरं मे । वदनवन-विहारः सत्यवत्या
कुमारः प्रणतदुरितहारः शार्ङ्गधन्वावतारः ।

३५५-नारदस्तुतिः ।

जयति जगति मायां यस्य कायाधवस्ते वचन-रच-
नमेकं केवलं चाकलय्य । ध्रुवपदमपि यातो यत्कृपातो
ध्रुवोऽय सकल-कुशलपात्रं ब्रह्मपुत्रं नतोऽस्मि ।

३५६-भृगु-स्तुतिः ।

दैत्यमन्त्री गुरुस्तेषां प्रणवश्च महाद्युतिः । प्रभुस्ता-
राग्रहाणां च-पीडां दहतु मे भृगुः ॥

इति ऋषिस्तोत्राणि ।

देव वृक्ष स्तोत्राणि ।

३५७ तुलसी-स्तुतिः ।

वेवैस्त्वं निर्मिता पूर्वमर्चिताऽसि मुनीश्वरैः । नमो
नमस्ते तुलसि ! पापं हर हरिप्रिये ॥१॥ यन्मूले सर्व-
तीर्थानि यन्मध्ये सर्वदेवताः । यदग्रे सर्ववेदाश्च तुलसि !
त्वां नमाम्यहम् ।२।

३५८-पिप्पल-स्तुतिः ।

अश्वत्थ हुतभुग्वास गोविन्दस्य गदाप्रिय । अशेषं
हर मे पापं वृक्षराज ! नमोऽस्तु ते । १ । मूले ब्रह्मा

त्वचि विष्णुः शाखायां शङ्कर एव च । पत्रे पत्रे सर्व-देवा वासुदेवाय ते नमः ।२।

इति तुलसी आदि देव वृक्ष स्तोत्राणि ।

वेदान्त स्तोत्राणि ।

३५९-निर्वाणषट्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः । मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे । न च व्योमभूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानंदरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ।१। न च प्राणसंज्ञो न वै पञ्चवायुर्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोशः । न वाक्पाणिपादं न चोपस्थपायुश्चिदानंदरूपः शिवो० ।२। न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ मदो नैव मे नैव मात्सर्यभावः । न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षश्चि-दानंद० ।३। न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं न मन्त्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञः । अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता चिदानं० । ४ । न मृत्युर्न शंका न मे जातिभेदः पिता नैव मे नैव माता च जन्म । न बंधुर्न मित्रं गुरु-र्नैव शिष्यश्चिदानन्द० । ५ । अहं निर्विकल्पो निराका-ररूपो विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम् । न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेयश्चिदानन्द० ।६।

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं निर्वाणषट्कं सम्पूर्णम् ।

३६०-आत्मपञ्चकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।। नाहं देहो नेन्द्रियाण्यन्तरंगं नाहंकारः प्राणवर्गो न बुद्धिः । दारापत्यक्षेत्रवित्तादिदूरः साक्षी नित्यः प्रत्यगात्मा शिवोऽहम् ॥१॥ रज्ज्वज्ञानाद्भाति रज्जुर्यथाऽहिः स्वात्माज्ञानादात्मनो जीवभावः । आप्तोक्त्या हि भ्रांतिनाशे स रज्जुर्जीवो नाहं देशिकोक्त्या शिवोऽहम् ॥ २ ॥ आभातीदं विश्वमात्मन्यसत्यं सत्यज्ञानानंदरूपं विमोहात् ॥ निद्रामोहात्स्वप्नवत्तन्न सत्यं शुद्धः पूर्णो नित्य एकः शिवोऽहम् ॥३॥ मत्तो नान्यत्किंचिदत्रास्ति विश्वं सत्यं बाह्यं वस्तु मायोपक्लृप्तम् । आदर्शान्तर्भासमानस्य तुल्यं मय्यद्वैते भाति तस्माच्छिवोऽहम् ।४। नाहं जातो न प्रवृद्धो न नष्टो देहस्योक्ताः प्राकृताः सर्वधर्माः ।। कर्तृत्वादिश्चिन्मयस्यास्ति नाहंकारस्यैवं ह्यात्मनो मे शिवोऽहम् ॥५॥ नाहं जातो जन्ममृत्यु कुतो मे नाहं प्राणः क्षुत्पिपासे कुतो मे ॥ नाहं चित्तं शोकमोहौ कुतो मे नाहं कर्ता बंधमोक्षौ कुतो मे ॥६॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं आत्मपंचकं सम्पूर्णम् ।

३६१-तत्वमसिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । गनः कल्पितमेवेदं जगज्जीवेशकल्पनम् । तदेकं संपरित्यज्य निर्वाणमनुभूयताम् ।१।

सति सर्वस्मिन्सर्वज्ञत्वं सत्यल्पे वा स्वल्पज्ञत्वम् । सर्वाल्पस्याभावे कस्माज्जीवेशौ वा तत्वमसि ॥ २ ॥ सत्यां व्यष्टौ जीयोपाधिः सति सर्वस्मिन्नाशोपाधिः । व्यष्टिसमष्टयोर्ज्ञाने कस्माज्जीवेशौ वा तत्वमसि ।३। सत्याज्ञाने जीवत्वोक्तिर्मायासत्वे त्वीशत्वोक्तिः ॥ मायाविद्याबोधे कस्माज्जीवेशौ वा तत्वमसि ॥ ४ ॥ सति वा कार्ये कारणतोक्तिः कारणत्वे कार्यत्वोक्तिः ॥ कार्यकारणभावे कस्माज्जीवेशौ वा तत्वमसि ॥५॥ सति भोक्तव्ये भोक्ताऽयं स्याद्दातव्ये वा दाता स स्यात् ॥ भोग्यो विध्यो भावे कस्माज्जीवेशौ वा तत्वमसि ॥६॥ सत्यज्ञाने गुरुणा बाध्यं सति द्वैते शिष्यैर्भाव्यम् ॥ अद्वैतात्मनि गुरुशिष्यौ कौ त्यज रे भेदं तत्वमसि ॥७॥ सत्यद्वैते प्राप्तौ यत्नः सति वा द्वैते बाधे यत्नः ॥ द्वैताद्वैते ते सङ्कल्पस्त्यज रे शेषं तत्वमसि ।८। साक्षित्वं यदि दृश्यं सत्यं दृश्यासत्वे साक्षी त्वं कः । उभयाभाव दर्शनमपि किं तूष्णीं भव रे तत्वमसि ॥९॥ अज्ञानामलविग्रहनिजसुखजृम्भणमेतन्नेतरथा ॥ तस्मान्नैवादेयं हेयं तूष्णीं भव रे तत्वमसि ॥१०॥ ब्रह्मैवाहं ब्रह्मैव त्वं ब्रह्मैवैकं नान्यत्किञ्चित् ॥ निश्चत्येत्थं निजसमसुखभुक्तूष्णीं भव रे तत्वमसि ॥ ११ ॥ एतत्स्तोत्रं प्रपठता विचाय गुरु-

वाक्यतः । प्राप्यते ब्रह्मपदवी सत्यं सत्यं न संशयः ।१२।

इति श्रीमत्परहंसकृष्णानन्दसरस्वतीविरचितं
तत्वमसिस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३६२-हृदयबोधनम् ।

श्रीगणेशाय नमः । हृदय सदा स्मर परमवितारं हैमवतीकमितारम् । विषयभ्रमणं विश्रमविधुरं व्यर्थं मास्मकथास्त्वम् । आधिव्याधिशताकुलमनिभृतसुखलोभाहितविविधक्लेशम् । आयुश्चञ्चलकमलदराञ्चलगतजलबिन्दुसदृक्षम् । अशुचिर्निकायेऽवश्यविनाशिनि काये बालिशममता काये नियतापायो न चिरस्थाती भोगेऽप्यसुभगपर्यवसायी । १ । आन्तररिपुवशमशिवोदकं वीतदितर्कं विशति वृथा त्वं किं तव लब्ध तत्प्रेरणया सन्ततविषयभ्रान्त्येयत्या । संकटसंघविदारणनिपुणे शंकरचरणे किंकरशरणे संघटय रतिं संकलय धृतिं सफलय निभृतं जनिलाभं च ।२। संकल्पैकसमुद्भावितजगदुत्पत्यादिभिरात्तविनोदे यस्मिन्नेव महेश्वरशब्दः स्वार्थसमन्वयमजसज्जयति । अखिलांहोपहममिशु भावनमभयदुहन्तं स्मरदेहदहम् करुणामृतरसवरणालयमपि हरिणाकोज्ज्वलमौलिमुपास्व ।३। त्रिजगदतीतं यन्महिमानं त्रय्यपि चकितैवाभिदधाति प्रणमदमर्त्यप्रवरशिरोमणिदीधितिदीपितपादसरोजम् । भक्ताभ्यर्थितसार्थसमर्थं नसा-

मथ्योद्धृतकल्पकदर्पम् कन्दर्पारिमृतेऽन्यः कोऽपि वदान्यो जगति न मान्वो जयति ।४।

३६३-जीवतत्वम् ।

श्रीगणेशाय नमः । अनात्मभिहन्त जडस्वरूपो वाह्यान्तरैरिन्द्रियदुष्टसत्वैः । शरीरकाराभवने निबद्धो विस्मारितो जीव निजस्वरूपः । १ । निद्रा यथा निह्नुतसर्वभावा विस्मारयत्येव जनानुभूतिम् । तथा जनिस्ते परमात्मभावं तस्माज्जनिर्जीव मता सुषुप्तिः । २ । यथा स्फुरन्ती ध्रुवतारिकाऽभ्रे संसूचयन्ती हरितो विभागान । सांयात्रिकं दिक्प्रविमूढमब्धो पारं नयत्येव तदीयनावा ।३। तथेश्वरी शाश्वतदिव्यशक्तिरन्तः स्थिता सन्ततदीप्तिशीला । हिताहितान् साधु विबोधयन्ती नेष्यत्यशंकं पदवीं परां त्वाम् । ४ । त्यक्त्वा निजक्षोभमथैकयानः कुरु प्रयत्नं सततात्रमत्तः । विहाय येनैव हि पारतन्त्र्यं प्रतिष्ठितः स्वे सुलभो महिम्नि । ५ । अन्योक्तिरीतिमाश्रित्य रचितां कवितामिमाम् ॥ रसज्ञा विबुधा नन्दन्त्विति मे प्रार्थना कवेः ।६।

३६४-परा पूजा ।

श्रीगणेशाय नमः । पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वाधारस्य चासनम् । स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं शुद्धस्याचमनं कुतः ।१। निर्मलस्य कुतः स्नानं वस्त्रं विश्वोदरस्य च । निरा-

लंबस्योपवीतं पुष्पं निर्वासनस्य च ।२। निर्लेपस्य कुतो गंधो रम्यस्याभरणं कुतः । नित्यतृप्तस्य नैवेद्यस्तांबूल च कुतो विभोः ॥ ३ ॥ प्रदक्षिणं ह्यनंतस्य ह्यद्वयस्य कुतो नतिः ॥ वेदवाक्यैरवेद्यस्य कुतः स्तोत्रं विधीयते ॥४॥ स्वयं प्रकाशमानस्य कुतो नीराजनं विभोः ॥ अंतर्बहिश्च पूर्णस्य कथमुद्वासनं भवेत् ॥ ५ ॥ एवमेव परा पूजा सर्वावस्थासु सर्वदा । एकबुद्ध्या तु देवेश विधेया ब्रह्मवित्तमैः ।६।

३६५-भ्रष्टाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । विश्वं सत्यं मनुते तनुते कर्माणि लोकसंसिद्ध्यै । वाचा मिथ्या जगदिति जल्पति नो वेत्ति यो महाभ्रष्टः ।१। ब्रह्मैवेदं जल्पदि दोषादोषोत्तमाधमान्पश्यन् । नग्नो भूत्वा विचरस्यवधूतत्वं प्रदर्शय भ्रष्टः ।२। कृत्याकृत्यममेषं त्यक्तुमशक्तं श्रुतिगोचरताम् । आत्मनि जल्पन् हास्यास्पदतामित्येष मानवो भ्रष्टः ।३। पाशाष्टकसंकष्टश्लिष्टतनुर्मृष्टभोजनप्रीतः । शिष्टोऽहं मन्वानः कष्टमहो दुष्टमानवो भ्रष्टः । ४ । आत्मैवेद जल्पँल्लोकोक्तीरसहवानमेधावी । स्तुतिवाक्यानि श्रोतुं धावंस्तुष्टो न किं भवेद्भ्रष्टः ।५। यस्मिन् स्वस्य च निष्ठा तद्धर्मिष्ठा न शिष्टगणनायाम् । कुर्वन्कर्म हतोऽयं यद्यपि शिष्टो न कि भवेद्भ्रष्टः ।६। कर्तृत्वं

भोक्तृत्वं मन्वानः स्वात्मनि प्रभौ शंभोः। रोदिति हा किं कृतमिति किं वा भोक्तव्यमित्यसौ भ्रष्टः ।७। चिन्मात्रं स्वात्मानं देहं मन्वान एजते यमतः। सर्वत्मानमबुद्ध्वा ब्रह्मारपि स्यादहो किल भ्रष्टः ।८। भ्रष्टाष्टकमेतद्यत्प्रविचारयतीह मानवो धन्यः। मान्यः स्याल्लोकेषु भ्रष्टत्वं वेत्ति निजचारित्रात् ।९।

इति श्रीमत्कृष्णानन्दसरस्वतीविरचितं भ्रष्टाष्टकं सम्पूर्णम्।

३६६-शिष्टस्तोत्रम्।

श्रीगणेशाय नमः। भज विश्रान्तिं त्यज रे भ्रांतिं निश्चिनु शैवं निजरूपम्। हेयादेयातीतं सच्चित्सुखरूपस्त्वं भव शिष्टः ।१। दृश्यमशेषं त्वत्तोऽभिन्नं मा भैषी किल भूमानम्। विद्धयात्मानं वेदनरूपं वेदशिरःस्थं भव शिष्टः ।२। तृणवत् त्यज धनवनितापुत्रान् लोकं शोकं भेदभवम्। इदमहमित्थं कलनां हित्वा पूर्णानन्दा भव शिष्टः ।३। कृत्याकृत्ये त्यज रे दूरे विधिगोचरतां माऽगास्त्वम्। मानागोचररूपं ज्ञात्वा किं त्वं कर्त्ता भव शिष्टः ।४। लोकविलक्षणचरितो भूया लोकातीतं पदमिच्छन्। पावय सकलां पृथिवीमेनामात्मारामो भव शिष्टः ।५। निन्दास्तोत्रे मानामानौ समदृष्टेस्ते किं कुरुताम्। कुरुतां लोकः कामं स्वेष्टं का ते हानिर्भव शिष्टः ।६। शैवः शाक्तो गणपतिभक्तो वैष्णवसौरादिति

नाना। अज्ञात्वत्थं जातो लोके स त्वं शम्भुर्भव शिष्टः ।७। जलबुद्बुदवज्जगदिदमखिलं पश्यन्नात्मनि तिष्ठ त्वम्। को वा मोहः शोकः को वा द्वन्द्वशस्तव भव शिष्टः ।८। अजपामन्त्रं देशिकवचनाल्लब्ध्वा देवं स्वात्मानम्। ज्ञात्वा सहजावस्थायां वस भावातीतो भव शिष्टः ।९। शिष्टस्तोत्रं ब्रह्मिष्ठानां तुष्टिकरं स्यादिति कलये। उक्तावस्था सर्वेषां स्याद्गुरुकृपया किल बुद्धिमताम् ।१०।

इति श्रीकृष्णानन्दसरस्वतीविरचितं शिष्टस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

३६७-कामनापञ्चकम्।

श्रीगणेशाय नमः। योऽत्रावतीर्य शकलीकृतदैत्यकीर्तिर्योऽयञ्च भूसुरवरार्चितरम्यमूर्तिः। तद्दर्शनोत्सुकधियां कृततृप्तिपूर्तिः सीतापतिर्जयति भूपतिचक्रवर्ती ।१। ब्राह्मी मृतेत्यविदुषामपलापमेतत् सोढुं न चार्हति मनो मम निःसहायम्। वाञ्छाम्यनुप्लवमतो भवतः सकाशाच्छ्रुत्वा तवैव करुणार्णवरामनाम ।२। देशाद्विषोऽभिभवितुं किल राष्ट्रभाषां श्रीभारतेऽमरगिरं विहितुं खरारे। याचामहेऽनवरतं दृढसंघशक्तिं नूनं त्वया रघुवरेण समर्पणीया ।३। त्वद्भक्तिभावितहृदा दुरितं द्रुतं वै दुःखं च भो यदि विनाशयसीह । ।गोभूसुरामरगिरां दयितोऽसि चेत्त्वं नूनं तदा तु विपदं हर

चिन्तितोऽव्य ।४। बाल्येऽपि पितृवचसा निकषा मुनी-
शात् गत्वा रणेष्ववधि येन च ताटिकाऽऽख्या । निर्भ-
र्त्सिताश्च जगतीतलदुष्टसंघाः श्रीर्वेदवाक्प्रियतमोऽवतु
वेदवाचम् ।५।

३६८-कौपीनञ्चकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । वेदान्तवाक्येषु सदा रमन्ते भिक्षा-
न्नमात्रेण च तुष्टिमन्तः । अशोकवन्तः करुणैकवन्तः खलु
कौपीनवन्तः भाग्यवन्तः ।१। मूलं तरोः केवलमाश्रयन्तः
पाणिद्वये भोक्तुममत्रयन्तः । कन्थामपि स्त्रीमिव कुत्सय-
न्तः कौपीनवन्तः ख० । २ । देहाभिमानं परिहृत्य दूरा-
दात्मानमात्मन्यवलोकयन्तः । अहर्निशं ब्रह्मणि ये रम-
न्तः कौहीनवन्तः ख० ।३। स्वानन्दभावे परितुष्टिमन्तः
स्वशान्तसर्वेन्द्रियवृत्तिमन्तः । नान्तं न मध्यं न बहिः
स्मरन्तः कौपीनवन्तः ख० ।४। पञ्चाक्षरं पावनमुच्च-
रन्तः पतिं पशूनां हृदि भावयन्तः । भिक्षाशना दिक्षु
परिभ्रमन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ।५।

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं कौपीनपञ्चकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

३६९-विज्ञाननौका ।

श्रीगणेशाय नमः । तपोयज्ञमानादिभिः शुद्धबुद्धि-
र्विरक्तो नृपादौ पदे तुच्छबुद्ध्या । परित्यज्य सर्वं यदा-
प्नोति तत्त्वं परं ब्रह्म नित्यं तदेवाहमस्मि ।१। दयालुं

गुरुं ब्रह्मनिष्ठं प्रशान्तं समाराध्य मत्या विचार्य स्वरूपम्। यदाप्नोति तत्वं निदिध्यास्य विद्वान्परं ब्रह्म० ।२। यदानन्दरूपं प्रकाशस्वरूपं निरस्तप्रपञ्चं परिच्छेदशून्यम्। अहं ब्रह्मवृत्त्यैकगम्यं तुरीयं परं ब्रह्म० ।३। यदज्ञानतो भाति विश्वं समस्तं विनष्टं च सद्यो यदात्मप्रबोधे। मनोवागतीतं विशुद्धं विमुक्तं परं ब्रह्म० ।४। निषेधे कृते नेति नेतीति वाक्यैः समाधिस्थितानां यदा भाति पूर्णम्। अवस्थात्रयातीतनेकं तुरीयं परं ब्रह्म० ।५। यदानन्दलेशैः समानन्ति विश्वं यदा भाति सत्व तदा भाति सर्वम्। यदालोचने रूपमन्यत्समस्तं परं ब्रह्म० ।६। अनन्तं विभुं सर्वयोनिं निरीहं शिवं संगहीनं यदोंकारगम्यम्। निराकारमत्युज्ज्वलं मृत्युहीनं परं ब्रह्म० ।७। यदानन्दसिंधौ निमग्नः पुमान्स्यादविद्याविलासः समस्तप्रपञ्चः। यदा न स्फुरत्यद्भुतं यन्निमित्तं परं ब्रह्म० ।८। स्वरूपानुसन्धानरूपां स्मृतिं यः पठेदादराद्भक्तिभावो मनुष्यः। शृणोतीह वा नित्यमुद्युक्तचित्तो भवेद्विष्णुरत्रैव वेदप्रमाणात् ।।९।। विज्ञाननावं परिगृह्य कश्चित्तरेद्यदज्ञानमयं भवाब्धिम्। ज्ञानासिना यो हि विछिद्य तृष्णां विष्णोः पदं याति स एव धन्यः ।१०।

इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचिता विज्ञाननौका सम्पूर्णा।

३७०-परिवर्तनम् ।

श्रीगणेशाय नमः । प्रातर्बभूवारुणकायकान्तिर्मध्ये-दिनं प्रौढवयो विवस्वान् । संशन्नितीवैकदशो न लोकः सायं शनैः सोऽस्तमहो प्रयाति ।१। भृङ्गालिवीणाविहितानुरागः सौगन्धिनामोदितभूविभागः । राजा ऋतूनामपि वै वसन्तः क्कास्ते वियोगाकुलकृद्दिगन्तः ।२। अहो निदाघानलज्वालमाला न कस्य हा तापकलापदाऽभूत् । या ते पयोदं तु पयोदकाले सा नोरसा त्यक्तरसा जगाम ।३। न कोऽपि कुत्रापि विलोक्यतेऽत्र नैवानुगच्छेत् परिवर्तनं यः । श्रीरामकृष्णावपि जग्मतुश्चेत्कस्याभिधेयं भुवि सुस्थिरत्वम् ।४। अन्यस्य का वास्ति विचारवार्ता स्वयं परात्मा परिवृत्तिमेति । आकारहीनोऽपि विकारभावं प्रयाति लोके कथमन्यथाऽसौ । ५ । जानन्नहो सर्वमनित्यमेतद्वसुन्धरायाः खलु वस्तुजातम् । कस्मादकस्मादनुरागरज्ज्वा बद्धोऽत्र हा मूढमनोमृगोऽयम् । ६ ।

३७१-वेदान्तस्तोत्रम् ।

श्रीमन्मध्वमते हरिः परतरः सत्यं जगत् तत्वतो भेदो जीवगणा हरेरनुचरा नीचोच्चभावं गताः । मुक्तिर्नैज-सुखानुभूतिरमला भक्तिश्च तत्साधनं ह्यक्षादि-त्रि-

स्वयं प्रमाणमखिलाऽऽम्नायैकवेद्यो हरिः ।

इति वेदान्तस्तोत्राणि ।

प्रकीर्ण स्तोत्राणि ।

३७२-गुरुस्तुतिः ।

अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराऽचरम् । तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः । १ । अखण्डानन्द-बोधाय शिष्य-सन्ताप-हारिणे । सच्चिदानन्दरूपाय तस्मै श्रीगुरुवे नमः । २ । अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः ।३। गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः । गुरः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः ।४।

३७३-गुरुतत्त्वविवेचनम् ।

अन्धेनाऽन्धीकृतं विश्वं सचक्षुस्तु सचक्षुषम् । विद्दक्षा चेद्भज त्वं तु देशिकेन्द्रं सचक्षुषम् ।१। अन्धस्य गुरुरेकाक्षस्तस्य द्व्यक्षो गुरुर्मतः । द्व्यक्षाणामपि सर्वेषां गुरुस्त्र्यक्षो न तत्समः । २ । सहस्राक्षादयः सर्वे द्व्यक्षा एव हि केवलम् । कार्यध्येयदृशो यस्मात् त्र्यक्षशिष्यपदे स्थिताः ।३। त्र्यक्षस्तु भगवानादिपुरुषः शङ्करो भवः । सृष्ट्वा सर्वाणि भूतानि कायमध्येऽथ संदिशन् । ४ । उभयातीतममलं तृतीयाक्षस्य गोचरम् । ददाति प्रार्थितस्तुष्टः श्रीगुरुः परमेश्वरः ।५। स आदिनाथो भगवान्-

नादिर्ज्ञानाम्बुधिः स्वात्मरतिर्महात्मा । श्रीदेशिकेन्द्रः करुणाम्बुराशिर्नानास्वरूपैश्चरतीह लोके । ६ । वकचिच्च किञ्चित् कुरुते मनस्वी वकचिन्न किंचित् कुरुते प्रमत्तः । बालो यथा क्रीडति सर्वलोके तथैव स क्रीडति पामरेषु ।७। स लभ्यते केनचिदेव पुंसा विज्ञायते केनचिदेव पुंसा । प्रस्तूयते केनचिदेव पुंसा शृणोति वा तं स नरोऽपि धन्यः ।८।

इति श्रीकृष्णानन्दयतिविरचितं गुरुतत्वविवेचनं सम्पूर्णम् ।

३७४--गुर्वष्टम् ।

वन्देऽहं सच्चिदानन्दं भेदातीतं जगद्गुरुम् । नित्यं पूर्णं निराकारं निर्गुणं सर्वसंस्थितम् । १ । परात्परतरं परं ध्येयं नित्यमानन्द-कारणम् । हृदयाकाशमध्यस्थं शुद्धं-स्फटिक-सन्नि भम ।२। अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराऽचरम् । तत्पदं दर्शितं तेन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।३। गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः । गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ।४। अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।५। चैतन्यं शाश्वतं शान्तं व्योमातीतं निरञ्जनम् । बिन्दु-नादकलातीतं तस्मै श्रीगुरवे नमः । ६ । अनेक जन्म-सम्प्राप्त-कर्मबन्ध-विदाहिने । आत्मज्ञान-प्रदानेन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।७। शिष्याणां मोक्षदानाय लीलया

देहधारिणे । सदेहेऽपि विदेहाय तस्मै श्रीगुरवे नमः ।८। गुर्वष्टकमिदं स्तोत्रं सायं-प्रातस्तु यः पठेत् । स विमुक्तो भवेल्लोकात् सद्गुरो कृपया ध्रुवम् ।६।

इति श्रीगार्ग्यमुनि द्विजेन्द्र' कवि-सङ्कलितं गुर्वष्टकं सम्पूर्णम् ।

३७५—प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । प्रातःस्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् । यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ।१। प्रातर्भजामि मनसो वचसामगम्यं वाचो विभाति निखिला यदनुग्रहेण । यन्नेति नेति वचनैर्निगमा अवोचुस्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् । २ । प्रातर्नमामि तपसः परमर्कवर्णं पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् । यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्तौ रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ।३। श्लोकत्रयमिदं पुण्यं लोकत्रयविभूषणम् । प्रातःकाले पठेद्यस्तु स गच्छेत्परमं पदम् । ४ ।

इति श्रीभगवत्पादाचार्यविरचितं प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

३७६-भगवत्प्रातःस्मरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः । प्रातः स्मरामि फणिराजतनौ शयानं नागामरासुरनरादिजगन्निदानम् । वेदैः सहामरगणैरुपगीयमानं कांतारकेतनवतां परमं निधानम्

।१। प्रातर्भजामि भवसागरवारिपारं देवर्षिसिद्धिनिवहै-र्विहितोपहारम् । संदृप्तदानवकदम्बमदापरं सौन्दर्य-राशिजलराशिसुताविदारम् । २ । प्रातर्नमामि शरदम्ब-रकान्तिकान्तं पादारविन्दमकरन्दजुषां भवान्तम् । ना-नावतारहृतभूमिभरं :कृतान्तं पाथोजकम्बुरथपादकरं प्र-शान्तम् । ३ । श्लोकत्रयमिदं पुण्यं ब्रह्मानन्देन कीर्तित-म । यः पठेत् प्रातरुत्थाय सर्वपापैः प्रमुच्यते ।४।

इति श्रीब्रह्मानन्दने विरचितं भगवत्प्रातःस्मरणम् ।

३७७-प्रातर्दर्शनम् ।

कपिलां दर्पणं धेनुं भाग्यवन्तं च भूपतिम् । आ-चार्यम् अन्नदातारं प्रातः पश्येद् बुधो जनः । १ । श्रोत्रि-यं सुभगा गा च अग्निमग्निर्चितिं तथा । प्रातरुत्थाय यः पश्येदापद्भ्यः स विमुच्यते ।२।

३७८-प्रभाते कर दर्शनम् ।

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती । करमूले तु गोविन्दः प्रभाते कर-दर्शनम् ।

३७९-भगवत्स्तुतिः ।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव । त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेवत्वमेव सर्वं मम देवदेव। पिता माता गुरुर्भ्राता सखा बन्धुस्त्वमेव मे । विद्या स-त्कर्म वित्तं च पुरस्पृष्ठे च पार्श्वयोः ।

३८०—सत्संगमहत्त्वम् ।

महानुभावसंसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः । रथ्याम्बु जाह्नवीसंगात्त्रिदशैरपि वंद्यते ।१। महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः । पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम् । २ । मलयाचलसंगेन ह्विन्धनं चन्दनायते । तथा सज्जनसंगेन दुर्जनः सुजनायये । ३ । चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमाः । चन्द्रचन्दनयोर्मध्ये शीतलं साधुसंगतिः । ४ । साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूता हि साधवः । कालेन फलते तीर्थं सद्यः साधुसमागमः । ५ । करोति निर्मलाधारस्तुच्छस्यापि महर्घताम् । अम्बुनो बिन्दुरल्पोऽपि शुक्तौ मुक्ताफलं भवेत् । ६ । मन्दोऽप्यमन्दतामेति संसर्गेण विपश्चितः । पंकच्छिदः फलस्येव निकर्षणाविलं पयः । ७ । अलब्ध्वाऽपि धनं राज्ञः संश्रिता यान्ति संपदम् । महादसमीपस्थं पश्य नील वनस्पतिम् ।८।

३८१—सत्यरूपस्तुतिः ।

सत्यरूपं सत्यसन्धं सत्यनारायणं हरिम् । यत्सत्यत्वेन जगतस्तं सत्यं त्वां नमाम्यहम् । १ । त्रैलोक्यचैतन्यमयादिदेव ! श्रीनाथ ! विष्णो भवदाज्ञया वै । प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ।२।

३८२-सप्तचिरजीविस्तुतिः।

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः। कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः।१। सप्तैतान् संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम्। जीवेद् वर्षशतं सोऽपि सर्वव्याधिविवर्जितः।२।

३८३-बन्दीमोचनस्तोत्रम्।

श्रीगणेशाय नमः। ॐ अस्य श्रीबन्दीमोचनमन्त्रस्य कण्वऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः ह्रीं बीजम्। ह्रूं कीलकम्। मम बन्दीमोचनार्थं जपे विनियोगः। ॐ ह्रीं ह्रूं बन्दीदेव्यै नमः। अष्टोत्तरशतं जपः। बन्दीं देवीं नमस्कृत्य वरदाभयशोभिताम्। तदग्र्यां शरणं गच्छे शीघ्रं मोक्षं ददातु मे।१। बन्दी कमलपत्राक्षी लोहशृङ्खलभञ्जिनी। प्रसादं कुरु मे देवि शीघ्रं०।२। त्वं बन्दी त्वं महामाया त्वं दुर्गा त्वं सरस्वती। त्वं देवी रजनी चैव शीघ्रं०।३। संसारतारिणी बन्दी सर्वकामप्रदायिनी। सर्वलोकेश्वरी देवी शीघ्रं० मोक्षं ददातु मे।४। त्वं ह्रीस्त्वमीश्वरी देवी ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी। त्वं वै कल्पक्षयं कर्त्री शीघ्रं मोक्षं ददातु मे।५। देवी धात्री धरित्री च धर्मशास्त्रार्थभाषिणी। दुःश्वाम्बराङ्गिणी देवी शीघ्रं०।६। नमोऽस्तु ते महालक्ष्मि रत्नकुण्डलभूषिते। शिवस्यार्धाङ्गिनी चैव शीघ्रं०।७।

नमस्कृत्य महादुर्गां भया दुत्तारिणीं शिवाम् । महादुःखहरां चैव शीघ्रं० ।८। इदं स्तोत्रं महापुण्यं यः पठेन्नित्यमेव च । सर्वबन्धविनिर्मुक्तो मोक्षं च लभते क्षणात् । ९ ।

इति श्रीरुद्रयामले बन्दीमोचनस्तोत्रं समाप्तम् ।

३८४-भगवद्भक्तस्मरणम् ।

प्रह्लाद-नारद-पराशर-पुण्डरीक व्यासाऽम्बरीष-शुक-शौनक-भीस्म-दाल्भ्यान् । रुक्मा-ऽङ्गदा-र्जुन-वसिष्ठ विभीषणादीन् पुण्यानिमान् परमभागवतान् स्मरामि ।

३८५-पुण्यजनस्तुति ।

पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः । पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोको जनार्दनः । १ । अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः । कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ।२। सप्तैतान्संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम् । जीवेद्वर्षशतं सोऽपि सर्वव्याधिविवर्जितः । ३ । अहल्या द्रौपदी सीता तारा मन्दोदरी तथा । पंचकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम् । ४ । अविमुक्तचरणयुगलं दक्षिणमूतचश कुक्कुटचतुष्कम् ॥ स्मरणं वाराणस्या निहन्ति दुःस्वप्नमशकुनं च ॥५॥

३८६-ब्राह्मणलक्षणम् ।

शान्ताःसन्तःसुशीलाश्च सर्वभूतरहिते रताः ॥ क्रोधं कर्तुं न जानन्ति एतद्ब्राह्मणलक्षणम् ॥१॥ सान्ध्योपासनशीलश्च सौभ्यचित्तो दृढव्रयः ॥ समः परेषु च स्वेषु

एतद्ब्राह्मणलक्षणम् ।२। एकाहारश्च सन्तुष्टः स्वल्पाशी स्वल्पमैथुनः । ऋतुकालाभिगामी च एतद्ब्राह्मणलक्षणम् ।३। सत्यं ब्रह्म तपो ब्रह्म ब्रह्म चेन्द्रियनिग्रहः । सर्वभूतदया ब्रह्म एतद्ब्राह्मणलक्षणम् ।४। योगस्तपो दमो दानं सत्यं शौचं दया श्रुतिः । विद्या विज्ञानमास्तिक्यमेतद्ब्राह्मणलक्षणम् ।५।

३८७–असज्जनसम्पर्कनिन्दा ।

अहो दुर्जनसंसर्गान्मानहानि पदे पदे । पावको लोहसंगेन मुद्गरैरभिहन्यते । १ । अन्तर्मलिनसंसर्गाच्छुतवानपि दुष्यति । यच्चक्षुःसन्निकर्षेण कर्णोऽभूत्कुटिलाश्रयः दुष्टता दुष्टसंसर्गाददुष्टमपि गच्छति । सुराबिन्दुनिपातेन पंचगव्यघटो यथा । ३ । अणुरप्यसत्तां संगो सद्गुण हन्ति विस्तृतम् । गुणरूपांतरं याति तक्रयोगाद्यथा पयः । ४ । दुर्वृत्तः क्रियते धूर्तैः श्रीमानात्मविवृद्धये । किं नाम खलसंसर्गः कुरुते नाश्रयाशवत् ।५। आनन्दमृगदावाग्निः शीलशाखिमदद्विपः । ज्ञानदीपमहावायुरयं खलसमागमः । ६ । असत्संगाद्गुणज्ञोऽपि विषयासक्तमानसः । अकस्मात्प्रलयं याति गीतरक्तो यथा मृगः । ७ । आहृत्य रक्ष्यमाणापि यत्नेनान्तविरागिणी । असन्मैत्री च वेश्या च श्रीश्च कस्य कदा स्थिरा ।८।

३८८-कार्तवीर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । कीर्तवीर्यः खलद्वेषी कृतवीर्यसुतो बली । सहस्रबाहुः शत्रुघ्नो रक्तवासा धनुर्धरः ।१। रक्तगन्धो रक्तमाल्यो राजा स्मर्तुरभीष्टदः । द्वादशैतानि नामानि कार्तवीर्यस्य यः पठेत् । २ । संपदस्तस्य जायन्ते जनास्तस्य वशंगताः । आनयत्याशु दूरस्थं क्षेमलाभयुतं प्रियम् । ३ । कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रभृत् । तस्य स्मरणमात्रेण हृतं नष्टं च लभ्यते ।४। कार्तवीर्यं महाबाहो सर्वदुष्टनिबर्हण । सर्वं रक्ष सदा तिष्ठ दुष्टान्नाशय पाहि माम् ।५। सहस्रबाहुं सशरं सचापं रक्ताम्बरं रक्तकिरीटकुण्डलम् । चौरादिदुष्टभयनाशनमिष्टदं तं ध्यायेन्महाबलविजृम्भितकार्तवीर्यम् ।६। यस्य संस्मरणादेव सर्वदुःखक्षयो भवेत् । तं नमामि महावीर्यमर्जुनं कृतवीर्यजम् ।७। हैहयाधिपतेः स्तोत्रं सहस्रावर्तनं कृतम् । वाञ्छितार्थप्रदं नृणां शूद्राद्यं यदि न श्रुतम् ।८।

इति श्रीडामरतन्त्रे उमामहेश्वरसंवादे कार्तवीर्यस्तोत्रम् ।

३८९-शेषस्तुतिः ।

ब्रह्माण्डकुम्भकारं भुजगाकारं जनार्दनं नौमि ।
स्फारे यत्फणचक्रे धरा शरावश्रियं वहति ।१।

३९-गरुडस्तुतिः ।

श्रीविष्णुवाहं प्रणमामि भक्त्या सर्पाशनं दुःखहरं खगेशम् । मनोहरं वायुसमानवेगं छन्दोमयं ज्ञानधनं प्रशान्तम् ।१। विष्णुपुत्राय शान्ताय बल-बुद्धियुताय च । पक्षीन्द्रायाऽतिवेगाय गरुडाय नमो नमः ।२।

३९१-शनिपत्नीनामस्तुतिः ।

ध्वजिनी धामिनी चैव कङ्काली कलहप्रिया । कण्टकी कलही चाऽथ तुरङ्गी महिषी अजा । १ । शनेर्नामानि पत्नीनामेतानि सञ्जपन् पुमान् । दुःखानि नाशयेन्नित्यं सौभाग्यमेधते सुखम् ।२।

३९२-शङ्ख-स्तुतिः ।

त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे । निर्मितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य ! नमोऽस्तु ते ।

३९३-दीप-स्तुतिः ।

दीपो ज्योतिः पर ब्रह्म दीपो ज्योतिर्जनार्दनः । दीपो हरतु मे पापं सन्ध्यादीप ! नमोऽस्तु ते । १ । शुभं करोतु कल्याणमारोग्यं सुख-सम्पदाम् । मम बुद्धिप्रकाशं च दीपज्योति ! नमोऽस्तु ते । २ । शुभं भवतु कल्याणमारोग्यं पुष्टिवर्धनम् । आत्मतत्त्वप्रबोधाय दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ।३।

३९४-लेखनीस्तुतिः ।

कृष्णानने द्विजिह्वे च चित्रगुप्तकरस्थिते । सदक्षराणां पत्रे च लेख्यं कुरु सदा मम ।

३९५-माला स्तुतिः ।

महामाये महामाले सर्वशक्ति-स्वरूपिक्षि ! चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव । १ । अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे । जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ।२।

३९६-जन्मभूमिदर्शनफलम् ।

कपिला-गोसहस्रं च यो ददाति दिने दिने । तत्फलं समवाप्नोति जन्मभूमेः प्रदर्शनात् । १ । जन्मान्तरसहस्रेण यत्पापं समुपार्जितम् । तत्सर्वं नाशमाप्नोति जन्मभूमेः प्रदर्शनात् । २ । पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् । मोक्षार्थी मोक्षमाप्नोति जन्मभूमेः प्रदर्शनात् । ३ ।

३९७-सन्ध्यास्तुतिः ।

विप्रो वृक्षस्तस्य मूलं च संध्या वेदाः शाखा धर्मकर्माणि पत्रे । तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम् । १ । ॐकारप्रौढमूलः क्रमपदसहितश्छंदविस्तीर्णशाखो ऋक्पत्रः सामपुष्पो यजुरधिकफलोऽथर्वगंधं दधानः । यज्ञच्छायासमेतो द्विजमधुपगणैः से-

व्यमानः प्रभाते मध्ये सायं त्रिकालं सुचरितचरितः पातु वो वेदवृक्षः ।२। स्वकाले सेवितां नित्यं सन्ध्या कामदुधा भवेत् । अकाले सेविता या च सन्ध्या वन्ध्यावधूरिव ।३।

३९८—रात्रि-शयन-स्तुति ।

जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः । अटव्यां नारसिंहश्च सर्वतः पातु केशवः ।१। अगस्तिर्माधवश्चैव मुचुकुन्दो महाबलः । कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः ।२। सर्पापसर्प भद्रं ते दूरं गच्छ महाविष । जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर ।३। विश्वेवरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् । निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ।४। तिस्रो भार्याः कफल्लस्य दाहिनी मोहिनी सती । तासां स्मरणमात्रेण चौरो गच्छति निष्फलः ।५।

३९९—रात्रिस्मरणसूत्रम् ।

हरिः ॐ । आरात्त्रिपार्थिवरजः पितुरप्रायिधामभिः । दिवः सदांसि बृहतो वितिष्ठ स आष्वेषं वर्तते तमः ।१। उषस्तच्चित्रमाभरास्मभ्यं वाजिनीवति । येन तोकं च धामहे ।२।

४००—पञ्चकन्यास्तुतिः ।

अहल्या द्रौपदी तारा कुन्ती मन्दोदरी तथा । पञ्च-

कन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम् ।

४०१–विश्वनाथनगरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । यत्र देवपतिदेहिनां मुक्तिरेव भवतीति निश्चितम् । पूर्वपुण्यनिचयेन लभ्यते विश्वनाथनगरी गरीयसी ।१। स्वर्गतः सुखकरी दिवौकसां शैलराजतनयाऽतिवल्लभा । ढुण्ढिभैरवविदारितविघ्ना विश्व० ।२। यत्र तीर्थमलं मणिकर्णिका सा सदाशिवसुखप्रदायिनी । या शिवेन रचिता निजायुधैर्विश्व० ।३। सर्वदा अमरवृन्दवन्दिता गजेन्द्रमुखवारितविघ्नां । कालभैरवकृतैकशासना विश्व० ।४। यत्र मुक्तिरखिलैस्तु जन्तुभिर्लभ्यते मरणमात्रतः शुभा । साऽखिलामरगणस्पृहणीया विश्व० ।५। उरगं तुरगं खगं मृगं वा करिणं प्रसरिणं खरं नरं वा । सकृदाप्लुत एव देवनद्यां लहरी किं न वरं चरीकरीति ।६।

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं विश्वनाथनगरीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

४०२–कुम्भस्तुतिः ।

देव-दानव-संवादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि यदा कुम्भ ! विधृतो विष्णु । स्वयम् ।१। त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।२। शिवः स्वयं त्वमेवाऽसि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः । आदित्या वसवो

रुद्राः विश्वेदेवाः सपैतृकाः । त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।३।

४०३–कमलालयास्तुतिः ।

कमलासनकमलेक्षणकमलारिकिरीटकमलभृद्बाहैः । नुतपदकमला कमला करधृतकमला करोतु मे कमलम् ।१। किंजल्कराजिरिव नीलसरोजलग्ना लेखेव कांचनमयी निकषोपलस्था । सौदामिनी जलदमण्डलगामिनीव पायादुरःथलगता कमला मुरारेः ।२। दंतैः कोरकितस्मितैर्विकसिता भ्रूविभ्रमैः पत्रिता दोर्भ्यां पल्लविता नखैः कुसुमिता लीलाभिरुद्वेलिता । उत्तुङ्गस्तनमण्डलेन फधलिता भक्ताभिलाषे स्थिता काचित्कल्पलता सुरासुरनुता पायात्सुताब्धेः सुता ।३। पद्मायाः स्तनहेमसद्मनि मणिश्रेणीसमाकर्षके किंचित्कञ्चुकसंधिसंधितगते शोरैः करे तस्करे । सद्यौ जागृहि जागृहीति वलयध्वानैर्ध्रुवं गर्जता कामेन प्रतिबोधिताः प्रहरिका रोमांकुरा पांतु वः ।४।

४०४–सप्तपुरी-स्तुतिः ।

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ।

४०५–अनादिकल्पेश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । कर्पूरगौरो भुजगेन्द्रहारो गंगा-

धरो लोकहितावहः सः। सर्वेश्वरो देववरोऽप्यघोरो योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ ।१। कैलासवासी गिरिजाविलासी श्मशानवासी सुमनोनिवासी। काशीनिवासी विजयप्रकाशो यो० ।२। त्रिशूलधारी सर्वदुःखहारी कदर्पवैरी रजनीशधारी। कपर्दधारी भजकानुसारी यो० ।३। लोकाधिनाथः प्रमथाधिनाथः कैवल्यनाथः श्रुतिशास्त्रनाथः। विद्यार्थनाथः पुरुषार्थनाथो यो० ।४। लिङ्गं परिच्छेत्तुमधोगतस्य नारायणश्चोपरि लोकनाथः। बभूवतुस्तावपि नो समर्थौ यो० ।५। यं रावणस्ताण्डवकौशलेन गीतेन चातोषयदस्य सोऽत्र। कृपाकटाक्षेण समृद्धिमाप योऽना० ।६। सकृच्च बाणो बनमय्यशीर्षं यस्याग्रतः सोऽप्यलभत्समृद्धिम्। देवेन्द्रसम्पत्यधिकां गरिष्ठां यो० ।७। गुणान्विमातुं न समर्थ एव वेषश्च जीवोऽपि विकुण्ठितोऽस्य। श्रुतिश्च नूनं चलितं बभाषे यो० ।८। अनादिकल्पेश उमेश एतत् स्तवाष्टकं यः पठति त्रिकालम्। स धौतपापोऽखिललोकवंद्यं शैवं पदं यास्यति भक्तिमांश्चेत् ।९।

इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीकृतसनादिकल्पेश्वरस्तोत्रम्।

४०६-ग्रहस्तुतिः।

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च। गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः कुर्वन्तु सर्वे मम

सुप्रभातम् ।

४०७–जिनेन्द्र-स्तुतिः ।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम् । देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवाञ्जिनेन्द्रः ।

४०८–जिन–स्तुतिः ।

आबाहूद्गत-मण्डलाग्ररुचयः सन्नद्धवक्षःस्थलाः सोष्माणो व्रणिनो विपक्षहृदय-प्रोन्माथिनः कर्कशाः । उत्सृष्टाम्बर-दृष्टि-विभ्रमभरा यस्य स्मराग्रेसरा योधा वारवधूस्तनाश्च न दधुः क्षोभं स वोऽव्याज्जिनः ।

४०९–कुज–स्तुतिः ।

भूमिपुत्रो महातेजा जगतौभयकृत्सदा । वृष्टिकृद्वृष्टिहर्ता च पीडां दहतु मे कुजः ।

४१०–शशाङ्क-स्तुतिः ।

ज्योत्स्नानां पतये तुभ्यं ज्योतिषां पतये नमः । नमस्ते रोहिणीकान्त ! सुधावास ! नमोऽस्तु ते ।१। नमो मण्डलदीपाय शिरोरत्नाय धूर्जटेः । कलाभिर्वर्द्धमानाय नभश्चन्द्राय चरावे ।२।

४११–नवनागनाभस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । अनंतं वासुकिं शेषं पद्मनाभं च कंबलम् । शंखपालं धार्तराष्ट्रं तक्षकं कालियं तथा

।१। एतानि नव नामानि नागानां च महात्मनाम् । सायंकाले पठेन्नित्यं प्रातःकाले विशेषतः ।२। तस्मै विषभयं नास्ति सर्वत्र विजयी भवेत् ।३।

४१२-शारदानुतिः ।

धातुश्चतुर्मुखीं कण्ठश्रृङ्गाटकविहारिणीम् । नित्यं प्रगल्भवाचालामुपतिष्ठे सरस्वतीम् ।१। सूक्ष्माय शुचये तस्मै नमो वाक्तत्त्वतन्तवे । विचित्रो यस्य विन्यासो विदधाति जगत्पटम् । २ । तद्दिव्यमव्ययं धाम सारस्वतमुपास्महे । यत्प्रसादात्प्रतीयन्ते मोहान्धतमसश्छटाः ।३। पातु वो निकषग्रावा मतिहेम्नः सरस्वती । प्राज्ञेतरपरिच्छेदं वचसैव करोति या ।४। शारदा शारदाम्भोजवदना वदनाम्बुजे । सर्वदा सर्वदाऽस्माकं सन्निधिं सन्निधिं क्रियात् ।५।

४१३-श्रमिकप्रशस्तिः ।

श्रीगणेशाय नमः । तपसि दिनकरे तप्तै सति न ग्रीष्मेऽप्यस्ति विरामः लोकोऽयं सततं विधीयते श्रमैरतीव ललामः । पश्यति न हि तव कोऽपि कामनां श्रमिक न वह निजशिरसि यातनाम् ।१। रक्तरञ्जिता गृहमालेयं वाटिका च रमणीया तव कृतिरस्ति वसति तरुमूले पीडा नहि गणनीया । श्रोतुमपीहेच्छति न याचनां श्रमिक न वह निजशिरसि यातनाम् ।२। तव

रक्तेन सिञ्चितम्मधुरं धान्यमाकरे दत्वा अतिसखे विहरति ददाति नहि क्षुधयाऽऽकुलमपि दृष्ट्वा । ना नायं पश्यति च वेदनां श्रमिक न वह निजशिरसि यातनाम् ।३। त्वमपि मानवस्तवाधिकारो भवति भूतले नित्यं नहि ददाति शोषको मानवो ह्यग्नेतुं कुरु कृत्यम् । पश्य राक्षसीमस्य भावनां श्रमिक न वह निजशिरसि यातनाम् ।४।

४१४–मीनवपुधारिभगवत्स्तुतिः ।

हंहो मीननतनो हरे किमुदधे किं वेपसे शैत्यतः स्विन्नः किं वडवानलात्पुलकितः कस्मात्स्वभावादहम् । इत्थं सागरकन्यकामुखशशिव्तालोकने नाधिकप्रोद्यकामजचित्तनिह्ननतिपरः शौरिः शिवायास्तु वः ।१। पुच्छं चेदहमुन्नयाम्यनवधिस्तुच्छो भवेदम्बुधिः क्रीडां चेत्कलये मतागपि जले पीडा परं लावसाम् । निस्पन्दो भृशमामृशन्निति भरब्रह्माण्डभाण्डक्षयक्षामाकुंचितवेष एष भगवान् प्रीणातु मीनाकृतिः ।२। यं दृष्ट्वा मीनरूपं स्फुरदनलशिखायुक्तसंरक्तनेत्रं लोलद्विस्तीर्णकर्णक्षुभितजलनिधिं नीलजीमूतवर्णम् । श्वासोच्छ्वासानिलौघैः प्रचलितगगनं पीतवारिं मुरारिं दिङ्मूढोऽभूत्सशंखः स भवतु भवतां भूतये मीनरूपः ।३। दिङ्मूढं तं सुरारिं किल शितदशनैः पीडयमानं पतन्तं हृत्वा तीरे पयोधेः

करतलकलितं पूरयामास शंखम् । नादेनाक्षोभ्य विश्वं प्रमुदितविबुधं त्रस्तदैत्यं स दैवैर्दसार्थैः पद्मयोनेः प्रहसितवदनः पातु वो दत्तवेदः ।४।

४१५ — दन्तधावनस्तुतिः ।

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च । ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वन्नो देहि वनस्पते ! ।

४१६ -प्रातर्वन्दनीयस्तुतिः ।

प्रातः काले पिता माता ज्येष्ठभ्राता तथैव च । आचार्याः स्थविराश्चैव वन्दनीया दिने दिने ।

॥ समाप्त ॥

अ. भा. ओंकार परिवार की स्थापना

ॐ परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम है। इसे मन्त्र शिरोमणि, मन्त्र सम्राट, मन्त्र राज, बीजमन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम् महानतम् और पवित्रतम् मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं है। यह सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से भावित करता है। सभी मन्त्रों की शक्ति ओंकार की ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता है। भौतिक व आत्मिक उत्थान के लिए कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषि मुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते रहे हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी का अनुभव करते हुए अ. भा. ओंकार परिबार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहाँ इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य नि:शुल्क रूप से प्रधान कार्यालय, बरेली से मंगवा लें। आपको केवल इतना करना है कि स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके ४ अन्य मित्रों व सम्बन्धियों को प्रेरित करें और सभी संकल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष २७००० साधकों द्वारा ६०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना है। आशा है कि ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के इस श्रेष्ठतम आध्यात्मिक महायज्ञ में आप सम्मिलित होकर महान पुण्य के भागी बनेंगे।

ओंकार रहस्य, ओंकार दैनिक विधि, ओंकार चालीसा, ओंकार कीर्तन और ओंकार भजनावली नामक १५ पैसे मूल्य वाली सस्ती पुस्तिकाओं को अधिक से अधिक संख्या में वितरित करें।

विनीत:—

संस्कृति संस्थान चमनलाल गौतम

ख्वाजाकुतुब, वेदनगर, बरेली-२४३००३ (उ प्र.)

एक मौन व्यक्तित्व का मौन समर्पण

डॉ. चमन लाल गौतम-एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मिक संस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्ष साहित्य के शोध, प्रकाशन और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करते रहे हैं। यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग के बिना वेद, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतियाँ, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्मक साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचाने की पवित्रतम साधना कर रहे हैं। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मिक विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणीय व असाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन, तप, प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। स्वस्थ साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पहला चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही आध्यात्मिक साधना के महापुरश्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चरण-आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभारम्भ अ. भा. ओंकार परिवार की स्थापना के साथ बसंतपंचमी की परम पवित्र बेला के साथ हो गया है। अतः उनका शेष जीवन तीसरे चरण की सफलता—ओंकार परिवार की शाखाओं के व्यापक विस्तार के माध्यम से करोड़ों व्यक्तियों को ओंकार साधना में प्रविष्ट करके उच्च आध्यात्मिक भूमिका में प्रशस्त करना, ओंकार अथवा उच्च आध्यात्मिक साहित्य की रचना व प्रचार प्रसार को समर्पित है।

इस आध्यात्मिक महायज्ञ में सभी धार्मिक जन अपनी एक एक अंगुली लगा देंगे तो यह ईश्वर प्रेरित महा पुरश्चरण निश्चित रूप से पूर्ण होगा।

स्वामी सत्य भक्त

भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठतम धर्म-ग्रंथ